तुलनात्मक लोक प्रशासन

(Comparative Public Administration)

Paper III

एम.ए. लोक प्रशासन (पूर्वार्द्ध)
M.A. Public Administration (Previous)

दूरस्थ शिक्षा निदेशालय
महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय
रोहतक–124 001

Copyright © 2003, Maharshi Dayanand University, ROHTAK
All Rights Reserved. No part of this publication may be reproduced or stored in a retrieval system or transmitted in any form or by any means; electronic, mechanical, photocopying, recording or otherwise, without the written permission of the copyright holder.

Maharshi Dayanand University
ROHTAK – 124 001

Developed & Produced by EXCEL BOOKS PVT. LTD., A-45 Naraina, Phase 1, New Delhi-110028

विषय-सूची

Unit-I

अध्याय-1	तुलनात्मक लोक प्रशासक के अध्ययन का विकास	5
अध्याय-2	तुलनात्मक लोक प्रशासन का अर्थ, प्रकृति, क्षेत्र एवं महत्व	12
अध्याय-3	विकासशील देशों की प्रशासनिक विशेषताएँ	20
अध्याय-4	विकसित देशों की प्रशासनिक विशेषताएँ	25
अध्याय-5	ब्रिटिश प्रशासनिक व्यवस्था की विशेषताएँ	28
अध्याय-6	अमरीकी प्रशासनिक व्यवस्था की विशेषताएँ	32
अध्याय-7	फ्रांस की प्रशासनिक व्यवस्था की मुख्य विशेषताएँ	36
अध्याय-8	जापानी प्रशासनिक व्यवस्था की मुख्य विशेषताएँ	40

Unit-II

अध्याय-9	लोक प्रशासन और पर्यावरण	44
अध्याय-10	तुलनात्मक लोक प्रशासन के मुख्य उपागम	52

Unit-III

अध्याय-11	एफ डब्लू रिग्ज	60
अध्याय-12	प्रोफेसर फैरल हैडी का तुलनात्मक लोक प्रशासन में योगदान	71
अध्याय-13	प्रोफेसर फैरल हैडी का तुलनात्मक लोक प्रशासन में योगदान	71

Unit-IV

अध्याय-14	ग्रेट ब्रिटेन में राजनीतिक कार्यपालिका	83
अध्याय-15	संयुक्त राज्य अमेरिका की राजनीतिक कार्यपालिका	101
अध्याय-16	फ्रांस की कार्यपालिका	110
अध्याय-17	जापान की राजनैतिक कार्यपालिका	117
अध्याय-18	स्विट्जरलैंड की कार्यपालिकाः संघीय परिषद्	124
अध्याय-19	इंग्लैंड का स्थानीय शासन	131
अध्याय-20	अमेरिका का स्थानीय शासन	138
अध्याय-21	फ्रांस का स्थानीय शासन	142
अध्याय-22	जापान का स्थानीय शासन	147
अध्याय-23	स्विट्जरलैंड का स्थानीय शासन	151

Unit-V

अध्याय-24	ब्रिटेन में प्रशासन पर नियंत्रण व्यवस्था	153
अध्याय-25	अमेरिका में प्रशासन पर नियंत्रण व्यवस्था	159
अध्याय-26	फ्रांस में प्रशासन पर नियंत्रण व्यवस्था	162
अध्याय-27	जापान में प्रशासन पर नियंत्रण व्यवस्था	165
अध्याय-28	स्विट्जरलैंड में प्रशासन पर नियंत्रण व्यवस्था	167
अध्याय-29	इंग्लैंड में नागरिकों की शिकायतों को दूर करने के लिए जन-अभियोग	169
अध्याय-30	संयुक्त राज्य अमेरिका में जन-अभियोग निवारण व्यवस्था	172
अध्याय-31	फ्रांस में जन अभियोग निराकरण व्यवस्था	175
अध्याय-32	जापान में जन-शिकायतों के निराकरण संबंधी व्यवस्था	179
अध्याय-33	स्विट्जरलैंड में जन-शिकायतों के निराकरण संबंधी व्यवस्था	181

M.A. (Previous)

Comparative Public Administration

Paper-III **Max. Marks : 100**

Time : 3 Hours

Note: The question paper consists of three Parts A, B and C.

In part 'A' there will be 10 very short answer questions approximately 30 to 50 words (atleast 2 from each unit) of 2 marks each. All the questions in this part will be compulsory.

In part 'B' there will be 10 short answer questions (100 to 150 words) of 5 marks each, out of which candidates will be required to attempt atleast 7 questions.

In part 'C' there will be 5 essay type questions (atleast one from each unit) of 15 marks each, out of which candidates will be required to attempt atleast 3 questions.

Unit-I

Concept of Comparative Public Administration, Meaning, nature, scope and significance, Evolution of Comparative Public Administration, Features of Administration in developed Countries with special. refernce to UK, USA, Japan and France, Features of Administration in developing countries.

Unit-II

Environment of Administration-Political, Social, Economic and Cultural. Approaches of Comparative Public Administration; Ecological, Structural-Functional and Behavioural.

Unit-III

Contribution of Fred W. Riggs, Ferrel Heady, William Siffin and Montgomery in Comparative Public Administration.

Unit-IV

A Comparative study of Chief Executive, UK, USA, France, Japan and Switzerland. Local Government in UK, USA, France, Japan and Switzerland.

Unit-V

Various control Mechanisms over Administration in UK, USA, France, Japan and Switzerland, Machinery for redressal of citizen's grievances in UK, USA, France, Japan and Switzerland.

Unit-I

अध्याय-1

तुलनात्मक लोक प्रशासन के अध्ययन का विकास (Evolution of the Study of Comparative Public Administration)

लोक प्रशासन में तुलनात्मक द ष्टिकोण का प्रारम्भ अपेक्षाकृत नवीन अवधारणा है। यह सामाजिक विज्ञानों में एक महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त करता जा रहा है। विश्वयुद्ध तक स्वतंत्र विषय के रूप में प्रायः अज्ञात था किन्तु विश्वयुद्ध के बाद की परिस्थितियों ने लोक प्रशासन के तुलनात्मक अध्ययन को उपयोगी एवं सार्थक बनाया। वास्तव में तुलनात्मक लोक प्रशासन द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद ही एक Academic Discipline (अध्ययन के विषय) के रूप में विकसित हो पाया। इसका अर्थ यह नहीं है कि द्वितीय विश्व युद्ध से पहले लोक प्रशासन में तुलनात्मक यह नहीं है कि द्वितीय विश्व युद्ध से पहले लोक प्रशासन में तलनात्मक तत्व बिल्कुल नहीं था। लोक प्रशासन के साहित्य में तुलनात्मक तत्व निश्चित ही था लेकिन इस साहित्य मे अर्न्तसांस्कृतिक तुलनात्मक अध्ययनों की कमी थी।

उपरोक्त प ष्टभूमि में लोक प्रशासन के अध्ययन को दो भागों में बाँटा जा सकता है जिनका वर्णन निम्नलिखित है -

1. Pre-2nd World War Phaswe द्वितीय विश्वयुद्ध से पहले

2. Post 2nd World War Phase द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद

1. Pre-2nd World War Phase

तुलनात्मक लोक प्रशासन का इतिहास अधिक प्राचीन नहीं है। एक स्वतंत्र अध्ययन विषय के रूप में इसका प्रारम्भ वुडरो विलसन (Woodrow Wilson) के कार्यकाल से हुआ था। उसके निबंध 'प्रशासन का अध्ययन' (The Study of Administration, 1887) ने इसका सूत्रपात किया। विलसन के विचारों में तुलनात्मक तत्व की झलक मिलती हैं यूरोप के कुछ प्रशासनिक व्यवहार संयुक्त राज्य अमेरिका में अपनाए गए। जब अमेरिकी प्रशासन की लूट प्रणाली ने देश में राजनीतिक और प्रशासनिक उलझनें पैदा कीं तो विलसन का मत सार्थक दिखाई देने लगा तथा नागरिक सेवा एवं प्रशासन के दूसरे क्षेत्रों में सुधार की योजनाएँ प्रस्तावित होने लगीं। अमेरिका में प्रशासनिक सुधार के लिए विदेशी प्रशासनिक व्यवहारों से प्रेरणा ली जाने लगी और प्रशासनिक अध्ययन में तुलनात्मक झलक आने लगी।

बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में एफ. डब्ल्यू. टेलर ने वैज्ञानिक प्रबंध (Scientific Management) के आन्दोलन का सूत्रपात किया। यह आंदोलन क्रमशः अंतर्राष्ट्रीय आंदोलन बन गया। इसने न केवल अमेरिका की प्रशासनिक विचारधारा को प्रभावित किया वरन् सोवियत संघ आदि देशों के प्रशासनिक व्यवहार पर भी प्रभाव डाला। टेलर के सिद्धांत उत्पादन के अनुकूल थे इसलिए विभिन्न देशों का ध्यान इनकी ओर आकर्षित हुआ। प्रशासन में कार्यकुशलता और मितव्ययिता पर जोर दिया जाने लगे। इस काल में लोक प्रशासन पर लिखे ग्रन्थ इन दोनों मूल्यों से रंगे हुए हैं। 1920 से 1930 तक की लोक प्रशासन संबंधी रचनाएँ प्रबंधात्मक द ष्टिकोण से प्रभावित रहीं। इनमें लोक प्रशासन के कुछ सार्वलौकिक सिद्धांत खोजने की चेष्टा की गई ताकि इसे विज्ञान बनाया जा सके। ऐसी सभी चेष्टाएँ तुलनात्मक लोक प्रशासन के विकास की भूमिकाएँ थीं।

डॉ.एल.डी. ह्वाइट तथा प्रो. विलोबी की बहुचर्चित रचनाएँ[1] लोक प्रशासन के प्रारम्भिक साहित्य की महत्वपूर्ण कृंतियाँ हैं। इनमें लोक प्रशासन के अंत। सांस्कृतिक एवं अंतर्राष्ट्रीय पहलू पर जोर दिया गया था। लोक प्रशासन के अध्ययन में वैज्ञानिक प्रणाली का प्रयोग करने पर ध्यान केन्द्रित था। इस वैज्ञानिक प्रणाली में तुलनात्मक तत्व का समावेश स्वाभाविक था।

इसके बाद मानव संबंधों के अध्ययन का प्रचलन हुआ। उनके स्वरूप, प्रभावक तत्व, परिवर्तन आदि की जानकारी के आधार पर प्रशासनिक व्यवहार को समझने की चेष्टा की गई। मानव संबंधों के अध्ययन की प्रव ति, तत्कालीन औद्योगिक समाज की विशेष आवश्यकताओं की प्रतिक्रिया थी। इसमे अंतःसांस्कृतिक तत्व विशेष नहीं था अतः तुलनात्मक लोक प्रशासन के विकास में विशेष योगदान नहीं कर सका।

इस प्रकार लोक प्रशासन के प्रारम्भिक अध्ययन में तुलनात्मक विवेचन की प ष्ठभूमि नामात्र की प्राप्त होती है। विभिन्न देशों की प्रशासनिक संस्थाओं के संगठन तथा व्यवहार का तुलनात्मक अध्ययन करने का स्पष्ट, सजग और सार्थक प्रयास नहीं किया गया। लोक प्रशासन के ये परंपरागत अध्ययन अधूरे एवं असंतोषजनक थे। इसकी कुछ प्रमुख आलोचनाएं निम्नलिखित हैं -

(1) लोक प्रशासन का परंपरावादी द ष्टिकोण अप्रशासनिक तथ्यों की उपेक्षा करता है। इन लेखकों ने प्रशासनिक संस्थाओं का वर्णन मात्र ही किया, उनके प्रभावों और अराजनीतिक तत्वों पर विशेष ध्यान नहीं दिया। कोई प्रशासनिक संस्था अपने सामाजिक, आर्थिक, सांस्क तिक और मनोवैज्ञानिक वातावरण द्वारा ही भली प्रकार कार्य संपन्न कर सकती है।

(2) इस द ष्टिकोण मे गैरपाश्चात्य प्रशासनिक संस्थाओं की उपेक्षा की गई। इन लेखकों ने अपना अध्ययन पश्चिमी राष्ट्रों के विवेचन तक सीमित रखा। गैर-पाश्चात्य राष्ट्रों की प्रशासनिक व्यवस्थाओं के अध्ययन की उपेक्षा की गई। ऐसी स्थिति में पर्याप्त तुलनात्मक अध्ययन संभव नहीं हो सका, इसके लिए विविधतापूर्ण प्रशासनिक संस्थाओं का विश्लेषण और व्याख्या अनिवार्य होती है। इससे अध्ययन व्यवस्थित, तथ्यपूर्ण, तार्किक और वैज्ञानिक बनता है।

(3) यह द ष्टिकोण कुछ विशेष मूल्यों तक संकुचित रहा तथा संविधानवाद और पाश्चात्य उदार प्रजातंत्र के प्रति झुका हुआ था इन लेखकों ने अलोकतांत्रिक व्यवस्थाओं को अच्छा नहीं माना और वहाँ की प्रशासनिक संस्थाओं के अध्ययन की उपयोगिता स्वीकार नहीं की। द्वितीय विश्व युद्ध पूर्व जब इटली और जर्मनी में निरंकुशतंत्र स्थापित हुआ तब परंपरावादी लेखक चिंतित हुए। उन्हें अपनी कमियों का आभास होने लगा अतः प्रशासनिक चिंतन की कई विधियाँ खोजी जाने लगी।

(4) यह द ष्टिकोण कानूनी रूप से औपचारिक था। संगठन और उसके कार्यों का लिखित रूप ही इसके अध्ययन का मुख्य बिन्दु था। उसकी वास्तविक कार्यप्रणाली में इसकी विशेष रुचि नहीं थी। प्रशासनिक संस्थाओं द्वारा जो अनेक कार्य संपन्न किए जाते हैं उनकी ओर विशेष ध्यान नहीं गया।

(5) यह द ष्टिकोण ने लोक प्रशासन का अध्ययन व्याख्यात्मक, विश्लेषणात्मक और समाधानात्मक रूप में नहीं किया वरन केवल वर्णनात्मक रूप में किया। ये लेख परिकल्पनाओं का परीक्षण और महत्वपूर्ण आंकड़ों का संग्रह नहीं करते थे और सिद्धांतों के विकास में रुचि नहीं लेते थे।

(6) इस द ष्टिकोण में अध्ययन के अंत अनुशासनात्मक स्वरूप की उपेक्षा की गई थी। प्रशासनिक व्यवहार का सही विवेचन तभी किया जा सकता है जबकि संबंधित देश का साँस्कृतिक और सामाजिक वातावरण तथा सामाजिक विकास की विशेषताओं का संदर्भ जान लिया जाए। इसके लिए समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र, मनोविज्ञान आदि विषयों का अध्ययन सार्थक और उपयोगी बन जाता है। इस उपयोगिता का परंपरावादी द ष्टिकोण में कोई स्थान नहीं था। फलस्वरूप अध्ययनों का व्यापक स्वरूप विकसित नहीं हुआ।

(7) परंपरावादी द ष्टिकोण की प्रकृति गैर-तुलनात्मक थी। इस काल में ऐसे ग्रन्थों की रचना हुई जो विभिन्न देशों, संस्कृतियों और मानव स्वभावों से संबंध रखते थे।

परंपरावादी द ष्टिकोण, एकाँगी, अधूरा, अपर्याप्त और संकुचित होने के कारण कतिपय गंभीर आलोचनाओं का पात्र बना, किंतु इसका अर्थ यह नहीं है कि यह द ष्टिकोण कोई महत्व नहीं रखता। वस्तुतः प्रत्येक ज्ञान अपने प्रारम्भिक विकास के समय सीमित और संकुचित ही होता है। यह प्रारम्भिक चिंतन, व्यवहार और तथ्यों की अपेक्षा सिद्धांत और दार्शनिक विवेचन से अधिक प्रभावित था। प्रारम्भ में यूरोपीय देशों के साम्राज्यों का जाल फैला हुआ था। उस समय एशिया और अफ्रीका में वे विकासशील राज्य नहीं थे जो आज कायम हैं इन परिस्थितियों में परंपरावादी द ष्टिकोण स्वाभाविक था। उस समय विकासशील क्षेत्रों के अध्ययन के लिए उपयुक्त अनुदान उपलब्ध नहीं था। सामाजिक विज्ञानों को पढ़ने की अध्ययन प्रणाली आज की भाँति विकसित नहीं हो पाई थीं। यह परंपरागत अध्ययन जिन विशेष परिस्थितियों में विकसित हुए उनमें जो संभव था, वही अपनाया गया।

परंपरावादी अध्ययन ने तुलनात्मक लोक प्रशासन के विकास को संभव बनाया, प्रोत्साहित किया और एक उचित प ष्ठभूमि प्रदान की। सत्ता, नियंत्रण, संचार, नियोजन, संगठन, समन्वय, कार्यकुशलता और मितव्ययता आदि परंपरागत प्रशासनिक अवधारणाएँ तुलनात्मक लोक प्रशासन के वर्तमान विद्यार्थियों के लिए पर्याप्त महत्व रखती हैं। अतः यह कहा जा सकता है कि परंपरावादी द ष्टिकोण ने इस विषय को विकसित करने में सार्थक भूमिका का निर्वाह किया।

2. **द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात Post-2nd World War Phase:** लोक प्रशासन Identity Crisis के दौर से गुजर रहा था। इस दौरान लोक प्रशासन के विद्वानों के द्वारा किया गया यह दावा कि लोकप्रशासन के सिद्धांत सार्वभौमिक है Challenge II किए गए। मानवीय संबंधी द ष्टिकोण भी इस विषय को दिशा निर्देशन देने में असफल रहा। ये सभी आर्तें इस विषय के विद्वान के संबंध में दिशा विहीन रही, इस प्रकार इस विषय के विद्वान कुछ नए Trends खोजने और इस विषय को सही दिशा देन के लिए एक मुश्किल के दौर से गुजर रहे थे। इस संबंध में सुझाव दो कार्नर से आए। एक तरफ तो एडविन स्टीन, साइमन तथा वाल्डो जैसे विद्वानों ने लोक प्रशासन को अधिक वैज्ञानिक बनाने के लिए वैज्ञानिक साहित्यों की वल देना प्रारम्भ किया। वहीं दूसरी तरफ रार्वल डाह्ल ने कहा है कि ''जब तक लोक प्रशासन का अध्ययन तुलनात्मक नहीं होता तब तक इसका विज्ञान होने का दावा खोखला है।'' इस प्रकार रार्वट डाहल ने लोक प्रशासन में अधिक से अधिक अंर्तसास्कृतिक तुलनात्मक अध्ययनों पर दबाव डाला जिसके कारण इस विषय को न केवल दिशा निर्देशन मिला बल्कि ज्यादा से ज्यादा विद्वानों तुलनात्मक पहलु को अपने अध्ययन का केन्द्र बनाया। परिणामस्वरूप इस विषय पर काफी साहित्य का विकास हुआ।

   लेकिन यहाँ एक प्रश्न उठता है कि क्या रार्वट डाहल एवं अन्य विद्वानों का अंर्त सांस्कृति तुलनात्मक अध्ययनों पर दबाव ही, इस विषय के विकास का एकमात्र कारण था? इस प्रश्न के उत्तर में यह निश्चित तौर पर कहा जा सकता है कि इसके अतिरिक्त अन्य भी बहुत सारे कारण इस विषय के विकास के संबंध में जिम्मेदार हैं जिनका वर्णन निम्न प्रकार है-

1. **परंपरागत द ष्टिकोण की अपर्याप्तता:** परंपरागत द ष्टिकोण को अध्ययन की नई चुनौतियों के संदर्भ में अपर्याप्त पाया गया। इसकी अंतर्निहित विशेषताएँ परिवर्तित परिवेश में प्रभावपूर्ण सिद्ध नहीं हो सकीं। डी० वाल्डू (D. Waldo) के अनुसार ''यह द ष्टिकोण संस्क ति वर्धित, पश्चिमी यूरोप के देशों तक सीमित, कानूनी एवं औपचारिक और केवल आलेखों की परीक्षा तक सीमित था। इसमें सरकारी संस्थाओं के औपचारिक एवं स्थाई पहलू पर जोर दिया जाता था। इसमें कानूनों तथा औपचारिक संस्थाओं के समस्त राजनीतिक, सामाजिक, साँस्कृतिक और आर्थिक संदर्भों को पूर्णतः भुला दिया जाता था। यह द ष्टिकोण मुख्यतः वर्णनात्मक था, विश्लेषणात्मक या समस्या-समाधानकारी नहीं था। इसमें अध्ययनकर्ता केवल एक देश के प्रशासन की जानकारी प्राप्त कर सकता था, किंतु दूसरे देशों से उसकी समानता या अंतर देखने में असमर्थ था।'' इस द ष्टिकोण से गैर-पाश्चात्य अथवा विकासशील देशों की राजनीतिक व्यवस्थाओं का विश्लेषण संभव नहीं था। जब परंपरागत द ष्टिकोण की ये कमियां विद्वानों को खलने लगीं तो तुलनात्मक अध्ययन प्रणाली का प्रचलन और प्रसार हुआ।

2. **द्वितीय महायुद्ध काल में विदेशों के लोक प्रशासन का परिचय :** द्वितीय महायुद्ध के समय अमेरिका, ब्रिटेन आदि विकसित देशों के लोक प्रशासकों और विद्वानों ने विदेशों में लोक प्रशासन का परिचय प्राप्त किया। उन्हें वहाँ की प्रशासन व्यवस्था में अनेक नवीनताएँ और अपूर्व मौलिकताएँ दिखाई दीं। फलतः उनमें एक तुलनात्मक विवेचन की अभिलाषा जाग्रत हुई उनकी इस जिज्ञासा ने तुलनात्मक लोक प्रशासन के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया।

3. **अनुसंधान के नए उपकरणों और धारणाओं का उदय :** द्वितीय महायुद्ध के बाद परिवर्तित परिवेश में नए व्यवसाय और उद्यम प्रारम्भ हुए। विचारणारा, विज्ञान और तकनीकी के क्षेत्र में हुए विकास ने प्रशासन की रूप-रचना को प्रभावित किया और तुलनात्मक अध्ययन का सूत्रपात किया। आधुनिक विचारकों ने लोक प्रशासन को परंपरावादी स्वरूप से निकाल वैज्ञानिक स्वरूप प्रदान करने की चेष्टा की। सर्वप्रथम यह आवश्यकता अनुभव की गई कि अन्य तथ्यों के साथ-साथ राष्ट्रीय सीमाओं का अतिक्रमण करने वाले प्रशासनिक व्यवहार के संबंध में कुछ निर्देश निर्धारित किए जाएँ। राबर्ट डहाल ने अपने निबंध "The Science of Public Administration 1947" में इस आवश्यकता का उल्लेख किया। उन्होंने कहा कि जब तक लोक प्रशासन का अध्ययन तुलनात्मक नहीं होगा तब तक यह विज्ञान नहीं माना जा सकता।[1] उनकी बौद्धिक जिज्ञासा रही कि अमेरिकी, फ्रांसीसी, ब्रिटिश लोक प्रशासन, विज्ञान तो हो सकते हैं, किन्तु क्या ऐसा लोक प्रशासन भी हो सकता है जिसमे अपने देश विशेष की व्यवस्था से स्वतंत्र सामान्य सिद्धांत हों? नई अवधारणा में

यह अनुभव किया गया कि विश्व के राज्यों की प्रशासन व्यवस्था में समानता व पूर्णता की अपेक्षा भिन्नता के तत्व अधिक हैं, अतः साम्यवादी देशों, एशिया, तथा अफ्रीका के नव-स्वतंत्र राज्यों के प्रशासन का व्यापक अध्ययन करना होगा। अब लोक प्रशासन को विज्ञान बनाने की द ष्टि से विभिन्न संस्कृतियों, राष्ट्रीयताओं तथा स्वभावों के संदर्भ में लोक प्रशासन के अध्ययन पर जोर दिया जाने लगा।

4. **सहायकता कार्यक्रम को व्यावहारिक बनाने के लिए विकासशील देशों की प्रशासनिक स्थिति का अध्ययन :** द्वितीय विश्व युद्ध के बाद विश्व राजनीति दो विरोधी गुटों में बंट गई। एक गुट का नेत त्व सुंयक्त राज्य अमेरिका (पूँजीवाद) तथा दूसरे गुट का नेत त्व सोवियत संघ (साम्यवाद) के हाथ में था। इनके बीच प्रत्येक स्तर पर शीत युद्ध छिड़ गया। शीतयुद्ध का मुख्य क्षेत्र नवोदित विकासशील देश थे। इनके आर्थिक और तकनीकी विकास में सहायता देकर प्रत्येक गुट ने इन्हें अपने साथ लेने का प्रयास किया। अमेरिका, सोवियत संघ आदि विकसित देशों ने संयुक्त राष्ट्र के माध्यम से तथा स्वतंत्र रूप से इन देशों को तकनीकी सहायता प्रदान की। इस सहायता को सार्थक और प्रभावशाली बनाने के लिए वहाँ प्रशासनिक सुधार किया जाना अनिवार्य समझा गया। उपयुक्त प्रशासनिक सुधार के बिना दी गई सहायता प्रभावहीन, निरर्थक बन जाती थी। अतः सहायता पाने वाले देशों की प्रशासनिक स्थिति का अध्ययन किया गया। तब ज्ञात हुआ कि प्रत्येक देश का लोक प्रशासन वहाँ की परिस्थितियों और वातावरण से प्रभावित होता है। प्रशासनिक संस्थाओं के सुचारू संचालन के लिए उपयुक्त वातावरण की खोज की गई और तुलनात्मक लोक प्रशासन का जन्म हुआ। विकसित देशों में लोकप्रशासन के विद्वानों ने अनेक अनुसंधान किए तथा विदेशों में क्षेत्रीय अनुभव प्राप्त किया। इन देशों में वहाँ के वातावरण के अनुसार प्रशासनिक संस्थाएँ विकसित करने के लिए धार्मिक मिशनों की भाँति प्रशासनिक मिशन भेजे गए। 1956 में अंतर्राष्ट्रीय सहयोग प्रशासन (International Co-operation Adminstration) ने 40 से अधिक देशों में लगभग 200 लोक प्रशासन-विशेषज्ञ भेजे। इन लोक प्रशासन के विशेषज्ञों ने विकासशील देशों की प्रशासनिक व्यवस्थाओं का विश्लेषण कर उनमे सुधार के उपयोगी सुझाव दिए। इन सुझावों के अनुरूप प्रशासनिक सुधार संपादित किए गए।

5. **स्वतंत्र अनुशासन के रूप में विकसित करने की आकांक्षाः** तुलनात्मक लोक प्रशासन के अध्ययन क्षेत्र में विचारकों की आकांक्षा थी कि विषय को एक स्वतंत्र अनुशासन के रूप में विकसित किया जाए। लोक प्रशासन के विद्वानों की इस जिज्ञासा ने इसे स्वतंत्र अनुशासन के रूप में विकसित किया।

6. **लोक प्रशासन की विषय-वस्तु का व्यवस्थित स्पष्टीकरणः** तुलनात्मक द ष्टिकोण का विकास लोक प्रशासन की विषय वस्तु के व्यवस्थित स्पष्टीकरण के लिए भी उपयोगी माना गया। तुलनात्मक द ष्टिकोण के बिना प्रशासनिक संस्थाओं का सही अर्थ समझना संभव नहीं है। एडवर्ड शिल्स ने लिखा है कि विभिन्न समाजों की व्यवस्थित तुलना करके उनकी समरूपता एवं विलक्षणताओं को इंगित और स्पष्ट किया जा सकता है। तब व्यक्तिगत रूप से अलग-अलग देशों की शासन व्यवस्थाओं का अध्ययन किया जाता है तो अनेक तथ्य व्याख्या की परिधि से बाहर रह जाते हैं तथा सही रूप में स्पष्ट नहीं हो पाते।

7. **अंतर्राष्ट्रीय पारस्परिक निर्भरताः** तुलनात्मक अध्ययन के विकास में विभिन्न राष्ट्रों की पारस्परिक निर्भरता ने महत्वपूर्ण योगदान किया है। आज इण्डोनेशिया अथवा कांगों में किसी प्रशासनिक संगठन की सफलता केवल बौद्विक जिज्ञासा का विषय नही है वरन मास्को,, वाशिंगटन और लंदन के लिए व्यह व्यवहारिक महत्व का विषय है। किसी देश में प्रशासनिक सुधार के लिए तुलनात्मक अध्ययन आवश्यक है। विचारों का आदान-प्रदान क्षेत्रीय सीमाओं के अवरुद्ध नहीं होता है। दूसरे देशों में किए गए विभिन्न प्रशासनिक प्रयोगों का लाभ उठाते हुए एक देश अपने वातावरण एवं परिस्थिति के अनुसार उचित कदम उठा सकता है। विकासशील देशों में पाश्चात्य लोक प्रशासन की संस्थाओं का प्रभाव इसका स्पष्ट प्रमाण है। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद एशिया, अफ्रीका और लैटिन अमेरिका के नवोदित राष्ट्रों के अभ्युदय ने प्रशासनिक प्रयोगों के लिए आधार-भूमि निर्धारित की है। भविष्य में इन देशों के प्रशासनिक शोध अधिक संपन्न राज्यों के लिए लाभदायक साबित हो सकते हैं। आजकल विकासशील देशों में सरकारी निगमों का व्यापक प्रयोग किया जा रहा है जो प्रशासनिक प्रयोग ही है।

8. **सामाजिक संदर्भ का महत्वः** तुलनात्मक लोक प्रशासन के विकास में एक सहायक तत्व यह रहा है कि लोक प्रशासन तथा सामाजिक रूप रचना का घनिष्ठ संबंध रहता है। एक जैसी प्रशासनिक संस्थाएँ दो देशों में भिन्न व्यवहार करती

हैं जिनके परिणाम अलग-अलग निकलते हैं। कारण यह है कि प्रत्येक देश की सामाजिक रूप-रचना वहाँ के प्रशासनिक संगठन के रूप तथा प्रक्रिया को प्रभावित करती है। यह तथ्य लोक प्रशासन के तुलनात्मक अध्ययन से ज्ञात होता है। यदि एक संस्था या प्रक्रिया किसी देश में सफल रही है तो दूसरे देश में उसे अपनाने से पूर्व उस देश के सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक संदर्भों का समुचित ध्यान रखा जाना चाहिए।

9. **सामाजिक विश्लेषण का प्रभावः** लोक प्रशासन में तुलनात्मक विवेचना के कारण सिद्धांत रचना को वैज्ञानिक आधार मिला है। फलस्वरूप सामाजिक विश्लेषण का क्षेत्र व्यापक बना है। नवोदित त तीय विश्व के राष्ट्र ऐतिहासिक प ष्ठभूमि, भोगोलिक परिस्थिति, जनसंख्या आकार, सामाजिक रूप रचना, आर्थिक विकास आदि की द ष्टि से अनेक भिन्नताएँ रखते हैं। इन विभिन्नताओं के कारण सामाजिक विश्लेषण में तुलनात्मक अध्ययन की अनेक समस्याएँ उठती हैं जिनके फलस्वरूप तुलनात्मक लोक प्रशासन में संदर्भ तथा ईकॉलॉजी के अध्ययन का महत्व बढ़ गया। इस क्षेत्र में विद्वानों ने नए मॉडल, द ष्टिकोण, अध्ययन तरीके विकसित किए तथा अनेक ग्रन्थों की रचना की गई।

10. **व्यावहारिक-कानूनी द ष्टिकोण का महत्वः** जब समाज विज्ञानों में व्यवहारवादी क्रांति हो रही थी और ज्ञान के व्यावहारिक पहलू पर जोर दिया जा रहा था तो लोक प्रशासन में व्यक्ति के वास्तविक व्यवहार को अध्ययन का केन्द्र बनाया जाने लगा। अब कानूनी औपचारिक द ष्टिकोण में परिवर्तन आ गया। फलतः तुलनात्मक लोक प्रशासन के अध्ययन को नई दिशा मिली।

उक्त कारणों से विद्वानों का ध्यान लोक प्रशासन के तुलनात्मक अध्ययन की ओर आकर्षित हुआ। इस क्षेत्र में अनेक नवीन विकास हुए। विचारकों और विद्वानों ने महत्वपूर्ण साहित्य की रचना की। अमेरिका आदि देशों में इस विषय को महाविद्यालयों और विश्वविद्यालायों में अध्ययन के लिए शामिल किया गया। कुछ स्थानों पर यह स्नातक अध्ययन के लिए विशेषीकरण का क्षेत्र बना दिया गया।

तुलनात्मक अध्ययन का व्यवस्थित ढंग से प्रारम्भ एवं विकास
Systematic Begining and Development of the Comparative Studies

तुलनात्मक लोक प्रशासन का व्यवस्थित ढंग से प्रारम्भ प्रिंस्टन कान्फ्रेंस जो 1952 में प्रिंस्टन यूनिवर्सिटी में हुई से मानते हैं। यह कान्फ्रेंस Public Administration Clearing House के द्वारा बुलाई गई। इस कान्फ्रेंस में लोक प्रशासन से संबंधित कमेटी के तहत तुलनात्मक लोक प्रशासन संबंध में एक उप-समिति का गठन किया गया।

1953 में अमेरिकन पोलिटिकल साईंस एसोसिएशन ने तुलनात्मक लोक प्रशासन के संबंध में एक adhoc उप-समिति गठित की जो तुलनात्मक प्रशासन समूह के बन जाने तक इस विषय पर काम करती रही। तुलनात्मक लोक प्रशासन का एक Academic Discipline के रूप में विकास को पुनः दो भागों में बांट कर पढ़ा जा सकता है।

(1) CAG Phase

(2) Post CAG Phase

1. CAG Phase तुलनात्मक प्रशासन समूह का गठन 1963 में अमेरिकन सोसाइटी आफ पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन की एक समिति के रूप में किया गया। इसे वित्तीय सहायता प्रदान करने वाली मुख्य एजेंसी फोर्ड फाउंडेशन थी क्योंकि इस एजेंसी की रूचि उभरते हुए राष्ट्रों की वहुआयामी समस्याओं के बारे में अधिक से अधिक जानकारी हासिल करने में थी। आरंभ में तीन वर्षों के लिए फोर्ड फाउन्डेशन ने तुलनात्मक प्रशासन समूह को वित्तीय सहायता प्रदान की जो बाद में अगले 5 वर्षों के लिए पुनः बढ़ा दी गईः 8 वर्षों में लगभग आधा मिलियन डालर की वित्तीय सहायता फोर्ड फाउन्डेशन के द्वारा CAG को दी गई। 1971 में इस अनुदान का नवीनीकरण नहीं किया गया परंतु यह समूह अन्य क्षेत्रों से मिलने वाली सहायता के बल पर अपना अस्तित्व बनाए रखने में सफल रहा। आरंभ से लेकर 1970 तक फ्रेड रिग्स इस समूह का अध्यक्ष रहा और 1970 में उनका स्थान रिचर्ड गैबल ने लिया।

तुलनात्मक प्रशासन समूह का गठन 3 मुख्य उद्देश्यों के लेकर किया गया -

1. शोध की मात्रा को बढ़ाना

2. पाठन सामग्री एवं तरीको को बेहतर बनाना

3. विकास प्रशासन के क्षेत्र में बढ़िया लोक नीतियाँ बनाने एवं लागू करने के लिए प्रोत्साहन देना।

इन उद्देश्यों को प्राप्त करने हेतु CAG ने एक लंबा चौड़ा Network तैया किया। परिणामस्वरूप विभिन्न विषयों पर बहुत सारी Special कान्फ्रेंस एवं सेमीनारों जो न केवल अमेरिका में करवाने थे बल्कि अन्य देशों में भी करवाने हेतू एक विस्त त schedule तैयार किया गया। CAG ने लोक प्रशासन के विद्वानों एवं प्रशासनिक अधिकारियों के मध्य सेतू का काम किया।

CAG का क्षेत्र अंतर्राष्ट्रीय स्तर का रहा क्योंकि इसने एशिया, अफ्रीका, लैटिन अमेरिका एवं यूरोप के देशों के लोक प्रशासन के संबंध में अधिकारिक तुलनात्मक अध्ययन किए। इस कार्य को करने हेतू CAG ने 11 कमेटियों का गठन किया। ये समितियाँ दो आधारों पर विभक्त थी। एक वे समितियाँ जिनका आधार भौगोलिकता तथा दूसरी वे समितियाँ जिनका आधार विषय वस्तु था। भौगोलिक आधार पर 4 समितियां बनाई गई जो निम्नलिखित थी -

1. कमेटी आन एशिया

2. कमेटी आन यूरोप

3. कमेटी आन लैटिन अमेरिका

4. कमेटी आन अफ्रिका

विषय वस्तु के आधार पर 7 समितियाँ बनाई गई जो निम्नलिखित है -

1. तुलनात्मक शहरी अध्ययनों पर समिति 2. राष्ट्रीय आर्थिक नियोजन पर समिति

3. तुलनात्मक शेक्षिक प्रशासन पर समिति 4. तुलनात्मक विधायनी अध्ययनों पर समिति

5. अंतराष्ट्रीय प्रशासन पर समिति 6. आरगैनाइजेशन थयूरी पर समिति

7. सिस्टमस थयूरी पर समिति

CAG ने लोक प्रशासन विशेषतौर पर तुलनात्मक लोक प्रशासन के क्षेत्र में विभिन्न देशों में बहुत सारे सेमीनार एवं कान्फ्रेंस आयोजित की और बहुत सारी शोध सामग्री का विकास किया जो बाद में (1969) में ड्यूक यूनिवर्सिटी प्रैस के द्वारा CAG के साथ मिलकर 7 volumes में प्रकाशित की गई। 1969 में ही सेज पब्लिकेशन ने एक Quaterely Journal on Comparative Administration, CAG के साथ मिलकर निकालना आरंभ किया। CAG एक Newletter भी नियमित रूप से प्रकाशित करता था जो सभी समितियां जो भिन्न-भिन्न जगहों पर कार्यतर थी के मध्य संपर्क का मुख्य साधन था।

तुलनात्मक प्रशासन समूह के विद्वान अत्याधिक प्रबुध थे जिन्होंने तुलनात्मक लोक प्रशासन से संबंधित नए रास्ते खोलने की कोशिश की और इसे अर्न्तविषयी प्रकृति का बनाने में सराहनीय कार्य किया। इनमें से कुछ प्रमुख विद्वान - प्रो. रिग्स, फैरल हैडी, विलियम सिफिन, जान मांटगोमरी, रालफ ब्राइवैन्ती, फ्रेडरिक क्लीनलैण्ड, जैम्स हैफी इत्यादि हैं।

1971 में फोर्ड फाउन्डेशन के द्वारा वितीय सहायता बंद कर दिए जाने के बाद भी CAG 1973 तक अन्य आय के साधनों के कारण कार्य करता रहा।

II **Post-CAG Phase** 1973 में DAG को अमेरिकन सोसाइटी आफ पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन की अंर्तराष्ट्रीय समिति के साथ जोड़ दिया गया और एक नई समिति Section on International and Comparative Administration (SICA) का गठन किया गया। अब CAG की अपनी अलग पहचान नहीं थी। इसलिए 1980 के दशन में Comp. Public Administration Movement का भविष्य उतना चमकदार नहीं था जितना CAG Phase के दौरान था। इसी कारण 1980 के दशक में CAG के द्वारा संचालित कार्यक्रमों को काफी हद तक कम कर दिया।

SICA के अस्तित्व में आने के बाद उसके दो मुख्य केन्द्र बिन्दु थे- एक तुलनात्मक लोक प्रशासन जो विभिन्न राष्ट्रों की प्रशासनिक व्यवस्थाओं के तुलनात्मक अध्ययन से संबंधित था तथा दूसरा अंर्तराष्ट्रीय प्रशासन - जो अंतर्राष्ट्रीय एवं क्षेत्रीय शांत एवं सहयोग को बनाए रखने वाली ऐजेन्सियों के प्रशासनिक संगठन एव कार्यों के अध्ययन से संबंधित था। SICA का मुख्य उद्देश्य इन दोनों बिन्दु के मध्य एक कड़ी स्थापित करने का था जिसमें यह फेल रहा। यह तथ्य 1998 में जब SICA ने अपनी Silver Jublee उत्सव 25 साल मनाया उसमें खुलकर सामने आया। इन दोनों केन्द्र बिन्दुओं पर SICA के विद्वानों का झुकाव अलग-अलग समय पर अलग-अलग रहा। जब-जब SICA के चैयरमैन एवं इसकी कार्यकारी परिषद के सदस्यों

में बदलाव आया तब-तब अलग-अलग केन्द्र बिन्दु मुख्य बिन्दु के रूप में अध्ययन का केन्द्र रहे। इसका कारण यह था कि SICA के अधिकतर सदस्य राजनीति विज्ञान के थे लेकिन उनके उप-विषय अलग-अलग थे। जिन विद्वानों का केन्द्र बिन्दु अर्न्तराष्ट्रीय प्रशासन रहा उनका Specialisation अर्न्तराष्ट्रीय संबंध में था और जिन विद्वानों का केन्द्र बिन्दु तुलनात्मक लोक प्रशासन था उनका specialisation लोक प्रशासन में था।

हालांकि हाल ही में Public Administration Review Journal जो अमेरिका से प्रकाशित होता है में एक Article लिखते समय फैरल हैडी ने कुछ ऐसे मुद्दों की तरफ इंगित किया है जो दोनों केन्द्र बिन्दुओं से संबंधित है। उसने इन मुद्दों को प्रश्नों की शक्ल में उठाया है। इस प्रकार भविष्य में SICA से ऐसी आशा है कि वह इन दोनों अध्ययन क्षेत्रों में अच्छा सामंजस्य स्थापित करने में सफल रहेगा।

अध्याय-2
तुलनात्मक लोक प्रशासन का अर्थ, प्रकृति, क्षेत्र एवं महत्व
(Meaning, Nature, Scope and Significance of Comp-Public Administration)

अवधारणा
(Concept)

लोक प्रशासन के साहित्य में तुलनात्मक अध्ययनों का प्रचलन या प्रारम्भ अपेक्षाकृत नवीन अवधारणा है। द्वितीय विश्वयुद्ध तक स्वतंत्र विषय के रूप में तुलनात्मक लोक प्रशासन प्रायः अज्ञात था किंतु द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद एशिया अफ्रीका एवं लैटिन अमेरिका में नवोदित राष्ट्रों के उदय के साथ ही लोक प्रशासन के तुलनात्मक अध्ययन में अभिरूचि विकसित हुई। विश्वयुद्ध के बाद अनेक तत्वों ने मिलकर लोक प्रशासन के विचारकों को विभिन्न संस्कृतियों में लोक प्रशासन के तुलनात्मक व्यवहार का विश्लेषण करने हेतू प्रेरित किया। युद्धोतर विश्व की नवीन समस्याओं के समक्ष अध्ययन का प्राचीन परम्परागत द ष्टिकोण अपर्याप्त सिद्ध हुआ तथा नवीन द ष्टिकोण की खोज की जाने लगी जिसके फलस्वरूप लोक प्रशासन को तुलनात्मक रूप देकर उसके अध्ययन को विकसित किया गया।

इस प्रकार तुलनात्मक लोक प्रशासन का इतिहास मात्र 50 वर्ष पुराना है और इसी कारण यह लोक प्रशासन का अपेक्षाकृत नया उप विषय है। लेकिन इसका महत्व निरंतर बढ़ता जा रहा है और सामाजिक विज्ञानों में यह एक महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त कर रहा है।

अर्थ एवं परिभाषा

सामान्य अर्थो में दो या अधिक देशों, क्षेत्रों, प्रांतों या स्थानों की लोक प्रशासनिक व्यवस्थाओं के मध्य तुलनात्मक अध्ययन ही तुलनात्मक लोक प्रशासन है।

निमरोद रैफिली के अनुसार - ''तुलनात्मक लोक प्रशासन, तुलनात्मक आधार पर लोक प्रशासन का अध्ययन है।''[3]

फैरेल हेडी के शब्दों में - ''तुलनात्मक लोक प्रशासन मुख्य रूप से सिद्धांत -निर्माण प्रक्रिया के समान है।''

अमेरिका की प्रशासन के **लोक प्रशासन समूह** के अनुसार, ''वह लोक प्रशासन का एक ऐसा सिद्धांत है जो विभिन्न संस्क तियों तथा राष्ट्रीय परिवेशों में प्रयोग किया जाता है तथा उसे तथ्यात्मक सामग्री की सहायता से जाँचा जा सकता है।'' रिग्स के अनुसार यह पारिस्थिति की उन्मुख अध्ययन है। फैरेल हैडी ने उसे सिद्धांत निर्माण की प्रक्रिया के समान माना है।

टी.एन. चतुर्वेदी के अनुसार, ''तुलनात्मक लोक प्रशासन के अंतर्गत विभिन्न संस्कृतियों में कार्यरत विभिन्न राज्यों की सार्वजनिक एवं प्रशासनिक संस्थाओं का तुलनात्मक अध्ययन किया जाता है।'[2]

एफ.डब्ल्यू. रिग्ज के अनुसार - ''तुलनात्मक शब्द का प्रयोग अनुभवमूलक तथा सिद्धांत निर्माण में सहायक अध्ययनों के लिए ही किया जाना चाहिए। तुलनात्मक लोक प्रशासन, आदर्शमूलक उपागम से अनुभवमूलक उपागम की ओर जाने, विशिष्टता

(Ideographic) से सामान्यपरकता (Nomothetic) की ओर जाने तथा गैर पारिस्थितिकीय से पारिस्थितिकीय आधार को ढूंढने की प्रव त्तियां रखता है।''

गाई पीटर्स के शब्दों में - ''यदि प्रशासन को जाँच का एक विशाल तथा सामान्य क्षेत्र समझा जाए तो तुलनात्मक लोक प्रशासन इसकी एक विशिष्ट शाखा है जो प्रशासन के सामाजिक, सांस्कृतिक तथा राजनीतिक वातावरण को समझने में हमारी सहायता करती है।''

ए.आर.त्यागी के कथनानुसार, ''तुलनात्मक लोक प्रशासन एक ऐसा अनुशासन है जो लोक प्रशासन के संपूर्ण सत्य को जानने के लिए समय, स्थान और सांस्कृतिक विभिन्नता की परवाह किए बिना तुलनात्मक अध्ययन में व्यावहारिक यंत्रों का प्रयोग करता है।''[4]

उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर कहा जा सकता है कि तुलनात्मक लोक प्रशासन की निम्नांकित विशेषताएँ है -

1. यह लोग प्रशासन के ज्ञान की एक नई शाखा है.
2. यह लोक प्रशासन के अध्ययन क्षेत्र में नूतन अवधारणा है।
3. यह दो या अधिक प्रशासनिक संगठनों, देशों तथा व्यवस्थाओं के बीच तुलनात्मक विश्लेषण अध्ययन करने से संबंधित है।
4. इसमे पूर्व के परंपरागत सिद्धांतों के स्थान पर वैज्ञानिक विधि को अधिक बल दिया जाता है।
5. इसमें पूर्व के परंपरागत सिद्धांतों के स्थान पर वैज्ञानिक विधि को अधिक बल दिया जाता है।
5. विशिष्टता के स्थान पर सामान्यीकरण की ओर जाने के प्रयास किए जाते हैं।
6. लोक प्रशासन को एक निर्जीव यंत्र मानने की बजाए उसे ऐसे ढांचे के रूप में देखा जाता है जो अपने पर्यावरण से प्रभावित होता है तथा पर्यावरण के घटकों को प्रभावित भी करता है।
7. यह विश्व के देशों, राज्यों तथा संगठनों के मध्य दूरी बनाए रखने के स्थान पर उनमें समीपता लाने तथा एक दूसरे से प्ररेणा पाने के लिए प्रयासरत है।
8. तुलनात्मक लोक प्रशासन की विचारधारा अन्य समाज विज्ञानों से प थकता बनाए रखने के स्थान पर उनसे समन्वय स्थापित करने एवं अन्तरविषयी द ष्टिकोण अपनाने पर जोर देती है।

तुलनात्मक लोक प्रशासन की प्रकृति
(Nature of Comp. Public Administration)

तुलनात्मक लोक प्रशासन की प्रकृति को इस विशेषताओं के माध्यम से दर्शाया जा सकता जो निम्नलिखित हैं -

1. **Recent Origin:** सामाजिक विज्ञानों की श्रेणी में लोक प्रशासन विषय अपने आप में काफी नया विषय है और तुलनात्मक लोक प्रशासन, लोक प्रशासन का एक उप-विषय (Sub-discipline) होने के कारण और भी आधुनिक एवं नवीन विषय है। इनका जन्म द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् 1952 की प्रिंसीटन कान्फ्रेस (Princeton Confrence) आन एडमिनिस्ट्रेशन जो अमेरिका की प्रिंसीटन नामक यूर्निवसिटी में हुई, माना जाता है। इस प्रकार यह विषय केवल 50 वर्ष पुराना है और अब तक अपने शैशव काल से भी बाहर नहीं निकल पाया है।
2. **सर्वमान्य पैराडाइमज माडल की कमी (Absence of Dominant Paradigms):** प्राकृतिक विज्ञानों में शोध कार्य सर्वमान्य वैज्ञानिक प्राप्तियों के आधार पर उत्पादित माडलों से निर्देशित होते हैं। ये माडल वैज्ञानिक जगत के लोगों के सामने आने वाली समस्याओं का हल निकालने में अहमभूत भूमिका निभाते हैं। जब कोई पैराडाइम इस प्रक्रिया में असफल रहता है तो उसका स्थान अन्य पैराडाइम के द्वारा ले लिया जाता है। इस प्रक्रिया को वैज्ञानिक क्रान्ति के नाम से जाना जाता है।

   इस तरज पर अगर सामाजिक विज्ञानों के संदर्भ में देखा जाए तो प्रत्येक सामाजिक विज्ञान के पास सर्वमान्य पैराडाइमज की कमी पाई जाती है। प्राकृतिक विज्ञानों की तरह तो लोक प्रशासन के Parent discipline राजनैतिक विज्ञान के पास

भी अब तक ऐसा कोई पराडाइम नहीं है। हांलाकि कुछ सामाजिक विज्ञान इस ढंग के पैराडाइम रखने का claim करते है लेकिन उनकी applicability सीमित होती है। इसी कारण तुलनात्मक लोक प्रशासन अब तक ऐसे पैराडाइमज का विकास करने में असमर्थ रहा है।

3. **(Multi-Perspective Character):** प्रव तियाँ तुलनात्मक लोक प्रशासन की पहचान बहुत सारी (Multi perspective) रखने के रूप में की जाती है। विभिन्न विद्वानों ने इस विषय के संबंध में अलग-अलग प्रव तियों की व्याख्या की है। प्रो. रिग्ज फैरेल हैडी रार्वट टी गोलेम्यूस्की आदि इनमें प्रमुख विद्वान हैं।

   एफ.डब्ल्यू. रिग्ज ने लोक प्रशासन के तुलनात्मक अध्ययन के क्रम (सन् 1962) में तीन प्रकार की प्रव त्तियों का वर्णन किया था -

   i. **आदर्शात्मक से अनुभवमूलक उन्मुखता (Normative to Empirical):** अर्थात केवल सैद्वान्तिक नियमों की व्याख्या करने या केवल आदर्शों की चर्चा करने के स्थान पर उन परिस्थितियों को अधिक महत्व दिया जाए जो वास्तव में हमारे सामने हैं तथा प्रशासन को प्रभावित करती हैं। यह ''क्या होना चाहिए' 8 के स्थान पर ''क्या है'' पर अधिक ध्यान देता है। वस्तुतः लोक प्रशासन विषय का प्रारंभिक स्वरूप एवं मान्यताएं इसमें उन बिन्दुओं को महत्व प्रदान करती थी जो कुशलता, उत्कृष्टता, वैधानिकता तथा औपचारिक सिद्धांतों के इर्द-गिर्द घूमते थे। यह परंपरागत **आदर्शात्मक** (Normative) स्वरूप या मान्यता शीघ्र ही दम तोड़ने लगी जब विकासशील देशों का उदय होने लगा। व्यवहारवादी आन्दोलन ने लोक प्रशासन सहित सभी सामाजिक विज्ञानों मे तथ्यों तथा वास्तविकता पर बल प्रदान किया जो मानव व्यवहार को महत्वपूर्ण मानता हे। इस **अनुभवमूलक** (Empirical) उन्मुखता ने विकास प्रशासन के परंपरागत आदर्शात्मक स्वरूप को भी व्यावहारिक धरातल पर विश्लेषित करने का आधार प्रदान कर दिया। नवीन लोक प्रशासन की मान्यताएँ तथा तुलनात्मक लोक प्रशासन की पद्धतियां वास्तव में आदर्श तथा अनुभव एवं सिद्धांत तथा व्यवहार के मध्य सहमति का एक बिन्दु ढूंढने का प्रयास करती हैं।

   ii. **विशिष्टता से सामान्यपरकता (Ideographic to Nomothetic):** रिग्ज के अनुसार विशिष्टता (Ideographic) अर्थात किसी एक संगठन, व्यक्ति या समाज के अध्ययन के बजाए उन तथ्यों को अधिक महत्व दिया जाए जो सामान्यपरक (Nomothetic) या व्यापकता लिए होते हैं। विशिष्टता के स्थान पर सामान्यपरकता तभी आ सकती है जबकि हम तुलनात्मक अध्ययनों पर बल दें। किसी एक ऐतिहासिक घटना, किसी एक अभिकरण या किसी एक सांस्कृतिक क्षेत्र का अध्ययन करने को रिग्ज ने सार्थक नहीं माना है। इस प्रकार के अध्ययन **भाव चित्रात्मक**, विशिष्टता तथा संकीर्णता लिए हुए नजर आते हैं। इन इडियोग्राफिक अध्ययनों के स्थान पर उन नोमोथेटिक या **विधि संबंधी** अध्ययनों की सार्थकता अधिक है जो सामान्यीकरण तथा सिद्धांत निर्माण में सहायता कर सकते हैं। वास्तव में विशिष्टता या किसी एक देश (या एक संगठन) की प्रशासनिक व्यवस्था का अध्ययन वर्णनात्मक अधिक होते थे जबकि दो या अधिक देशों या संगठनों के प्रशासनिक व्यवहार के अध्ययन तुलनात्मक होने के कारण साधारणीकरण या सामान्यीकरण (Generalization) की ओर उन्मुख प्रतीत होते हैं। यद्यपि केस स्टडी विधि, विशिष्टता (Ideographic) की परिचायक है तथापि यह नहीं कहा जा सकता है कि सभी अध्ययन तुलनात्मक, नोमोथेटिक तथा सामान्यकृत होने पर ही सर्वाधिक उपयोगी हो सकते हैं।

   iii. **गैर पारिस्थितिकीय से पारिस्थितिकीय (Non Ecological to Ecological):** अर्थात लोक प्रशासन को प्रभावित करने वाले सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, राजनीतिक तथा भौगोलिक पर्यावरण का भी गहनता से अध्ययन किया जाए। यह पारिस्थितिकीय द ष्टिकोण है जो वर्तमान में तुलनात्मक लोक प्रशासन की मुख्य आवश्यकता माना जाता है। लोक प्रशासन के पूर्ववर्ती अध्ययन मूलतः गैर पारिस्थितिकीय (Non Ecological) होते थे जिनमें प्रशासन के आसपास के पर्यावरण का उल्लेख बहुत कम या नहीं होता था, जबकि वास्तविकता यह है कि किसी भी देश का लोक प्रशासन अपने आसपास के समाज, प्रकृति, संसाधनों, सामाजिक मूल्यों, राजनीतिक दशाओं, ऐतिहासिक संदर्भों, आर्थिक स्थिति तथा परंपराओं से न केवल प्रभावित होता है बल्कि प्रशासन इन सभी सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक कारकों को प्रभावित भी करता है। अतः रिग्ज ने तुलनात्मक लोक प्रशासन के अध्ययनों में पारिस्थितिकीय (Ecological) महत्व को समझने पर बल दिया है।

फैरेल हैडी ने तुलनात्मक लोक प्रशासन की प्रकृति को चार रूपों में विभाजित किया है - (1) सुधरी हुई पारस्परिक प्रकृति (2) विकासमान प्रकृति (3) सामान्य प्रणाली का प्रारूप एवं (4) मध्यवर्ती सिद्धातों का प्रारूप। प्रथम रूप में महत्वपूर्ण प्रशासनिक संस्थाओं के प्रशासन का तुलनात्मक अध्ययन सम्मिलित है। उसमें विकसित देशों के प्रशासनिक संगठनों एवं संरचनाओं के तुलनात्मक अध्ययन को भी लिया जाता है। द्वितीय रूप में, उन समस्याओं का तुलनात्मक अध्ययन किया जाता है जो सामाजिक एवं आर्थिक विकास में तीव्रता के कारण उत्पन्न हुई हैं। त तीय रूप में तुलनात्मक लोक प्रशासन में सामाजिक वातावरण के अनुरूप प्रशासनिक व्यवस्था का अध्ययन शामिल है। चतुर्थ प्रारूप में किसी प्रशासनिक व्यवस्था की किसी निश्चित प्रक्रिया को लिया जा सकता है

रॉबर्ट टी. गोलेम्ब्यूस्की ने तुलनात्मक लोक प्रशासन की तीन विषय वस्तुओं (Theme) को रेखांकित किया है -

i. यह ध्यान केन्द्रित करने योग्य विषयों या मुद्दों को महत्व देता है।

ii. परिणाम दे सकने वाले प्रयासों को महत्व देता है।

iii. उपागम या अध्ययन पद्धतियों को अपनाने के लिए अभिप्रेरणा प्रदान करता है।

उपर्युक्त वर्णित विषयवस्तु तुलनात्मक लोक प्रशासन को वैज्ञानिक स्वरूप में प्रदान करने, व्यापकता देने तथा तार्किक एवं व्यावहारिक उपदेयता सिद्ध करने की दिशा में निर्देश है ताकि सफलतापूर्वक आगे बढ़ा जा सके।

तुलनात्मक लोक प्रशासन का मुख्य बल निम्नांकित बिन्दुओं पर रहता है -

i. कई उद्देश्यों को द ष्टिगत रखते हुए, संगठनों को विशिष्ट संस्कृतियों तथा राजनीतिक पर्यावरण के संदर्भ में देखा जाना चाहिए।

ii. लोक प्रशासन में प्रचलित सिद्धांत अपर्याप्त हैं अतः उनकों परिपूर्ण बनाया जाना चाहिए।

iii. प्रत्येक प्रशासन तथा इनका व्यवहार कई प्रकार के मूल्यों (values) से सराबोर हैं अतः तदनुरूप विश्लेषण करना चाहिए।

iv. किसी भी अध्ययन की उपादेयता सिद्ध करने के लिए सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक दोनों पक्षों को सम्मिलित कर विश्लेषण करना चाहिए।

रार्बट डहाल का कहना है - ''लोक प्रशासन के अध्ययन को अनिवार्यत : और अधिक व्यापक आधार वाला होने चाहिए, केवल तकनीकों एवं विधियों पर आधारित न रहकर घटते बढ़ते ऐतिहासिक, सामाजिक, आर्थिक एवं अन्य अनुकूलक घटकों तक विस्त त होना चाहिए।''

4. **अमेरिकन विद्वानों का बोलबाला (Dominance of American Scholars):** तुलनात्मक लोक प्रशासन से संबंधित अधिक से अधिक साहित्य का विकास करने में अमेरिकन विद्वान खासतौर से CAG के विद्वानों का अहमभूत योगदान रहा है। इसके साथ इस विषय के संबंध में शोध करने हेतू वितीय सहायता भी या तो अमेरिकन सरकार द्वारा दूसरी अन्य अमेरिकन एजेंसियों जैसे कि फोर्ड फाउन्डेशन जो विकासशील देशों के प्रशासन संबंधि समस्याओं विश्लेषण करने तथा उनका समाधान निकालने में Interested थी, ने ही प्रदान की। ऐसा इस कारण भी था क्याकेंकि अमेरिका ने ही एशिया, अफ्रीका एवं लैटिन अमेरिका के नवोदित राष्ट्रों को तकनीकी एवं आर्थिक सहायता प्रदान की थी। इन देशों में इन प्रोग्रामों की असफलता भी अमेरिकन विद्वानों एक अमेरिकन सरकार के लिए इन देशों की प्रशासनिक व्यवस्थाओं को पढ़ने संबंधि चाहत पैदा की। इन्हीं कारण से तुलनात्मक लोक प्रशासन के साहित्यक विकास में अमेरिकन विद्वानों का बोलवाला (Domiance) रहा।

5. **सिद्धांत-निर्माण प्रयास पर दबाव तुलनात्मक लोक प्रशासन की अन्य महत्वपूर्ण (Theory Building Efforts):** विशेषता यह है कि इसका अधिकाधिक दबाव सिद्धांत निर्माण के विषय में रहा। सिद्धांतों एवं माडलों का विकास किसी भी विषय के लिए अत्याधिक आवश्यक है ये सिद्धांत एवं माडल उस विषय अन्य क्षेत्रों को खोजनें एवं उनके संबंध में शोध को बढ़ावा देने में अत्यंत कारगर होते हैं सामाजिक विज्ञानों में तो इनकी आवश्यकता और भी अधिक बढ़ जाती है क्योंकि इनके पास शोध के संबंध की Fund&Crunch संबंधी समस्या बनी रहती है।

आरंभ में तुलनात्मक लोक प्रशासन का सिद्धांत निर्माण प्रक्रिया में दबाव general एवं Middle Range Theories के निर्माण पर केन्द्रित रहा। उदाहरणार्थ प्रेरिग्स के Agraria & Indusbia एवं Fured-Prismatic Diffracted माडल और टी.डोरसी का Information Energhy माडल को General Theories में गिना जाता है तथा मैक्स बेबर के Ideal Type Buseaueracy संबंधी माडल को Middle Range की श्रेणी मे गिना जाता है

हालांकि आधुनिक विद्वान जैसे की रार्वट प्रिस्थस (Robert Presthus) एवं सुब्रमन्यण (Subramanian) ने तुलनात्मक लोक प्रशासन के अध्ययन क्षेत्र में General Theories से Middle Range एवं Micro Theories की तरफ रूझान संबंध के वकालत की है।

6. **विकास प्रशासन पर केन्द्रित (Focused on Development Administration):** विकासशील देश जो एक लंबे समय तक Exploitation का शिकार रहे जब आजाद हुए तो उनके प्रशासन के सामने अनेक चुनौतियाँ थी। सबसे बड़ी चुनौती विकास की थी अतः प्रशासन का महत्वपूर्ण कार्य चहुंमुखी विकास लाना था इसी कारण इन देशों के प्रशासन को विकास प्रशासन कहा जाता है। इन चुनौतियों के साथ झुझने के लिए इन देशों को मदद की आवश्यकता थी जो विकसित देशों के द्वारा Techno - Economic Assistance (तकनीकी आर्थिक सहायता) के रूप में इन्हें प्रदान की गई। लेकिन ये तकनीकी आर्थिक सहायता संबंधी प्रोग्राम इन देशों में असफल रहे। अतः विकसित देश खासतौर से अमेरिका के विद्वानों की लालसा इन देशों की प्रशासनिक व्यवस्थाओं के अध्ययन के संबंध में ओर अधिक बढ़ गई। ये विद्वान विकासशील देशों में इन प्रोग्रामों के असफलता के कारणों का पता लगाना चाहते थे अतः उन्होंने इन देशों की प्रशासनिक व्यवस्थाओं को अपने अध्ययन का केन्द्र बनाया। इस प्रकार इन देशों का विकास प्रशासन तुलनात्मक लोक प्रशासन के विद्वानों के अध्ययन का केन्द्र रहा।

तुलनात्मक लोक प्रशासन का क्षेत्र
(Scope of Comparative Public Administation)

स्वाभाविक प्रश्न यह उत्पन्न होता है कि तुलनात्मक लोक प्रशासन का अध्ययन किन-किन क्षेत्रों में किया जा सकता है। सामान्यतया लोक प्रशासन के अध्ययन का क्षेत्र विश्व के समस्त देशों की प्रशासनिक व्यवस्थाएँ मानी जाती हैं। इसके अध्ययन में निम्नलिखित बातों को सम्मिलित किया जा सकता है :

1. **सार्वजनिक एवं व्यक्तिगत प्रशासन की विभिन्न बातों का अध्ययनः** तुलनात्मक लोक प्रशासन का क्षेत्र सार्वजनिक एवं व्यक्तिगत प्रशासन की निम्न बातों का अध्ययन करना है :

   (i) एक देश या संस्कृति की संरचनाओं का तुलनात्मक अध्ययन. (ii) अंतर्राष्ट्र और अंतः संस्कृति की संरचनाओं का तुलनात्मक अध्ययन. (iii) घटनाओं का तुलनात्मक अध्ययन. तथा (iv) विभिन्न राष्ट्र और संस्कृतियों की घटनाओं का तुलनात्मक अध्ययन।

2. **प्रजातान्त्रिक संस्थाओं का तुलनात्मक अध्ययनः** तुलनात्मक लोक प्रशासन के क्षेत्र में विभिन्न देशों की प्रजातान्त्रिक संस्थाओं अध्ययन किया जाता है। इसमें इन प्रजातान्त्रिक संस्थाओं के कार्यों, गठन एवं महत्व आदि का अध्ययन किया जाता है। उदाहरण के लिए, भारत व संयुक्त राज्य अमरीका तथा इंग्लैण्ड की संसदों का तुलनात्मक अध्ययन।

3. **प्रशासन पर नियंत्रण के विभिन्न साधनों का तुलनात्मक अध्ययनः** तुलनात्मक लोक प्रशासन में विभिन्न देशों की कार्यपालिका, व्यवस्थापिका एवं न्यायपालिका के प्रशासन पर नियंत्रण का तुलनात्मक अध्ययन भी किया जाता है। उदाहरण के लिए, भारत एवं इंगलैण्ड के अध्ययन के प्रशासन पर न्यायिक नियंत्रण का तुलनात्मक अध्ययन।

4. **कार्मिक वर्ग के प्रशासन एवं समस्याओं का तुलनात्मक अध्ययनः** तुलनात्मक लोक प्रशासन में विभिन्न देशों के कार्मिक वर्ग के प्रशासन तथा उनकी समस्याओं का भी तुलनात्मक अध्ययन किया जाता है। उदाहरण के लिए, रूस और स्विट्जरलैण्ड के कार्मिक वर्ग के प्रशासन का तुलनात्मक अध्ययन।

5. **कार्यात्मक प्रशासन का तुलनात्मक अध्ययनः** तुलनात्मक लोक प्रशासन के क्षेत्र में शिक्षा, समाज तथा आर्थिक प्रशासन आदि विभिन्न कार्यात्मक प्रशासनों का भी तुलनात्मक अध्ययन किया जाता है। उदाहरण के लिए, भारत एवं संयुक्त राज्य अमरीका के शिक्षा प्रशासन का तुलनात्मक अध्ययन।

6. **अन्य प्रशासनों की तुलनाः** तुलनात्मक लोक प्रशासन के अध्ययन में विदेशी प्रशासन, अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं का प्रशासन, तुलनात्मक स्थानीय प्रशासन तथा मानव व्यवहार का तुलनात्मक अध्ययन किया जाता है।

तुलनात्मक लोक प्रशासन के क्षेत्र के उपर्लिखित में अध्ययन निम्न तीन स्तरों पर किए जा सकते हैं -

1. व हत्स्तरीय अध्ययन,
2. मध्यवर्ती अध्ययन,
3. लघुस्तरीय अध्ययन,

1. **व हतस्तरीय अध्ययनः** इस अध्ययन में किसी एक देश की संपूर्ण प्रशासकीय व्यवस्था का तुलनात्मक अध्ययन दूसरे देश की संपूर्ण प्रशासकीय व्यवस्था के साथ किया जाता है, जैसे भारत की प्रशासनिक व्यवस्था का इंग्लैण्ड, जर्मनी आदि देशों की प्रशासनिक व्यवस्था से किया जाता है। इस अध्ययन में दो देशों के आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक पर्यावरण का भी अध्ययन किया जाता है।
2. **मध्यवर्ती अध्ययनः** मध्यवर्ती अध्ययन - क्षेत्र में दो देशों की प्रशासनिक व्यवस्था के किसी एक बड़े अंग का तुलनात्मक अध्ययन किया जाता है, जैसे भारत और ब्रिटेन में नौकरशाही की तुलना, भारत और अमरीका की स्थानीय सरकार आदि का अध्ययन किया जाता है इस प्रकार इस अध्ययन में न तो पूरी तरह से प्रशासनिक व्यवस्था का अध्ययन किया जाता है और न ही किसी सूक्ष्म अंग की तुलना का, बल्कि प्रशासन के एक बहुत बड़े भाग की तुलना देश की उसी स्तर की प्रशासनिक व्यवस्था से किया जाता है।
3. **लघुस्तरीय अध्ययनः** उपर्युक्त दोनों अध्ययनों के विपरीत लघुस्तरीय अध्ययन में सूक्ष्म द ष्टि से तुलनात्मक अध्ययन किया जाता है। आजकल सामाजिक विज्ञानों में लघुस्तरीय अध्ययन अधिक प्रचलित है। लोक प्रशासन इसका अपवाद नहीं है। इसमे किसी एक संगठन का दूसरे संगठन से उसके प्रतिरूप की तुलना से संबंधित है। सूक्ष्म अध्ययन प्रशासनिक प्रणाली के किसी लघु भाग का विश्लेषण हो सकता है। इसमें अध्ययन का क्षेत्र छोटा और गहन होता है, जैसे भारत का दूसरे देशों के प्रशासनिक संगठनों, भर्ती या प्रशिक्षण प्रणाली का अध्ययन। आजकल ऐसे अध्ययन अधिक प्रचलित और उपयोगी हैं।

   ऊपर लिखित अध्ययन निम्नलिखित Range के हो सकते हैं।

1. तुलनात्मक लोक प्रशासन का क्षेत्र अंतरराष्ट्रीय (दो देशों के मध्य) हो सकता है। दो से अधिक देशों की प्रशासनिक व्यवस्थाओं का अध्ययन भी किया जा सकता है जिस **बहु राष्ट्रीय विश्लेषण** कहा जाता है।
2. इसका क्षेत्र **अंतर्देशीय** (देश के अंदर ही) हो सकता है जबकि एक ही देश की दो संस्थाओं जैसे रेलवे बोर्ड तथा रिजर्व बैंक का आपसी अध्ययन।
3. यह **अंतरसांस्कृतिक** भी हो सकता है जैसे कि अमेरिका के लोकसेवकों का तथा भारत के लोकसेवकों का जनता से व्यवहार का अध्ययन।
4. इसमें **समसामयिक** (Contemporary) तथा **संकरसामयिक** (Crosss Contemporary) अध्ययन भी किए जाते हैं जैसे कि आज के भारत की जापान से तुलना समसामयिक है किन्तु आज के भारतीय प्रशासन की मौर्यकाल से तुलना संकरसामयिक प्रकृति की होगी। इसे बहु कालात्मक विश्लेषण भी कहा जाता है।
5. तुलनात्मक प्रशासनिक अध्ययनों में **विकसित, विकासशील** तथा अत्यंत पिछड़े देशों के मध्य भी अध्ययन किया जा सकता है।
6. इसमें प्रशासन की कार्यप्रणाली, संरचना, संगठन, कारणों, पर्यावरण तथा संदर्भों के आधार पर भी अध्ययन हो सकते हैं। इन्हें **अंतरसंरचनात्मक, अंतर संस्थागत, अंतरविधायी** तथा **अंतरपर्यावरणीय** अध्ययन कहा जा सकता है। उदाहरण के लिए भारत के मंत्रिमंडल सचिवालय में ढ़ांचे की ब्रिटेन के मंत्रिमंडल सचिवालय के संगठन से तुलना अंतरसंगठनात्मक अध्ययन की श्रेणी होगी

   अध्ययन एवं अनुसंधान की विविध सीमाओं तथा वाध्यताओं साथ ही साथ अध्ययनों की उपादेयता को देखते हुए प्रो- सुरेन्द कटारिया ने निम्नलिखित बिन्दुओं या विषयवस्तु को तुलनात्मक प्रशासनिक अध्ययन क्षेत्र में सम्मिलित किया है-

1. प्रशासनिक प्रणालियों या व्यवस्थाओं का पर्यावरण।
2. संपूर्ण प्रशासनिक व्यवस्था की संरचना एवं कार्यकरण।
3. पदसोपान, कार्यविभाजन, सत्ता, कर्त्तव्य, केन्द्रीकरण, विकेन्द्रीकरण, नियंत्रण, विशेषीकरण तथा श्रम विभाजन इत्यादि प्रशासनिक बिन्दु। यह प्रशासनिक तंत्र का औपचारिक स्वरूप है।
4. प्रशासनिक संगठनों में अनौपचारिक संगठन तथा उनके व्यावहारिक आयाम जैसे अभिप्रेरणा, मैत्री संबंध, मनोबल का स्तर, अनौपचारिक संचार, नेत त्व तथा वर्गीय भावनाएँ।
5. संगठन में कार्यरत व्यक्तियों की विविध भूमिकाएं।
6. प्रशासनिक कार्यप्रणाली, संगठनात्मक व्यवहार तथा कार्मिकों के मध्य अंतः संबंध।
7. नीति एवं निर्णय को प्रभावित करने वाले एवं उससे संबंद्ध तंत्र।
8. प्रशासनिक एवं संगठनात्मक कार्यकुशलता तथा निष्पादन मूल्यांकन।
9. संचार की संपूर्ण प्रणाली।
10 संसाधनों तथा प्रशासनिक लक्ष्यों के क्रम में अंतरसंबंध।

लोक प्रशासन में बढ़ती विशेषज्ञता तथा विकास प्रशासन की आवश्यकता ने कई शाखाओं जैसे आर्थिक प्रशासन, सामाजिक प्रशासन, स्वास्थ्य प्रशासन, शैक्षिक प्रशासन, ग्रामीण प्रशासन, नगरीय प्रशासन, वित्तीय प्रशासन, कार्मिक प्रशासन, राज्य प्रशासन, सुधार प्रशासन, पर्यावरण प्रशासन तथा ऊर्जा प्रशासन इत्यादि को जन्म दिया है जो तुलनात्मक लोक प्रशासन के अध्ययनों के लोकप्रिय क्षेत्र भी बन रही है।

निष्कर्षतः तुलनात्मक लोक प्रशासन का क्षेत्र भी उतना ही विस्त त हो सकता है जितना कि स्वयं लोक प्रशासन का कार्य क्षेत्र है। इसमें नियोजन, संगठन, कार्मिक, निर्देशन, समन्वय, प्रतिवेदन, बजट, नीति, विधि, जनसंपर्क तथा कार्यक्रम कार्यान्वयन सहित प्रशासन के पर्यावरणीय कारकों के आधार पर गहन या व्यापक अनुसंधान आवश्यकतानुसार किए जाते हैं।

तुलनात्मक लोक प्रशासन का महत्व
(Significance of Comp-Public Administration)

लोकप्रशासन को ब्रिटेन, अमेरिका या फ्रांस के संदर्भ में समझने की अपेक्षा, इसे संपूर्ण विश्व के लिए समान वैज्ञानिक विषय के रूप में स्थापित करने के क्रम में तुलनात्मक अध्ययन का विशिष्ट महत्व है। तुलनात्मक लोक प्रशासन की विचारधाराएँ तथा अनुसंधान प्रव त्तियां निस्संदेह इस विषय को लोकप्रियता के शिखर पर ले आयी हैं। तुलनात्मक लोक प्रशासन के अध्ययनों ने क्षेत्रवाद या स्थानीयवाद की संकीर्णताओं को समाप्त किया है तथा समग्र लोक प्रशासन को विशाल, गहन, उपयोगी तथा लोकप्रिय बनाया है। प्रविधि (Methodology) पर आधारित तुलनात्मक लोक प्रशासन ने सिद्धांत निर्माण की दिशा में वैज्ञानिक द ष्टिकोण अपनाया है अतः इससे सामाजिक विश्लेषण के क्षेत्र को विस्त त बनाने की प्रक्रिया को प्रोत्साहन मिला है।

तुलनात्मक लोक प्रशासन की विशिष्ट समस्याओं तथा महती आवश्यकतों के क्रम में रोबट कहते है - ''विश्व में कार्यरत लोक प्रशासन तथा दूसरी संस्थाएं व्यापक विभेदों से युक्त हैं। देशों की कार्यशील जनसंख्या में से नौकरशाही के रूप में कार्य करने वालों की संख्या में भी भारी भिन्नता है। संयुक्त राज्य अमेरिका में 18 प्रतिशत, फ्रांस में 33 प्रतिशत तथा स्वीडन में 38 प्रतिशत कार्यशील जनसंख्याँ सरकारी सेवाओं में है। अमेरिका में 70 प्रतिशत तो दूसरी ओर इटली में मात्र 13 प्रतिशत सत्ता स्थानीय संस्थाओं तक विकेन्द्रीकृत की गई है। सन् 1951-81 के मध्य अमेरिका में मात्र 1.3 प्रतिशत लोक सेवाओं का विस्तार हुआ। जबकि स्वीडन में 23 प्रतिशत विस्तार हुआ। ब्रिटेन में 50 प्रतिशत कार्मिक, लोक निगमों में कार्यरत है जबकि अमेरिका में यही आंकड़ा मात्र 8 प्रतिशत है।[8] ऐसी स्थिति में स्वाभाविक रूप से ऐसे सर्वमान्य प्रशासनिक सिद्धांतों एवं नियमों की आवश्यकता प्रतीत होती है जो विश्व स्तर पर लोक प्रशासन की सामान्यीकृत रूपरेखा प्रकट कर सकें किन्तु यह सहज कार्य नहीं है क्योंकि प्रत्येक देश की संस्कृति, समस्याएँ एवं पर्यावरण भिन्न प्रकृति का है।

तुलनात्मक लोक प्रशासन के महत्व को इंगित करते हुए **एडवर्ड शिल्स** कहते हैं - ''विभिन्न समाजों की व्यवस्थित तुलना करके उनकी समरूपता एवं विलक्षणताओं को इंगित और स्पष्ट किया जा सकता है।'' तुलनात्मक लोक प्रशासन के अध्ययन की इस अवधारणा में निस्संदेह राजनीति विज्ञान तथा लोक प्रशासन की दूरियां कम की है जो विकास प्रशासन एवं नीति विज्ञान के क्रियान्वयन के लिए आवश्यक भी है इसके अतिरिक्त तुलनात्मक लोक प्रशासन के निम्नांकित लाभ या गुण भी बताए जा सकते है -

1. इसके कारण सामाजिक अनुसंधान का क्षेत्र व्यापक तथा गहन हुआ है जो पूर्व में सीमित, संकीर्ण तथा स्थूल प्रकृति का था
2. तुलनात्मक लोक प्रशासन के अध्ययनों ने प्रशासन के क्षेत्र में सिद्धांत निर्माण तथा सामान्यीकरण को बढ़ावा दिया है।
3. इस अध्ययन पद्धति में वैज्ञानिक द ष्टिकोण अपनाया जाता है अतः आत्मकेन्द्रित रहने या स्वसंस्कृति से आबद्ध रहने के स्थान पर व्यापक द ष्टिकोण पल्लवित हुआ है।
4. इस अध्ययन पद्धति में केवल वर्णनात्मक विवरण के स्थान पर तुलनात्मक विश्लेषण का प्रयोग होता है अतः सामाजिक विश्लेषण का क्षेत्र विस्त त हुआ है।
5. तुलनात्मक लोक प्रशासन की अध्ययन पद्धति ने विश्व के विभिन्न देशों की प्रशासनिक व्यवस्थाओं के मध्य तुलना एवं विश्लेषण को बढ़ावा दिया है जिससे एक दूसरे के अनुभव से सीखा जा सकता है तथा कुछ सार्थक निष्कर्ष भी निकाला जा सकता है।
6. इस पद्धति के कारण लोक प्रशासन के विद्यार्थियों, वैज्ञानिकों तथा प्रशासकों को दूसरे देशों की व्यवस्था को समझने में मदद मिली है तथा इस का क्षितिज विस्त त है।

इस प्रकार तुलनात्मक लोक प्रशासन एक वैज्ञानिक प्रकृति की विश्वव्यापी अवधारणा है जो कुछ सामान्यीकृत सिद्धांत विकसित करने को उत्सुक है।

कमियां एवं सीमाएं
(Limitation)

निस्संदेह तुलनात्मक लोक प्रशासन एक नवीन अवधारणा तथा अध्ययन का प्रविधिनुमा प्रयास है किन्तु इसकी कतिपय कमियां भी मानी जाती है, जैसे -

1. एफ.डब्लू. रिग्ज का अध्ययन उपागम इस तथ्य को रेखांकित करता है कि प्रशासनिक व्यवहारों को समझने के लिए हमें विस्त त मॉडल तैयार करने चाहिए किन्तु समस्या यह है कि इससे समय तथा श्रम का दुरुपयोग होता है।
2. वैज्ञानिक द ष्टिकोण का पक्षधर होने के उपरांत भी तुलनात्मक लोक प्रशासन के सम्मुख अनुभवमूलक अनुसंधानों के लिए विधिवत प्रविधि का अभाव है अतः अनुभवमूलक सिद्धांत भी विकसित नहीं हो पाए हैं।
3. तुलनात्मक लोक प्रशासन ने ''लक्ष्य-आधारित'' अनुभवमूलक सिद्धांतों का विकास नहीं किया है जिसके कारण इसका व्यावहारिक पक्ष कमजोर बना हुआ है

अध्याय-3
विकासशील देशों की प्रशासनिक विशेषताएँ
(Administrative Features of Developing Nations)

विकासशील देशों को तीसरे विश्व के देशों के नाम से भी जाना जाता है। तीसरे विश्व के देशों में एशिया, अफ्रीका और लेटिन अमरीका के देश आते हैं जो लंबे समय तक विदेशी शासकों के शोषण अथवा गुलामी का शिकार रहे हैं। स्वाधीनता के बाद विकासशील देश विकास के पथ पर अग्रसर हुए। सरकार लोक नीतियों का निर्माण करती है तथा उन नीतियों के कार्यान्वयन के लिए लोक प्रशासन पर निर्भर रहती है। लोक प्रशासन में इन कार्यों को लोक-सेवक संपन्न करते हैं। लोक-सेवक विविध प्रकार के कार्य निष्पादित करता है। इसके अतिरिक्त पुरान नियामक कार्य, जैसे नियम और आदेश का रख-रखाव, राजस्व का संग्रह, राज्य को आक्रमण से बचाना के अतिरिक्त वे अब लोगों को अनेक सेवाएँ प्रदान कर रहे हैं। जीवन की आधुनिक सुख-सुविधाओं का प्रावधान यथा शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार, भुखमरी, गरीबी, तथा यातायात का सुधरा हुआ स्वरूप जैसे सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन के महत्वपूर्ण लक्ष्य हैं जो हर जगह विशेष रूप से तीसरी दुनिया के विकासशील अधिकांश देश राष्ट्र निर्माण तथा तीव्र गति से सामाजिक-आर्थिक विकास की प्रक्रिया में लगे हुए हैं। जैसो कि सर्वविदित है कि ये समस्त कार्य प्रशासन के द्वारा संपन्न किए जाते हैं इसलिए विकासशील देशों की प्रशासनिक व्यवस्थाओं के मुख्य लक्षणों का विश्लेषण करते उक्त बातों को ध्यान में रखना आवश्यक है। तीसरी दुनिया के देशों की प्रशासनिक विशेषताएँ निम्नलिखित हैं :

1. **प्रशासन का उपनिवेश और पश्चिमी प्रतिमानः** विकासशील देशों के प्रशासन की एक महत्वपूर्ण विशेषता पश्चिमी देशों एवं उपनिवेश के प्रशासन का प्रतिरूप है। प्रायः ये देश पूर्व शासकों की प्रशासन प्रणाली को अपनाते हैं और स्वयं शासन पद्धति नहीं होती। यहाँ तक कि जो पश्चिमी उपनिवेशिकता की गिरफ्त में नहीं आए। **फेरल हेडी** कहते हैंः ''वहां भी आधुनिक पश्चिमी अधिकारी तंत्रीय प्रशासन की कुछ विशेषताएँ जानबूझकर लागू की गई है।'' औपनिवेशिक काल में नौकरशाही सत्तावादी, एकीकृत, अनुत्तरदायी, स्वेच्छाचारी, अप्रजातान्त्रिक भावना से पीड़ित थी। स्वतंत्रता के बाद विकासशील देशों को अपने विकास कार्यक्रमों को जनता तक पहुँचाने के लिए अपनी स्वयं की नयी नौकरशाही की स्थापना तथा आवश्यकता के अनुसार प्रशासन में बदलाव लाना अपेक्षित था। ऐसा न करने के कारण अतीत की परंपराए और विरासत नौकरशाही पर हावी हो गयी। भारत के संदर्भ में **कुलदीप माथुर** का विचार सत्य है कि ''औपनिवेशक विरासत अपनी स्वयं की संस्कृति और आचार-विचार लिए हुए, विकास कार्यों के लिए अयोग्य थी।''[2] नौकरशाही अपने आप को समय और परिस्थिति के अनुसार बदलने के लिए और विकास की प्रक्रिया के अनुरूप नवीन चिंतन और कार्य-शैली अपनाने की दिशा में अग्रसर हो रही है। फिर भी यह सुधार संतोषप्रद नहीं कहा जा सकता।

2. **निपुण कार्मिक और प्रशासनिक स्टाफ की कमीः** विकासशील देशों में विकास कार्यक्रमों और परियजनाओं का प्रबंध करने वाले निपुण कार्मिक और प्रशासनिक स्टाफ की कमी होना है इन देशों में कुशल जन-शक्ति की कमी है न कि कार्मिकों की। वास्तव में निम्न स्तर पर कार्य करने वालों की कमी नहीं है, कमी तो प्रशिक्षित और निपुण प्रशासकों की है। हमारे यहां शिक्षित नवयुवकों में अत्यधिक बेरोजगारी होने के बावजूद प्रशिक्षित प्रबंधकों की कमी है। आजकल प्रबंधकीय कौशल का विकास किया गया है और हमें वित्तीय प्रबंध, कर्मचारी प्रबंध, सामान्य-सूची (Inventory) प्रबंध आदि के लिए विशेषज्ञों की आवश्यकता है। परंतु विकासशील देशों में ऐसी व्यवस्था अपेक्षाकृत कम है। विकासशील देशों में कुशल जनशक्ति की कमी के तीन कारण हैं : (i) मानव संसाधन की कमी,, विकास नियोजन और शिक्षण व्यवस्था की कमी. (ii) भर्ती और प्रशिक्षण की अनुचित नीतियाँ. और (iii) बुद्धिजीवी अपवाह (Brain Drain)। संक्षेप में, विकासशील कार्यक्रम के लिए इन देशों का प्रशासन आवश्यक सक्षम मानव शक्ति से रहित है पर इनमें प्रबंध क्षमता, विकासात्मक कौशल और तकनीकी दक्षता रखने वाले प्रशिक्षित प्रशासकों की कमी है।

3. **केन्द्रीकृत अधिकारी- तंत्र ढांचा:** विकासशील देशों मे लोक-सेवाएँ सत्ता और नियंत्रण में केन्द्रीकृत होती हैं। यह अतिकेन्द्रीकरण शासकीय विभागों एवं मंत्रालयों में देखने को मिलता है जहां निर्णय लेने में लोक-सेवकों, विशेषकर मध य और निम्न स्तर के लोगों को कम अवसर मिलता है। इन्हें विकास प्रक्रिया में भी कम हिस्सा लेने का अवसर प्राप्त होता है। इस प्रकार इन देशों में नौकरशाही का झुकाव स्वायत्तता तथा शक्ति प्राप्त करने की ओर होता है। प्रशासनिक पद्धति में तकनीकी विशेषज्ञता की द ष्टि से प्रशासनिक अधिकारियों का एकमात्र अधिकार होता है। उन्हें व्यावसायिक विशेषज्ञ होने का भी सम्मान प्राप्त होता है। इन देशों में राजनीतिक दल दुर्बल होते हैं और विकसित देशों की तरह जन-समूह के प्रतिनिधि नहीं होते हैं और प्रशासनिक प्रक्रिया से अनभिज्ञ होते हैं। ऐसी स्थिति में अधिकारी-तंत्र अधिक सबल हो जाता है।

4. **भ्रष्ट तथा अकुशल प्रशासन:** विदेशी शासकों के चंगुल से मुक्त हुए इन देशों की प्रशासनिक व्यवस्था भ्रष्टाचार तथा अकार्यकुशलता के कीचड़ में आकंठ डूबी हुई नजर आती है। राष्ट्रीय संसाधनों, राष्ट्रीय कानूनों तथा सत्ता का दुरूप्रयोग यहा आम बात है क्योंकि इन देशों की सामाजिक व्यवस्था में राष्ट्रप्रेम का छद्म स्वरूप होता है। वस्तुतः न्यूनाधिक मात्रा में प्रत्येक नागरिक स्वंय को राष्ट्र से प थक समझता है। स्वतंत्रता का अर्थ स्वछंदता से लगाया जाता है। यही कारण है कि विकासशील देशों के लोक सेवक जिस मात्रा में अपने अधिकारों के लिए सचेत पाये जाते हैं, उसी मात्रा में कर्त्तव्यों के प्रति लापरवाह भी होते हैं।

   सारे कुएं में भांग पड़ी होने के कारण किसी एक संस्था को भ्रष्टाचार के लिए उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता है। सन् 1997 में जारी भ्रष्ट देशों की सूची में सर्वोच्च स्थान नाइजीरिया का रहा है तत्पश्चात् बोलिविया, कोलम्बिया, रूस, पाकिस्तान, मेक्सिको, इन्डोनेशिया तथा 8 वां स्थान भारत का था जबकि डेनमार्क, फिनलैण्ड, स्वीडन, न्यूजीलैण्ड, कनाडा, हालैण्ड, नार्वे तथा आस्ट्रेलिया भ्रष्टाचार से लगभग मुक्त हैं। विकासशील देशों में भ्रष्टाचार समाप्ति के यदा-कदा सरकार प्रयास होते रहते हैं। सामाजिक स्तर पर सभी चाहते है कि यह व्यवस्था सुधरे। भारत में भी हर व्यक्ति चाहता है कि भगतसिंह पैदा हो, लेकिन पड़ौसी के घर।

5. **प्रशासन के सम्मुख चुनौतियां:** विकासशील देशों में सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक तथा भौगोलिक द ष्टि से नित्य नई चुनौतियों उत्पन्न होती रहती है। इन चुनौतियों का सामना करना प्रशासन का दायित्व माना जाता हैं अधिकांश विकासशील देशों में प्राकृतिक, वित्तीय, मानवीय तथा तकनीकी संसाधनों का स्तर शोचनीय पाया जाता है। इन देशों में प्राकृतिक आपदाओं जैसे बाढ़, सूखा, महामारी, तूफान भूकंप तथा आगजनी इत्यादि के साथ-साथ सामाजिक रूढ़ियों के कारण नित्य नई समस्याएं उत्पन्न होती रहती हैं। अधिकांश विकासशील राष्ट्र उष्ण कटिबंधीय क्षेत्रों में स्थित हैं जहां गर्मी की अधिकता मानव स्वास्थ्य को विपरीत रूप से प्रभावित करती है। संक्रामक रोगों का व्यापक प्रसार तथा कुपोषण के कारण इन देशों में स्वास्थ्य का स्तर निम्न पाया जाता है। गरीबी, बेरोजगारी, जनाधिक्य तथा संसाधनों की कमी के चलते इन समाजों की प्रशासनिक व्यवस्था सदैव चुनौतीपूर्ण कार्यों में जूझती रहती है। इन देशों की अर्थव्यवस्था मूलतः कृषि-प्रधान होती है जबकि कृषि कार्य आप में ''एक जुआ'' सिद्ध होता है। भाग्यवादिता कर्मकांडता तथा अंधविश्वासों का प्रभाव प्रत्यक्ष प्रभाव लोक प्रशासन पर भी दिखाई देता है।

   विकासशील देशों का प्रशासनिक तंत्र, कमजोर अर्थव्यवस्था, भ्रष्टाचार, गरीबी, मानवाधिकारों के हनन सामाजिक असमानता, व्यापार घाटे तथा बेरोजगारी जैसी परंपरागत चुनौतियों या समस्यओं के साथ-साथ अब आतंकवाद, साम्प्रदायिकता, भाषावाद, क्षेत्रवाद, जातिवाद, प्रदूषण तथा नशीली दवाओं के व्यापार एवं हथियार की होड़ जैसी विषम समस्याओं से भी जूझ रहा है।

6. **सामान्यज्ञों का वर्चस्व:** विकासशील देशों में औपनिवेशिक काल की विरासत आज भी सम्मानपूर्वक प्रवर्तित हैं सामान्यज्ञ या प्रशासनिक सेवाओं के अधिकारी लोक प्रशासन के उच्च पदों पर आसीन रहते हैं तथा राजनीतिज्ञों (मंत्रियों) को परामर्श देने का कार्य करते हैं। राजनीतिज्ञ एवं सामान्यज्ञ अधिकारी मिलकर लोक नीति, कानून तथा विकास कार्यक्रमों का निर्माण करते हैं जिनका क्रियान्वयन विशेषज्ञ सेवाओं के अधिकारी को करना होता है। अधिक तकनीकी क्षमता एवं कौशल से युक्त विशेषज्ञ अधिकारी, सामान्यज्ञों के अधीन रहते हुए प्रायः कुंठा एवं निराशा के शिकार हो जाते हैं। यही कारण है कि भारत के सामन्यज्ञ- विशेषज्ञ विवाद बरसों से जारी है क्योंकि तकनीकी विकास एवं सामाजिक परिवर्तन के वर्तमान दौर में जहां प्रशासन की अवधारण तेजी से जड़ें जमा रही है, में विशेषज्ञों की उपेक्षा राष्ट्रहित में नहीं है।

7. **उलझा हुआ एवं समस्याग्रस्त प्रशासनः** विकासशील देशों की प्रशासनिक व्यवस्था जटिल, उलझी हुई तथा बिखराव की समस्याओं से युक्त दिखाई देती हैं इन देशों में प्रायः विकसित देशों की नकल पर विविध प्रकार के प्रशासनिक अभिकरण गठित किए जाते हैं। यदि कोई विभाग या संस्था कार्य संचालन में असफल सिद्ध होती है तो उस संस्था पर एक और नियंत्रक संस्था स्थापित कर दी जाती है। इस प्रकार विकासशील राष्ट्रों में विकसित राष्ट्रों के समान प्रशासनिक संगठनों जैसे, विभाग, बोर्ड, आयोग, परिषद्, निगम, सरकारी कंपनी से लेकर अर्थ स्वायत्त संस्थानों तक सभी प्रकार के संगठन कार्यरत होते हैं किंतु कार्यकुशलता का स्तर निरंतर नीचे की ओर अग्रसर रहता है। सामान्यतः इन देशों का लोक प्रशासन समस्याग्रस्त प्रशासन माना जाता है जो राष्ट्रीय या सामाजिक समस्याओं का समाधान ढूंढने की अपेक्षा स्वयं की समस्याओं से ही जूझता रहता है। जैसे -

   - नौकरशाही या लोक सेवाओं का आकार निरंतर बढ़ता रहता है, किंतु कुशलता उसी अनुपात में व द्धि नहीं करती है।
   - भर्ती, प्रशिक्षण, पदोन्नति, वेतन भत्ते तथा पेंशन इत्यादि के कर्मिक प्रकरण सदैव विवादग्रस्त बने रहते हैं।
   - स्वयं लोक सेवक तथा अमा जनता प्रशासनिक निर्णयों के विरूद्ध बड़ी संख्या में वाद दायर करती है।
   - सेमिनार, संगोष्ठी, कार्यशाला तथा प्रशिक्षण इत्यादि की महज औपचारिकताएं पूरी की जाती हैं। अंतिम निष्कर्ष अत्यंत निराशाजनक होता है।
   - राष्ट्रीय संसाधनो का दुरूपयोग आम जनता से कहीं अधिक नौकरशाह करते हैं। प्रशासनिक विभागों का आधे से अधिक बजट केवल वेतन-भत्तों पर व्यय होता है।
   - प्रत्येक कार्य में नियमों, कानूनों तथा प्रक्रियाओं की अनावश्यक औपचारिकताएं पूर्ण की जाती है, चाहे कार्य कितना ही छोटा या आपातकालीन परिस्थिति से संबद्ध क्यों न हो।
   - प्रशासनिक संगठनों के आंतरिक कार्यकरण में जाति, वर्ग, भाषा, धर्म, लिंग तथा नस्ल इत्यादि पर आधारित भेदभाव एवं संघर्ष स्पष्ट दिखाई देता है।
   - अनुसंधान, नवाचार तथा प्रशासनिक सुधारों के नाम पर महज खानापूर्ति की जाती है। किसी भी स्तर पर पहल क्षमता तथा नेत त्व का अभाव स्पष्ट दिखाई देता है।
   - अति महत्वाकांक्षी, कर्मठ, योग्य तथा प्रतिबद्ध कार्मिकों को प्रायः निराशा के दौर से गुजरना पड़ता है अतः इन देशों की प्रतिभाएं विकसित राष्ट्रों की ओर पलायन (Brain Drain) कर जाती है।
   - प्रशासनिक गोपनीयता के कारण पारदर्शिता, सूचना का अधिकार तथा लोक जवाबदेयता सुनिश्चित नहीं हो पाती है
   - शिकायत निवारण व्यवस्था प्रायः निष्क्रिय तथा स्वार्थी तत्वों से युक्त होने के कारण उपहास एवं अविश्वास की शिकार रहती हैं।
   - प्रत्येक कार्य को उलझाने तथा दूसरों पर टालने के लिए ''समिति व्यवस्था'' के दुरूपयोग की यहां सामान्य परंपरा होती है।

8. **राजनीतिक हस्तक्षेप की अधिकताः** यद्यपि विश्व के सभद देशों में कार्यपालिका के शीर्ष पर राजनीतिक व्यक्ति ही पदासीन होते हैं तथा उन्हीं के दिशा-निर्देशों पर प्रशासनिक कार्य संचालित होते हैं तथा विकासशील देशों में राजनीति का प्रशासन के क्षेत्र में हस्तक्षेप आवश्यकता से अधिक रहता है। लोक प्रशासन में उच्च पदों से लेकर निम्न पदों तक भाई भतीजावाद तथा राजनीतिक प्रश्रय की छाप स्पष्ट दिखाई देती है। भारत सहित बहुत से अन्य विकासशील राष्ट्रों में तबादला उद्योग, प्रशासनिक अकर्मण्यता का प्रमुख कारण बन चुका है। अपने राजनीतिक स्वार्थों के चलते कोई भी दल स्पष्ट तथा व्यावहारिक स्थानांतरण नीति निर्मित नहीं करता है।

   इन देशों में भ्रष्ट राजनीतिज्ञों, पूंजीपतियों, उच्च नौकरशाहों तथा अपराधियों (Under Wrold) का एक ऐसा गठजोड़ बन जाता है जो संपूर्ण प्रशासनिक व्यवस्था तथा समाज को खोखला एवं पंगु बना कर रख देता है। स्वतंत्र न्यायपालिका का सिद्धांत, व्यवहार में बहुत कम दिखाई पड़ता है। समूची व्यवस्था को नियंत्रित करने हेतु बनाए गए कानून प्रभावी

नहीं होते हैं। इस संबंध में **गोल्डस्मिथ** ने कहा था - ''यहां कानून निर्धनों पर शासन करते हैं और धनी व्यक्ति कानूनों पर शासन करते हैं।'' लोक सेवकों को राजनीतिक द ष्टि से तटस्थ या निष्पक्ष माना जाता है जो अनाम रहकर प्रशासनिक कार्य संपादित करते हैं जबकि राजनीतिक तटस्थता एक छद्म विश्वास है।

9. **जनसहयोग का अभावः** विकासशील देशों का प्रशासन सामान्यतः विकास प्रशासन का पर्याय माना जाता है जो नियोजित सामाजिक - आर्थिक परिर्वतन हेतु अनेक प्रकार के कल्याणकारी एवं विकासपरक कार्यक्रम संचालित करता है। स्पष्ट है विकास प्रशासन की सफलता जन सहभागिता पर निर्भर करती है किंतु दुर्भाग्य का विषय है कि इन देशों में वे व्यक्ति प्रशासनिक कार्यों या विकास कार्यों में सहयोग नहीं करते हैं जिनके के लिए विकास कार्य संचालित किए जाते हें। वस्तुतः निरक्षरता, गरीबी, सामाजिक पिछड़ापन, नौकरशाही का अहं, स्वार्थ-भावनाएं तथा कामचोरी की प्रव त्ति विकास कार्यक्रमों में जन सहभागिता में कमी लाती है।

10. **प्रशासनिक सामंजस्यः** विकासशील देशों में प्रशासनिक पद्धति में विकसित देशों की तुलना में सामंजस्य का अभाव देखने को मिलता है। भारत जैसे संघीय राज्य में प्रशासनिक सामंजस्य प्रशासन के सुचारू संचालन के लिए बड़ा महत्वपूर्ण है। वास्तव में राज्य की नीतियों तथा कार्यक्रमों को लागू करना तब तक संभव नहीं है जब तक उनमें सहयोग और सामंजस्य न हो। सामंजस्य एक ऐसी प्रक्रिया है जिसका तात्पर्य है कि समस्य इकाइयों, विभागों एवं वित्तीय अभिकरणों, जो देश के एक कोने से दूसरे कोने तक फैले हुए हैं, उनके कार्यों में एकता और सहयोग होना चाहिए। प्रशासन की कुशलता के लिए सामंजस्य आवश्यक तथा प्रशासनिक क्षेत्र में यह एक महत्वपूर्ण तत्व है, परंतु विकासशील देशों में इस पर गंभीरतापूर्वक विचार नहीं हो रहा है।

11. **नवीन चुनौतियाँ और दायित्वः** विकासशील देशों के प्रशासन के समक्ष अनेक नवीन चुनौतियाँ तथा दायित्व उपस्थित हुए। इन देशों को देश की एकता और अखण्डता को बनाए रखने, आर्थिक-सामाजिक और तकनीकी विकास की प्रक्रिया को आगे बढ़ाने, गरीबी, अशिक्षा, उच्च जीवन स्तर, आधुनिकीकरण, खाद्यान्न की कमी, महँगाई, बेरोजगारी, मुद्रास्फीति, विभिन्न सामाजिक समूहों में सामंजस्य बनाए रखने जैसी चुनौतियों का सामना करना पड़ा ऐसी गंभीर चुनौतियों का सामना करने के लिए विरासत में मिली प्रशासनिक तंत्र-व्यवस्था में आधारभूत परिवर्तन करके ही प्राप्त किया जा सकता था। किंतु उपरोक्त गंभीर एवं जटिल समस्याओं का सामना करने के लिए विकासशील देशों की प्रशासनिक तंत्र व्यवस्था न तो सक्षम और तैयार है। इस दिशा में सामयिक और साहसिक कदम उठाने की आवश्यकता है।

12. **सेवीवर्ग का मात्रात्मक और गुणात्मक पक्षः** स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद विकासशील देशों में राज्य के कार्यों में व द्धि होने तथा नवीन विभागों, मंत्रालयों आदि संगठनों की स्थापना के कारण लोक-सेवकों की संख्या में निरंतर व द्धि हो रही है। भारत जैसे विकासशील देश में लोक-सेवकों की संख्या में मात्रात्मक द ष्टि से बहुत अधिक व द्धि हुई है। हमारे यहाँ केन्द्रीय सरकार के कर्मचारियों की संख्या 1948 में 14,45,050 थी, से बढ़कर पंचम वेतन आयोग के अनुसार 38.76 लाख हो गई है। मात्रात्मक व द्धि के साथ गुणात्मक द ष्टि से लोक-सेवकों की सेवा के स्तर में गिरावट आयी है। आज प्रशासन बेईमानी और भ्रष्टाचार का प्रतीक बन गया है। इस प्रकार मात्रात्मक व द्धि के अनुपात में गुणात्मक व द्धि नहीं हुई है। यह हमारे प्रशासन का सबसे गंभीर और शोचनीय विषय है।

13. **परिवर्तन से परहेजः** विकासशील देशों में सामाजिक तथा प्रशासनिक, दोनों ही स्तरों पर यथास्थिति को बनाए रखने के प्रयास होते रहते हैं। जब कभी राज्य एवं अन्य संस्थाओं द्वारा सुधार कार्यक्रम संचालित किए जाते हैं तब उन कार्यक्रमों का प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से विरोध किया जाता है। यही कारण है कि विकासशील देशों की प्रशासनिक संरचनाएं आज भी उपनिवेशवाद की विरासत को ढो रही हैं। परिवर्तन की कल्पनामात्र से समाज तथा लोक सेवक नकरात्मक रूख धारण कर लेते हैं। यद्यपि इन देशों में प्रशासनिक सुधार एवं नवाचार के प्रयास होते हैं किंतु वे केवल कागजी अभ्यास सिद्ध होते हैं।

14. **नौकरशाही तथा उनके स्वार्थः** विकासशील देशों की प्रशासनिक व्यवस्था की एक विशिष्ट विशेषता यह है कि नौकरशाही के कर्मचारी संस्था के उद्देश्यों की अपेक्षा अपने निजी स्वार्थों की पूर्ति को अधिक महत्व देते हैं। विकसित देशों में भी ऐसी इच्छाएं होती है परंतु वे संस्था के लक्ष्यों को सर्वोपरि महत्व देते हैं। विकासशील देशों के अधिकारी तंत्र उत्पादनविमुख न होकर कुछ अन्य हैं। यहाँ पद के साथ जो महिमा, प्रतिष्ठा जुड़ी हुई है वह उपलब्धि पर नहीं बल्कि पद पर आरोपित गरिमा के कारण है और इसी से उनके व्यवहार को समझा जा सकता है। अयोग्य व्यक्तियों

को योग्यता का विचार न करके पदोन्नति मिल जाती है। इससे कार्मिक प्रथाएँ, अनुशासन एवं पदोन्नतियाँ प्रभावित होती हैं। वहाँ भ्रष्टाचार व्यापक रूप से फैला है। अधिकारी न केवल अपने स्वार्थों की रक्षा करते हैं बल्कि अपने बिरादरी के लोगों के स्वार्थों की भी रक्षा करते हैं। संक्षेप में विकासशील देशों में पक्षपात, भाई-भतीजावाद प्रशासनिक पद्धति का एक भाग है और यह बुराई समाज का एक अंग बन गई है।

15. **करनी व कथनी में अंतर -** **(Gap between theory & Practice)** इन देशों के प्रशासन की अन्य विशेषता यह है कि इनकी करनी व कथनी में काफी अंतर पाया जाता। इस अंतर को रिग्स ने 'औपचारिकता' की संज्ञा दी है। इसमें वस्तुओं को ऐसे रूप में प्रस्तुत किया जाता है जैसा उन्हें होना चाहिए किंतु वास्तव में वे वैसी नहीं होती है। सरकारी प्रस्तावों और उनके कार्यान्वयन में पर्याप्त अंतर होता और बहुत सारे कानून बिल्कुल ही लागू नहीं होते तथा उनका सरेआम उल्घन किया जाता है Public Places Smoking पर Prohibition संबंधी कानून का उल्घन भारत में सरेआम देखने को मिलता है।

अध्याय-4
विकसित देशों की प्रशासनिक विशेषताएँ
(Administrative Features of Developed Nations)

विकसित देशों संपन्न, उन्नत और सम द्ध हैं। विकास परिवर्तन और आधुनिकीकरण इनकी विशेषताएं हैं। विकसित देशों में सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक परिवर्तनों की एक सुनिश्चित दिशा है। ये देश लोकतंत्र के प्रतीक बन गए हैं तथा राजनीतिक स्थिरता के उदाहरण। इस प्रकार विकास की समस्त प ष्टभूमि तैयार है और परिवर्तन और विकास का क्रम सुव्यवस्थित है।

विकसित राष्ट्रों में आधुनिकता का आशय भौतिकवाद से नहीं बल्कि विचारों की उत्कृष्टता से लिया जाता है इन राष्ट्रों के सदियों पूर्व विकास के कारण इनकी राजनैतिक संस्थाएं अत्यंत परिपक्व, विकसित तथा प्रतिबद्ध प्रकृति की हैं अतः इन देशों में लोक प्रशासन का स्वरूप भी पूर्णतयः विकसित हो चुका है। फ्रांस, अमेरिका, जापान तथा ब्रिटेन इत्यादि विकसित देशों की प्रशासनिक व्यवस्था में परिपक्वता स्पष्ट रूप से लक्षित होती है। विधि के शासन की अवधारणा ने इनके संपूर्ण प्रशासनिक तंत्र को जबावदेह एवं विकासोन्मुख बना दिया है। इसके साथ-साथ इनकी सामाजिक तथा आर्थिक सम द्धता ने इनके लोक प्रशासन को आधिकाधिक विकसित बनाने में भरपूर योगदान दिया है। इन देशों के लोक प्रशासन की प्रमुख विशेषताएं निम्नलिखित हैं -

1. **राष्ट्र एवं संविधान के प्रति प्रतिबद्धता:** विकसित देशों के नागरिक अपने देश के संविधान, राष्ट्रगान, राष्ट्रध्वज, राष्ट्रीय प्रतीकों तथा राष्ट्रीय कानूनों के प्रति अगाध श्रद्धा रखते हैं। यही कारण है कि इन देशों के नागरिकों तथा प्रशासन के मध्य सहयोग एवं सामंजस्यता का भाव दिखाई देता हैं संविधान एवं कानून के प्रति द ढ़ आस्था के कारण ही नागरिक, राजनेता तथा लोक सेवक राष्ट्रीय समस्याओं के प्रति संवेदनशील होते हैं। प्रत्येक नागरिक तथा सरकारी कार्मिक हर वक्त यह प्रयास करता है कि अंतरराष्ट्रीय स्तर पर उनके देश की छवि धूमिल न हो पाए तथा उनका देश सबसे आगे एवं सबसे अलग दिखाई दे।

2. **उत्तरदायी एवं कुशल लोक सेवाएं:** चूंकि विकसित देशों के नागरिकों में राष्ट्रभक्ति का स्तर अत्यंत ऊंचा होता है अतः प्रशासनिक उत्तरदायित्वों निर्वहन भी सफलतापूर्वक किया जाता है। किसी भी नागरिक, उपभोक्ता या आम व्यक्ति को प्रशासन द्वारा हुई हानि या असुविधा की क्षतिपूर्ति प्रदान करना एक सामान्य परंपरा है। इन देशों में प्रशासनिक कार्यकुशलता, लोकप्रियता, संवेदनशीलता तथा उपादेयता के क्रम में निरंतर शोध एवं नवाचार किए जाते हैं। व्यक्ति के जन्म पूर्व से लेकर म त्यु के उपरांत तक लोक प्रशासन द्वारा सेवा की अवधारणा यहां मूर्त दिखाई देती है। प्रशासनिक कुशलता के लिए विकेन्द्रीकरण को इन देशों में पर्याप्त महत्व दिया जाता है। विकासशील देशों में प्रचलित सामान्तवादी व्यवस्था विकसित देशों में नहीं पायी जाती है यही कारण है कि विकसित देशों में चपरासी का पद प्रायः नहीं होता है।

3. **लोक सेवाओं का लोकतांत्रिक स्वरूप:** जनता का, जनता के लिए तथा जनता के द्वारा शासन, अर्थात प्रजातंत्र की यह आधुनिक लोकप्रिय अवधारणा विकसित समाजों में यथार्थ एवं व्यापक रूप से लागू होती है। प्रशासन का स्वरूप सैद्धांतिक रूप से ही लोकतांत्रिक नहीं होता है बल्कि व्यावहारिक रूप में भी लोक प्रशासन पूर्ण प्रजातंत्रात्मक प्रतीत होता है। लोक सेवकों के व्यवहार में जनता के स्वामी जैसा भाव नहीं, बल्कि ''जन सेवक'' का वास्तविक भाव रहता है क्यांकि लोकतंत्र में सत्ता, जनता में निहित होती हैं लोक सेवाओं में समानता, न्याय तथा स्वतंत्रता का अधिकार सभी के लिए समान रूप से उपलब्ध है। कार्मिकों को संध बनाने तथा हितों के लिए संघर्ष करने की छूट दी गई है।

4. **योग्यता को वरीयता:** लोक सेवाओं में भर्ती के लिए योग्यता को व्यापक मान्यता प्राप्त है। अधिसंख्य सामान्य प्रशासकीय एवं विशेषज्ञ पदों पर नियुक्ति या चयन से पूर्व प्रतियोगी परीक्षा को उत्तीर्ण करना आवश्यक होता है। योग्यता निर्धारण की ये प्रतियोगी परीक्षाएं अत्यंत विशद, गंभीर तथा विश्वसनीय प्रकृति की मानी जाती है। अमेरिका सहित कतिपय अन्य विकसित देशों में उच्च स्तरीय पद, राष्ट्रपति की इच्छा से भरे अवश्य जाते हैं किंतु इन पदों की नियुक्तियां विधायिका द्वारा अनुमोदित होती हैं। कोई भी राष्ट्रपति यह नही चाहता कि वह उच्च एवं विश्वसनीय पदों पर अयोग्य व्यक्तियों को अवसर देकर जनाक्रोश का शिकार बने।

5. **विशेषज्ञता का प्रसार:** विज्ञान एवं प्रोद्यौगिकी का प्रसार निस्सदेह विकसित देशों में अधिक हुआ है जो इनकी उन्नति का मूलाधार भी बना हैं विज्ञान तथा तकनीकी विकास ने लोक प्रशासन के कार्यक्षेत्र में विशेषज्ञता को बढ़ावा दिया है अतः प्रशासन में भी स्थूल से सूक्ष्म तथा सामान्य से विशिष्टता की ओर झुकाव में व द्धि हुई है। प्रत्येक कार्य को संपादित करने के लिए अनेक विशिष्ट प्रशासनिक अभिकरण जैसे विभाग, बोर्ड, आयोग, निगम तथा न्यायाधिकरण इत्यादि स्थापित किए गए हैं। लोक सेवाओं में भी प्रत्येक पद की विशेषज्ञ योग्यताएं निर्धारित की गई हैं तथा प्रशिक्षण का भी तदनुसार विकसित किया गया है।

6. **विशेषज्ञों का महत्व:** विकासशील राष्ट्रों में सामान्यज्ञ अधिकारियों का वर्चस्व रहता है जबकि विकसित राष्ट्रों में वैज्ञानिक, डाक्टर, इंजीनियर इत्यादि विशेषज्ञ अधिकारियों को उच्च दर्जा प्रदान किया गया है। अमेरिका, जापान तथा जर्मनी में विशेषज्ञ अधिक सम्मानित हैं वहीं ब्रिटेन तथा फ्रांस में इन्हें कम से कम सामान्यज्ञों के अधीनस्थ स्थिति में नहीं रखा गया है। वस्तुत : तकनीकी विकास की जटिलताओं तथा ज्ञान के बढ़ते क्षितिज ने विशेषज्ञों की प्रशासन में भूमिका महत्वपूर्ण बना दी है

7. **उच्चस्तरीय समन्वय:** समन्वय, प्रशासनिक संरचनाओं की महत्वपूर्ण प्रक्रिया है जो संघर्ष तथा अतिराव को रोकती है। विकसित देशों में एक कार्य से संबंधित कई सरकारी, अद्धसरकारी तथा निजी संगठन कार्यरत होते हैं किंतु इन संगठनों के मध्य उत्पन्न होने वाले विवाद बरसों तक अनिर्णित अवस्था में नहीं रहते हैं बल्कि समय रहते राजनीतिज्ञों एवं शीर्षस्थ कार्यपालक अधिकारियों द्वारा सुलझा दिए जाते हैं। विकसित देशों में लोक प्रशासन तथा निजी प्रशासन दोनों क्षेत्रों के संगठन परस्पर विचार-विर्मश करते रहते हैं।

8. **पर्याप्त राजनीतिक चेतना:** यद्यपि विकसित राष्ट्रों के लोक सेवक सामान्यतः राजनीतिक रूप से तटस्थ तथा अनाम रह कर कार्य करते हैं किंतु इन देशों के कार्मिकों में राजनीतिक अधिकारियों तथा स्वयं के हितों के प्रति पूर्ण चेतना पायी जाती है। फ्रांस में लोक सेवकों को सर्वाधिक राजनीतिक अधिकार प्रदान किए गए है लेकिन अन्य देशों में भी लोकतांत्रिक मूल्यों के प्रसार एवं जनचेतना में व द्धि के कारण पर्याप्त राजनीतिक अधिकार प्रदत्त हैं कर्मचारी अपनी मांगों एवं सुविधाओं में व द्धि के लिए पर्याप्त सजग एवं प्रतिबद्ध दिखाई देते हैं। महिलाओं को प्रशासन में पर्याप्त प्रतिनिधित्व दिया गया है।

9. **उत्तरदायित्व:** विकसित देशों की एक प्रशासनिक व्यवस्था की एक प्रमुख विशेषता उसका लोक उत्तरदायित्व स्वरूप है। लोक प्रशासन पर जनता का नियंत्रण रहता है ओर प्रशासन अपने समस्त कार्यों के लिए जनता के प्रति उत्तरदायी होता है। इसकी अभिव्यक्ति मन्त्रिमण्डल का संसद के प्रति सामूहिक उत्तरदायित्व है।

10. **जनसहयोग की पर्याप्ता:** किसी भी प्रशासन की सफलता उसमें जनसहयोग या जन सहभागिता पर निर्भर करती है। विकासशील देशों की प्रशासनिक व्यवस्थाओं की तुलना में विकसित देशों के प्रशासन में जनसहभागिता की पर्याप्ता देखने को मिलती हैं। प्रशासन संबंधी नीतियां एवं निर्णय जनसमर्थन के आधार पर ही बनाए व लिए जाते हैं। प्रशासन के विभिन्न स्तरों पर लोगों की भागीदारी इन देशों में सुनिश्चित करने के प्रयास न केवल देखने को मिलते है बल्कि लोगों की वास्तविक रूप में सहभागिता दिखाई देती है।

11. **प्रशासन पर राजनीतिक दलों का पभाव:** विकासशील देशों के विपरीत विकसित देशों के लोक प्रशासन पर राजनीतिक दलों का प्रभाव स्पष्ट रूप से देखने को मिलता है। अमरीका में ब्रिटेन के विपरीत लोक सेवा पर दलबंदी का प्रभाव है। राष्ट्रपति को अपने कृपापात्रों, मित्रों एवं विश्वस्त लोगों को उच्च प्रशासनिक पदों पर नियुक्त करने का अधिकार प्राप्त है। यही लोग नीति-निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। फ्रांस की लोक सेवा दलीय प्रभाव से अछूती नहीं है। वहाँ के लोक-सेवक दलीय गतिविधियों में हिस्सा तक लेते हैं। इस संबंध में ब्रिटेन की स्थिति कुछ भिन्न है। वहां लोक

सेवा राजनीतिक तटस्थता का पालन करती है फिर भी राजनीतिक दलों की गतिविधियों से पूर्णतः मुक्त नहीं है। सरकार में परिवर्तन होने के साथ लोक-सेवकों को बदले हुए राजनीतिक परिप्रेक्ष्य में अपनी भूमिका में पवितर्न करने हुए उसके साथ सामंजस्य स्थापित करना पड़ता है। ऐसी परिवर्तित परिस्थिति में पहले की सरकार से घनिष्ठ रूप से जुड़े हुए लोक-सेवकों की स्थिति में परिवर्तन हो जाता है और उनको महत्वपूर्ण विभागों से गौण विभागों में स्थानातंरण किया जाता है। अनेक बार उनके पहले के कार्य-कलापों की जाचं के लिए विभागीय जांच समितियों की स्थापना भी की जाती है। (भारत में यह द श्य देखने को मिलता है) फिर भी ब्रिटेन की लोक सेवा पर दलीय प्रभाव अपेक्षाकृत कम है।

12. **गतिशीलता की प्रव तिः** विकसित देशों का सामाजिक, आर्थिक तथा प्रशासनिक ढांचा गतिशील प्रव त्ति का परिचायक है। इन देशों में परिवर्तन को सहजता से अंगीकार किया जाता है। अर्थव्यवस्था, राजनीतिक परिद श्य, सामाजिक संरचना तथा तकनीकी विकास के संदर्भ में आए परिवर्तनों के अनुरूप प्रशासनिक व्यवस्था शीघ्रता से परिवर्तित हो जाती है। उदाहरण के लिए विगत एक दशक में ब्रिटेन में लोक सेवाओं का घटता आकार तथा निजीकरण समय की मांग के अनुरूप एक गतिशील परिवर्तन है। इसी प्रकार ''प्रशासनिक सुधारों'' के प्रयास पूर्ण मनोयोग एवं इच्छा से क्रियान्वित होते है।

13. **व्यापक कार्यक्षेत्रः** विकसित देशों की प्रशासनिक व्यवस्था अत्यंत व्यापक एवं गंभीर कार्यक्षेत्र का प्रतिनिधित्व करती हैं राज्य के लोक कल्याणकारी स्वरूप ने प्रशासन के कार्य क्षेत्र को न केवल व्यापक बना दिया है बल्कि गुरूतर दायित्वों से भी युक्त कर दिया है। कृषि, उद्योग, परिवहन, संचार, रक्षा, शिक्षा, स्वास्थ्य, ऊर्जा, पर्यावरण संरक्षण से लेकर न्याय व्यवस्था तक प्रत्येक जीवनोपयोगी कार्य लोक प्रशासन के क्षेत्र में सम्मिलित है। राष्ट्र की सुरक्षा, आंतरिक शांति एवं व्यवस्था, विदेशी संबंध, सामाजिक सेवाओं का संचालन, अर्थव्यवस्था का नियंत्रण इत्यादि सभी कार्य प्रशासन की कार्य सूची में सम्मिलित होते हैं।

अध्याय-5
ब्रिटिश प्रशासनिक व्यवस्था की विशेषताएँ
(Administrative Features of Great Britain)

जिस देश को हम इंग्लैंड, ब्रिटेन या ग्रेट ब्रिटेन कहते है उसका पूरा नाम 'ग्रेट ब्रिटेन और उत्तरी आयरलैण्ड का संयुक्त राज्य' **(United Kingdom of Great Britain & Northern Ireland)** है। ग्रेट ब्रिटन में इंग्लैंड स्काटलैंड व वेल्स के प्रदेश सम्मिलित हैं।

विकसित देशों में बड़े स्तर के प्रायः लोक प्रशासन की समस्याएँ विभिन्ताओं की अपेक्षा समानता अधिक रखती हैं। फिर भी इन देशों की प्रशासकीय सेवाएँ अपनी ऐतिहासिक प ष्टभूमि एवं कार्य के राजनैतिक तथा सामाजिक वातावरण के आधार पर कुछ राष्ट्रीय निजी विशेषताएँ भी रखती हैं।

संसदीय लोकतंत्र के जनक ब्रिटेन में प्रधानमंत्री तथा मंत्रिमंडल का प्रभुत्व, शासन व्यवस्था पर स्पष्ट दिखाई देता है। शासन प्रणाली का वास्तविक सूत्र मंत्रिमंडल के हाथों में रहता है और राजा नाममात्र की सत्ता है। मंत्रिमंडल देश के प्रशासन की नीतियां बनाता है तथा संसद की स्वीकृति के बाद उन्हें कार्यरूप में लोक'सेवकों के माध्यम से लागू करता है। विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका का अलग-अलग कार्यक्षेत्र है। ब्रिटिश संसद बहुत शक्ति-संपन्न संस्था है जो किसी भी कानून, नियम या परंपरा को परिवर्तित कर सकती है। मंत्रिमंडल को उसके प्रशासनिक कार्यों में सहयोग देने हेतु मंत्रिमंडल सचिवालय है। विभागों की व्यवस्था लगभग भारत के विभागों के समान है। ब्रिटेन का संविधान अलिखित है किंतु वहाँ की परंपराएँ, संधियाँ, निर्णय, आदेश, लोकमत आदि संविधान का ही कार्य करती हैं। विस्त त तथा लिखित संवैधानिक दस्तावेज के अभाव में सफलतापूर्वक शासन को संचालित करना ब्रिटिश शासन प्रणाली की विशिष्ट विशेषता है।

ब्रिटेन में एकात्मक प्रशासनिक व्यवस्था प्रचलित है। वहाँ सभी लोक-सेवक केन्द्रीय सरकार के अधीन कार्यरत हैं। भारत के समान राज्य प्रशासनिक व्यवस्था ब्रिटेन में प्रचलित नहीं है। स्थनीय स्त्र पर प्रशासन के कार्यों को संचालित करने के लिए 'काउण्टी बरो' 'काउण्टी परिषदें', म्यूनिसिपल बरो', 'शहरी जिलों' तथा 'ग्रामीण जिलों' में बँटा हुआ है। इसी प्रकार लंदन शहर को व हत्तर लंदन तथा लंदन बरो नामक स्थानीय संस्थाओं द्वारा प्रशासित किया जाता है। यह व्यवस्था भारतीय नगरपालिकाओं तथा नगरनिगमों के समान है। सरकार के प्रत्येक स्तर तथा विभागों में समितियाँ बनाकर कार्य करने की परंपरा भी ब्रिटिश प्रशासन की विशेषता हे। संक्षेप में ब्रिटिश प्रशासन की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं :

1. **विकास का परिणाम (A Result of Evolution):** ग्रेट ब्रिटेन का संविधान निर्मित न होकर विकसित है वहाँ का प्रशासन भी लंबे विकास का परिणाम हे। जे.ए. क्रॉस के शब्दों में, ''ब्रिटिश प्रशासन की संरचना तार्किक की अपेक्षा कालक्रम के अनुसार है।' मध्यकालीन राजाओं के समय प्रशासनिक विभागों की स्थिति ऐसी थी मानो वे राजाओं की घरेलू समितियाँ हों। तत्कालीन सरकारी अधिकारियों की स्थिति आज से भिन्न थी। लॉर्ड चांसलर राजा का एक मुख्य क्लर्क मात्र होता था। सरकार के सीमित कार्यों को संपन्न करने के लिए विभागों का संगठन किया जाता था। ये विभाग राज्य की सुरक्षा, राजनयिक संबंधों का संचालन, राजस्व एकत्रित करना, आंतरिक शांति व्यवस्था बनाए रखना आदि कार्य करते थे। राज्य के कार्यों में व द्धि के साथ-साथ प्रशासकीय विभागों की संख्या तथा कार्य में व द्धि हुई। अनेक नए विभागों का जन्म और पूराने विभागों के संगठन तथा कार्यों में परिवर्तन किए गए। पुराने विभागों में मुख्य विभाग राजकोष (Treasury) है। स्टुअर्ट (Stuart) राजाओं के समय तक राजकोष लॉर्ड हाई ट्रेजरार के अधीन था। जेम्स प्रथम ने निर्णय लिया कि इस शक्तिशाली अधिकारी के दायित्वों को अन्य मंत्रियों में बाँट दिया जाए। 1612 में इस हेतु एक

बोर्ड बनाया गया और उसे राज्य के वित्त विभाग के पर्यवेक्षण का काम सौंपा गया। बोर्ड का मुख्य कार्यकर्ता 'चांसलर ऑफ द एक्सचेकर' है। यह महत्वूपर्ण पदाधिकारी प्रधानमंत्री नागरिक सेवा नियंत्रण रखता हैं बोर्ड के अन्य सदस्य कॉमन्स सभा के बहुमत दल के सचेतक (Whip) होते हैं। पुराने प्रशासनिक कार्यालयों में राजा की परिषद् प्रिवी परिषद्, लॉर्ड चांसलर, राज्य सचिव का कार्यालय आदि उल्लेखनीय हैं।

2. **एक जीवंत संगठन** (A Living Organisation): ग्रेट ब्रिटेन के प्रशासन में समयानुकूल परिवर्तन होते हैं। वह परिस्थिति और आवश्यकताओं के अनुसार संशोधित हुआ है। ग्रेट ब्रिटेन प्रशासन समय और स्थान की परिस्थितियों के अनुसार समयोजन के प्रश्न को महत्वूपर्ण मानता है। वहाँ विभागों का संगठन करते समय मंत्रालयों की संख्या एवं उत्तरदायित्व की कोई योजना नहीं बनाई गई थी। जब राज्य के कार्य बढ़े तो उन्हें तत्कालीन मंत्रालयों को सौंप दिया गया और नए मंत्रालयों की स्थापना कर दी गई। कालांतर में विभागीय संगठनों में एकरूपता और कार्यकुशलता की समस्या उपस्थित हुई, विभागीय पुनर्गठन के प्रयास किए गए। इन प्रयासों द्वारा अनावश्यक विभागों को समाप्त किया गया तथा एक मंत्रालय में समान प्रकृति के कार्य रखे गए।

   मंत्रालयों के पुनर्गठन पर विचार के लिए हेल्डेन समिति (Haldane Committee) नियुक्त की गई। इस समिति का सुझाव था ब्रिटिश शासन को दस प्रमुख भागों में संगठित किया जाए - वित्त, राष्ट्रीय सुरक्षा, विदेशी मामले, अनुसंधान और सूचना, उत्पादन, रोजगार, पूर्ति, शिक्षा, स्वास्थ्य एवं न्याय। समिति की राय थी कि यदि कोई विषय बड़ा है तो एक से अधिक विभाग भी बनाए जा सकते हैं। हेल्डेन समिति के प्रतिवेदन को लोकप्रियता प्राप्त हुई, किंतु सरकार ने कदम नहीं उठाए और प्राक्कलन समिति के आग्रह पर सरकारी संगठन समिति की स्थापना की गई। प्रधानमंत्री एटली ने प्रशासनिक विकास को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निबाही है। ब्रिटिश संसद प्रशासकीय संगठन की सुव्यवस्था एवं कार्यकुशलता में पर्याप्त रुचि लेती हे। कॉमन्स सभा की प्राक्कलन एवं जनलेखा समितियां समय-समय पर इस संबंध में अध्ययन करती हैं। तथा उपयुक्त सिफारिशें करती हैं।

3. **विधि का शासनः** यद्यपि ब्रिटिश शासन में केन्द्रीकरण की प्रव त्ति व्याप्त है, जिसके अंतर्गत शासन की समस्त शक्तियां मंत्रिमंडल नामक संस्था में समाहित होती जा रही है किंतु ''विधि के शासन'' के मूलभूत सिद्धांत ब्रिटेन में प्रवर्तित हैं इसके अंतर्गत कानून की सर्वोच्चता, सभी के लिए समानता तथा न्यायिक निर्णयों का आदर सभी को सहजता में स्वीकार्य हैं। संविधान सहित बहुत से कानून असंहिताबद्ध हैं फिर भी भ्रम या असमंजस्यता की स्थिति उत्पन्न नहीं होती है क्योंकि प्राकृतिक न्याय एवं मानवाधिकारों में सरकार, प्रशासन एवं आम व्यक्ति की समान रूचि रहती है।

4. **ईमानदारी तथा प्रशासनिक पारदर्शिताः** ब्रिटिश लोक प्रशासन प्रायः भ्रष्टाचार मुक्त रहा है। रिश्वतखोरी एवं भाई-भतीजावद की व्याधिया दशकों पूर्व समाप्त हो चुकी हैं। नागरिक शिकायतों के निवारण हेतु 1967 से **संसदीय आयुक्त** अर्थात ब्रिटिश औम्बुड्समैन नामक संस्था कार्यरत है। संसदीय आयुक्त लोक सेवकों के विरूद्ध अनियमितताओं, भ्रष्टाचार एवं लापरवाही की जाचं करता है। रोचक तथ्य यह है कि संसदीय आयुक्त के पास वर्ष भर में मात्र 400-500 शिकायतें ही आती हैं और उनमें भी अभी तक भ्रष्टाचार का बड़ा मामला सामने नहीं आया हैं प्रशासनिक कार्यकुशलता तथा जवाबदेयता में व द्धि करने के लिए अनेक ठोस कदम मार्गरेट थैचर सरकार द्वारा उठाये गए हैं। इसी प्रकार जॉन मेजर द्वारा जून 1991 में नागरिक अधिकार पत्र (Citizens Charter) नामक व्यवस्था भी प्रारंभ की गई है। नागरिक अधिकार पत्रों के माध्यम से प्रशासनिक पारदर्शिता सुनिश्चित हुई है। ब्रिटेन में नागरिक अधिकारपत्र न केवल अंग्रेजी भाषा में बल्कि पंजाबी, गुजराती, बंगाली, हिन्दी, चीनी, वियतनामी इत्यादि भाषाओं में भी उपलब्ध हैं। प्रशासनिक ईमानदारी, कार्यकुशलता तथा पारदर्शिता बनाए रखने के लिए प्रधानमंत्री स्वयं निगरानी रखते है तथा संसद में इसकी प थक से रिपोर्ट प्रस्तुत करते हैं।[4]

5. **एकात्मक प्रशासनः** इंग्लैण्ड, स्कॉटलैण्ड, वेल्स तथा उत्तरी आयरलैंड इत्यादि द्वीपों का क्षेत्रफल कम है तथा जनसंख्या भी सीमित है अतः ब्रिटेन में एकात्मक शासन व्यवस्था को अपनाया गया है। भारत तथा अमेरिका की तरह ब्रिटेन में केन्द्रीय एवं प्रान्तीय दो स्तरों पर सरकारें नहीं होती हैं बल्कि एक ही सरकार के अंतर्गत समस्त ग्रेट ब्रिटेन का प्रशासन संचालित होता है जो ''एकात्मक (Unitary) प्रशासन'' का पर्याय है। यद्यपि नगरों एवं गांवों में स्थानीय स्वशासन की स्वतंत्र सरकारें होती हैं किंतु इन सरकारों को प्रधानमंत्री एवं उनके मंत्रिमंडल द्वारा ही दिशा निर्देश जारी किए जाते है। लंदन स्थित प्रशासनिक विभागों, मंत्रालयों तथा उनके कार्यकारी संगठनों की शाखाएं संपूर्ण देश (द्वीपों) में फैली हुई है जिनका नियंत्रण-निर्देशन संबंधित विभाग का मंत्री ही करता है।

6. **प्रशासन में समन्वय (Co-ordination in Adminstration):** ब्रिटिश लोक प्रशासन में समन्वय की उपयुक्त व्यवस्था है। प्रत्येक सरकारी विभाग राष्ट्रीय नीति के अलग-अलग पहलुओं को क्रियान्वित करता है। विभागों के कार्य क्षेत्र में प थकता रहते हुए भी आधारभूत एकरूपता रहती है। वे मूलतः एक ही लक्ष्य के लिए कार्य करते हैं। विभागों के कार्यों में प्रतिद्वन्द्विता रोकने के लिए, मानव शक्ति एवं संसाधनों का उचित उपयोग करने के लिए तथा उपलब्ध सुविधाओं का लाभ उठाने के लिए विभागों के बीच समन्वय स्थापित किया जाता है। समन्वय द्वारा प्रशासन में कार्यकुशलता लाई जाती है, अपव्यय की रोकथाम की जाती है, अनावश्यक देरी को रोका जाता है, विभिन्न विभागों में सहयोगपूर्ण संबंधों की स्थापना की जाती है तथा जनता को अधिक से अधिक सेवाएँ प्रदान की जाती हैं। समन्वय की स्थिति ने प्रशासन को जनाकांक्षाएँ पूरा करने में सक्षम बनाया है।

   ब्रिटिश प्रशासन में समन्वय की स्थापना के लिए विभिन्न संस्थागत प्रबंध किए गए हैं। मंत्रालय स्तर पर मंत्रिमंडल द्वारा समन्वय स्थापित किया जाता है। मंत्रिमंडल की स्थायी समिति द्वारा यह कार्य संपन्न किया जाता है। निम्न अधिकारी स्तर पर ट्रेजरी समन्वय स्थापना करती है। यह विभिन्न सरकारी विभागों के व्यय पर नियंत्रण रखती है और प्रशासकीय सेवाओं में दोहराव तथा अतिराव पर रोक लगा कर उसकी कार्यकुशलता एवं मितव्ययता को बढ़ाती है। प्रत्येक विभाग ट्रेजरी को वार्षिक अनुमान प्रस्तुत करता हैं। ट्रेजरी सभी विभागों के कार्यों का परीक्षण कर जहाँ समन्वय न हो वहाँ समन्वय स्थापित करने का सुझाव भी देती हे। समन्वय स्थापना के लिए अनेक अंतर्विभागीय समितियाँ होती हैं। सरकारी विभागों के अधिकारी इन समितियों के सदस्य होते हैं। प्रत्येक मंत्रालय भी समन्वय का कार्य करता है।

7. **अविशेषज्ञों तथा विशेषज्ञों का समन्वय (Co-ordination of Amateurs and Experts):** ब्रिटिश शासन-सूत्र का संचालन मंत्रिगण एवं लोकसेवक करते हैं। मंत्रियों में प्रशासनिक अनभिज्ञता होती है। मंत्री अपने-अपने विभाग के अध्यक्ष होते हैं, किंतु उन्हें वास्तविक अनुभवों और प्रशासनिक बारीकियों का ज्ञान नहीं होता हे। राजनीतिक आधार पर नियुक्त मंत्री का कार्यकाल अनिश्चित होता हैं वह राजनीतिक प्रपंचों में इतना फँसा रहता है कि प्रशान के वास्तविक संचालन का ज्ञान उसे नहीं हो पाता। वह नौसिखिया अथवा गैर-विशेषज्ञ होता है। ऐसे अवसर कदाचित् ही आते हैं जबकि अर्थशास्त्री को चांसलर ऑफ एक्सचेकर, डॉक्टर को स्वास्थ्य मत्री तथा अध्यापक को शिक्षामंत्री नियुक्त किया जाए। किसी नौसिखिए सांसद को मंत्री नियुक्त किया जा सकता हे। लोकसेवक प्रशासन के क्षेत्र में विशेषज्ञ होते हैं। वे मंत्रियों को नीति निर्धारण व नीतियों को कार्यान्वित करने में सहायता देते हैं। लोकसेवकों का प्रशिक्षण और अनुभव उनको विशेषज्ञ बना देता है। राजनीतिक प्रपंचों से दूर रह कर वे अपने विभाग की भीतरी नीति, तथ्यों का अच्छा ज्ञान रखते हैं। वे मंत्रियों को उचित परामर्श तथा अपने पद की परिधियों में रहकर नीतियों को कार्यरूप देने में सहायता करते है ब्रिटिश प्रशासन में इनके द्वारा अविशेषज्ञ-विशेषज्ञ के मध्य समन्वय रहता है।

8. **गैर विशेषज्ञ अधिकारियों की प्रभावशीलता (Dominance of Non-expert Officials):** ब्रिटिश लोक प्रशासन में विशेषज्ञ अधिकारियों की अपेक्षा गैर-विशेषज्ञ अधिकारियों को महत्वपूर्ण स्थान है। मंत्रालय में मुख्य स्थायी अधिकारी सामान्य प्रशासक (Generalist) होते हैं। वे संबंधित मंत्री से अधिक विशेषज्ञ नहीं होते। सर वारेन फिशर (Sir Waren Fisher) के कथनानुसार, ''एक सरकारी विभाग का स्थायी अध्यक्ष किसी विषय में विशेषज्ञ नहीं होता है। वह मंत्री का परामर्शदाता होता है। वह मंत्री के अधीन सामान्य प्रबंधक और नियंत्रक है। अपने पद पर पहुंचने से पूर्व वह संभवतः आधे दर्जन से अधिक विभागों में कार्य का अनुभव प्राप्त कर लेता है।''

9. **विधि का शासन (Rule of Law):** ग्रेट ब्रिटन में विधि का शासन है। वहाँ कानून की द ष्टि से साधारण नागरिकों एवं प्रशासनिक अधिकारियों में कोई भेद नहीं है। फ्रांस की भाँति यहाँ प्रशासनिक कानून (Administrative Law) अथवा प्रशासनिक न्याय (Administrative Justice) की व्यवस्था नहीं है। किसी व्यक्ति को स्वेच्छापूर्ण शक्तियाँ नहीं दी गई है। प्रो. डायसी ने विधि के शासन की तीन मुख्य बातों का उल्लेख किया है -

   (i) ***कानून की सर्वोपरिता :*** जब तक कोई व्यक्ति कानून के विरुद्ध आचरण न करे और यह देश के सामान्य न्यायालय में सिद्ध न हो जाए तब तक किसी को दण्ड नहीं दिया जा सकता है और न ही किसी को शारीरिक हानि पहुंचायी जा सकती है।

   (ii) ***कानून की समानता:*** कोई व्यक्ति कानून के ऊपर नहीं है वरन् प्रत्येक व्यक्ति देश के सामान्य कानून से शासित होता है तथा सामान्य ट्रिब्यूनलों के क्षेत्राधिकार में रहता है। जो एक व्यक्ति के लिए कानून है, वह समस्त नागरिकों के लिए कानून है।

(iii) ***संवैधानिक सिद्धांतों का न्यायिक निर्णय की उपज होना :*** विधान में अस्पष्टता में न्यायालयों के निर्णय ही अंतिम माने जाते हैं। संसदीय कानूनों का निर्माण विधि के शासन की रक्षा के लिए किया जाता है। विधि के शासन ने ब्रिटिश प्रशासन पर लोक संप्रभुता का वर्चस्व स्थापित किया है।

10. **तटस्थता एवं प्रतिबद्धता:** लोक सेवाओं में तटस्थता का सिद्धांत ब्रिटेन से प्रतिपादित हुआ हैं तटस्थता या निष्पक्षता से तात्पर्य लोक सेवकों का राजनीतिक रूप से तटस्थ रहना है। ब्रिटेन में चाहे कोई भी दल सत्ता में हो, मंत्री किसी भी राजनीतिक विचारधारा का हो तथा नीतियां किसी भी रूप में परिवर्तित की जाएं, लोक सेवकों का कार्य निष्पक्ष भाव से उन्हे स्वीकारना है। प्रतिबद्धता (Commitment) का आशय आस्था एवं पूर्ण सहयोग से है। यद्यपि तटस्थता एवं प्रतिबद्धता दो, विपरीत विचारधाराएं हैं। फिर भी ब्रिटेन में लोक सेवक तटस्थ होते हुए राष्ट्र, कानून, लोकतंत्र तथा जनकल्याण के उच्च आदर्शों के प्रति प्रतिबद्धता प्रकट करते हैं।

11. **समिति व्यवस्था:** किसी बड़े उद्देश्य कार्य या संगठन के लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु कुछ छोटे समूह या विशेषज्ञ इकाईयां उपकार्यों के अनुसार गठित कर दी जाती हैं। यही समिति (कमेटी) व्यवस्था है। विश्व के सभी देशों में समिति व्यवस्था प्रवर्तित है किंतु ब्रिटेन तथा भारत में इसका प्रसार कुछ अधिक प्रतीत होता हैं ब्रिटेन मे संसद, मंत्रिमंडल, मंत्रालयों, विभागों, स्थानीय निकायों तथा शिक्षा तंत्र में असंख्य समितियां कार्यरत होती हैं। समिति व्यवस्था के जहां अनेक लाभ है वहीं हानियां भी पर्याप्त हैं। ब्रिटेन की समिति व्यवस्था से दुःखी होकर **(सर विंसटन चर्चिल**) ने कहा था- ''मेरी समझ से ये समितियां समाप्त हो जानी चाहिएं क्योंकि इन्होंने हमें इस तरह नियंत्रित कर लिया है जैसे कि आस्ट्रेलियावासी खरगोशों से नियंत्रित हैं (ज्ञात रहे एक समय खरगोशों की अधिक संख्या आस्ट्रेलिया की भीषण समस्या बन गई थी।)

12. **प्रभावी स्थानीय स्वशासन:** यद्यपि ब्रिटेन में एकात्मक शासन पद्धति है तथापि नगरीय एवं ग्रामीण स्थानीय स्वशासन की स्वतंत्र इकाईयां भी संगठित की गई हैं। सन् 1888 के कानून के माध्यम से प्राचीन लंदन शहर में महानगरीय स्वशासन पद्धति है जबकि लंदन के आस-पास बसी कॉलोनियों के लिए महानगरीय काउंटी हैं। ब्रिटेन में स्थानीय की सबसे प्राचीन संस्था **काउंटी** हैं। इन्हें शायर भी कहा जाता है जैसे हैम्पशायर, योर्कशायर। वस्तुतः काउंटी ब्रिटिश प्रशासन तथा निर्वाचन की मूलभूत इकाई भी हैं। काउंटी भी दो प्रकार की है। प्रशासनिक काउंटी तथा काउंटी बरो इसके दो रूप हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में स्थानीय स्वशासन की मूल इकाई पेरिश (Parish) कहलाती है। पेरिश वे संस्था हैं जहां किसी गांव में स्थानीय चर्च एवं शासन संचालन की परिषद/समिति हो। बहुत सारे पेरिश मिलकर जिले का निर्माण करते हैं। स्थानीय स्वशासन की अधिकांश इकाइयों में जनप्रतिनिधियों से युक्त संचालन समिति होती है जो प्रायः तीन वर्ष के लिए चुनी जाती है। जिस काउंटी में निर्वाचित प्रतिनिधि नहीं होते हैं वहां प्रिंसीपल अधिकारी, (स्थानीय लेफ्टीनेंट), शेरिफ तथा जस्टिन ऑफ पीस काउंटी प्रशासन को संचालित करते हैं। पेयजल, विद्युत स्वच्छता, टीकाकरण, शिक्षा तथा समाज कल्याण के कार्य स्थानीय स्वशासन के अधीन हैं।

एच.एम.स्टाउट ने अपनी पुस्तक "British Government" में ब्रिटिश प्रशासनिक तंत्र की विशेषताओं का उल्लेख करते हुए लिखा है ''ग्रेट ब्रिटेन के नागरिकों की विश्व की सर्वश्रेष्ठ प्रशासनिक तत्रं द्वारा सेवा की जा रही है। यह राष्ट्रीय नीति के संचालन का एक प्रभावशाली माध्यम है। सत्ता एवं अधिकारों की दिशाएं प्रत्यक्ष एवं स्पष्ट हैं। लोक सेवक आज्ञाकारी, सक्षम तथा ईमानदार हैं। जब सार्वजनिक नीति घोषित कर दी जाती है तब उसकी क्रियान्विति को प्रशासनिक अधिकारियों के विरोध के बावजूद भी शायद ही कभी परिवर्तित किया जाता है। शांति एवं युद्ध में, राष्ट्रीय प्रशासन ने भारी उत्तरदायित्वों को निभाने तथा कार्यकुशलता बनाए रखने में सदैव अपनी योग्यता का प्रदर्शन किया है।

अध्याय-6
अमरीकी प्रशासनिक व्यवस्था की विशेषताएँ
(Features of American Administrative System)

यदि ब्रिटेन को संसदीय लोकतंत्र का जनक माना जाता है तो अमरीका को अध्यक्षीय शासन व्यवस्था का प्रारंभकर्ता। दोनों की शासन प्रणाली तथा राजनीतिक रूप-रचना में भी पर्याप्त विभिन्नताएं है। अमरीका का संविधान लिखित, निर्मित और कठोर है। सरकार अध्यक्षात्मक और संधात्मक है। अध्यक्षीय शासन व्यवस्था के फलस्वरूप राष्ट्रपति का पद अत्यंत महत्वपूर्ण है। राष्ट्रपति ही वास्तविक कार्यपालिका का प्रमुख होता है तथा संसद के प्रति उत्तरदायी नहीं होता है। राष्ट्रपति के अधीन मंत्रिमंडल कार्यरत होता है किंतु उसकी स्थिति मात्र अधीनस्थ लोक-सेवक जैसी है। न्यायपालिका स्वतंत्र है तथा शक्ति-प थक्करण सिद्धांत को अपनाया गया हैं लिखित संविधान के होते हुए भी अमरीका में बहुत से कार्य परंपराओं पर आधारित हैं जैसे कि समस्त प्रत्यक्ष निर्वाचन मंगलवार को होते हैं और सर्वोच्च न्यायालय अपने निर्णय केवल शुक्रवार को ही देते हैं। वहाँ राष्ट्रपति के मंत्रिमंडल के सदस्य संसद के सदस्य नहीं होते हैं, बल्कि वे राष्ट्रपति के दल के सदस्य तथा विशेषज्ञ होते हैं। अमरीका में मंत्री को 'सचिव' कहा जाता हैं प्रशासनतंत्र में विशेषज्ञों का महत्व होता है। सरकारी विभागों के अतिरिक्त स्वतंत्र नियामकीय आयोग या बोर्ड भी महत्वपूर्ण कार्य करते हैं। इस प्रकार संयुक्त राज्य अमेरिका भी प्रशासनिक व्यवस्था, सुद ढ़, कुशल तथा आधुनिक प्रव तियों से युक्त मानी जाती है। स्वाभाविक रूप से इस प्रशासनिक व्यवस्था पर संविधान तथा शासन का प्रभाव स्पष्टतः दिखाई देता है। अमेरिकी प्रशासन की प्रमुख विशेषताएं निम्नलिखित है।

1. **लोकतांत्रिक एवं लोक कल्याणकारी स्वरूपः** अमेरिकी लोक प्रशासन का स्वरूप प्रजातांत्रिक मूल्यों से प्रभावित है क्योंकि संघीय स्तर पर राष्ट्रपति तथा राज्यों में गवर्नर का चयन जनता की इच्छा पर निर्भर करता है। इसी प्रकार विधान मंडलों में जनप्रतिनिधियों का निर्वाचन भी जनता ही करती है। ये जनप्रतिनिधि प्रशासन के संचालन हेतु विविध प्रकार के कानून निर्मित करते हैं। अप्रत्यक्ष रूप से शासन की समस्त शक्तियां जनता में समाहित हैं। इसी प्रकार अमेरिका में नागरिकों के कल्याण, विकास तथा सुरक्षा का दायित्व प्रशासन के कंधों पर हैं। प्रत्येक व्यक्ति के लिए जीवन की न्यूनतम तथा मूलभूत, आवश्यकताओं यथा-भोजन, वस्त्र, आवास, सुरक्षा, परिवहन, बीमा, शिक्षा तथा स्वास्थ्य इत्यादि की पूर्ति में सरकार सहायता करती है। लोक प्रशासन द्वारा संचालित सामाजिक सेवाओं में शिथिलता किसी भी स्तर पर सहजता से स्वीकार्य नहीं है।

2. **विधि का शासनः** आधुनिक लोकल्याणकारी राज्यों में ''विधि का शासन'' प्राथमिक आवश्यकता है। विधि के शासन से आशय उस व्यवस्था से है जिसमें कानून की सर्वोच्चता रहती है तथा व्यक्ति या संस्था को विधि से अधिक महत्व नहीं दिया जाता है। अमेरिकी प्रशासन के उद्देश्य, कार्यप्रणाली तथा व्यवहार उसी प्रकार निर्धारण किया जाता है जैसा कि संविधान में वर्णित आदर्शों तथा कांग्रेस द्वारा पारित कानूनों में उल्लेख होता है। बहुभाषी, बहुराष्ट्रीयता तथा बहुनस्लों एवं विविध संस्कृतियों से युक्त अमेरिका में समान कानून लागू हैं यद्यपि कतिपय प्रकरणों में विशिष्टता का नियम भी प्रवर्तित है।

3. **प्रशासन का कानूनी आधार (Legal Basis of the Administration):** अमेरिकी राष्ट्रीय सरकार के प्रशासन का स्वरूप कांग्रेस द्वारा पारित कानूनों पर निर्भर है। संविधान में प्रशासनिक संगठन के लिए कोई विशेष प्रावधान नहीं मिलता। कांग्रेस अपनी वर्णित शक्तियों का प्रयोग कर ऐसे अनेक अधिनियम पारित करती है जो प्रशासनिक अभिकरणों की रचना एवं संगठन की व्यवस्था कर सके। राष्ट्रपति समय-समय पर ऐसे कार्यपालिका आदेश प्रसारित करते हैं जिनसे अस्थाई प्रकृति के संकटकालीन अभिकरणों की रचना होती है या स्थाई विभागों के संगठन बनते रहते हैं।

4. **तकनीकी का प्रभाव (The Impact of Technology):** संयुक्त राज्य अमेरिका के प्रशासन पर तकनीकी का प्रभाव चार रूपों में हुआ है - **1.** इसमें सेवीवर्ग व्यवस्था आवश्यक है जो प्रत्येक स्तर पर नए प्रत्याशियों के प्रवेश को स्वीकार एवं प्रोत्साहित कर सके। नए वातावरण में सेवीवर्ग प्रशासन को भर्ती, वेतन, कार्यकाल एवं सेवानिव त्ति के प्रावधानों में लोचशीलता रखने के लिए सदैव तैयार रहना चाहिए। **2.** सेवाकालीन प्रशिक्षण का महत्व बढ़ा है। पूर्णकालीन प्रशिक्षण के लिए कर्मचारी को बहुत समय तक सेवा से प थक रखना उचित नहीं है। यह व्यवस्था कर्मचारी को तकनीकी परिवर्तनों से परिचित रखने में सक्षम न हीं है। सरकारी प्रयोगशालाओं तथा कार्यालयों में कार्य करने वाले इंजीनियरों, वैज्ञानिकों, तकनीकी विशेषज्ञें, चिकित्सकों आदि के लिए प्रशिक्षण आवश्यक है। **3.** व्यावसायिक कार्यकर्ता तथा विशेषतः वैज्ञानिक स्वयं को एक विशेष जाति का मानने लगे हैं। वे विशेषाधिकार की मांग करते हैं। वे अपने कर्त्तव्यों एवं दायित्वों की ओर ध्यान देने की अपेक्षा पदस्तर को ऊँचा उठाने पर समय तथा शक्ति व्यय करते हैं। **5.** तकनीकी युग वैज्ञानिकों को लोक-सेवक होने के नाते उन्हें वैज्ञानिक से अधिक होने की प्ररेणा देता है।

5. **जटिल एवं उलझा हुआ प्रशासनिक तंत्र** - भारत की भांति अमेरिकी प्रशासनिक तंत्र भी अत्यंत जटिल तथा उलझा हुआ है क्योंकि वहां पर विविध प्रकृति, आधार एवं उद्देश्यों से युक्त प्रशासनिक कार्यरत हैं। कुछ प्रशासनिक विभाग, उनके ब्यूरो, सेवाएं तथा कार्यालय के नाम से बहुधा भ्रांति उत्पन्न हो जाती है। कतिपय विभाग ऐसे भी हैं जो संघीय एवं प्रान्तीय दोनों स्तरों पर कार्यरत हैं। मंत्रिमंडल के प्रत्यक्ष नियंत्रण के प्रशासनिक विभागों के अतिरिक्त स्वतंत्र कार्यकारी अभिकरण, स्वतंत्र नियामकीय आयोग तथा लोक उपक्रमों के रूप में कई प्रकार के बोर्ड, निगम तथा आयोग तथा लोक उपक्रमों के रूप में कई प्रकार के बोर्ड, निगम तथा आयोग कार्यरत हैं तो प्रशासनिक जटिलता एवं विविधता के परिचायक हैं। विविध प्रकार के प्रशासनिक संगठनों के निर्माण से कांग्रेस एवं राष्ट्रपति दोनों के लिए विधि निर्माण, नियंत्रण और समन्वय किंचित कठिन हो जाता है। भारत की भांति अमेरिका में भी लोक उपक्रमों के नामकरण में अस्पष्टता है। उदाहरण के लिए **National Rural Electric Cooperative Association** एक लोक उपक्रम है।

6. **कुशल कार्मिक प्रशासनः** संघीय अथवा केन्द्रीय स्तर पर संरचित प्रशासनिक संस्थाओं पर कांग्रेस के कानून प्रभावी होते हैं तथा इन संस्थाओं के कार्मिकों को वे कार्य को संपादित करने पड़ते हैं जो संविधन की संघीय सूची में वर्णित किए गए हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका के संघीय प्रशासन के अधीन लगभग 32 लाख लोक सेवक कार्यरत है जबकि सभी राज्यों के कार्मिकों सहित यह संख्या सवा दो करोड़ से भी अधिक हो जाती है। कुशल, प्रतिबद्ध तथा आधुनिक प्रकृति के कार्मिक प्रशासन की कतिपय विशेषताएं निम्नांकित हैं -

   क. संयुक्त राज्य अमेरिका में लोक सेवाओं का वर्गीकरण पद की स्थिति **(Positin Classification)** के आधार पर किया गया हैं भारत या फ्रांस की तरह रैंक वर्गीकरण नहीं है लोक सेवाओं को जनरल शिड्यूल **(General Schedule)1** से **18** तक विभक्त किया गया है। सन् **1978** से **Senior Executive Service** भी शुरू की गई है जो सर्वोच्च लोक सेवाएं हैं।

   ख. भर्ती का मुख्य आधार योग्यता को बनाया गया है तथापि लूट प्रणाली अभी प्रवर्तित है। सन् **1978** के सिविल सर्विस सुधारों के पश्चात् संघीय लोक सेवा आयोग समाप्त कर दिया गया है तथा कार्मिक भर्ती, प्रशिक्षण, वर्गीकरण एवं सेवा शर्तों से संबंधित कार्य **"Office of Personnel Management"** करता है।

   ग. भर्ती के लिए आयु सीमा **18** से **70** वर्ष है। कतिपय तकनीकी पदों को छोड़कर शेष पदों हेतु कोई शैक्षिक योग्यता निर्धारित नहीं है केवल संबंधित पद हेतु प्रतियोगी परीक्षा उत्तीर्ण करनी पड़ती है।

   घ. सेवापूर्व तथा सेवाकालीन प्रशिक्षण सहित कम्प्यूटर के प्रयोग पर अत्यधिक बल दिया जाता है। विशेषज्ञों का वर्चस्व है।

   ड. अमेरिकी प्रशासन में लोक सेवाओं को स्थायी कैरियर के रूप में नहीं देखा जाता है बल्कि अच्छे अवसर मिलने पर बार-बार नौकरी छोड़ना एक साधारण प्रव त्ति है। पदोन्नति में योग्यता तथा परिष्ठता दोनों का महत्व रहता है। कार्य निष्पादन मूल्यांकन गंभीरतापूर्वक किया जाता है।

   च. वेतन प्रति सप्ताह दिया जाता है तथा निजी क्षेत्र की तुलना में लोक सेवाओं का वेतन कम आकर्षक माना जाता है।

छ. टाफ्ट हर्टले अधिनियम 1947 के बाद लोक सेवकों द्वारा हड़ताल करना पूर्णतया वर्जित है।

ज. कार्मिकों के व्यावसायिक संघों की स्थिति सुद ढ़ है तथा वे सरकार पर दबाव डालने के अतिरिक्त सदस्यों की योग्यताओं, ज्ञान एवं व्यावसायिक आदर्शों में व द्धि के प्रयास भी करते हैं।

इसी प्रकार कम्प्यूटर, फैक्स, इंटरनेट, उपग्रह, पेजर, ई-मेल तथा अन्य फाइबर ओप्टिक इलैक्ट्रोनिक सुविधाओं से युक्त अमेरिकी प्रशासन उन्नत एवं आधुनिकीकृत माना जाता है। 30 जून, 2000 को राष्ट्रपति बिल क्लिंटन ने इलैक्ट्रानिक हस्ताक्षर कर ई-कॉमर्स तथा ऑनलाईन अनुबंधों को वैधता प्रदान कर दी थी।

7. **प्रशासन पर दलों का प्रभाव (Influence of Parties on Adminstration):** अमेरिकी प्रशासन पर दलों का भारी प्रभाव है। अमेरिका में मुख्य कार्यपालक अधिकारी के बदलते ही प्रशासनिक अधिकारी भी बदल जाते थे, 1883 पर अब ये अधिकारी प्रतियोगिता के आधार पर प्रशासनिक आयोग द्वारा चुने जाते हैं। उच्च प्रशासनिक पदों पर अब भी व्यापक दलीय प्रभाव है और राष्ट्रपति द्वारा राजनीतिक नियुक्तियों की कीमत चार्ल्स ब्रियर्ड के अनुसार 'कई करोड़ डॉलर वार्षिक' है। आयोगों, निगमों, एजेन्सियों आदि के प्रधान राजनीतिक आधार पर चुने जाते हैं। इनके अधिकांश सदस्यों की नियुक्ति दलबंदी के आधार पर होती है। परामर्शदाता मंडल में राष्ट्रपति के विश्वासपात्र दलीय नेताओं और व्यक्तिगत मित्रों को स्थान मिलता है। प्रशासनिक नीतियों के निर्धारण में स्थायी प्रशासकों का व्यवहार में कोई महत्व नहीं है।

8. **राजनीतिक नेत त्व (Political Leadership):** राज्य की निर्वाचित या नियुक्त कार्यपालिका देश की नौकरशाही को नेत त्व प्रदान करती है और प्रशासन को उत्तरदायी बनाए रखने की व्यवस्था करती है। आशंका यह है कि कहीं इसके कारण लोकसेवक अपनी व्यावसायिक ईमानदारी से न फिसल जाएँ। राजनीतिक नेत त्व के प्रति स्वामिभक्ति और कर्मचारी के स्वतंत्र विचारों में उपयुक्त संतुलन होना चाहिए। एक के लिए दूसरी का बलिदान करना अनुचित है। लोकसेवक का अपना राजनीतिक द ष्टिकोण कुछ भी हो सकता है तथा राजनीतिक नेताओं के प्रति उसकी भावनाएँ कैसी भी रहें किंतु उसे अपने कर्त्तव्य निर्वाह में बाधक नहीं बनावें।

संयुक्त राज्य में नौकरशाही का परीक्षाकाल आम चुनावों के बाद होता है जब नया राजनीतिक नेत त्व कुर्सी पर आता है। यह संक्रमण नए तथा पुराने अधिकारियों के लिए कष्टदायक बन जाता है। अतः लोकसेवकों से यह अपेक्षा की जाती है कि वे नए राजनीतिक नेत त्व के साथ सामंजस्य स्थापित करें।

9. **विशेष हित समूहों का प्रभाव (Influence of Special Interest Groups):** हित समूह अमेरिकी राजनीतिक क्षितिज की महत्वपूर्ण यथार्थताएँ हैं। सरकारी कार्यकलापों की भाँति प्रशासन क्षेत्र में विशेष हित समूह सक्रिय रहते हैं। इनकी सक्रियता एवं संगठन इतना सक्षम नहीं होता कि ये श्रेष्ठ प्रशासन हितों के समर्थन के लिए कोई संयुक्त मोर्चा बना सकें। यहाँ के कुछ मुख्य हित समूह ये हैं - National Civil League, American Society for Public Administration, Public Personnel Association, The Society for Personnel Administration आदि। ये हित समूह उचित तकनीकी कार्य संचालन तथा योग्यता व्यवस्था के प्रसार में उपयुक्त भूमिका निभाते हैं। इनकी रुचि प्रशासनिक कार्यकुशलता एवं सक्षमता में नहीं रहती । ये अपने सदस्यों के हितों की पूर्ति के प्रयास करते हैं। संयुक्त राज्य में कोई ऐसा हित समूह नहीं है जो व्यवस्थापिका में जाकर श्रेष्ठ, कल्पनाशील और रचनात्मक सेवीवर्ग प्रबंध के लिए संघर्ष करे।

10. **स्वतंत्र राज्य प्रशासनः** संघीय शासन व्यवस्था अपनाने के कारण संयुक्त अमेरिका में संघीय तथा प्रान्तीय दोनों स्तरों पर प थक-प थक संविधान तथा प्रशासनिक तंत्र कार्यरत हैं। संधीय संविधान के अनुच्छेद - 1 (8) में वर्णित विषयों के अतिरिक्त सभी विषय राज्य सूची या राज्य प्रशासन से संबंधित माने गए हैं। प्रत्येक राज्य का अपना संविधान, विधानमंडल, कार्यपालिका तथा न्यायपालिका कार्यरत है जो उस राज्य की भौगोलिक परिस्थितियों, ऐतिहासिक संदर्भों, जनाकांक्षाओं और सामाजिक-आर्थिक परिवेश से प्रभावित है। राज्य प्रशासन में आपातकालीन या संकटकालीन परिस्थितियों के अतिरिक्त संघ सरकार का कभी कोई हस्तक्षेप नहीं रहता है।

11. **सुस्थापित स्थानीय स्वशासन :** संयुक्त राज्य अमेरिका में नगरीय तथा ग्रामीण स्थानीय स्वशासन राज्य सूची का विषय है अतः संबंधित राज्य के संविधान में स्थानीय संस्थाओं का वर्णन किया गया हैं। स्थानीय स्वशासन की इन संस्थाओं को लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की पर्याय मनाते हुए पर्याप्त शक्तियों एवं अधिकारों से युक्त किया गया है। बड़े नगरों में नगर निगम तथा छोटे नगरों में सिटी, काउंटी, टाउनशिप नामक संस्थाएं कार्यरत है जबकि गांवों में भी स्थानीय स्वशासन की जड़ें व्याप्त हैं। नगरपालिका चुनाव में जीता मंडल, साक्षात्कार द्वारा अपना ''सिटी मैनेजर'' चुनता है।

12. **नौकरशाही का वर्चस्वः** वर्तमान विश्व के अधिकांश देशों में चाहे वे विकसित हों या विकासशील, नौकरशाही एक बुराई या समस्या के रूप में आंकी जाती है लेकिन इस बुराई का अन्य कोई अच्छा विकल्प नहीं है। मंत्रियों को परामर्श, तथ्यों के प्रस्तुतीकरण, नियमों के निर्माण, कानूनों के क्रियान्वयन तथा जनसंपर्क के संबंध में राजनीतिज्ञों को कुशल कार्मिकों की आवश्यकता है लेकिन इन कार्मिकों में सर्वत्र अहं तथा विशिष्ट प्रस्थिति का भाव व्याप्त है। **नार्मन जे. पावेल** के अनुसार - ''संयुक्त राज्य अमेरिका की लोक सेवाएं विशाल, महंगी तथा शक्तिशाली है।'' उच्च पदों पर आसीन नौकरशाही तथा राजनीतिज्ञों का घनिष्ठ संबंध पाया जाता है जो प्रशासनिक कुशलता में सार्थक अथवा सकारात्मक योगदान शायद ही कभी देता है। 1966 से जनता को ''सूचना का अधिकार'' प्राप्त है जिससे नौकरशाही पर अंकुश लगा है।

13. **निजी क्षेत्र का वर्चस्वः** यद्यपि लोक प्रशासन तथा निजी प्रशासन दो प थक ध्रुव हैं तथापि सामाजिक, राजनीतिक एवं आर्थिक सन्दर्भों में ये एक ही सिक्के के दो पहलू माने जाते हैं। अमेरिकी अर्थव्यवस्था पूंजीवाद की पोषक मानी जाती है अतः प्रतिरक्षा, पुलिस, परमाणु अस्त्र-शस्त्र, अतंरिक्ष कार्यक्रम तथा केरेंसी नियंत्रण के अतिरिक्त अन्य सभी क्षेत्रों में पूंजीपतियों का हस्तक्षेप इतना अधिक है कि सरकार की भूमिका लगभग गौण है। शिक्षा, स्वास्थ्य, कृषि, उद्योग, वाणिज्य, संचार, व्यापार तथा अनुसंधान के क्षेत्रों में निजी क्षेत्र का बोलबाला है। आधुनिक तकनीक एवं उच्च प्रबंधकीय योग्यताओं के कारण निजी क्षेत्र का संगठन, कार्यप्रणाली, उत्पादन तथा उसकी गुणवत्ता विश्वसनीय मानी जाती है अतः अधिसंख्य योग्य एवं प्रतिभाशाली व्यक्तियों का झुकाव निजी क्षेत्र की ओर पाया जाता है।

अध्याय-7
फ्रांस की प्रशासनिक व्यवस्था की मुख्य विशेषताएँ
(Salient Features of French Administrative System)

सन 1789 की महान क्रांति के पश्चात् फ्रांस में लोकतांत्रिक मूल्यों, समानता, भाईचारे तथा मानवाधिकार के प्रसार हेतु लोककल्याणकारी शासन व्यवस्थाओं की मांग निरंतर बलवती होती गई। सन् 1791 से 1958 तक फ्रांस में बार-बार संविधान निर्मित किए गए, शासन-सत्ताएं परिवर्तित हुई तथा निरंतर अस्थिरता का दौर जारी रहा लेकिन समस्त भीषण झंझावतों को जूझ कर फ्रांसिसी प्रशासन एक उत्कृष्ट एवं जन हितकारी प्रशासन के रूप में स्थापित हो गया जिसकी निम्नांकित विशेषताएं उल्लेखनीय हैं-

1. **शास्त्रीय प्रशासनः** फ्रांस का लोक प्रशासन अति उत्तम या शास्त्रीय (Classic) प्रशासनिक व्यवस्था का पर्याय माना जाता है क्योंकि लोक प्रशासन के सिद्धांतों तथा मानवीय पक्षों के संयुक्त आधार पर निर्मित यह प्रशासन अत्यधिक औपचारिक एवं विधिवत रूप से गठित है। **फैरेल हैडी** इस व्यवस्था को शास्त्रीय इसलिए मानते हैं कि राजनीतिक अस्थिरता के दौर में भी फ्रांस की प्रशासनिक व्यवस्था ने कभी भी जनकल्याण एवं लोक महत्व के विषयों एवं कार्यों को तिलांजलि नहीं दी बल्कि प्रशासनिक निरंतरता सदैव बनी रही। जर्मनी तथा फ्रांस के प्रशासन की यह विशेषता अस्थिर राजनीति वाले देशों के लिए उदाहरण है।[2] लोक सेवाओं का सुद ढ़ ढ़ांचा तथा राष्ट्र के प्रति भक्ति सहित लोक सेवकों के विकास के समस्त आवश्यक प्रावधान इस व्यवस्था की विशेषता हैं। प्रत्येक व्यक्ति के जन्म के पूर्व से लेकर म त्यु के पश्चात् तक लोक प्रशासन अपना दायित्व कदम-कदम पर निर्वाहित करता है। यद्यपि वाल्टेयर तथा क्वसने जैसे फ्रांसिसी दार्शनिक ''अहस्तक्षेपवादी राज्य'' के समर्थक रहे हैं तो भी फ्रांस में अधिकाशंतः राज्य तथा लोक प्रशासन को जनहित एवं विकास का ही माध्यम माना जाता रहा है। फ्रांस में सरकारों का स्वरूप समयानुसार परिवर्तित होता रहा है किंतु लोक प्रशासन यथावत जनकल्याण से संलग्न रहा हैं। इसी क्रम में **अलफ्रेड डाइमन्ट** ने कहा है - ''गणराज्य समाप्त हो जाता है किंतु प्रशासन बना रहा है।'' हरबर्ट लूथी भी मानते हैं कि फ्रांस में जब संसद कार्य नहीं कर रही होती है तो पूर्व के निर्णयों से प्रशासन संचालित होता रहता है। सप्ताहों तक सरकार नहीं होती, तो भी सैकड़ों प्रीफेक्ट प्रशासन संचालित करते रहते है।

2. **राज्य की सर्वोच्चताः** फ्रांस में प्राचीनकाल से ही रोमन सभ्यता, संस्कृति तथा कानूनों का प्रभाव रहा है अतः 'राज्य' को महत्वपूर्ण अवयव के रूप में देखने की प्रव ति रही है। राज्य द्वारा निर्मित कानून तथा नियम, प्रशासनिक व्यवस्था के लिए मार्गदर्शक रहते हैं। आज भी फ्रांस की शासन व्यवस्था में लोक प्रशासनिक व्यवस्था कुशलतापूर्वक कार्य कर रही है किंतु बड़े ही सहज ढंग से स्वयं को सर्वोच्च सत्ता अर्थात् राजनीतिक कार्यपालिका एवं संविधान के अधीन ही स्वीकारती हैं। सरकार, राज्य का एक आवश्यक अंग होती है तथा प्रशासन, सरकार के कार्यों के संचालन का एक माध्यम है। स्थायित्व के बावजूद भी लोक प्रशासन के अधिकारियों ने कभी भी राजनीतिक अस्थिरता का दुरूपयोग नहीं किया है।[3]

3. **केन्द्रीकृत प्रशासन :** फ्रांस का लोक प्रशासन प्राचीनकाल से ही केन्द्रीकरण की प्रव त्तियों से युक्त रहा है। संभवतः राजनीतिक अस्थिरता के दौर ने प्रशासनिक व्यवस्था एवं सत्ता के विकेन्द्रीकरण की राह में व्यावहारिक कठिनाइयां उत्पन्न की हैं। गणराज्य की स्थापना के उपरांत नेपोलियन बोनापार्ट द्वारा पुनः राजतंत्र स्थापित करना तथा प्रशासन को केन्द्रीकृत कर पेरिस तक समेटना तत्कालीन परिस्थितियों का प्रतिफल है लेकिन आज भी प्रशासनिक कार्यकरण केन्द्रीकृत बना हुआ है। यद्यपि 1982 के सुधारों के पश्चात् विकेन्द्रीकरण के प्रयास होने लगे है लेकिन अभी भी महत्वपूर्ण

पेरिस स्थिति मंत्रालय तथा निदेशालय ही लेते हैं। केन्द्रीकृत प्रशासन का एक मुख्य कारण यह भी माना जाता है कि फ्रांस की कुल जनसंख्या का 20 प्रतिशत हिस्सा अभी भी पेरिस में रहता है। इसीलिए कहते है कि पेरिस को छींक आने का मतलब संपूर्ण फ्रांस को न्यूमोनिया हो जाना है। (इसी प्रकार की स्थिति फ्रांस को छींक आती है।) वस्तुतः फ्रांस में शक्तियों का बंटवारा नही बल्कि कार्यों का विकेन्द्रीकरण किया हुआ है।

4. **एकात्मक शासनः** ब्रिटेन की भांति फ्रांस में भी शासन एक स्तरीय है अर्थात् संपूर्ण देश की एक ही विधायिका तथा सरकार होती है भारत या अमेरिका की तरह, राज्य सरकारों का अस्तित्व नहीं है। यद्यपि फ्रांस को प्रादेशिक क्षेत्रों में विभक्त किया गया है लेकिन ऐसा प्रशासनिक सुविधा के लिए है न कि शासन की दोहरी इकाईयां कार्य करती हैं। प्रादेशिक क्षेत्रों को डिपार्टमेन्ट्स (अर्थात् जिलों) में विभक्त किया गया है जहां प्रीफेक्ट नामक अधिकारी समस्त कार्य संपादित करता है। संपूर्ण देश में एक जैसा सामान्य एवं प्रशासकीय कानून तथा व्यवस्था प्रावर्तित है जो मूलतः राष्ट्रीय एकता में व द्धि करती है।

5. **प्रभावी लोक सेवाएंः** फ्रांस की लोक सेवाएं अत्यंत श्रेष्ठ तथा अनुशासित मानी जाती हैं। यहां पर अस्थिर सरकारें रहने के कारण लोकसेवाओं का प्रभाव एवं महत्व लगातार बढ़ता गया। राजनीतिक उलट-फेर पर भी प्रशासनिक स्थिरता बनी रही। सरकारी अधिकारियों ने स्वयं को राज्य के साथ एकाकार कर लिया तथा वे अपने आप को संप्रभु मानने लगे तथा जनता ने उनकी यह स्थिति स्वीकार की। वे लोकसेवक (Public Servant) न रहकर लोक अधिकारी (Public Officer) बन गए। आज भी उनका विशेष सम्मान है। लोकसेवकों की भर्ती, प्रशिक्षण, सेवा शर्तें निम्न प्रकार हैं -

   i. लोकसेवकों की भर्ती (The Recruitment): फ्रांस में लोक सेवा एक आजीवन व्यवसाय है। नियुक्ति के बाद, पुनर्नियुक्ति हेतु लोक सेवक इधर-उधर नहीं जाते । यहाँ भर्ती व्यवस्था को शिक्षा से जोड़ दिया गया है। उच्च पदों पर वे ही प्रत्याशी आ सकते हैं जिन्होंने उच्च शिक्षा प्राप्त की है, किंतु उच्च शिक्षा जनसंख्या के एक छोटे से भाग तक सीमित है। उच्च प्रशासनिक पदों पर एक वर्ग विशेष के लोग ही आ पाते हैं।

   ii. लोक सेवकों का प्रशिक्षण (The Training): भर्ती के बाद कर्मचारियों को व्यापक प्रशिक्षण प्रदान किया जाता है। यह कार्य 1945 में स्थापित प्रशासन के राष्ट्रीय विद्यालय (National Schools of Administration) द्वारा संपन्न किया जाता है। नवागन्तुक लोकसेवकों के लिए 3 साल का पाठ्यक्रम है। उच्च प्रशासकीय सेवा के लिए व्यावहारिक प्रशिक्षण दिया जाता है। शैक्षणिक विशेषीकरण के लिए चार क्षेत्र हैं - सामान्य प्रशासन, आर्थिक और वित्तीय प्रशासन, सामाजिक प्रशासन तथा विदेशी मामले। औद्योगिक प्रबंध में ज्ञान प्राप्त करने के लिए प्रशिक्षणार्थी को निजी उद्योग में भी रखा जाता है।

   iii. सेवा की शर्ते (The Conditions of Service): लोक सेवकों को सुरक्षा एवं स्तर की पूरी गारंटी है। इनका कार्यकाल आजीवन होता हैं अनुशासनात्मक कार्यवाही के अधीन पहल पदमुक्त किया जा सकता है किंतु यह कार्यवाही एक लंबी प्रक्रिया द्वारा संपन्न होती है। अनुशासनात्मक कार्यवाही ट्रिब्यूनल में लोकसेवकों के भी प्रतिनिधि लिए जाते हैं। पदोन्नति आदि इन्हीं लोक सेवकों द्वारा नियन्त्रित की जाती हैं। लोक सेवकों को पर्याप्त वेतन दिया जाता है। इसके अतिरिक्त परिवार भत्ता, सामाजिक सुरक्षा एवं सेवानिव त्ति पर पेंशन की व्यवस्था भी की जाती है।

   iv. राजनीतिक कार्य (The Political Activities): फ्रांस में लोक सेवक सरकार के कार्यों में सक्रिय भाग लेते हैं। लोकसेवकों को राजनीतिक कार्यों में भाग लेने पर कोई प्रतिबंध नहीं है। एक लोकप्रिय लोकसेवक मंत्री भी बन सकता है। व्यक्तिगत रुचि के कारण लोकसेवक सक्रिक राजनीति में कूद पड़ते हैं और पुनः लोक सेवा में अपने पूर्व पद पर आ सकते हैं। राजनीतिक अस्थिरता और मंत्रिमंडलों के शीघ्र पतन के कारण लोक प्रशासकों को राजनीति में आने का पूरा अवसर मिलता है।

6. नियंत्रण की व्यवस्था (The Control System): फ्रांसीसी प्रशासन पर दो प्रकार के नियंत्रण हैं - ब्राह्म नियंत्रण और आंतरिक नियंत्रण। बाह्म नियंत्रण, व्यवस्थापिका और कार्यपालिका द्वारा तथा आंतरिक नियंत्रण निर्धारित इकाइयों द्वारा रखा जाता है। फ्रांसीसी क्रांति के बाद यहाँ राजनीतिक अस्थिरता का वातावरण रहा है। फलस्वरूप प्रशासन की आंतरिक नियंत्रण व्यवस्था सशक्त बनी है तथा राजनीतिक निर्देशन का क्षेत्र सीमित हुआ है।

   प्रशासन के बाहरी नियंत्रण का मुख्य अभिकरण व्यवस्थापिका है। यह विधायी नियंत्रण सदैव कमजोर रहा है। व्यवस्थापिका ने अपनी अनेक शक्तियाँ कार्यपालिका को हस्तांतरिक कर दीं और प्रशासन पर नियंत्रण कमजोर पड़

गया। नियंत्रणकारी शक्तियाँ व्यवस्थापिका के पास हैं उनका प्रयोग विधायी समितियों द्वारा किया जाता है। इन समितियों के सभापति भूतिपूर्व मंत्री होते हैं और ये नियंत्रित विषय भली प्रकार जानते हैं इनमें सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण वित्तीय समिति हैं यह अनेक उप-समितियों में विभाजित है। प्रत्येक उप-समिति में एक सभापति और रिपोर्टर होता हैं प्रत्येक उप-समिति एक मंत्रालय के बजट पर नियंत्रण रखने के लिए उत्तरदायी है। प्रशासन पर दूसरा बाहरी नियंत्रण कार्यपालिका का होता हैं। फ्रांस में प्रशासन पर इसका नियंत्रण प्रभावशाली नहीं रहता। अस्थिर मंत्रिमंडल एवं सरकार की संविद प्रकृति से यहाँ अंतःमंत्रिमंडलीय समन्वय नहीं रह पाता।

प्रशासन पर आंतरिक सशक्त और प्रभावशाली होता है। इसके मुख्य अभिकरण हैं - कौंसिल डी इटाट (Conseil 'd' etat) का नियंत्रण, बजट तथा वित्तीय नियंत्रण, सेवीवर्ग संबंधी नियंत्रण, सरकार की विकेन्द्रीकृत सेवाओं पर नियंत्रण (Tutelle Administration) आदि। यह जनमत एवं राजनीतिक नियंत्रण से स्वतंत्र है।

प्रो. अल्फ्रेड डाइमन्ट (Prof. Alfred Diamant) ने फ्रांसीसी प्रशासन की नियंत्रण व्यवस्था की निम्न विशेषताओं का उल्लेख किया है - i. लोक सेवा कार्य संपन्नता को नियंत्रित करने तथा मापने में संकीर्ण वित्तीय और कानूनी मापदण्डों पर जोर दिया जाता है। ii. इन मापदण्डों पर लाइन अभिकरण की अपेक्षा स्टाफ अभिकरण का महत्व बढ़ जाता हैं स्टाफ में शक्ति तथा प्रभाव अधिक होने के कारण इसमें श्रेष्ठ लोग ही प्रवेश कर पाते है। iii. उच्चतर सेवाओं के विशिष्ट वर्ग लाइन अभिकरण के उच्च पदों पर भी एकाधिकार रखते हैं। iv कौंसिल डी इटाट (Conseil d' etat), वित्तीय निरीक्षक तथा ऐसे ही नियंत्रणकारी अंगों ने प्रशासकीय स्व-विवेक एवं पहल की शक्ति को घटा दिया है।

7. **स्वच्छ, स्थायी एवं कुशल प्रशासनः** फ्रांस की प्रशासनिक व्यवस्था साफ-सुथरी, अनुशासिक तथा राष्ट्रहितों के प्रति प्रतिबद्ध मानी जाती हैं अमेरिका की भांति लूट प्रणाली का व्यापक प्रचलन फ्रांस में कभी भी नहीं रहा। भ्रष्टाचार, रिश्वत, लापरवाही तथा अकर्मण्यता के उदाहरण फ्रांसिसी प्रशासन में बहुत कम देखने को मिलते हैं। प्रशासनिक अनियमितताओं के कारण उत्पन्न होने वाले विवादों तथा जनशक्तियों की सुनवाई के लिए प्रशासनिक न्यायालय इसीलिए स्थापित किए गए हैं ताकि सामान्य न्यायालयों की दुरुह एवं लंबी प्रक्रिया से छुटकारा मिले तथा प्रशासनिक अधिकारी चौकस रहकर कार्य करें। 'सूचना का अधिकार' नागरिकों को प्राप्त हैं।

8. **मिशनरी भावनाः** फ्रांस के लोक सेवक प्रत्येक सरकारी कार्य को केवल ड्यूटी मानकर पूरा नहीं करते हैं बल्कि नागरिक सेवा को अपना ध्येय मानते हैं। एसप्रिट डी कोर्प्स (Espirit d' Corps) की भावना लिए फ्रांसिसी लोक सेवक मानव कल्याण को ईश्वर सेवा के समान स्वीकारते हैं। वस्तुतः फ्रांस की सरकार एक आदर्श नियोक्ता की भूमिका निभाती है तथा लोक सेवक एक आज्ञाकारी कार्मिक का दायित्व सहर्ष उठाते हैं। सामाजिक एवं मानसिक स्तर पर परिपक्वता प्राप्त फ्रांसिसी नागरिक भी प्रशासनिक कार्यों मे पूर्ण सहभागिता प्रकट करना अपना दायित्व समझते हैं। राष्ट्रीय कानूनों में आस्था प्रकट करना सर्वोच्च नैतिकता की निशानी है। यह मान्यता लोक सेवक एवं आम व्यक्ति दोनों ही स्वीकारते हैं। अधिकारों एवं कर्त्तव्यों के बोध सहित मानव धर्म को प्रधानता दी गई है।

9. **दोहरे कानूनः** फ्रांस में सामान्य कानून (दीवानी तथा फौजदारी) तथा प्रशासनिक कानून प थक-प थक हैं। नागरिकों के आपसी विवाद तथा झगड़े सामान्य न्यायालयों द्वारा निपटाए जाते हैं जबकि प्रशासन एवं जनता के मध्य उत्पन्न होने वाले विवाद प्रशासनिक कानूनों (Droit Administratif) के अंतर्गत निर्धारित प्रक्रियानुसार सुलझाये जाते हैं। प्रशासनिक कानूनों के अंतर्गत आने वाले मुकदमें प्रारंभिक स्तर पर प्रादेशिक परिषद्रों या प्रशासनिक न्यायाधिकरणों द्वारा निपटाए जाते हैं। यद्यपि भारत एवं ब्रिटेन में भी प्रशासनिक न्यायाधिकरण हैं किंतु फ्रांस की भांति इन देशों में स्वतंत्र प्रशासनिक कानून नहीं है।

10. **प्रीफेक्ट व्यवस्थाः** आधुनिक फ्रांस की प्रशासनिक व्यवस्था नेपोलियन बोनापार्ट की ऋणी है क्योंकि प्रीफेक्ट, कोर्प्स तथा तकनीकी प्रशिक्षण संस्थान इत्यादि की स्थापना नेपोलियन ने ही की थी। फ्रांस को भौगोलिक आधार पर कुछ रीजन अर्थात् प्रादेशिक संभागों में बांटा गया है जिनके पश्चात् डिपार्टमेन्ट्स होते हैं। फ्रांस के डिपार्टमेन्ट्स भी जापान की भांति भौगोलिक इकाई है जो भारत के जिलों के समकक्ष हैं। इन डिपार्टमेन्ट्स के अधिकारी प्रीफेक्ट तथा सबप्रीफेक्ट कहलाते हैं। प्रीफेक्ट (Prefect) की पदस्थिति बहुत कुछ भारत के जिला कलक्टर से मिलती जुलती है। नेपालियन ने शुरू में फ्रांस को 9 डिपार्टमेन्ट्स (जिलों) में बांटा था जिसकी संख्या अब 23 है। प्रीफेक्ट नामक अधिकारी केन्द्र व स्थानीय प्रशासनिक संगठनों एवं जनता व सरकार के बीच समन्वय की भूमिका निभाता है। वह सरकार के प्रतिनिधि के रूप में

कुछ छोटे-बड़े प्रशासनिक कार्य भी संपादित करता है। प्रीफेक्ट किसी एक विभाग का अधिकारी नहीं बल्कि सभी विभागों का सामान्य अधिकारी होता है। फ्रांस में प थक से प्रीफेक्ट कोर्प्स बनी हुई है जो सम्मानजनक लोक सेवा मानी जाती है।[4] केन्द्र सरकार के अभिकर्त्ता के रूप में प्रीफेक्ट के कार्य बहुत महत्वपूर्ण हैं। **बार्थलेमी** ने अपनी पुस्तक "The Government of France" में प्रीफेक्ट के कार्य बताते हुए कहा है ''यह राजनीतिक अभिकर्ता जो, राजनीतिक कारणों से नियुक्त एवं पदमुक्त किया जाता है तथा यह नीति संबंधी प्रश्नों के बारे में मंत्रिमंडलीय क्रियाओं से संबंधित है, न केवल ग ह मंत्रालय बल्कि सभी मंत्रालयों का प्रतिनिधित्व करता है। अपने विभाग के अंतर्गत वह प्रशासनिक सत्ता का प्रतीक होता है तथा निर्णयन सहित कार्यपालिका संबंधी नियुक्तियाँ करता है। प्रीफेक्ट का कार्य ग ह मंत्रालय की अधीनस्थ संस्थाओं के निर्देशन, निरीक्षण एवं प्रबंध तक ही सीमति नहीं है बल्कि सभी प्रकार के अधिकारियों, दण्डनायकों, शिक्षकों तथा कुछ अर्थों में राजनीतिक कार्यकर्त्ताओं पर निगरानी रखता है। यह उपर्युक्त सभी अधिकारियों के संबंध में गुप्त एवं सही रिपोर्ट ग ह मंत्रालय को देता है तथा पुलिस की निगरानी करता है। सार्वजनिक शांति व्यवस्था के अतिरिक्त वह अनेक तकनीकी मामलों के संबंध में निर्णय भी करता है तथा तकनीकी अधिकारियों की बड़ी संख्या में नियुक्ति भी करता है।''

11. **अर्द्धस्वायत्त स्थानीय प्रशासनः** एकात्मक तथा केन्द्रीयकृत फ्रांस की प्रशासनिक व्यवस्था में शहरी एवं ग्रामीण स्थानीय स्वशासन की इकाईयां सदैव से ही केन्द्रीय प्रशासन के अधीन रही हैं। फ्रांस में स्थानीय स्वशासन का स्वरूप उतना स्वायत्त नहीं होता जैसा कि जापान, स्विट्जरलैण्ड तथा अमेरिका में है। फ्रांस में समाजवादी सरकार द्वारा 2 मार्च 1982 को पारित कानून के पश्चात ''प्रशासन का विकेन्द्रीकरण'' प्रारंभ हुआ जो अभी निरंतर सुधारों की ओर अग्रसर है।[5] इस कानून के द्वारा फ्रांस में स्थानीय प्रशासन की इकाईयों को उनके कार्य क्षेत्र में वैधानिक स्वतंत्रता दी गई है। मूलतः नगरपालिकाएं, डिपार्टमेन्ट्स तथा प्रादेशिक संभाग स्थानीय प्रशासन के तीन स्तर है। इनमें एरोन्टाइमेंट तथा कैंटन तथा कम्यून भी बने हुए हैं। केन्द्रीय स्तर पर ''आतंरिक एवं विकेन्द्रीकरण विभाग,'' स्थानीय प्रशासन की इकाईयों को दिशा निर्देश प्रदान करता है। कम्यून में मेयर तथा डिपार्टमेन्ट्स में प्रीफेक्ट नामक अधिकारी स्थानीय प्रशासन संचालित करते हैं। स्थानीय निकायों में एक परिषद् होती है जो निम्न स्तरीय पदों पर भर्ती, प्रशिक्षण एवं पदोन्नति का कार्य संपादित करती है। भारत की भांति ''स्थानीय निकाय निदेशालय'' नियंत्रणकर्ता की भूमिका निभाता है। फ्रांस के स्थानीय निकायों में भी पूर्णतया योग्यता का सिद्धांत लागू होता है।

12. **सुद ढ़ अर्थव्यवस्था एवं दबाव समूहः** फ्रांस की अर्थव्यवस्था तुलनात्मक रूप से सुद ढ़ एवं विश्वसनीय मानी जाती हैं यद्यपि फ्रांस में बेरोजगारी एक विकराल समस्या बन चुकी है तथापि आम फ्रांसिसी का जीवन स्तर अत्यंत उच्च स्तरीय होता है। फ्रांस के नियोजन तंत्र को निर्देशित करने वाला 'सामान्य नियोजन आयोग' आर्थिक तंत्र में प्रभावी भूमिका निर्वाहित करता है। फ्रांस में केवल प्रतीकात्मक (Indicative) नियोजन किया जाता हैं लोक एवं निजी दोनों ही प्रकार के उपक्रम आयोग के परामर्श को गंभीरता से स्वीकार करते हैं। राजनीतिक जागरूकता की द ष्टि से फ्रांस अत्यंत उच्च श्रेणी का राष्ट्र है अतः लोक प्रशासन एवं अर्थव्यवस्था में विभिन्न दबाव समूहों का पर्याप्त सम्मानजनक स्थान रहता हैं। विश्व भर में जारी आर्थिक उदारीकरण की प्रव त्तियां फ्रांस में भी स्पष्ट प्रभाव दिखाने लगी हैं। 1 जनवरी 1999 से फ्रांस में भी ''यूरो मुद्रा'' प्रचलित हो गई है जो यूरोपीय संघ के राष्ट्रों के मध्य नए समीकरण बनाएगी।

13. **आर्थिक नियोजनः** द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद फ्रांस के समक्ष सबसे बड़ी चुनौती दयनीय आर्थिक स्थिति से कैसे उबरे। युद्ध की क्षतिपूर्ति, अर्थव्यवसाि में आधुनिकीकरण और समाज के चहुंमुंखी विकास के उद्देश्य से फ्रांस में आर्थिक नियोजन को अपनाया गया। वहाँ आर्थिक नियोजन के संबंध में व्यावहारिक द ष्टिकोण को अपनाया। अतः वहाँ सेवारत वरिष्ठ लोक-सेवकों ने फ्रांस के नियोजन के विकास को आसान बना दिया हैं लोक-सेवकों की रुचि के कारण ही कम समय में ही आर्थिक नियोजन ने सफलता प्राप्त करके अपना सम्मानजनक स्थान बना लिया और आज विश्व की महान शक्ति है। वहाँ आर्थिक नियोजन की प्रमुख विशेषताएं हैं। i. नियोजनतंत्र की प्रकृति निर्देशक (इण्डीकेटिव) है. ii. नियोजन अर्थव्यवस्था की विभिन्न इकाइयों के समुचित विचार-विमर्श पर आधारित. iii. नियोजन में लचीलापन. तथा iv. नियोजन का लोकतांत्रिक स्वरूप।

उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट है कि फ्रांस में केन्द्रीयकरण, स्थायित्व, तटस्थता, योग्यता, मिशनरी भावना जैसी विशेषताएँ विद्यमान हैं। इसने समय के अनुसार बदलते हुए परिवेश में अपनी कार्य-संपन्नता के मापदण्ड निश्चित किए हैं।

अध्याय-8
जापानी प्रशासनिक व्यवस्था की मुख्य विशेषताएँ
(Salient Features of Japanese Administrative System)

जापान का लोक प्रशासन, कुशलता, प्रतिबद्धता तथा संवेदनशीलता का पर्याय माना जाता है। राजशाही शासन प्रणालियों से लेकर अद्यतन इसमें अनेक समयानुकूल परिवर्तन आए है। यह परिवर्तन जापान की आंतरिक सामाजिक व्यवस्था तथा अंतरराष्ट्रीय परिस्थितियों सहित द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् जापान के पुनर्निर्माण के संकल्प से प्रभावित दिखाई देते हैं। जापान प्रशासनिक व्यवस्था के प्रमुख लक्षणों तथा विशेषताओं का संक्षिप्त विवेचन इस प्रकार है -

1 **विशेषीकृत एवं कुशल सेवाएँ:** जापानी लोक प्रशासन में कार्यरत कार्मिक किसी न किसी क्षेत्र या विषय में तकनीकी क्षमताओं से युक्त विशेषज्ञ होते हैं। प्रशासनिक पदों, कार्यों, प्रक्रियाओं तथा नियमों में भी विशेषीकरण का प्रभाव दिखाई देता है। प्रशासनिक संरचनाएं प्रायः जटिल प्रकृति की होती हैं। नीति निर्माण की अधिकांश शक्तियां मंत्रिमंडल में निहित हैं तथापि विशेषज्ञों तथा उच्च लोक सेवकों की भूमिका भी सशक्त रहती है क्योंकि भारत की भांति जापान में सामान्यज्ञ अधिकारियों के माध्यम से प्रशासन संचालित नहीं होता है। केन्द्रीय एवं स्थानीय प्रशासन में लगभग 40 लाख लोक सेवक कार्यरत हैं जो उच्चाधिकारियों एवं राष्ट्र के प्रति वफादार पाए जाते हैं।[1] व्यक्ति उपलब्धि के स्थान पर ''सामूहिक लक्ष्य प्राप्ति'' पर बल दिया जाता है। जापान लोक प्रशासन तथा उद्योगों में कुछ शब्द बहुत प्रचलित है। उनमें एक है - Kanban अर्थात ''प्रभावी संचार'' कीजिए अन्यथा कार्य बाधित होता है। इसी प्रकार कहा जाता है कि Muri (अधिक तनाव) Mura (कार्य में किसी तरह के उतार चढ़ाव या अस्थिरता) तथा Muda (किसी भी तरह की फिजूलखर्ची) हो तो लागत एवं अकार्यकुशलता बढ़ेगी अतः एक ही रास्ता है कि सभी लोग मिल बैठकर वार्ता (Kaizen) करें। सहभागी प्रबंध तथा लोकतांत्रिक मूल्यों के प्रकार के कारण ही जापान में प्रशासनिक एवं तकनीकी कुशलता उच्च स्तरीय बन सकी है।

2. **योग्यता एवं प्रतिष्ठा:** जापान में लोक सेवाओं में प्रवेश के अच्छुक उम्मीदवार को प्रायः कड़ी प्रतिस्पर्धा का सामना करना पड़ता है। "The National Personnel Authority" के माध्यम से लोक सेवकों का चयन किया जाता है। भारत, फ्रांस, ब्रिटेन की भांति जापान मे भी लोक सेवाओं को पर्याप्त प्रतिष्ठा प्राप्त है। यही कारण है कि अधिकांश प्रतिभावान उम्मीदवार शिक्षा प्राप्ति के पश्चात् लोक सेवाओं की ओर आकर्षित होते हैं। लोक सेवाओं से राजनीति में प्रवेश की दर भी जापान में अधिक ही है। टोक्यो स्थित "Institute of Administrative Management" प्रशिक्षण तथा सुधार कार्यो में सार्थक भूमिका निभाता है।

3. **लोक सेवाओं में निरंतर सुधार:** मेहजी संविधान काल के दौरान जापानी नौकरशाही कुलीन गुट, धनिक गुट, सैनिक अधिकारी गुट तथा प्रशासनिक अधिकारी गुट में विभक्त थी जो भेदभाव को बढ़ावा देती थी।

   सन् 1885 में राजकुमार ईतो ने जापानी लोक सेवा में निम्नांकित सुधार किए -

   क. राजकीय कार्यों में उत्तरदायित्वों का स्पष्ट वर्णन

   ख. भर्ती तथा नियुक्ति के निश्चित नियम

   ग. राजकीय परिपत्रों में व द्धि

   घ निरर्थक प्रशासनिक व्यय पर नियंत्रण

   ड. कार्मिक अनुशासन में व द्धि

इन सुधारों के पश्चात् जापानी लोक सेवा में परिवर्तन दिखाई देने लगे तथा भाई भतीजावाद पर नियंत्रण होने लगा। सन् 1887 में प्रतियोगी परीक्षाओं के माध्यम से लोक सेवकों का चयन होने लगा। शोवा संविधान के निर्माण के समय 1946 में लोक सेवाओं को परिवर्तित करने का कार्य व्यापक स्तर पर शुरू कर दिया गया। सन् 1947 में नेशनल सर्विस लॉ पारित किया इसकी अनुपालना में 1949 में ''नेशनल पर्सोनेल अथोरिटी'' अर्थात् राष्ट्रीय कार्मिक प्राधिकरण की स्थापना की गई। प्रधानमंत्री तथा मंत्रीमंडल के नियंत्रण से मुक्त यह प्राधिकरण अर्द्ध स्वायत्त संस्था है जिसमें एक आयुक्त तथा दो सदस्य डायट के अनुमोदन से मंत्रिमंडल की अनुशंसा पर सम्राट द्वारा 4 वर्ष के लिए नियुक्त किए जाते हैं। प्राधिकारण के तीनों पदाधिकारी मंत्रियों के समान शक्तियां तथा सुविधाएं प्राप्त करते हैं। प्राधिकरण स्वयं अपना महानिदेशक तथा अन्य कार्मिक भर्ती करता है। प्रशासन सेवा, भर्ती, प्रतिकर, समानता तथा कर्मचारी संपर्क ब्यूरों में बंटा यह प्राधिकरण देश की सेवाओं में भर्ती वर्गीकरण, वेतन, पदोन्नति, कुशलता, सुरक्षा, कल्याण, विवादों की सुनवाई, अपील तथा कार्मिक प्रशासन से संबंधित अन्य प्रकरण निबटाता है। संविधान का अनुच्छेद - 15 लोक सेवकों के चयन एवं बर्खास्तगी में जनता की भूमिका सुनिश्चित करता है अतः जापानी प्रशासन एक उत्तरदायी प्रशासन सिद्ध हुआ है। सूचना का अधिकार जनता को प्राप्त है अतः प्रशासन चौकस रहता है।

4. **लोक सेवकों में वर्गीकरण एवं पद चेतनाः** जापानी प्रशासनिक तंत्र में कार्यरत लोक सेवकों मे उच्च, मध्यम तथा निम्न पदों के रूप में अत्यधिक चेतना का भाव पाया जाता हैं पदसोपान की व्यवस्था को अधिक महत्व देने के कारण ही उच्चाधिकारियों द्वारा पारित आदेश का भयमिश्रित सम्मान के साथ तत्परता से पालन किया जाता है।

   जापान लोक सेवाए मूलत दो वर्गों में विभाजित हैं -

   क. **विशिष्ट राजकीय सेवाएंः** इस वर्ग में मंत्रिमंडल के सदस्य, डायट के अनुमोदन से नियुक्त अधिकारी, शाही न्यायालय में नियुक्त अधिकारी, न्यायाधीश, राजदूत, डायट के कार्मिक, सामान्य श्रमिक तथा लोक उपक्रमों के कार्मिक सम्मिलित हैं।

   ख. **नियमित राजकीय सेवाएंः** इस वर्ग में केन्द्रीय प्रशासन में कार्यरत प्रशासनिक, लिपकीय तथा अन्य बचे हुए पद सम्मिलित किए गए हैं। जापानी लोक सेवाएं केवल तीन श्रेणियों - प्रथम, द्वितीय एवं त तीय में विभक्त हैं।

   उच्च श्रेणी के पद, कटिन प्रतियोगी परीक्षा द्वारा भरे जाते हैं। सामान्यतः 21 से 33 वर्ष आयु वर्ग के स्नातक युवा ''प्रिंसीपल सीनियर ए-क्लास'' पदों के लिए राष्ट्रीय परीक्षा में सम्मिलित होते हैं। निम्न पदों पर सैकण्डरी उत्तीण 17 से 23 वर्ष आयु समूह के युवा नियुक्त होते हैं। इनमें सदैव उच्च पद-निम्न पद का मनोभाव बना रहता है।

5. **प्रशासन का भौगोलिक विभाजनः** जापान में 4000 छोटे-बड़े द्वीप इधर-उधर फैले हुए हैं। इन द्वीपों से मात्र 20 प्रतिशत भू-भाग ही मानव के रहने तथा कृषि योग्य है। भूकंप तथा ज्वालामुखी की समस्या भी विकट है। विश्वप्रसिद्ध फूजी पूर्वत का फूजियामा, असाया, यामा, माउंट तथा असो प्रमुख ज्वालामुखी क्षेत्र जापान हैं। जापान के प्रशासनिक तंत्र का विभाजन भी भौगोलिक आधार पर निर्भर करता है। भौगोलिक साम्यता के आधार पर जापान को आठ डिपार्टमेन्टस में विभक्त किया गया हैं एक समान भौगोलिक तथा सामाजिक परिस्थितियों के क्षेत्र प्रिफेकचर्स (Prefactures) में बांटे गए हैं। भौगोलिक आधार पर विभक्त विभागों (Departments) का आशय सचिवालयी व्यवस्था के विभागों से नहीं बल्कि क्षेत्रों से हैं। जापान के आठ भौगोलिक विभाग (Departments) निम्नांकित हैं -

   1. हाक्काईडो
   2. तोहोकू अथवा ओयू
   3. क्वान्टो
   4. चुबू
   5. किन्की
   6. चुगोकू
   7. शिकोकू

8. क्यूश्यू

जापान का होक्काईडो खनिज तथा कोयला संसाधन युक्त विभाग है जबकि तोहोकू एक ग्रामीण तथा आदिवासी समाज है। क्वान्टो नगरीय सभ्यता का पर्याय विभाग है जिसमे टोक्यों तथा याकोहामा शहर स्थित हैं। चुगोकू में हीरोशिमा, नागासाकी सहित ऐतिहासिक नगर स्थित हैं।

6. **स्थानीय प्रशासनः** जापान उन देशों में अग्रणी है जहां स्थानीय स्वशासन को सुद ढ़, सवैधानिक तथा व्यावहारिक आधार प्रदान किया गया हैं जापानी संविधान के अनुच्छेद 92 से 95 तक स्थानीय सरकार को वर्णित किया गया है। स्थानीय स्वशासन की ग्रामीण तथा नगरीय संस्थाएं अपने संगठन, कार्यकरण, कार्मिक प्रशासन, संपत्ति अधिग्रहण तथा प्रशासन के क्रम में स्वायत्तता प्राप्त हैं। किसी भी स्थानीय स्वाशासन संस्था के क्रम में डायट भी कानून नहीं बन सकती है जब तक कि स्थानीय मतदाता उसे बहुमत से अनुमोदित न कर दें। भौगोलिक आधार पर जापान को कई विभागों अर्थात् डिपार्टमेन्ट्स में बांटा गया है। इन डिपार्टमेन्ट्स के अधीन कई प्रकार की प्रशासनिक इकाइयां जिलों के रूप में हैं। स्थानीय स्वशासन की इकाइयां प्रिफेक्चर कहलाती हैं जिनकी संख्या 46 है। इन 46 प्रिफेक्चर्स को सिटी, टाउन तथा ग्रामीण सरकार में बांटा गया है। स्थानीय नागरिक अपने जनप्रतिनिधियों के माध्यम से इन संस्थाओं को संचालित करते हैं। महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि शिक्षा तथा पुलिस जैसे दो महत्वपूर्ण कार्य इन स्थानीय संस्थाओं को सौंपे गए हैं।

स्थानीय संस्थाओं में कामिक प्रशासन के संबंध में सन् 1950 में ''स्थानीय लोक सेवा अधिनियम'' पारित किया गया था। अधिनियम के अंतर्गत कार्मिकों की भर्ती, प्रशिक्षण, वर्गीकरण, क्षतिपूर्ति तथा आचरण नियम इत्यादि निर्धारित होते हैं। केन्द्रीय ग हमंत्रालय को स्थानीय लोक सेवाओं के क्रम में परिवर्तन एवं नियंत्रणकर्त्ता अभिकरण बनाया गया है।[3] सन् 1906 में बनी जापानीज एसोशियशन ऑफ सिटी मेयर्स एक महत्वपूर्ण दबाव समूह है जो मंत्रिमंडल तथा डायट के निर्णयों को व्यापक रूप से प्रभावित करती हैं। सन् 1953 में बना ''ऑटोनोमी कॉलेज'' (Autonomy College) स्थानीय संस्थाओं के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित करता है।

7. **एकात्मक प्रशासन -** जापान मे सरकार की सारी शक्तियां टोक्यिों सरकार में होने के कारण यहाँ के प्रशासन का स्वरूप एकात्मक पाया जाता है। भारत और अमेरिका की तरह ब्रिटेन में केन्द्रीय एव प्रान्तीय दो स्तरों पर सरकारें नहीं होती बल्कि एक ही सरकार जो केन्द्र मे पाई जाती हैं, में समस्त शक्तियां समाहित होती हैं। हांलाकि जापान में प्रशासनिक सुविधा के लिए पिफेक्चर व्यवस्था (Prefecture System) को अपनाया गया है लेकिन राष्ट्रीय एवं स्थानीय मामलों के संबंध कानून एवं नीतिया बनाने की जिम्मेदारी केन्द्र सरकार की होती है। ये कानून एवं नीतियाँ विभिन्न क्षेत्रों मे कार्यरत अलग-अलग विभागों के अधिकारियों के द्वारा लागू किए जाते है।

स्थानीय प्रशासन में प्रिफेक्चर के स्तर पर गर्वनर तथा म्यूनिसिपलीटी के स्तर पर मेयर केन्द्र सरकार के एजेन्ट के रूप में कार्य करते हैं तथा केन्द्र सरकार की नीतियों को स्थानीय स्तर पर निष्ठापूर्वक लागू करते हैं। इसके साथ-साथ केन्द्र सरकार के हाथों में Power of Purse भी निहित होती है जो केन्द्रीकरण की प्रव ति को बढ़ावा देती है और प्रशासन को एकात्मक बनाती है।

8. **प्रशासन पर तकनीकी का प्रभावः** जापान के प्रशासन की अन्य महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि यहां के प्रशासन पर तकनीकी का प्रभाव स्पष्ट रूप से देखने को मिलता है। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि प्रशासन के विभिन्न स्तरों पर तकनीकी विशेषज्ञों का बोलवाला पाया जाता है। इसका कारण यह है कि भारत व इंग्लैण्ड जहां सामान्यज्ञों की प्रभावशीलता पाई जाती है, के विपरीत जापान में विशेषज्ञों को प्रशासन में अधिक महत्व दिया जाता है।

जापान मे तकनीकी यहां के प्रशासन की न केवल Efficiency एवं Economy को बढ़ावा देता है बल्कि प्रशासन के विभिन्न अंगों में समन्वय को भी बढ़ावा देता है।

9. **Specialised and Efficient Administration:** जापान की प्रशासनिक कार्यवाही में प्रशासन के प्रत्येक स्तर पर विशेषीकरण को अधिकाधिक बढ़ावा दिया जाता है। इस विशेषीकरण के कारण यहां पर प्रशासन के जटिल से जटिल कार्य विभिन्न प्रशासनिक पदों पर कार्यरत विशेषज्ञ अधिकारियों के द्वारा पूरे किए जाते है। हालांकि नीति-निर्माण संबंधी कार्य जापान में कैबिनट में निहित होता है लेकिन वास्तव में यह कार्य विशेषज्ञों एवं सामान्यज्ञों की मदद से पूरा किया जाता है।

अधिकाधिक विशेषीकरण की प्रव ति के कारण यहां के प्रशासन में अत्यधिक Efficiency पाई जाती है।

10. **Secular and Liberal Administration:** जापान के नए संविधान ने अनुच्छेद 20 के तहत धर्म की स्वतंत्रता को स्थापित किया है और शिन्टो अब राज्य का धर्म नहीं रहा। यहां पर राज्य और धर्म में कोई संबंध न होने के कारण यहां पर प्रशासन धर्म-निरपेक्ष एवं उदार पाया जाता है। प्रशासन के द्वारा धर्म के आधार पर विभिन्न धर्मों के लोगों के साथ कोई भेदभाव नहीं किया जाता बल्कि सब धर्मों के लोगों के साथ एक समान व्यवहार किया जाता है।

UNIT-II

अध्याय-9

लोक प्रशासन और पर्यावरण

(Public Administration and its Environment)

लोक प्रशासन एक मानवीय किया है इसलिए पर्यावरण का उस पर गम्भीर तथा निर्णायक प्रभाव रहता है। लोक प्रशासन में पर्यावरण, परिवेश अथवा पारिस्थितिकी के अध्ययन का विचार वस्तुतः वनस्पति विज्ञान से ग्रहण किया गया है। जिस प्रकार एक पौधे के लिए उपयुक्त जलवायु, प्रकाश तथा वाह्य वातावरण आवश्यक होता है, उसी प्रकार एक सामाजिक संस्था के विकास एवं प्रशासन के लिए विशेष वातावरण आवश्यक है। कार्ल मार्क्स के समय से ही यह माना जाता रहा है कि व्यक्ति और समाज के समस्त क्रिया कलापों का स्वरूप उसकी वाह्य परिस्थितियों द्वारा निर्धारित होता है।

लोक प्रशासन का संगठन एवं उसकी क्रियाएं शून्य में जन्म नहीं लेती वरना एक विशेष समाज-व्यवस्था सांस्कृतिक परम्परा, आर्थिक प्रणाली, राजनीतिक संस्था और धार्मिक विश्वास की प ष्ठ-भूमि में रूप ग्रहण करती है। लोक प्रशासन ज्यों-ज्यों एक व्यावहारिक विज्ञान बनता जा रहा है, त्यों त्यों उसके पर्यावरण का अध्ययन महत्त्वपूर्ण होता जा रहा है। आज लोक प्रशासन के चिन्तकों का यह विश्वास है कि किसी प्रशासनिक समस्या या गतिविधि के समुचित ज्ञान के लिए उससे सम्बद्ध पर्यावरण का अध्ययन करना आवश्यक है। लोक प्रशासन तथा पर्यावरण का सम्बन्ध द्विपक्षीय है क्योंकि जैसे लोक प्रशासन अपने पर्यावरण को प्रभावित करता है वैसे पर्यावरण भी लोक प्रशासन को प्रभावित करता है। इस सम्बन्ध में प्रो रिग्ज का योगदान सराहनीय है।

सन् 1961 में एफ. डब्ल्यू. रिग्स की पुस्तक *The Ecology of Public Administration* प्रकाशित हुई। इस पुस्तक ने इस क्षेत्र में तहलका मचा दिया। इस पुस्तक में लोक प्रशासन तथा पर्यावरण के बीच परस्पर क्रिया को तुलनात्मक ढंग से समझने का प्रयास किया गया था। **रिग्स के** ''साला मॉडल'' ने धूम मचा दी थी। रिग्स के अतिरिक्त **जॉन एम. गॉस, रॉबर्ट डल, रास्को मार्टिन** आदि विद्वानों ने लोक प्रशासन में पर्यावरण के अध्ययन को व्यापक, विस्त त उवं सम द्ध बनाया है। आज जब राज्य का स्वरूप प्रशासनिक हो गया है, किसी भी संस्था या संगठन के विस्त त विवेचन हेतु पर्यावरण का अध्ययन एवं विवेचन आवश्यक हो गया है। यह निर्विवाद सत्य है कि लोक प्रशासन कई तत्वों से प्रभावित होता है, जैसे- पर्यावरण, संस्क ति, राजनीतिक, आर्थिक एवं सामाजिक परिवेश। लोक प्रशासन समाज-विज्ञान के अन्तर्गत है। इसे समझने के लिए देश में चारें ओर होने वाली घटनाओं का अध्ययन आवश्यक है। यहाँ पर इस तथ्य को जानना आवश्यक है कि लोक प्रशासन विज्ञान से सम्बन्धित रहा है और विज्ञान की प ष्ठभूमि वालों के लिए लोक प्रशासन अछूता नहीं है।

पर्यावरर्ण के अध्ययन का महत्व

(Importance of Studyof Environment)

लोक प्रशासन तथा पर्यावरण का सम्बन्ध द्विपक्षीय है। जिस प्रकार लोक प्रशासन अपने पर्यावरण से प्रभावित होता है उसी प्रकार वह पर्यावरण को प्रभावित करता है। सर्वविदित है कि एक जैसी संस्थाएँ अलग-अलग वातावरणों में विभिन्न प्रकार से कार्य करती हैं। अतः यदि हम किसी संस्था के संगठन और कार्यो का समुचित ज्ञान प्राप्त करना चाहते हैं तो तत्सम्बधी वातावरण का विवेचन करना आवश्यक होगा। लोक प्रशासन के सम्बन्ध में भी यह बात पूर्ण सत्य है क्योंकि:

प्रथम, जो प्रशासनिक संस्थाएँ एक देश में सफलतापूर्वक कार्य करती हैं उनको दूसरे देश में अपनाने का प्रयास किया जाता है। यहाँ इनकी सफलता के लिए यह आवश्यक है कि उपयुक्त पर्यावरण की व्यवस्था की जाये। अतः उस देश विशेष की समस्त परिस्थितियों का सूक्ष्म विवेचन किया जाना अपेक्षित है।

दूसरे, एक ही देश में वहाँ की प्रशासनिक संस्थाओं कें संगठन और कार्य को सही रूप से समझने के लिए आवश्यक है कि उनके देश की सामाजिक व्यवस्था और सरकार के रूप के सन्दर्भ में अध्ययन किया जाये।

तीसरे, तुलनात्मक लोक प्रशासन के अध्ययन में पर्यावरण का विशेष महत्व है। प्रशासन की कुछ विशेषताएँ एक विशेष वाातावरण में ही उपलब्ध होती हैं। अतः तुलनात्मक द ष्टि से यह अध्ययन किया जाना चाहिए कि कौन-सा वातावरण किस संस्था के लिए उपयुक्त होता है ताकि एक देश में नवीन प्रशासनिक संस्थओं की शुरूआत करते समय उपयुक्त परिवेश की व्यवस्था करना आवश्यक है।

यहाँ हम इस विषय को समझने के लिए सांस्कृतिक, सामाजिक,राजनीतिक तथा आर्थिक तत्वों का अध्ययन करेंगे, जो लोक प्रशासन को प्रभावित करते हैं।

1. **लोक प्रशासन का सामाजिक पर्यावरण** (Social Enviornment of Adm.): एक देश की सामाजिक रूप रचना, आदर्श मूल्य, आकांक्षाएँ, परम्पराएँ, रिवाज, लोक व्यवहार, विश्वास, सांस्कृतिक स्थिति आदि वहाँ के प्रशासन को प्रभावित करते हैं। लोक प्रशासन का मानवीय तत्व अपने समाज विशेष की उपज होता है। विभिन्न सामाजिक संस्थाएँ लोक कर्मचारियों के चरित्र की रचना करती हैं। प्रशासनिक पद पर आने से पहले प्रशासको का जीवन के प्रति एक विशेष द ष्टिकोण बन जाता है। यह द ष्टिकोण सभी प्रशासनिक निर्णयों तथा व्यवहारों का प्रेरणा स्रोत बन जाता है। अतः यह जरूरी है कि लोक प्रशासन के समुचित अध्ययन के लिए संगठन के कर्मचारियों की पारिवारिक और सामाजिक प ष्ठभूमि का अध्ययन किया जाए तथा संगठन के सकल सामाजिक पर्यावरण पर द ष्टिपात किया जाए। प्रत्येक देश का लोक-प्रशासन अपने धार्मिक समुदायों, राजनीतिक दलों, व्यापार संस्थाओं, सामाजिक वर्गो आदि से प्रभावित होता है। इनकी प ष्ठभूमि में लोकसेवकों के व्यवहार, क्रिया-प्रतिक्रिया आदि का रूप निर्धारित होता है।

   एफ. डब्यू. रिग्स ने अपनी पुस्तक *The Ecology of Public Administration* में कहा है कि किसी समुदाय का सामाजिक परिवेश उसके संस्थानों, संस्थागत नमूनों, वर्ग, जाति-सम्बन्धों, ऐतिहासिक वसीयत, परंम्पराओं, धर्म, मूल्यों की व्यवस्था, विश्वास, आदर्श आदि पर आधारित होता है। ये सभी तत्व प्रशासन पर बड़ा गहरा प्रभाव डालते हैं। लोक प्रशासन में मानवीय तत्व का विशेष प्रभाव होता है, इसलिए लोक प्रशासन का माननीय तत्व समाज विशेष की उपज होता है। विभिन्न सामाजिक व्यवस्थाएँ और संस्थाएँ लोक कर्मचारियों के चरित्र की रचना करती हैं।

   लोक प्रशासन के सामाजिक पर्यावरण व उनकी अन्तः क्रियाओं को निम्नलिखित ढंग से स्पष्ट कर सकते हैं-

1. **वर्ग व्यवस्था और लोक प्रशासन**

   प्रत्येक समाज में धार्मिक, आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक आधारों पर अनेक वर्ग बन जाते हैं। इन वर्ग के आपसी सम्बन्ध लोक प्रशासन को प्रभावित करते हैं। इन वर्गो के प्रतिनिधि उनके संगठन में उनके आपसी सम्बन्धों का रूप निर्धारित करते हैं। जब नौकशाही किसी वर्ग विशेष से जुड़ जाती है तो स्वयं एक वर्ग व्यवस्था का आधार बन जाती है। जब सामन्तवादी कुलीन लोग प्रशासक होते हैं तो वे स्वयंमेव उच्च वर्ग के बन जाते हैं। नागरिक सेवकों का सम्बन्ध सामान्य जनता के उच्च, मध्यम और निन्म सभी वर्गो से होते हैं।

   सामाजिक वर्गभेद द्वारा लोक प्रशासन के अनेक पहलुओं को प्रभावित किया जाता है। उच्च नागरिक सेवा के पदों पर उच्च वर्ग के लोगों की भर्ती और पदोन्नति की जाती है। निम्न वर्ग के लोगों को अवसर अल्प मात्रा में मिलता है। उनकी संख्या नगण्य होती है। उच्च पदों पर नियुक्त होने पर नौकरशाहों का उनके वर्ग से सम्पर्क टूट जाता है तथा उच्च वर्ग के साथ उनके जीवन का तादात्म्य स्थापित हो जाता है। अतः यह कहा जा सकता है कि प्रशासन द्वारा सामाजिक वर्ग रचना को गतिशील बनाया जाता है। यह योग्य तथा महत्वाकांक्षी अधिकारी पदोन्नत होते हुए उच्च पद तक पहुँच जाता है तथा लोक सेवा के माध्यम से अपनी सामाजिक स्थिति सुधार लेता है।

2. **सामाजिक विकास एवं लोक प्रशासन**

प्रो. रिग्स का विचार है कि उन्नत देशों में जटिल तथा औपचारिक संगठन होते हैं। जिस देश की समाज व्यवस्था कम विकसित होती है वहाँ संगठन बनाना उतना ही कठिन होता है। समाज में संगठनों की अल्पसंख्या से सामाजिक विकास अवरुद्ध हो जाता है। सामाजिक विकास तथा प्रशासनिक व्यवस्था परस्पर क्रिया-प्रतिक्रिया करते हैं। इसका समुचित विवेचन करने में विचारकों ने विशेष रुचि प्रदर्शित नहीं की है। इस क्षेत्र में बहुत कम अध्ययन हुआ है किन्तु सभी विचारकों की मान्यता है कि प्रशासनिक परिवर्तनों को संस्थागत बनाने के लिए सामाजिक तथा सांस्कृतिक तत्वों को ध्यान में रखना अनिवार्य है।

प्रत्येक संस्कृति परिवर्तन या विकास के लिए सहायक और बाधक बन सकती है। इसमें दोनों प्रकार के तत्व रहते हैं। डेविड एप्टर ने विकास में सहायक तत्वों Instrumental को तथा बाधक तत्वों को 'Consumatory' कहा है। उनका कहना है कि आधुनिकीकरण उस समाजा में होता है जहाँ संस्कृति के संस्थागत (Instrumental) तत्व पाए जाते हैं।

3. **सामाजिक मूल्य तथा प्रशासनिक व्यवहार**: प्रशासनिक व्यवहार उस देश के समाज द्वारा स्वीकृत मूल्यों से प्रभावित होता है। प्रशासनिक संगठन द्वारा कुछ मूल्य विकसित किए जाते हैं। इनमें जो प्रभावशाली होता है वही दूसरे मूल्यों को प्रभावित करता है। अनेक बार प्रशासनिक संस्कृति सामाजिक मूल्य संरचना से प्रभावित होती है। यह स्वाभाविक भी है। यदि नागरिक सेवकों की भर्ती कम उम्र में कर और उन्हें शेष समाज से दूर रखकर प्रशिक्षित किया जाए तो वे स्वयं मूल्य विकसित कर लेंगे जो समाज से भिन्न होंगे।

4. **सामाजिक परिषद् तथा लोक प्रशासन**:लोक प्रशासन की प्रकृति परिषदात्मक है। इसे विभिन्न विशेषीकृत अभिकरणों में बाँट दिया जाता है। इन अभिकरणों को प थक्-प थक् काम सौंप दिए जाते हैं। ये काम किसी न किसी सामाजिक परिषद् से निकटवर्ती सम्बन्ध रखते हैं तथा लोक प्रशासन की नौकरशाही से सम्बन्धित हो जाते हैं। इसके अतिरिक्त सरकारी अभिकरण कानून को कार्यरूप प्रदान करते हैं तथा वे परिषदों से निकट सम्बन्ध स्थापित कर लेते हैं। परिषदों के अनेक हितों की पूर्ति प्रशासन एवं उसके कानूनों द्वारा की जाती है, बदले में परिषदें प्रशासन को पुरस्कृत करती हैं।

लोक प्रशासन सामाजिक परिषदों का प्रशासनिक उपयोग करता है। यह परिषदों की सहायता से वांछनीय जन-सहयोग प्राप्त कर पाता है। जनसामान्य को इन परिषदों द्वारा सरकारी सेवाएँ उपलब्ध हो जाती हैं तथा वे कानून पालन करने की ओर प्रेरित होते हैं। यदि लोक प्रशासन का सही रूप समझना चाहते हैं तो वहाँ की विभिन्न सामाजिक परिषदों तथा लोक प्रशासन के अन्तर्सम्बन्ध को समझना चाहिए। सामाजिक संगठनों द्वारा दबाव समूहों के रूप में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई जाती है। इसका यह अर्थ नहीं है कि लोक प्रशासन इन दबाव समूहों के हाथ की कठपुतली बन जाता है। इसके विपरीत लोक प्रशासन की नौकरशाही जनहित के लक्ष्य से निर्देशित और संचालित होती है।

इस प्रकार लोक प्रशासक तथा सामाजिक परिषदों में घनिष्ठ सम्बन्ध रहता है जिसके अनेक महत्वपूर्ण परिणाम निकलते हैं। सामाजिक संस्थाओं का निरन्तर दबाव रहने से लोक प्रशासक सदैव सजग एवं उत्तरदायी बने रहते हैं। वे प्रभावित व्यक्तियों के द ष्टिकोण का ध्यान रखते हैं और प्रशासनिक व्यवहार अधिक सार्थक, प्रभावशाली तथा लोकोपकारी बन जाता है। सामाजिक संस्थाएँ लोक प्रशासकों के हाथ में प्रभावशाली हथियार होती हैं। इनके माध्यम से वे अपनी नीतियों को आसानी से कार्यान्वित कर पाते हैं। केवल एक कदम या टेलीफोन द्वारा प्रशासको को इन सामाजिक संस्थाओं के लाखों स्वयंसेवकों का सहयोग तुरंत मिल जाता है। यह अन्य किसी तरीके से सम्भव नहीं था। प्रो. रिग्स के मतानुसार, ''इन परिषदों के कारण प्रशासन की प्रभावशीलता कई गुना बढ़ जाती है।''

5. **रिश्तेदारी एवं पारिवारिक बन्धन**: सामाजिक पर्यावरण का एक अहमभूत पहलु रिश्ते-नातेदारी एवं आपस में पारिवारिक स्तर पर सम्बन्ध भी हैं। विशेषतौर पर एशियाई देश जापान, चीन तथा भारत में समाज की मुख्य इकाई परिकार है और लोगों में रिश्तेदारी एवं परिवारिक बन्धन काफी मजबूत पाए जाते हैं। ये सामाजिक एवं पारिवारिक सम्बन्ध प्रशासन पर अपना अच्छा खासा प्रभाव डालते हैं। क्योंकि प्रशासनिक अधिकारी (समाज का ही एक अंग होने के कारण) समाज एवं परिवार के इन सम्बन्धों के ताने-बाने से बाहर नहीं निकल पाते जिससे प्रशासन की कार्यवाही पर बहुत असर पड़ता है। इसी कारण प्रशासन में बहुत सारी समस्याएँ जैसे कि भाई भतीजावाद, पक्षपात एवं भ्रष्टाचार आदि घर कर जाती है। प्रशासनिक अधिकारियों का पारिवारिक एवं सामाजिक बन्धनों के प्रति रूझान विकासशील देशों में आमतौर पर दिखाई देता है तथा इन देशों के प्रशासन को काफी हद तक प्रभावित भी करता है।

लोक प्रशासन का सांस्कृतिक पर्यावरण
(Cultural Enviornment of Adm.)

'संस्कृति' शब्द की उचित व्याख्या करना अत्यन्त कठिन है। फिर भी यह कहा जा सकता है कि संस्कृति का अर्थ किसी समुदाय की जीवनशैली है, जिसका उस समुदाय के रहन-सहन, खान-पान, पहनावा, जीवनशैली पर विशेष प्रभाव पड़ा है। एक समाज की संस्कृति अपने नागरिकों को अनेक आदर्शात्मक मूल्य प्रदान करती है। इन मूल्यों से लोक प्रशासन का संगठन एवं व्यवहार भी अछूता नहीं रहता है। प्रशासन के संगठन में विभिन्न कर्मचारियों के आपसी सम्बन्धों, उच्च अधिकारियों के प्रति निम्न पदाधिकारियों के दृष्टिकोण आदि पर समाज विशेष की संस्कृति और मूल्यों का व्यापक प्रभाव पड़ता है। एक दूसरे को सम्मान देना, आतिथ्य-सत्कार करना, शिष्ट-भाषा में विरोध करना तथा किसी भी कार्य के प्रति सहयोग, सहानुभूति और मानवीय दृष्टिकोण अपनाना वस्तुतः संस्कार और की ही अमूल्य देन होती है। संस्कार, संस्कृति और मान्यताओं को ध्यान में रखकर ही प्रशासनिक एवं संवैधानिक कानूनों को निर्माण किया जाता है। यही कारण है कि एक देश की प्रशासनिक व्यस्था तथा कानून दूसरे देश की प्रशासनिक व्यवस्था तथा कानून से भिन्न और विपरीत होता है।

लोक प्रशासन को प्रभावित करने वाले सांस्कृति तत्वों में प्रमुख तत्व निम्नलिखित हैं-

1. **भाषा (Language):** भाषा विचार-अभिव्यक्ति का एक अनिवार्य माध्यम है। यह जीवन की अनेक समस्याओं को सरलता से सुलझा देती है और अनेक सरल स्थितियों को जटिल बना देती है। लोक प्रशासन में भाषा का प्रभाव और योगदान अधिक महत्वपूर्ण है क्योंकि यह एक सामूहिक क्रिया है तथा कर्मचारियों के अन्तर्सम्बन्धों की स्थापना के लिए एक स्पष्ट, शिष्ट और मनभावन भाषा का होना अपने आप में एक विशेषता है। उपयुक्त भाषा के अभाव में कई समस्याएँ खड़ी हो जाती है। उदाहरणार्थ उच्च अधिकारी कुछ कहना चाहता है, किन्तु अधीनस्थ अधिकारी उसे समझ नहीं पाता, उसने कुछ अलग प्रतिवेदन दे दिया। फलतः संगठन में संघर्ष, विवाद, गलतफहमी, दोहराव, भ्रम आदि बुराइयाँ पैदा हो जाती हैं। इन सबका निदान उपयुक्त भाषा द्वारा सम्भव है।

   जिन देशों की राष्ट्रभाषा एक होती है तथा नागरिकों में भाषा भिन्नताएँ नहीं होतीं वहाँ प्रशासन कार्य अत्यन्त सुविधाजनक बन जाता है। संयुक्त राज्य अमेरिका एक भाषा-भाषी राज्य है। वहाँ दूसर भाषा बोलने वाले कुछ अल्पसंख्यक हैं, किन्तु वे अंग्रेजी जानते हैं इसके विपरीत भारत एक बहुभाषी राज्य है। यहाँ असंख्य बोलियाँ और अनेक क्षेत्रीय भाषाएँ हैं। रिग्स इस स्थिति को विचित्र मानते हैं। रिग्स के शब्दों में-''यह स्थिति विचित्र-सी है कि देश की जनता मिली-जुली भाषाओं का प्रयोग करे और सरकार ऐसी भाषा में संचालित की जाए जो वहाँ की जनता के लिए स्वदेशी नहीं है।'' एक भाषा के अभाव में प्रशासन को अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। भारतीय प्रशासन को ऐसी समस्या का सामना करना पड़ रहा है।

2. **संचार साधन (Means of Communication):** सांस्कृतिक एकरूपता की स्थापना में संचार साधनों का महत्वपूर्ण स्थान है। ये प्रशासन संचालन में उल्लेखनीय भूमिका निभाते हैं। जब पूरे देश में टेलीफोन का जाल बिछा होता है तो प्रशासनिक आदेश शीघ्रता से प्रसारित हो पाते हैं तथा समुचित नियन्त्रण रखा जा सकता है। रेडियो, टेलीविजन, प्रेस आदि सुविधाओं का उपयोग कर सभी देशवासी पड़ोसीवत् निकट हो जाते हैं। ऐसी स्थिति में जनमत की शक्ति वास्तविक एवं प्रभावशाली बन जाती है। यह किसी नीति पालन के लिए सरकार को बाध्य कर सकती है तथा अवांछनीय नीतियों के मार्ग में बाधक बन सकती है।

   संचार-साधनों द्वारा जनता को प्रशासनिक कार्यो में अधिकाधिक भाग लेने की सुविधा दी जाती है। शहरीकरण तथा यातायात साधनों में व द्धि के कारण जनता प्रशासनिक कार्यो में अधिक गतिशील बन जाती है। संस्कृति का महत्वपूर्ण प्रशासनिक प्रभाव द्वारा संयुक्तीकरण किया जाता है। सारा समाज एक जैसे प्रतीकों, मूल्यों तथा लक्ष्यों को अपनाने लगता है। प्रशासक तथा प्रशासित अनेक बिन्दुओं पर समान रूप से सोचने लगते हैं।[2] संचार साधनों द्वारा प्रशासन करना सुगम बन जाता है, वहाँ प्रशासन में जन-सहभागिता का विकास हो जाता है।

3. **धर्म (Religion):** धर्म सामाजिक संयुक्तीकरण का एक अन्य साधन है। एक ही धर्म में विश्वास करने वाले लोग आसानी से परस्पर सम्बद्ध हो जाते हैं किन्तु मूल विश्वासों में अन्तर रहने पर एक ही प्रदेश की जनसंख्या विभिन्न समुदायों में

बंट जाती है। राजनीतिक सिद्धान्तों की भाँति धर्म लोगों को जोड़ने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। धार्मिक मतभेदों के कारण प्रशासनिक कार्यो में समन्वय, आदेश, नियन्त्रण, नेत त्व आदि की अनेक समस्याएँ पैदा हो जाती हैं। इसके विपरीत एक धर्म की कड़ी में सम्बद्ध लोगों में लोक प्रशासन की अनेक ससस्याएँ स्वतः ही सुलझा जाती हैं।

4. **शिक्षा एवं मूल्य**: जिस समुदाय में अशिक्षित, असंगठित और फूट के शिकार लोग रहते हैं तो वहाँ लोक प्रशासन को चलाने और नियन्त्रण रखने में सुविधा रहती है। क्योंकि ऐसे लोग आसानी से आदेशों का पालन करते हैं। इसके विपरीत शिक्षित एवं संगठित जनसमुदाय स्वयं चिन्तनशील होने के कारण वह अपनी माँगे प्रस्तुत करता है और यदि सरकार के कार्य, विचार उसके अनुरूप न हों तो वह उनका विरोध भी करता है। विभिन्न राष्ट्रों के राष्ट्रीय आन्दोलन इसके प्रमाण हैं।

   मूल्यों की असमानता और एकरूपता भी लोक प्रशासन को प्रभावित करती है। जब प्रशासन तथा समाज के मूल्य समान होते हैं तो प्रशासनिक मशीनरी सुचारू रूप से कार्य करती है, अन्यथा उसमें बाधाएँ देखने को मिलती हैं। सत्ता का पालन देश के सांस्कृतिक तत्वों पर निर्भर करता है।

5. **क्षेत्रीयवाद (Regionalism) की भावना:** सांस्कृतिक पर्यावरण का अन्य महत्त्वपूर्ण पहलू क्षेत्रीयता (Regionalism) की भावना का पनपना है जो प्रशासनिक कार्यवाही पर गहन प्रभाव डालता है। क्षेत्रीय विभिन्नता न केवल विभिन्न क्षेत्रों में रहने वाले लोगों में क्षेत्रीयता की भावना को प्रोत्साहन देती है बल्कि विभिन्न क्षेत्रों से सम्बन्ध रखने वाले प्रशासनिक अधिकारी भी इससे अछूते नहीं रह पाते। इस ढंग की भावना प्रशासन के विभिन्न स्तरों का कार्यरत कर्मचारियों की मानसिकता को तंग बना देती है। अतः प्रशासनिक कर्मचारी राष्ट्रीय मामले की अपेक्षा क्षेत्रीय मामलों में ज्यादा दिलचस्पी एवं loyality दिखाते हैं। इसी कारण राष्ट्रीय मुद्दे क्षेत्रीय मुद्दो की तुलना में छोटे प्रतीत होते है जो राष्ट्रीय एकता के लिए अन्ततः खतरा बन जाते है। उदाहरणार्थ हरियाणा एवं पंजाब के मध्य SYL मुद्धा, पंजाब को लेकर खालीस्थान बनाने की मांग, असम में वोडो स्टूडैंस की मांग, बिहार में झारखण्ड राज्य का बनाया जाना तथा तमिलनाडू, आन्ध्रप्रदेश, कर्नाटक एवं पाडिचेरी के बीच कावेरी जल विवाद इत्यादि।

प्रशासन का आर्थिक पर्यावरण
(Economic Environment of Adm.)

आज की प्रशासनिक व्यवस्था सिर्फ कानून और व्यवस्था के क्षेत्र तक ही सीमित नहीं रही बल्कि यह प्रशासन व्यक्ति के जीवन के प्रत्येक पहलू को अधिकाधिक खुशहाल बनाने के लिए लोक कल्याणकारी प्रशासन बन गया है। इस बदले हुए परिवेश में लोक प्रशासन के सन्दर्भ में अर्थव्यवस्था का महत्व काफी बढ़ गया है क्योंकि प्रशासन द्वारा संचालित विकास कार्यक्रमों की सफलता अच्छी अर्थव्यवस्था पर ही निर्भर करती हैं। इसके साथ आर्थिक विकास के उद्देश्यों को प्राप्त करने तथा अपनी योग्यता व क्षमता को बढ़ाने हेतु लोक प्रशासन को आमतौर पर नए मूल्य अपनाने पड़ते है। प्रशासन को आर्थिक विकास के अनुरूप ढालने के लिए समय-समय पर प्रशासनिक सुधार भी किए जाते हैं। किसी भी देश की योजना को लागू करने का दयित्व प्रशासन का होता है अतः देश की प्रशासनिक प्रणाली वहाँ के आर्थिक जीवन को नियमित भी करती है। इस प्रकार लोक प्रशासन अपने आर्थिक वातावरण के साथ क्रिया-प्रतिक्रिया करते हैं तथा एक दूसरे को प्रभावित करते है। लोक प्रशासन और पर्यावरण के आर्थिक पहलू को निम्नलिखित बिन्दुओं की मदद से स्पष्ट किया जब सकता है-

1. **प्रशासन का आर्थिक विकास में सहयोग:** आर्थिक विकास की प्रक्रिया में लोक प्रशासन की भूमिका महत्वपूर्ण है। प्रशासन को आर्थिक विकास की आवश्यकताओं के अनुकूल ढाला जाता है और इसके लिए समय-समय पर प्रशासनिक सुधार किये जाते हैं!

   चूँकि प्रशासन की पुरानी रूप-रचना नवीन और महत्वाकांक्षी आर्थिक उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायक नहीं होती, इसलिए उसे समयानुसार एवं आवश्यकतानुसार बदला जाता है। यह परिवर्तन इस बात को ध्यान में रखकर किया जाता है कि देश मे द्रुत आर्थिक विकास की दशाएँ उत्पन्न की जा सकें।

2. **आर्थिक व्यवहार का प्रशासन पर प्रभाव**: कोई भी देश जब अपना आर्थिक विकास करना चाहता है तब उसे तदनुसार संस्थागत परिवर्तन करने होते हैं। ऐसी व्यवस्था की जाती है कि अधिक काम करने का प्रोत्साहन प्राप्त कर सके। प्रो.

रिग्स के अनुसार कीमत-रचना की बाजार-व्यवस्था में उत्पादन बढ़ता है, इस व्यवस्था में लोग अपना सामान एवं सेवाएँ उसे बेचते हैं जो अधिक कीमत देता है। खरीददारी करते समय वे लाभप्रद सौदेबाजी करते हैं। टी. एन. **चतुर्वेदी** के अनुसार इस उपयोगितावादी एवं बौद्धिक द ष्टिकोण के कारण वस्तुओं और सेवाओं की उपलब्धि बढ़ जाती है।

3. **लोक प्रशासन अनेक प्रकार से देश के जीवन को नियन्त्रित करता है,** जैसे- एक बाजार तभी सुचारु रूप से कार्य कर सकता है जब उसके ऊपर विभिन्न प्रकार के नियन्त्रण लगाये जायें तथा प्रशासन द्वारा अनेक सुविधाएँ उपलब्ध करायी जायें। प्रशासनिक नियमों द्वारा ऐसे प्रयास किये जाते हैं कि व्यवस्था बनी रहे। प्रशासन नाप-तौल की भी व्यवस्था करता है।
4. **वित्त को प्रशासन का जीवन-रक्त कहा जाता है।** अतः यदि रक्त का नियमित प्रवाह न हो तो शरीर का पतन हो जायेगा। लोक प्रशासन को व्यवस्थित रूप से चलाने के लिए पर्याप्त साधन, कर्मचारियों का सन्तोष, कार्य की उचित दशाएँ अनिवार्य हैं तथा इन सबकी व्यवस्था वित्त के द्वारा की जाती है।
5. प्रशासन में भ्रष्टाचार का मूल आधार आर्थिक है। यदि हम प्रशासन को पवित्र और भ्रष्टाचारहीन बनाना चाहते हैं तो आर्थिक औषधि का प्रयोग करना आवश्यक है। इसी प्रकार, अकुशल प्रशासन तथा निम्न आर्थिक स्तर का एक दुष्चक्र होता है। जब एक राज्य की आर्थिक स्थिति खराब होती है तो वहाँ योग्य तथा कुशल कर्मचारी उपलब्ध नहीं हो पाते। इस कमी को दूर करने के लिए प्रशासनिक प्रयास आवश्यक हैं।
6. **तीव्र आर्थिक विकास में प्रशासन का योगदान**- तीव्र आर्थिक विकास के लिए देश नियोजित तरीके से विकास का मार्ग अपनाता है ताकि सीमित साधनों तथा कम समय में अधिक से अधिक लक्ष्यों की प्राप्ति कर सके। ऐसा राज्य लोक-कल्याणकारी बन जाता है और उसका कार्यक्षेत्र व्यापक हो जाता है। राज्य के इन नवीन दायित्वों के पालन के लिए प्रशासन व्यवस्था में भी सामयिक परिवर्तन किये जाते हैं और ऐसी स्थिति में विकासशील प्रशासन का जन्म होता है। इस प्रकार लोक प्रशासन नियोजन तन्त्र का चालक और प्रेरक है।
7. **आर्थिक कारणों से प्रशासन में भ्रष्टाचार की समस्या**- लोक प्रशासन की सबसे महत्वपूर्ण समस्या भ्रष्टाचार के अनेक कारण हैं, परन्तु मूलभूत कारण आर्थिक ही हैं। अतः प्रशासन को पवित्र और भ्रष्टाचार रहित बनाना चाहते हैं तो आर्थिक औषधि का सही प्रयोग करना होगा।

   साथ में प्रशासन आर्थिक जीवन को नियन्त्रित करता है और देश की आर्थिक स्थिति का प्रभाव भी प्रशासन पर पड़ता है। इस प्रकार लोक प्रशासन की समस्याएँ आर्थिक धरातल पर जन्म लेती हैं तथा सम्पूर्ण अर्थ-व्यवस्था का एक अंग होती है। लोक प्रशासन का संगठन, कार्य एवं प्रकृति आदि देश की आर्थिक स्थिति में निर्णायक रूप से प्रभावित रहते हैं।

प्रशासन का राजनैतिक पर्यावरण
(Political Environment of Administration)

प्रशासन और राजनीतिक परिवेश का सम्बन्ध अत्यन्त घनिष्ठ होता है। दोनों ही एक-दूसरे को प्रभावित करते हैं। लोक प्रशासन की जड़ें राजनीति में निहित होती हैं। राजनीति का सम्बन्ध किसी देश के शासन से होता है और शासन का क्रियात्मक रूप प्रशासन में दीखता है। राजनीतिक परिवेश में जब बदलाव आता है तब प्रशासनिक संस्थाओं में परिवर्तन होना स्वाभाविक है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि किसी भी देश के लोक प्रशासन तथा उसकी संरचनाओं पर वहाँ के राजनीतिक परिवेश का गम्भीर प्रभाव पड़ता है।

भारतीय राजनीतिक परिवेश के समबन्ध में यह बात ध्यान देने योग्य है कि भारत में शायद ही निरंकुश शासन रहा हो। राजा राज्य का सर्वोच्च शासक अवश्य होता था किन्तु वह मन्त्रियों की राय से कार्य करता था। यहाँ की समाजिक व्यवस्था के अनुसार राजनीतिक समता की विचारधारा कभी नहीं पनपी। बौद्ध सम्प्रदाय के प्रभाव से कतिपय गणतंत्र स्थापित हुए थे जिनमें वैशाली का गणतन्त्र प्रमुख रहा है, किन्तु अधिकतर व्यवस्था राजतन्त्रीय थी। भारतीय परिवेश परम निम्नलिखित मुद्दों के अन्तर्गत चर्चा कर रहे हैं:

1. **भारत में प्रजातन्त्र का स्वरूप**-ऐतिहासिक द ष्टि से यदि विचार करें तो आधुनिक प्रजातन्त्र की कल्पना भारतीय संस्कृत से मेल नहीं खाती। आज भारतीय प्रजातन्त्र के विकास में कुछ विरोधी तत्व विद्यमान हैं। भारतीय संस्कृति में सहनशीलता की प्रमुखता के कारण, और राजा के सीमित अधिकारो के कारण, यह संस्कृति प्रजातन्त्रोन्मुख है। यह अत्यन्त आश्चर्यजनक है कि एक ओर अनपढ़ नागरिक मतदान की प्रक्रिया में रुचिपूर्वक उत्साह से हिस्सा लेता है, जबकि दूसरी ओर शिक्षित और बुद्धिजीवी वर्ग चुनाव-प्रक्रिया से तटस्थ होता जा रहा है। भारतीय समाज में समता की कमी है, वर्णाश्रम-धर्म तथा विभिन्न जातियों एवं उपजातियों के अलग-अलग अस्तित्व के कारण समत की भावना समाज में पनप ही नहीं पायी। आज का चुनाव शारीरिक क्षमता और आर्थिक क्षमता पर निर्भर हो गया है और इसी बूते पर जीता जाता है। चुनाव में अपराधी तत्व अधिक सक्रिय हो गया है और वे शक्ति व धन के द्वारा चुनाव-प्रक्रिया को प्रभावित करते हैं। फलस्वरूप, हमारे देश में प्रजातन्त्र की बात तो की जाती है, पर वास्तविक प्रजातन्त्र लागू नहीं हो पाता।

2. **शासन का प्रशासन में हस्तक्षेप**-शासन और प्रशासन एक-दूसरे के पूरक है और आपस में घनिष्ठ सम्बन्ध रखते हैं। साधारण नागरिक प्रशासन से ही सम्पर्क रखता है और प्रशासन की क्षमता पर ही शासन आँका जाता है। शासकीय नीतियों का निर्माण यद्यपि कठिन है किन्तु उससे भी कठिन कार्य नीतियों को लागू करना है। हमने संसदीय शासन-प्रणाली अपनायी है जिसके अन्तर्गत शासन की नीतियों के बनाने का काम तो ''शासक वर्ग'' करता है परन्तु उन्हें जनता तक पहुँचाने का काम 'सेवीवर्ग' करता है। इन दोनों वर्गो के चयन, कार्यकाल, सेवा-शर्ते आदि भिन्न-भिन्न हैं। ब्रिटेन में शासकीय वर्ग और सेवीवर्ग एक-दूसरे के पूरक के रूप में देखे जाते हैं। दोनों में पारस्परिक सम्बन्धों पर काफी मतभेद हैं और इस विषय में विभिन्न मत प्रतिपादित किये गये हैं। किन्तु यह बात ध्यान देने योग्य है कि ''सेवीवर्ग'' शासकीय वर्ग की आज्ञा मानने को बाध्य तो है परन्तु उसके मातहत नहीं है। इन्दिरा गांधी के शासनकाल में, विशेषकर आपातकाल के समय शासन का प्रशासन में हस्तक्षेप बढ़ा और बाद के समय में बढ़ता ही गया। आज स्थिति यह है कि शासकीय वर्ग खुले आम प्रशासन पर अपना नियन्त्रण करना चाहता है। इस सन्दर्भ में स्थानान्तरण की शक्ति के दुरुपयोग की प्रमुख भूमिका रही है। प्रशासन में शासन के बढ़ते हुए हस्तक्षेप के कारण कुशल व्यक्ति या तो शासकीय सेवा में जाना ही नहीं चाहते या सेवा से शीघ्र निव त्ति चाहते हैं। फलस्वरूप भारतीय प्रशासन में गिरावट आती जा रही है और शासक वर्ग को इस विषय में प्रर्याप्त ध्यान देना आवश्यक है।

3. **शासकीय तथा प्रशासकीय तन्त्र में बढ़ता हुआ भ्रष्टाचार**-प्रशासन-तन्त्र में, निम्न स्तर पर भ्रष्टाचार प्रारम्भ से ही दिखायी देता है। कौटिल्य ने अपने -अर्थशास्त्र' में इस ओर संकेत भी किया है। मुगल-शासनकाल में रिश्वतखोरी पायी जाती थी। ब्रिटिशशासनकाल में इस विषय में एक महत्पूर्ण परिवर्तन देखने को मिला है जिसके अनुसार ईस्ट इण्डिया कम्पनी की सामाप्ति के बाद उच्च पदों पर आसीन अधिकारियों में भ्रष्टचार की कमी रही; यद्यपि उस समय भी निम्न श्रेणी के शासकीय कर्मचारी इस रोग से अछूते नहीं थे।

   स्वाधीनता के पश्चात् अखिल भारतीय सेवाओं में पुरानी प्रव त्ति जारी रही। शासकीय वर्ग नेहरू-युग में इस प्रकार के भ्रष्टाचार से काफी दूर था, पर धीरे-धीरे भ्रष्टाचार का रोग निम्न वर्ग के कर्मचारियों से फैलकर उच्चस्तरीय कर्मचारियों तथा शासक वर्ग में भी पनपता गया। अनेक घोटालों का इस सन्दर्भ में उल्लेख करना आवश्यक है, जैसे- कृष्ण मेनन का ''जीप काण्ड'', ललितनारायण मिश्र का कई भ्रष्टाचार प्रकरणों में लिप्त रहना, ''बोफोर्स काण्ड'' जिसके कारण राजीव गांधी की 1989 के चुनावों में हार हुई और हर्षद मेहता द्वारा प्रधानमन्त्री नरसिंह राव के ऊपर दोषारोपण आदि। आज स्थिति यह है कि जब भी किसी 'विदेशी' या 'स्वदेशी' फर्म से सौदा किया जाता है तो कमीशन के तौर पर उच्च वर्ग द्वारा रिश्वत लेने की बात कही जाती है। आखिर शासक वर्ग को भी तो चुनाव खर्च के लिए करोड़ों रुपयों की आवश्यकता होती है जिसे वह चुनाव के बढ़ते खर्चे को बढ़ते हुए भ्रष्टाचार से पूरा करता है। ''हवाला काण्ड'' इसी की परिणति है। इस प्रकार राजनीतिक परिवेश के इस वातावरण में प्रशासन को कार्य करना पड़ता है जिसका प्रतिकूल प्रभाव पड़ना स्वाभाविक है।

4. **शासकीय सेवाओ में आरक्षण**-विश्व के प्रत्येक विकसित देश में यह बात सर्वथा मान्य है कि विकास के युग में योग्य और कुशल व्यक्ति ही अपने उत्तरदायित्वों का सही निर्वाह कर सकता है। भारत में भी हर युग में योग्यता को ही प्राथमिकता दी गयी है। आज इस तथ्य को अनदेखा नहीं किया जा सकता परन्तु इसके विपरीत, भारत में ऐतिहासिक, सामाजिक, आर्थिक रूप से कई वर्ग हजारों वर्षो से शोषित होते आये हैं। उन्हें समाज में उचित स्थान दिलाना सरकार

का दायित्व है। फलस्वरूप, हमारे संविधान-निर्माताओं ने कतिपय जातियों और जनजातियों को प्रशासकीय सेवाओं तथा विधानसभाओं में आरक्षण प्रदान किया है। यहाँ यह ध्यान देने योग्य बात है कि इन प्रावधानों के फलस्वरूप निम्न वर्ग कुछ ऊपर उठा है और वे जागरूक भी हुए हैं। मण्डल आयोग की सिफारिशों को लागू करने तथा शोषित एवं पिछड़े वर्गों को समता के नाम पर आरक्षण देने की आवाजें जोर पकड़ती जा रही हैं। उच्च वर्ग के गरीब लोगों को भी आरक्षण देने की बात सामने आ रही है। साथ ही महिलाओं और विकलांगों के उत्थान के लिए भी आरक्षण की आवश्यकता महसूस की जा रही है। इस दिशा में अनेक आन्दोलन भी हो रहे हैं। पर इस विषय पर इतना ही कहना पर्याप्त नहीं है कि विकास के कठिनतम कार्य का सम्पादन करने के लिए योग्यता का कोई पर्याय नहीं है। इसीलिए सर्वोच्च न्यायालय ने 50% से अधिक आरक्षण को गैर-कानूनी ठहराया है। हाल ही में 8 सितम्बर, 1993 से केन्द्र सरकार की नौकरियों में 27% आरक्षण लागू हो गया है।

शासकीय सेवाओं में आरक्षण लगभग विकासशील देशों में पाया जाता है। कुछ देशों में तो कुछ राजनैतिक पार्टियों ने इसे अपने राजनैतिक लाभ का मुद्दा बना रखा है। जिसके कारण वे विभिन्न सामाजिक समूह के लिए इस ढंग की मांग लागातार करती रहती है। लेकिन शासकीय सेवाओं में बढ़ती हुई आरक्षण की मांग अकुशल एवं अयोग्य व्यक्तियों को स्थान देती है जो पूर्ण रूप से अपने उत्तरदायित्वों का निर्वाह करने में असमर्थ होते हैं। इसी कारण प्रशासन में अकुशलता एवं भ्रष्टाचार जन्म ले लेते हैं और प्रशासन की सम्पूर्ण कार्यवाही पर प्रभाव पड़ता है।

5. **धर्म और राजनीति का प थक्करण**- जैसा पहले भी उल्लेख किया जा चुका है, 'धर्म' शब्द भारतीय संस्कृति में अत्यन्त विस्त त रूप में प्रयुक्त होता आया है। धर्म का सही अर्थ न समझने के कारण इसका विक त रूप साम्प्रदायिकता ने ले लिया है। भारतीय संस्कृति में साम्प्रदायिकता का कोई स्थान नहीं है जो धर्मनिरपेक्षता की संकल्पना के सर्वथा प्रतिकूल है। यहाँ पर यह बात विचारणीय है कि भारत की तीनों प्रमुख संस्कृतियों (सनातन संस्कृति, मुस्लिम संस्कृति तथा ईसाई संस्कृति) के विचारानुसार धर्म और राजनीति एक-दूसरे से प थक नहीं किये जा सकते। भारतीय संस्कृति धर्मनिरपेक्ष राज्य में विश्वास करती है। किन्तु मुस्लिम तथा ईसाई सम्प्रदाय धर्मतन्त्र में ही विश्वास करते हैं। इस प ष्ठभूमि में शासकीय नीति धर्म से राजनीति को अलग करना चाहती है। इसे मुसलमान और ईसाई अनुयायियों के विरोध में ही माना जायेगा, जबकि इस नीति से सत्ताधारी कांग्रेस दल को ही विशेष हानि होगी। कांग्रेस दल की अल्पसंख्यकों के तुष्टीकरण की नीति सर्वविदित है। प्रस्तावित कानून इस नीति के विरोध में ही जायेगा। इस पर विचार करें तो यही निष्कर्ष निकलता है कि भारत जैसे बहुलवादी देश में भारतीय संस्कृति के सम्मान व राष्ट्रीय हित को ध्यान में रखना परम आवश्यक है और किसी भी दल की यह नीति कि विभिन्न सम्प्रदाय बराबर की श्रेणी में आयेंगे, खतरे से खाली नहीं है।

अध्याय-10

तुलनात्मक लोक प्रशासन के मुख्य उपागम
(Approaches of Comparative Public Administration)

तुलनात्मक लोक प्रशासन से सम्बन्धित बहुत सारे उपागम हैं। ये सभी उपागम लोक प्रशासन का अध्ययन अलग-अलग द ष्टिकोणों से करते हैं। इसके तीन उपागम हैं जिनके नाम अग्रलिखित हैं-सरंचानात्मक-प्रकार्यात्मक उपागम, पारिस्थितिकीय उपागम तथा व्यवहारवादी उपागम हैं सबसे अधिक महत्त्पूर्ण है। ये तीनों उपागम लोक प्रशासन का तुलनात्मक द ष्टि से अध्ययन करने में काफी हद तक मददगार है। इनका व्यवस्थित विस्त त वर्णन निम्न प्रकार है-

प्रस्तावनाः- सरंचनात्मक-प्रकार्यात्मक उपागम
(Structural-Functional Aproach)

लोक प्रशासन सहित अधिकाशं सामाजिक विज्ञानों में संरचनात्मक-प्रकार्यात्मक (स्ट्रक्चरल-फंक्शन अप्रोच) उपागम बहुतायत में प्रयोग होता है। इस उपागम को **व्यवस्था विश्लोषण** (System Analysis) के नाम से भी जाना जाता है। सामाजिक प्रक्रियाओं को समझने में सहायक यह उपागम सामाजिक संरचना तथा उसके कार्यों (प्रकार्यों) पर बल प्रदान करता है। टालकॉट पारसन्स, रॉबर्ट मर्टन, मेरियन लेवी, गेबरियल आलमंड, डेविड एप्टर तथा रिग्ज इत्यादि विद्वानों ने इस उपागम का उपयोग किया है। वस्तुतः यह उपागम संरचनात्मक उपागम तथा प्रकार्यात्मक उपागम का संयुक्तीकरण करके बनाया गया है।

लोक प्रशासन में सर्वप्रथम 1955 में ड्वाइट वाल्डो ने यह बताया कि लोक प्रशासन को सामाजिक व्यवस्था के एक भाग के रूप में विश्लेषित करने के क्रम में संरचनात्मक-प्रकार्यात्मक उपागम महत्त्वपूर्ण माध्यम है। सन् 1957 में **एफ. डब्ल्यू. रिग्ज ने अपना क षका-औद्योगिका मॉडल इसी उपागम के आधार पर निर्मित किया** तथा यह निष्कर्ष सामने आया कि पश्चिमी देशों की प्रशासनिक व्यवस्था ही सर्वश्रेष्ठ नहीं है बल्कि प्रत्येक देश की प्रशासनिक व्यवस्था का विश्लेषण वहां के स्थानीय सन्दर्भों में होना चाहिए। जो संरचना अमेरिका के सन्दर्भ में सर्वश्रेष्ठ है वह भारत के सन्दर्भ में निकृष्टतम हो सकती है। लोक प्रशासन में, सरंचनात्मक प्रकार्यात्मक उपागम का सिद्धान्त समाजशास्त्र से आया है। तुलनात्मक लोक प्रशासन के विकास तथा बढ़ते महत्त्व ने इस उपागम को उपादेय बना दिया है।

उपागम का सार

यह उपागम दो मुख्य अवधारणा-संरचना एवं प्रर्काय, के इर्द-गिर्द घुमता है। साधारण रूप में, यह उपागम, किसी तन्त्र में पाई जाने वाली संरचानाएं एवं उनके द्वारा पूरे किए जाने वाले कार्यों के अध्ययन एवं विश्लेषण से सम्बन्धित है। इस उपागम की प्रमुख मान्यता है कि प्रत्येक समाज में कुछ महत्वपूर्ण कार्य, कुछ संरचनाओं के द्वारा कुछ विशेष तरीके अपनाकर पूर्ण किए जाते हैं। अतः संरचनात्मक-प्रकार्यात्मक उपागम वह उपागम हैं, जो उन कार्यो जो किसी समाज में पूर्ण किए जाते हैं, उन संरचानाओं का जिनके द्वारा ये कार्य किए जाते है एवं उनके तरीकों का जो इन संरचानाओं के द्वारा अपनाए जाते हैं का सामुहिक रूप से विश्लेषण करता है। इस उपागम को पूर्ण रूप से समझने के लिए कुछ शब्द जैसे कि संरचनाएं एवं प्रकार्यों को समझना अति आवश्यक है जो निम्नलिखित है-

1. **संरचनाः संरचना का अर्थ है-"any pattern of Behaviour which has become a stndared[2] feature of social system.":** समस्त प्रकार की समाजिक संरचनाएं कुछ न कुछ कार्य करती है। अतः संरचना को कार्य (प्रकार्य) के आध ाार पर समझा जा सकता है। समस्त प्रकार की संरचानएं विशिष्ट प्रकार का व्यवहार करती है अतः संरचना को विश्लेषित किया जा सकता है। लोक प्रशासन की संरचनाए दो प्रकार की हो सकती है-

(i) **साकार या प्रत्यक्ष** (Concrete)

(ii) **विश्लेषणात्मक** (Anatic)

साकार या प्रत्यक्ष संरचानाएं वे है जो प्रत्यक्ष दिखती हैं जैस विभाग, मंत्रालय या महाविद्यालय। जबकि विश्लेषाणत्मक संरचनाएं अप्रत्यक्ष स्वरूप लिए हुए होता है जैसे कि सत्ता या प्राधिकार। वास्तव में विश्लेषणात्मक संरचनाएं, साकार संरचानओं पर ही आधारित होती हैं। प्रत्येक प्रकार के संगठन 'संरचना' नहीं कहे जा सकते हैं केवल विशेष प्रकार्य करने पर ही वे संरचना कहलाते हैं।

2. **प्रकार्यः** प्रकार्य वह परिणाम है जो संरचना से प्राप्त होता है। **रॉबर्ट सी. बोन** के अनुसार ''एक प्रकार्य, संरचना को बनाए रखने तथा उसे विकसित करने वाला ऐसा क्रिया-प्रतिमान है जो नियमित रूप में होता रहता है। कतिपय विद्वानों का मानना है कि प्रकार्य बहुधा विकार्यात्मक (Dysfunctional) अर्थात् नकरात्मक भूमिका भी निभा सकता है। लेकिन प्रकार्य की श्रेणी में उन्हीं परिणामों को गिना जाना चाहिए जो किसी व्यवस्था को बनाए रखने या विकसित करने में सहायक हों तथा जो नियमित रूप से घटित होते है। समाजशास्त्रियों के अनुसार प्रकार्य का अर्थ दो या अधिक संरचनाओं के मध्य अन्तर्निर्भरता के प्रतिमानों से है। यह विभिन्न चरों (Variables) के मध्य अर्न्तसम्बन्धों को भी दर्शाता है। एक संरचना का दूसरी संरचना पर पड़ने वाले प्रभाव भी प्रकार्य की श्रेणी में आते हैं। यह आवश्यक नहीं है कि हमेशा संरचना तथा प्रकार्य के मध्य प्रत्यक्ष एवं गहरा सम्बन्ध हो ही। इसी प्रकार एक समान संरचनाएं हमेशा एक समान प्रकार्य करें यह भी आवश्यक नहीं है। अनुभवात्मक अनुसंधानों के आधार पर संरचना तथा प्रकार्य का आपसी प्रभाव ढूंढा जाता है। एक संरचना से कई प्रकार के प्रकार्य निष्पादित हो सकते हैं, उसी प्रकार एक प्रकार्य कई प्रकार की संरचनाओं के द्वारा भी निष्पादित हो सकता है। इस प्रकार यह उपागम यह सिद्ध करता है कि समान प्रकार की संरचानाएं विभिन्न प्रकार के पर्यावरण में एक समान प्रकार्य निष्पादित नहीं करती हैं। प्रकार्यों को भी दो भागों में विभक्त किया गया है-

(i) **प्रकट प्रकार्य** (Manifest)

(ii) **गुप्त प्रकार्य** (Latent)

समाजशास्त्री रॉबर्ट मर्टन के अनुसार प्रकट प्रकार्यों का सम्बन्ध उन क्रिया-प्रतिमानों से होता है जिनके परिणामें को उनके करने वाले चाहते हैं तथा मान्यता देते हैं जबकि गुप्त प्रकार्य (विकार्य) उन क्रिया-प्रतिमानें को कहा जाता है जिके परिणामों को उनके करने वाले न तो चाहते हैं और नहीं मान्यता देते हैं। इसी आधार पर यदि प्रशासनिक संरचनाओं के प्रकार्यो का अध्ययन किया जाए तो बहुत से सार्थक निष्कर्ष सामने आते हैं। प्रत्येक प्रकार के प्रकार्य सभी प्रकार की समाजिक तथा प्रशासनिक संरचानाओं द्वारा निष्पादित नहीं किये जाते हैं। किसी समाज में कुछ प्रकार्य ''पूर्वशर्त'' होते हैं तो कुछ प्रकार्य ''आवश्यकता'' होते हैं। ये प्रकार्य विभिन्न प्रकार के पर्यावरणीय सन्दर्भों में संरचना को समझाने में सहायक सिद्ध होते हैं।

रिग्ज के अनुसार किसी भी समाज में पांच प्रकार के आवश्यक प्रकार्य हैं। आर्थिक, सामाजिक, संरचनात्मक, प्रतीकात्मक तथा राजनतिक प्रर्काय सभी समाजों के आवश्यक प्रकार्य हैं क्योकि मनुष्य का व्यवहार तथा आवश्यकताएं मूलतः इन्हीं पक्षों से जुड़ी हुई है। रिग्ज ने यहीं पांच प्रकार्य प्रशासनिक उप व्यवस्थाओं को समझने के लिए आवश्यक बताए हैं।

उपागम की विशेषताएं-संरचनात्मक-प्रकार्यात्मक उपागम की मुख्य विशोषताएं निम्नलिखित हैं-

1. **मूल्य निरपेक्ष उपागम**-यह उपागम मूल्य निरपेक्ष (स्वतन्त्र) उपागम है क्योंकि यह उपागम किसी तन्त्र में विद्यमान संरचनाओं एवं प्रकार्यो के विश्लेषण से सम्बन्ध रखता है अतः यह उपागम मूल्यों की अपेक्षा तथ्यों पर अधिक केन्द्रित रहता है जिसके कारण इस उपागम में मूल्यों को ज्यादा महत्त्व नहीं दिया जाता।

2. **यथास्थितिवाद का समर्थक** - यह उपागम यथास्थिति वाद का भारी समर्थक है क्योंकि यह उपागम किसी तन्त्र में भारी भरकम; (Holistic Change) बदलाव की अपेक्षा छोटे मोटे (Minor) बदलाव का पक्षधर है। यह उपागम किसी तन्त्र की संरचनाओं एवं प्रकार्यों में पूर्ण बदलाव लाने में विश्वास नहीं रखता बल्कि इनमें स्थायित्व बनाए रखने की बात करता है।

3. **भविस्योन्मुखता की कमी** - इस उपागम द्वारा अध्ययन अत्यन्त वास्तविक हैं, यह केवल वर्तमान का अध्ययन करता है, भविष्योन्मुखता की इस उपागम में अत्यन्त कमी है।

4. **परिवर्तन-विरोधी -** यह उपागम व्यवस्था की उपयोगिता तथा अनेक रख रर्खाव से जुड़ी समस्याओं से अधिक सम्बन्धित दिखाई देता है। अतः यह परिवर्तन-विरोधी उपागम है क्योकि यह परिवर्तन की ओर या सुधार की ओर दिशा-निर्देश नहीं करता।

योगदान - इस उपागम का योगदान लोक प्रशासन (विशेष तौर पर तुलनात्मक लोक प्रशासन) के अध्ययन क्षेत्र मे अहमभूत है। इस उपागम ने इस विषय के क्षितिज को काफ हद तक विस्त त किया है। लोक प्रशासन के विद्वानों के क्षितिज को काफी हद तक विस्त त किया है। लोग प्रशासन के विद्वानों का झुकाव इस उपागम के प्रयोग में अत्याधिक रहा। Prof. Riggs के अतिरिक्त बहुत सारे अन्य विद्वानों ने भी इस उपागम का प्रयोग विभिन्न प्रशासनिक व्यवस्थाओं से सम्बन्धित शोध करते हुऐ किया है। Riggs के द्वारा तीसरी दुनिया (विकासशील देश) देशों की प्रशासनिक व्यवस्थाओं को समझने के लिए इस उपागम का प्रयोग व्यापक स्तर पर किया गया।

इस उपागम में व्यवस्था विश्लेषण के दौरान विषय-वस्तु का केवल वर्णन मात्र नहीं किया जाता बल्कि व्यवहार तथा आचरण का परीक्षण भी किया जाता है। इसमें लोक प्रशासन के ढ़ाँचे तथा अधिकारियों को किया और अन्तर्निभरता के सन्दर्भ मे देखा जाता है जो नियोजित कार्य की भूमिका निभा रहें है। व्यवस्था की तीन विशेषताएँ मानी जाती है-प्रभावशीलता, कार्यकुशलता तथा उपदेयता। एक अच्छी व्यवस्था में तीनों का उपयुक्त सन्तुलन आवश्यक रखा जाता है। इन दिनों प्रशासन के विभिन्न पहलुओं के सन्दर्भ में इस उपागम को अपनाकर अनेक व्यवस्था अधययन एवं विश्लेषण किए गए हैं।

जब तुलनात्मक लोक प्रशासन में यह उपागम अपनाया गया तब यह स्पष्ट हो गया कि पाश्चात्य प्रशासनिक व्यवस्थाओं के व्यवहार एवं संस्थाएं सर्वश्रेष्ठ नहीं हैं। अतः यह उपागम विकसित एवं विकासशील प्रशासनिक व्यवस्थाओं के मध्य अन्तर स्पष्ट करने में काफी हद तक मददगार साबित हुआ।

आलोचना (Criticism)

इस उपागम की उपादेयता सर्वसिद्ध है किन्तु कतिपय आलोचनाएं भी की जाती हैं-

1. यह उपागम अपने आप में रूढ़िवादी है क्योंकि इसमें पर्यावरणीय परिवर्तनों के प्रति उदासीनता है जबकि परिवर्तन स ष्टि का नियम है।
2. यह उपागम किसी व्यवस्था के बारे में यह नहीं बता सकता है कि किस परिस्थिति में वह संधारित होती है।
3. प्रत्येक संरचना तथा व्यवस्था के संदर्भ में प्रकार्यों की व्याख्या कठिन है।
4. यह उपागम प्राकृतिक संरचनाओं के पक्ष में तथा कृत्रिम संरचनाओं के विरुद्ध में है।
5. यह उपागम परिवर्तन की बात नहीं करता।
6. यह उपागम सुधारवादी नहीं है।
7. यह उपागम यथास्थिति बनाए रखने का पक्षधर है।
8. इस उर्पागम के आधार पर वास्तविक अध्ययन सम्भव नहीं हैं।

पारिस्थितिकीय उपागम
(Ecological Approach)

द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद प्रशासन और संगठन के अध्ययन हेतू इस उपागम का प्रारम्भ हुआ। लोक प्रशासन में इस उपागम की शुरू आत प्रसिद्ध विद्वान जॉन एम. गॉस ने 1947 में की। यह उपागम तुलनात्मक लोक प्रशासन में सबसे आधुनिक उपागम है। यह उपागम तुलनात्मक लोक प्रशासन में सबसे आधुनिक उपागम है। यह उपागम 1970 के दशक में मुख्य रूप से उभर कर सामने आया और लोक प्रशासन के विभिन्न विद्वानों (विशेष तौर पर प्रो. रिग्स) के द्वारा विकासशील देशों की प्रशासनिक व्यवस्थाओं की अध्ययन एवं विश्लेषण में प्रयोग किया गया।

प्रो. रिग्स से पहले इस उपागम के विकास के सन्दर्भ में योगदान देने वाले प्रमुख विद्वान जे.एम. गॉस, रार्बट ए. डहल, रासकोइ मार्टिन हैं। परन्तु रिग्स ने ही इस उपागम के विकास में अहमभूत योगदान दिया। इस उपागम का प्रयोग प्रो रिग्स ने विकासशील

देशों की प्रशासनिक व्यवस्थाओं के एक विस्त त परिप्रेक्ष्य में प्रशासनिक तथा आर्थिक, तकनीकी, राजनीतिक तथा संचार कारकों के बीच सम्बन्ध का विशेषण करते समय किया है। आजकल तुलनात्मक लोक प्रशासन के अध्ययन में इस उपागम का महत्त्वपूर्ण स्थान है। इस उपागम का Reference Point विकासशील देशों की प्रशासनिक व्यवस्थाएँ हैं।

अर्थ - 'Ecology' शब्द ग्रीक भाषा के दो शब्द-Oikos जिसका अर्थ है 'घर ' या 'रहने का स्थान' एव Logos जिसका अर्थ है 'का अध्ययन', के मेल से बना है। इस प्रकार यह शब्द जीव व उसके पर्यावरण के अर्न्तसम्बन्ध को दर्शाता है। यह शब्द प्रो रिग्स के द्वारा जीव विज्ञान से उधार लिया गया है। जीव-विज्ञान में Ecology वह विज्ञान है जो जीव और उसके चारों ओर व्याप्त पर्यावरण में परस्पर अन्तक्रियाओं एवं अर्न्तसम्बन्धों का अध्ययन करता है।

उसी प्राकर लोक प्रशासन का भी अपना पर्यावरण होता है जिसमें प्रशासन अपने पर्यावरण के साथ अन्तक्रिया करता है और ये दोनों एक दूसरे को काफी हद तक प्रभावित भी करते हैं। अतः परिस्थतिकी उपागम लोक प्रशासन का वह उपागम जो प्रशासन व उसके पर्यावरण (सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक एवं राजनैतिक) के परस्पर अर्न्तसम्बन्धों एवं अन्तः क्रियाओं कि प्रशासन पर्यावरण को और पर्यावरण प्रशासन पर अपना प्रभाव कैसे डालता है, का अध्ययन करता है।

विशेषताएं - इस उपागम की विशेषातएं निम्नलिखित हैं-

1. **अर्न्तविषयी उपागमः** यह उपागम अर्न्तविषमी प्रकृति का उपागम है क्योकि यह पर्यावरण सम्बन्धी सामाजिक सांस्कृतिक, राजनैतिक एवं आर्थिकी forces के गहन अध्ययन पर बल देता है। ये सभी forces प्रशासन के केवल प्रशासन से ही प्रभावित होती हैं बल्कि प्रशासन पर भी अपनी गहन छाप छोड़ती है। इस प्रकार यह उपागम विभिन्न प्रकार की पर्यावरण सम्बन्धी वितबमे को समझने के लिए विभिन्न विषयों से ज्ञान अर्जित करने पर बल देता है।
2. **जटिल विषय वस्तुः** इस उपागम की अन्य विशेषता यह है कि इसकी विषय वस्तु अत्याधिक जटिल है क्योंकि यह उपागम पर्यावरण से सम्बन्धित उन सभी forces के अध्ययन पर दबाव डालता है जो प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से प्रशासन को प्रभावित करती हैं। इस उपागम का इन सभी forces के अध्ययन पर बल इस उपागम की विषयवस्तु की जटिलता को और अधिक बढ़ा देता है। हालांकि प्रो रिग्स ने इस समस्या का सुलझाते हुए इस बात पर दबाव डाला कि हमें केवल उन्हीं forces का अध्ययन करना चाहिए जो प्रत्यक्ष रूप से प्रशासन को प्रभावित करती हैं।
3. **परस्पर अन्तः क्रियाओं पर अत्यान्धिक बलः** इस उपागम की अन्य विशेषता यह है कि यह उपागम प्रशासनिक संरचनाओं एवं उनके पर्योवरण जिसमें वे कार्य करती हैं, के परस्पर अर्न्तसम्बन्धों एवं अन्तः क्रियाओं पर अत्याधिक बल देता है। ये अन्त क्रियाएं इस उपागम का केन्द्र बिन्दु होती हैं जिनके इर्द गिर्द यह उपागम गति करता है। इन अन्त क्रियाओं के सम्बन्ध में जानकारी प्रशासन एवं उसके पर्यावरण के सम्बन्ध में ज्ञान को अत्याधिक स्पष्ट कर देते हैं।
4. **Frame of Refernce is overall Enviornment:** इस उपागम की अन्य विशेषता यह है कि इसके Reference का frame सम्पूर्ण पर्यावरण है। यह उपागम प्रशासन को सम्पूर्ण तन्त्र का एक उप-तन्त्र मानती है जो अन्य उप-तन्त्रों जो इसके चारों ओर व्याप्त हैं जैसे कि समाजिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक आदि के साथ अन्तः क्रिया करता है। अतः यह उपागम सम्पूर्ण पर्यावरण जिसमें प्रशासन भी स्थित है को समझने पर दबाव डालती है।

पारिस्थितिकीय उपागम की मूल मान्यताएं - इस उपागम की मुख्य मान्यताएं निम्नलिखित हैं-

1. लोकप्रशासन, शून्य में निवास नहीं करता है बल्कि वह मानव समाज का एक अंग है।
2. जिस प्रकार मानव, जीव-जन्तु तथा वनस्पतियां अपने आसपास के वातावरण से प्रभावति होते हैं, वैसे प्रशासनिक संगठन भी समबन्धित समाजिक, आर्थिक, राजनीतिक तथा सांस्कृतिक काराकों से प्रभावित होते हैं।
3. प्रशासन केवल बाह्य वातावरण से प्रभावित ही नहीं होता बल्कि वह पर्यावरण को भी प्रभावित करता है।
4. प्रत्येक प्रशासनिक व्यवस्था बाह्य वातावरण से निरन्तर क्रिया-प्रतिक्रिया करती रहती है।
5. प्रत्येक प्रशासनिक व्यवहार, प्रशासन संगठनों के बाह्य पर्यावरण एवं विभिन्न कारकों का मिलाजुला परिणाम है।
6. किसी संगठन की आन्तरिक प्रशासनिक कार्य संस्कृति, उस देश या समाज के मूल्यों तथा परम्पराओं से बहुत प्रभावित रहती है।
7. तुलनात्मक लोक प्रशासन के सार्वभौमिक नियम प्रतिपादित करने के लिए उसके तुलनात्मक पारिस्थितिकीय अध्ययन

आवश्यक है।

8. रिग्ज के अनुसार समाज की कुछ आवश्यकताएं ऐसी होती हैं जो परम्परागत, आधुनिक तथा संक्रमणकालीन सभी प्रकार के समाजों में समान रूप से पायी जाती हैं। इसी प्रकार कुछ प्रशासनिक आवश्यकाताएं भी हो सकती हैं। इसलिए **लुई ममफोर्ड** कहते हैं ''किसी भी प्रकार का जीवन दूसरे से अलग होकर नहीं रह सकता, पर्यावरण के बिना किसी भी प्रकार का जीवन संभव नहीं है।''

आलोचना (Criticism)

पारिस्थितिकीय उपागम, तुलनात्मक लोक प्रशासन का मुख्य उपागम बन चुका है। इस उपागम को प्रयोग में लाना सरल तो है किन्तु कुछ समस्याएं सामने आती है-

1. प्रत्येक शोधकर्ता सामाजिक, सांस्कृतिक तथा ऐतिहासिक मूल्यों को अपनी द ष्टि से देखता है अतः दूसरे देश की सांस्क तिक विरासत को समझना एक जटिल कार्य है। भारतीय ''जाति'' की अवधारणा को प्रशासन के साथ समझना सरल कार्य नहीं है।
2. चूंकि मानव व्यवहार तथा समाज जटिल संरचनाएं हैं अतः यह अनुमान लगाना कठिन हैं कि समाजिक व्यवस्था में परिवर्तन, प्रशासन के द्वारा आ रहे हैं या अन्य कारकों से ?
3. विश्व के सभी देशों तथा यहां तक कि भारत जैसे देश में कुछ मील पर बोली तथा पानी बदल जाता है वहां समाजिक व्यवस्था तथा प्रशासनिक संस्कृतिक का विश्लेषण जटिल बन पड़ता है।

व्यवहारवादी उपागम
(Behavioural Approach)

सामाजिक विज्ञानों मे अध्ययन प्रणाली के रूप में व्यवहारवादी (बिहेवियरल) उपागम एक नई पद्धति है जो द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात शुरू हुई। व्यवहारवादी उपागम, समाजशास्त्र तथा मनोविज्ञान के सिद्धान्तों तथा व्यवहारों से अनुप्राणित है। राजनीति विज्ञान तथा लोकप्रशासन सहित अधिकांश सामाजिक विज्ञानों में व्यवहारवादी उपागम से पूर्व केवल संस्थागत अध्ययन होता था जिसमें सम्बंन्धित संस्था जैसे विधानमंडल या नौकरशाही इत्यादि के ढांचे, कार्य तथा शक्तियों इत्यादि की व्याख्या की जाती थी। वास्तव में उन अध्ययनों से यह पता नहीं चल पाता था कि यथार्थ (वास्तव) में व्यक्ति या कार्यकर्त्ता कैस व्यहार करते हैं। अतः परम्परागत अध्ययन प्रणालियों तथा सिद्धांतो के विद्रोह स्वरूप व्यवहारवादी उपागम की शुरूआत हुई। यह एक अन्तरविषयक उपागम है जो वैज्ञानिक पद्धति तथा मूल्य निरपेक्ष द ष्टिकोण का समर्थन करता है।

लोक प्रशासन में व्यवहारवाद की प्रांरभिक जड़ें 1930 के मानव सम्बन्ध आन्दोलन से जुड़ी हुई हैं। इसके पश्चात् चेस्टर बर्नार्ड तथा हरबर्ट साइमन ने इस उपागम को लोक प्रशासन में प्रयुक्त किया। डेविड ईस्टन, वाइडनर, ब्लाऊ मर्टन, सायर्स, हैडी, स्टॉक्स, रिग्ज, रोबर्ट प्रेस्थस, माइकल, क्रोाजियर रॉबर्ट डहाल, तथा कैटलिन इत्यादि ने व्यवहारवादी उपागम को विकसित करने में योगदान दिया है। यह जो संगठनात्मक ''व्यवहार'' पर ध्यान केन्द्रित करता है। व्यवहारवाद अनुभव आध ाारित शोध तथा प्रविधियों में निरन्तर सुधार की मांग करता है। इस उपागम में मानवीय कल्पनाओं, व्यक्तिगत मूल्यों तथा परम्पराओं को दरकिनार किया जाता है ताकि वैज्ञानिक ढंग से शोध निष्कर्ष प्राप्त हो सकें। चूंकि लोक प्रशासन में पूर्व प्रवर्तित अध्ययन विधियां तथा सिद्धांत भी पूर्णतया वैज्ञानिक नहीं थे अतः व्यवहारवादी उपागम शीघ्र ही अपना लिया गया।

व्यवहारवादी उपागम का सार

इस उपागम का सार मानवीय व्यवहार का वैज्ञानिक ढ़ंग से अध्ययन करना है। इस प्रकार यह उपागम विभिन्न सारंकृतिक सन्दर्भों में मानवीय व्यवहार का वैज्ञानिक अध्ययन करता हैं। मानवीय व्यवहार इस उपागम का केन्द्र बिन्दु है जिसके इर्द गिर्द यह उपागम घूमता है। लोक प्रशासन में यह उपागम प्रशासन पर मानवीय व्यवहार का प्रभाव सम्बन्धी तर्क को उचित ठहराता है और इस बात का विश्लेषण भी करता है कि विभिन्न प्रकार के सारंकृतिक सन्दर्भों में मानवीय व्यवहार प्रशासन को कैसे प्रभावित करता है। यह उपागम इसे यह स्पेष्ट रूप से उजागर करता है कि किसी प्रशासैनिक अधिकारियों के व्यवहार का वैज्ञानिक विश्लेषण अति आवश्यक है। अतः यह उपागम किसी संगठन में पाए जाने वाले

कायदे-कानूनों की बजाय उस संगठन में कार्यरत व्यक्तियों एवं उनके समहों के व्यहवहार के वैज्ञानिक अध्ययन पर अधिक बल देता है।

व्यवहारवादी उपागम का विकास

व्यवहारवाद का विकास द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद हुआ है। इस वाद को जन्म देने वालों में **हरबर्ट साइम्न** का नाम विशेष रूप से लिया जाता है। **हरबर्ट साइम्न** ने *लोक प्रशासन में लोकोक्तियाँ (Proverbs inPublic Administration)* नामक अपने लेख में यह बताया है कि अब तक लोक प्रशासन में अनेक बातें लोकोक्तियों की भाँति स्वयंसिद्ध मानकर दोहरायी जा रहीं हैं। इनको सिद्ध करने के लिए किसी प्रमाण, तथ्य, विवेचन या तर्क की आवश्यकता नहीं समझी जाती। व्यावहारिक द ष्टि से ये कथन असत्स सिद्ध होते हैं। यदि लोक प्रशासन को विज्ञान की श्रेणी में लाना है तो इसके लिए इसके सिद्धान्तों और मान्यताओं को व्यवहार की कसौटी पर खरा उतरना चाहिए। **हरबर्ट साइमन** ने अपनी एक अन्य रचना *प्रशासनिक व्यवहार (Adminsitrative Behaviour)* में लोक प्रशासन के अध्ययन के परम्परागत द ष्टिकोण का खण्डन किया है। साइमन ने कहा है कि यदि हम संगठन का सही और वैज्ञानिक विवेचन करना चाहते हैं तो वह अध्ययन व्यवहार पर आधारित होना चाहिए।

लोकप्रशासन के व्यवहारवादी द ष्टिकोण में साइमन का योगदान उल्लेखनीय रहां है। साइमन ने प्रशासन के व्यवहारिक पहलू को महत्व दिया था। उनका विचार था कि प्रत्येक संगठन में कार्य करने वाले प्रत्येक व्यक्ति की अपनी इच्छाएँ और आकांक्षाएँ होती हैं। व्यक्ति की सामाजिक परिस्थितियाँ अनेक प्रकार से उसके आचरण को प्रभावित करती हैं। अतः लोक प्रशासन का अध्ययन तभी व्यवस्थित और वैज्ञानिक हो सकेगा जब मानवीय व्यवहार के इन प्रभावक तत्वों का सही विवेचना किया जाये। **हरबर्ट साइमन** की मान्यता थी कि लोक प्रशासन की पाठ्यपुस्तकों में तीन विषयों का विवेचन किया जाना चाहिएः (i) इसमें उच्च स्तर के संगठन की बड़ी समस्याओं को सुलझाने पर विचार किया जाना चाहिए; (ii) व्यर्थ की औपचारिकताओं और कट्टरता के स्थान पर संगठनों में मानवीय सम्बन्धों के मनोवैज्ञानिक आधार पर गहनता से विचार किया जाना चाहिए; तथा (iii) व्यवहारिक समस्याओं का वास्तविक हल प्राप्त करने के लिए प्रशासन का विश्लेषण उसके व्यापक राजनीतिक एवं सरकारी ढाँचे के अन्तर्गत किया जाये। वस्ततुः हरबर्ट साइमन ने लोक प्रशासन के अध्ययन में मानवीय तत्व को सर्वोपरि रखने का समर्थन किया । हरबर्ट साइमन के अतिरिक्त व्यवहारवादी द ष्टिकोण के क्षेत्र में जिन प्रमुख विद्वानों ने अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है उनमें **ब्लाऊमर्टन**, **वीडनर**, **सायर्स**, **हैडी**, **स्टाक्स**, **रिग्स** आदि मुख्य हैं। इन सभी विद्वानों ने अपने अध्ययन का मूल आधार व्यवहारवाद की मूल मान्यताओं को माना है।

विशेषताएँः व्यवहारवादी उपागम की मुख्य विशेषताएँ निम्नलिखित हैंः

1. **व्यष्टि अध्ययन का समर्थनः** व्यवहारवादी विचारकों की मान्यता है कि अध्ययन की इर्काई जब समष्टि (Macro) होती है तो अध्ययन गहन नहीं हो पाता। अतः हमें व्यापकता से गहनता की ओर बढ़ने के लिए तथा विशिष्टीकरण की द ष्टि से अध्ययन को लघुता से इकाइयों में बाँट लेना चाहिए। व्यवहारविदों का मानना है कि हमारा अध्ययन समष्टिगत होकर व्यष्टि होना चाहिए। व्यवहारवादी द ष्टिकोण ने छोटे-छोटे विषयों के गम्भीर अध्ययन करने के लिए हमें उस संगठन में पर्यवेक्षण की प्रक्रिया, आदेश की एकता, नियन्त्रण प्रक्रिया, प्रत्यायोजन व्यवस्था आदि किसी भी एक पहलू का गहन अध्ययन करना चाहिए। कारण यह है कि मानव मस्तिष्क की शक्तियाँ, ध्यान, अनुभव अैर रुचि आदि सीमित होते हैं।
2. **वैज्ञानिकता के प्रति झुकावः** व्यवहारवादी विचारक अपने अध्ययन को वैज्ञानिक बनाने की चेष्टा करते हैं। **हरबर्ट साइमन** ने लोक प्रशासन का अध्ययन करते समय क्या होना चाहिए, के स्थान पर जो है, उसका विवेचन किया। व्यवहारवादियों का मत है कि लोक प्रशासन एक वैज्ञानिक अध्ययन का विषय है, इसको केवल मूल्यों सम्बन्धी विवेचन करने की अपेक्षा तथ्यसंगत, वास्तविक और व्यावहारिक बनाया जाना चाहिए। इसके निष्कर्ष स्थायी, निश्चित एवं सर्वव्यापी होने चाहिए। इसके लिए वैज्ञानिक अध्ययन प्रणाली को अपनाया जाना चाहिए। ऐसा होने पर ही लोक प्रशासन का अध्ययन सत्य, निष्पक्ष, गहन एवं विश्वसनीय बन पायेगा। यही कारण है सभी व्यवहारवादी विचारक निरीक्षणवादी, अनुभववादी एवं प्रयोगवादी शोधकर्ता बन गये हैं।
3. **सन्दर्भ विशेष का महत्वः** व्यवहारवादी विचाराकों की यह भी मान्यता है कि लोक प्रशासन की समस्याओं का विवेचन वैज्ञानिक विधि के सन्दर्भ विशेष में ही किया जाना चाहिए। हम कह सकते हैं कि यह द ष्टिकोण ज्ञान की पूर्णता या निरपेक्षता में विश्वास नहीं करता। इस द ष्टिकोण की यह मान्यता है कि ज्ञान की सत्यता और उपयोगिता उसके सन्दर्भ विशेष पर ही निर्भर करती है। ज्ञान के दूसरे अन्य विषयों के साथ उसके अन्तर्सम्बन्ध महत्व रखते हैं।

4. **अनुभवमूलक सिद्धान्तः** व्यवहारवादी विचार अनुभववाद से अत्यधिक प्रभावित हैं। क्योंकि व्यवहारवादी विचारक अनुभव, निरीक्षण, प्रयोग, सन्दर्भ-ज्ञान और परिस्थिति के विवेचन के आधार पर समस्याओं का विवेचन करते हैं। इन विचारकों का मानना है कि लोक प्रशासन भी एक स्वतन्त्र अध्ययन विज्ञान के रूप में अपनी स्वतन्त्र विचारधाराओं को स जित कर सकने में समर्थ है।
5. **व्यक्ति और प्रशासन का सिद्धान्तः** व्यवहारवादी उपागम की यह महत्वपूर्ण विशेषता है कि इसमें व्यक्ति के प्रशासनात्मक संगठन के साथ सम्बन्ध पर विशेष ध्यान दिया जाता है। इसमें प्रशासन व व्यक्ति के कार्य करने के उद्देश्य, निर्णय लेने की प्रक्रिया और अधिकार के स्वरूप पर विशेष विचार किया जाता है।
6. **अनौपचारिक सम्बन्धों का अध्ययनः** व्यवहारवादी उपागम मनुष्यों के अनौपचारिक सम्बन्धों का अध्ययन करने पर विशेष बल देता है, क्योंकि प्रशासनिक संगठनों में यदि केवल औपचारिकतापूर्ण व्यवहार रखा जाये तो यह कभी-कभी अव्यावहारिक एवं अमानवीय भी हो सकता है। प्रशासन में भी इस प्रकार की अनेक समस्याएँ होती हैं जिनमें मानवीय द ष्टिकोण को महत्व दिया जाना आवश्यक होता है। इसके अतिरिक्त लोक प्रशासक भी मानव ही होते हैं, अतः उनके अनौपचारिक सम्बन्धों का महत्व और भी बढ़ जाता है।
7. **नेत त्व का गुणः** यह द ष्टिकोण इस बात पर बल देता है कि लोक प्रशासन में नेत त्व के ऐसे गुण होने चाहिए जिनके कारण वह अपने अधीनस्थ व्यक्तियों से अपने कार्य में सहयोग प्राप्त कर सके व उनको कुशलतापूर्वक नेतत्व कर सकें।
8. **अन्तर्निर्भरता और अन्तर्अध्ययन सम्बन्धी ज्ञान की समन्वित पुष्टिः** व्यहारवादी उपागम अन्तर्निर्भरता और अन्तर्अध्ययन सम्बन्धी ज्ञान की एक समन्वित द ष्टि है। एक ओर जबकि यह उपागम लोक प्रशसन के अन्तर्शास्त्रीय अध्ययन पर बल देता है तो दूसरी ओर वह लोक प्रशासन को एक स्वतन्त्र विज्ञान मानता है।

योगदान

लोक प्रशासन के अध्ययन के क्षेत्र में व्यवहारवादी द ष्टिकोण 1960 के आस-पास सर्वोच्च शिखर पर था। इस द ष्टिकोण के लोक प्रशासन मे योगदान को निम्नांकित बिन्दुओं से स्पष्ट किया जा सकता हैः

1. **विश्लोषणात्मक एवं व्याख्यात्मक सिद्धान्त के समारम्भ का सूचकः** लोक प्रशासन को व्यवहारवादी द ष्टिकोण सभी समाज विज्ञानों में विश्लेषणात्मक एवं व्याख्यात्मक सिद्धान्त के समारम्भ का सूचक है। इस द ष्टिकोण से लोक प्रशासन के अध्ययन को एक नवीन द ष्टि, नवीन सोच, दिशा-बोध एवं नया स्वरूप प्राप्त हुआ है।
2. **वैज्ञानिक अनुभववादः** व्यवहारवाद ने अपने वेज्ञानिक अनुभववाद के माध्यम से लोक-प्रशासन को नवीन द ष्टि तथा नवीन द ष्टि तथा नवीन-क्षेत्र प्रदान किया। वयवहारवादी विचरकों ने औपचारिक द ष्टिकोण के साथ व्यवहारवादी मान्यताएँ जोड़कर उसे पूर्ण बनाने का प्रयास किया है।
3. **सन्दर्भ के महत्त्व का प्रतिपादनः** व्यवहारवादी द ष्टिकोण ने लोक प्रशासन के विद्वानों को सन्दर्भ का महत्व बताया है। यह द ष्टिकोण लोक प्रशासन के अध्ययन को मनोविज्ञान, समाजशास्त्र, मानवशास्त्र, अर्थशास्त्र और राजनीतिशास्त्र के सिद्धान्तों, पद्धतियों, उपलब्धियों तथा द ष्टिकोणों को नजदीक लाने में सफल रहा है।
4. **लोक प्रशासन को व्यावहारिक विषय बनाानः** व्यवहारवादी द ष्टिकोण या उपागम ने लोक प्रशासन को एक वैचारिक अध्ययन विषय के स्थान पर व्यावहारिक अध्ययन का विषय बनाया है तथा उसे केवल वर्णनात्मक विषय से विश्लेषणात्मक विषय की ओर उन्मुख किया है।
5. **लोक प्रशासन का सम्बन्ध 'क्या होना चहिए' की जगह पर 'क्या है' से स्थापित करनाः** व्यवहारवादी द ष्टिकोण ने लोक प्रशासन के मूल्यों को स्वतन्त्र बनाने की चेष्टा की है। उसे आधुनिकता और एकता प्रदान करने से उसका सम्बन्ध 'क्या होना चाहिए' की जगह पर 'क्या है' से स्थापित किया है।
6. **नवीन द ष्टि प्रदान करनाः** व्यवहावादी द ष्टिकोण ने अपने निष्कर्षों के माध्यम से लोक प्रशासन को नवीन द ष्टि, नवीन पद्धति, नये मापन और नवीन विषय-क्षेत्र प्रस्तुत किये हैं।
7. **शोध का विषय बनानाः** व्यवहावादी द ष्टिकोण से सैद्धान्तिक प्रस्थापनाओं को यथार्थ के सन्दर्भ में शोध का विषय बनाया जा सकता है।

8. **प्रविधियों एवं तकनीकों का प्रयोगः** व्यवहारवाद ने लोक प्रशासन में नवीन और परिष्कृत प्रविधियों तथा तकनीकों के प्रयोग का सम्भव बनाया है।

व्यवहारवादी उपागम की आलोचनाः इस उपागम की आलोचना निम्नलिखित आधारों पर की जा सकती हैः

1. **अपने सिद्धान्तों के प्रतिपादन में कट्टीरपंथीः** व्यवहारवादी विचारा जहाँ एक ओर अपने निष्कर्षों तथा मान्यओं का सापेक्ष मानते हैं वहीं दूसरी ओर वे उस समय तक किसी के अस्तित्व को महत्व देने के लिए तैयार नहीं होते जब तक कि उसे गिना, ताला या मापा नहीं जा सकता। इस प्रकार ये भी धार्मिक कट्टरपंथियों के समकक्ष बन जाते हैं।
2. **लोक प्रशासन को विज्ञान मानने की बात अनिश्यपूर्णः** व्यवहारवादी विचारकों द्वारा अभी तक मानव व्यवहार का विज्ञान प्रस्तुत नहीं किया जा सका है। इतने समय बाद भी लोक प्रशासन को एक विज्ञान के रूप में मानने की बात अभी अनिश्चयपूर्ण बनी हुई है।
3. **तथ्यों तथा आँकड़ो को एकत्रित करने में व्यस्तः** व्यवहारवादी विचारक अध्ययन की पद्धति पर अत्यधिक बल देते हैं। अनेक बार यह देखा गया है कि व्यवहारवादी विचारकों ने महत्वपूर्ण विषय को छोड़कर प्रायः महत्वहीन विषयों के सम्बन्ध में तथ्य और आँकडों को एकत्रित करने में अपने आपको आवश्यकता से अधिक ही व्यस्त रखा है।
4. **लोक प्रशासन को प्राकृतिक या भौतिक विज्ञानों के समकक्ष बनाने का दुराग्रहः** व्यवहारवादी विचारक यह भूल जाते हैं कि प्राकृतिक विज्ञानों तथा लोक प्रशासन के तथ्यों में अत्यधिक अन्तर है। वास्तव में लोक प्रशासन को प्राकृतिक या भौतिक के समकक्ष बनाने का प्रयास करना अत्यधिक कठिन है।
5. **व्यवहारवादी सिद्धान्त निर्माण एवं सत्यापन प्रक्रियाएँ अपर्याप्तः** कुछ आलोचकों ने व्यवहारवादी सिद्धान्त निर्माण ओर सत्यपान प्रक्रियाओं को अपर्यात माना है।
6. **अन्तिम मूल्यों के सम्बन्ध में स्पष्ट नहींः** कुछ आलोचकों का विचार है कि व्यवहारवादी विचारकों ने अन्तिम मूल्यों के विवेचन में कुछ नहीं कहा है। यह असन्तोषजनक स्थिति है। कोई भी उद्देश्यहीन कार्य प्रशासनिक कार्य की कोटि में कैसे हो सकता है ?
7. **इतिहासेत्तर प्रकृतिः** व्यवहारवादी विचारकों की प्रकृति इतिहासेत्तर है। उनकी पद्धति में अब तक जो कुछ हो चुका है उसकी नियमित अवहेलना की गयी है।
8. **लघु-स्तरीय एवं अधिक महत्वपूर्ण घटनाओं पर अधिक ध्यानः** व्यवहारवादियों ने अपनी समस्त शाक्ति लघु-स्तरीय एवं महत्वपूर्ण घटनाओं के अध्ययन में लगा दी है । इन्होंने व्यष्टि और समष्टि दोनों स्तरों पर अनेक महत्वपूर्ण प्रश्नों को उपेक्षित किया है।
9. **रूढ़िवादीः** व्यवहारवादी विचारक अपने आपको मूल्य निरपेक्ष तो मानते ही हैं किन्तु वास्तव में वे स्थायित्व के पक्षधर हैं और इस प्रकार रूढ़िवादी बन गये हैं।
10. **तात्कालिक गम्भीर समस्याओं के विवेचन से दूरः** व्यवहारवादी द ष्टिकोण के आलोचकों का कहना है कि व्यवहारवादियों ने तात्कालिक गम्भीर समस्याओं से अपने आपको प थक करके आरामकुर्सी वाले बुद्धिजीववियों में सम्मिलित कर लिया है।
11. **उपयोगिता पर प्रशन-चिन्हः** व्यवहारवादी विचारकों ने वैज्ञानिकता की आड़ में जिस तरह से कल्पना-शक्ति का सहारा लिया है, उसके कारण इस वाद की उपयोगिता पर ही प्रशन-चिन्ह लग गया है।
12. **सिद्धान्तवादीः** व्यवहारवादी विचारक सिद्धान्तवादी रहे हैं। तथा उनके निष्कर्षो का प्रशासनिक वास्तविकताओं के जगत में कोई उपयोग नहीं था क्योंकि वहाँ मूल्य, इतिहास, संस्कृति, परम्पराएँ आदि सब घुले-मिले रहते हैं।

Unit-III

अध्याय-11

एफ डब्लू रिग्ज
(F. W. Riggs)

प्रस्तावना
(Introduction)

तुलनात्मक लोक प्रशासन के विकास में कतिपय समकालीन विचारकों में सम्भवतः सर्वप्रथम प्रो.रिग्स हैं जिनका योगदान उल्लेखनीय माना जाता है। उन्होंने लोक प्रशासन के अध्ययन के प्रचलित मॉडलों विशेषकर मैक्स वेबर के आदर्श मॉडल की आलोचना करते हुए उन्हें अपर्याप्त बताया है। विकासशील देश के लिए मैक्स वेबर मॉडल तर्कसंगत नहीं है। प्रो. रिग्स ने मुख्य रूप से प्रशासनिक प्रणालियों एवं वातावरण के बीच होने वाली अन्तर क्रियाओं पर संकल्पना बनाने में रुचि ली तथा अवधारणाओं एवं सिद्धान्तों की खोज की। उन्होंने अपना ध्यान विकासशील एंव परिवर्तनशील समाजों की प्रशासनिक व्यवस्था के अध्ययन पर केन्द्रित किया। इन अध्ययनों का प्रशासनिक एंव पारिस्थितिक वर्णन करने के लिए उनके द्वारा 'प्रिज्मैटिक साल' मॉडल तयार किया गया। तुलनात्मक लोक प्रशासन में प्रो. रिग्स के योगदान का अध्ययन निम्नलिखित प्रकार से किया जा सकता हैः

जीवन परिचय
(Life Style)

फ्रेड डब्लू रिग्ज का जन्म 1917 में चीन में कुललिगं नामक शहर में हुआ था। इन्होंने 1948 में कोलम्बिया विश्वविद्यालय से राजनीतिशास्त्र में शोध उपाधि ग्रहण की तथा 1948-51 के दौरान नीति संगठन में शोधकर्ता के रूप में कार्य किया। सन् 1951-55 तक रिग्ज ने न्यूयार्क स्थित लोक प्रशासन निपटान कार्यालय में निर्देशक के रूप में कार्य किया। उन्होंने कई विभिन्न विश्वविद्यालयों जैसे कि मेल यूनिवर्सिटी, फिलीपाईनज यूनिवर्सिटी आदि में Visiting Professor के रूप में भी कार्य। सन् 1962-63 में उन्होंने हावर्ड यूनिवसिर्टी के ईस्ट-वैस्ट केन्द्र पर एक मुख्य विशेषज्ञ (Senior Specialist) के रूप में भी कार्य किया। सन् 1963 में जब तुलनात्मक प्रशासनिक समूह (CAG) (जो अमेरिकन सोसाईटी ऑफ पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन की एक कमेटी थी बनाया गया, प्रो. रिग्स ने इस समूह के प्रथम अध्याय के रूप में पदभार सम्भाला और वे इस पद पर 1970 तक कार्यरत रहे। सन् 1966-67 के दौरान उन्होंने Center for Advanced Study in Behavionral Science, Stanford में एक मैम्वर के रूप में कार्य किया। सन् 1967 में हावर्ड विश्वविद्यालय में राजनीति विज्ञान के प्रोफेसर नियुक्त हुए।

प्रमुख पुस्तकें एवं लेख
(Books & Articles)

प्रो.रिग्ज एक अच्छे लेखक रहे हैं। उनकी प्रमुख पुस्तके एवं लेख निम्नलिखित हैं-

(1) ''द इकोलोजी आफॅ एडमिनिस्ट्रेशन;

(2) एडमिनिस्ट्रेशन इन डिवेलपिंग कन्ट्रीजः द थ्योरी आफॅ प्रिज्मेटिक सोसायटी;

(3) मॉडल्स एंड प्रायोरिटीज ऑफ द कम्पेरेटिव स्टडी ऑफ पब्लिक एडमिनिस्ट्रशेन

(4) थाइलैण्ड : द मार्डेनाइजेशन ऑफ ए ब्यूरोक्रेकिपॉलिटी

लेखों में (i) ''अग्रेरिया एंड इन्डस्ट्रिया टूवार्ड्स टाइपोलोजी ऑफ कम्पेरेटिव पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन''; (ii) साल मॉडल : इन इकोलोजिकल अप्रोच टू द स्टडी ऑफ कम्परेटिव पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन'' (iii) प्रिज्मेटिक सोसासटी रिविजिटेड प्रमुख रूप से उल्लेखनीय हैं।

मुख्य योगदान
(Main Contribution)

तुलनात्मक लोक प्रशासन के क्षेत्र में रिग्ज का योगदान अत्याधिक है। तुलनात्मक लोक प्रशासन के सम्बन्ध में उन्होंने बहुत सारे उपागम एवं मॉडल का निर्माण किया इनके योगदान का संक्षिप्त वर्णन निम्न प्रकार है-

उपागम
(Approaches)

(अ) रिग्ज ने मुख्यतः दो उपागमों का अपने अध्ययन में प्रयोग किया-: 1. पारिस्थतिकीय उपागम 2. सरंचनात्मक प्राकार्यात्मक उपागम। इनका संक्षिप्त वर्णन निम्नलिखित है-

पारिस्थितिकीय उपागम

प्रत्येक जीव अपने बाहरी वातावरण के विभिन्न घटकों से प्रभावित होता है। जीवन विज्ञान की इस मान्यता को प्रशासनिक एवं सामाजिक व्यवस्थाओं के सन्दर्भ में भी सत्य पाया गया है। इस द ष्टिकोण में यह जानने का प्रयास किया जाता है कि प्रशासनिक संस्थाएं तथा व्यवस्थाएं किस प्रकार समाज, मूल्यों, परम्पराओं, परिवर्तनों, अर्थव्यवस्था, बाजार, राजनितिक दलों तथा वर्गों से प्रभावित होती हैं। इन सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, संस्कृतिक तथा भौगोलिक कारकों का प्रशासन पर पड़ने वाले प्रभाव के अतिरिक्त प्रशासन का इन कारकों पर होने वाले प्रभाव भी पारिस्थितिकीय द ष्टिकोण में सम्मिलित है। चूंकि लोक प्रशासन मानव व्यवहार से युक्त जीवित संगठन है अतः प्रशासन एवं उसके पर्यावरण का परस्पर संहसंबंध समझना अति आवश्यक है।

रिग्ज से पहल जे. एम. गॉस. राबर्ट हाल, तथा रॉबट के. मर्टन इत्यादि ने परिस्थितिकीय उपागम को प्रयुक्त कर इसकी महत्ता को रेखांकित कर दिया था। किन्तु रिग्ज ने पारिस्थितिकीय उपागम को नई ऊंचाईयां प्रदान की हैं। उन्होंने थाईलैण्ड तथा फिलीपीन्स के अपने अध्ययनों के आधार पर यह सिद्ध किया है पर्यावरणीय परिस्थितियां किस प्रकार प्रशासन को प्रभावित करती हैं। **जे. एम. गॉस** के अनुसार - ''लोक प्रशासन की पारिस्थितिकी जनता, क्षेत्रफल, लोगों की भौतिक सामाजिक और प्रोद्योगिकी आवश्यकताओं, विचारों, तथा व्यक्तिगत एवं आपातकालीन अवस्थाओं इत्यादि का अध्ययन करती है।'' रिग्ज का मानना है कि केवल वही अध्ययन वास्तव मे तुलनात्मक हैं जो अनुभवमूलक, सामान्यपरक तथा पारिस्थितिकीय प्रकृति के होते हैं। चूंकि प्रशासनिक तंत्र ''व हद समाज'' का एक उपतंत्र या उपव्यस्था के समान है अतः प्रशासनिक, सांस्क तिक तथा आर्थिक तंत्रों के मध्य होने वाली अन्तर क्रियाओं का समुचित विश्लेषण किया जाना चाहिए। रिग्ज की यह द ढ़ मान्यता रही है कि किसी देश में लोक प्रशासन की प्रकृति को, उस देश के सामाजिक विन्यासों को भली भांति समझे बिना, विश्लेषित नहीं किया जा सकता है। संयुक्त राज्य अमेरिका, प्राचीन श्याम, फिलीपीन्स तथा थाईलैण्ड देशों के अध्ययन पर आधारित ''फ्यूज्ड'', ''प्रिज्मेटिक'' तथा ''डिफ्रेक्टेड'' समाजों के आदर्श प्रारूपों की रचना में पारिस्थितिकीय द ष्टिकोण की महीन भूमिका रही है। रिग्ज ने इन अध्ययनों में सामाजिक-आर्थिक, संचार तथा राजनितिक अवयवों को सम्मिलित किया था मनोवैज्ञानिक अवयवों को नहीं। एक अन्य शोध में रिग्ज ने भौगोलिक परिस्थितियों, समय, जनसांख्यिकीय, राष्ट्रीय मनोविज्ञान तथा सामाजिक प्रविधि के अन्य आयामों को भी सम्मिलित कर पारिस्थितिकीय उपागम की प्रशासनिक अध्ययनों में उपादेयता सिद्ध की है।

संरचनात्मक-प्रकार्यात्मक उपागम

फ्रेड रिग्ज के शोध कार्यों में संरचनात्मक-प्रकार्यात्मक उपागम का भी महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है। वास्तव में देखा जाए तो रिग्ज ने प्रशासनिक व्यवस्था को पारिस्थितिकीय द ष्टिकोण से विश्लेषित करने के लिए मुख्य रूप से सरंचनात्मक-प्रकार्यात्मक उपागम का सहारा लिया है। समाजशास्त्री टालकॉट पारसंस, रॉबर्ट के. मर्टन तथा आलमंड इत्यादि के अध्ययनों में यह उपागम

मुख्य केन्द्र बिन्दु रहा है। चूंकि समाज में अनेक प्रकार की संरचनाएं होती है जो अपने-अपने विशिष्ट प्रकार्य संपादित करती है और कोई भी प्रकार्य हो वह संरचना संपादित नहीं हो सकता है। इसी तथ्य को आधार बनाकर रिग्ज ने प्रत्येक समाज में पांच प्रकार के प्रकार्य महत्त्वपूर्ण माने हैं

(1) आर्थिक

(2) सामाजिक

(3) संचार से सम्बन्धित

(4) सांकेतिक

(5) राजनीतिक

प्रार्यात्मक अपेक्षाओं का यहीं विन्यास रिग्ज ने प्रशासनिक उप्रणालियों के लिए काम में लिया है किन्तु रिग्ज यह नहीं मानते हैं कि केवल उन्हीं पांच आयामों को संरचनात्मक-प्रकार्यात्मक उपागम में सम्मिलित करना चाहिए बल्कि उनकी व्यक्तिगत रूचि इन पांच पर रही है। यद्यपि सर्वप्रथम ड्वाइट वाल्डो (1955) ने लोक प्रशासन में संरचनात्मक-प्रकार्यात्मक के प्रयोग पर बल दिया तथापि इस उपागम के प्रयोगकर्त्ताओं में रिग्ज अग्रणी हैं। रिग्ज मे सर्वप्रथम 1975 में ''क षक-औद्योगिका'' प्रतिमान में संरचनात्मक-प्रकार्यात्मक उपागम का प्रयोग किया था।

कृषका-औद्योगिक प्रतिमान
(Graria-Industria Modle)

विकासशील देशों की प्रशासनिक व्यवस्थाओं के विश्लेषण के लिए रिग्ज ने कतिपय प्रतिमान विकसित किए है। रिग्ज ने सर्वप्रथम 1965 में क षक (Agraria) तथा औद्योगिका (Industria) प्रतिमान निर्मित किया। इस प्रतिमान के अुनसार कुछ समाज कृषि आधारित होते हैं तो कुछ समाज उद्योग प्रधान होते है। क षि प्रधान समाजों में रिग्ज ने चीन को तथा औद्योगिक समाजों में संयुक्त राज्य अमेरिका को

रिग्ज की क षक - औद्योगिक संरचनाएं

क्रं. सं क षका समाज	औद्योगिका समाज
(1.) आरोपित या मिले हुए मूल्य	(1.) अर्जित या उपलब्धि प्रधान मानक
(2.) क्षेत्रीयता या विशिष्टता	(2.) सार्वभौमिकता
(3.) विस्त त (फैले हुए) प्रतिमान	(3.) विभेषीकरण
(4.) सीमित सामाजिक एवं क्षेत्रीय	(4.) उच्चतर सामाजिक तथा क्षेत्रीय गतिशीलता
(5.) सरल एवं स्थिर व्यावसायिक	(5.) पूर्ण विकसित व्यावसायिक प्रतिमान
(6.) विभिन्न प्रकार के संस्तरणों या स्तरों का अस्तित्व	(6.) समानतावादी वर्ग व्यवस्था की उपस्थिति

सम्मिलित किया। कृषका समाज की संरचनाओं में परम्पराओं का बाहुल्य, आरोपित या मिले हुए मूल्यों (Ascriptive) से प्रेम, बिखरे हुए ढांचों (Diffused) की प्रधानता, सरल एवं स्थिर व्यावसायिक भिन्नताएं, क्षेत्रीयता या विशिष्टता (Particularism), विभिन्न प्रकार के सामाजिक संस्तरणं या स्तर (वर्ग) तथ सीमित सामाजिक तथा क्षेत्रीय गतिशीलता मुख्य विशेषताएं बतायी। औद्योगिक समाजों, की संरचनाओं में उपलब्धि प्रशासन मानकों को महत्त्व, सार्वभौमिकता की प्रव त्ति, कार्यो में विशेषकरण, उच्चतर सामाजिक तथ क्षेत्रीय गतिशीलता, पूर्ण विकसित व्यावसायिक प्रतिमान, समानतावादी वर्ग व्यवस्था की उपस्थिति इत्यादि मुख्य विषेशताएं वर्णित की गई।

क षका ⟶ संक्रमणकालीन ⟶ औद्योगिका

रिग्ज का मानना है कि निश्चित बिन्दु पर सभी समाज क षका से औद्योगिका के रूप में रूपान्तरित होते है। इस सम्बन्ध में बहुत से विद्वानों ने आपत्ति उठायी कि कोई भी समाज पूर्णतया कृषका या पूर्णतया औद्योगिका नहीं होता है की ओर बढ़ रहें

है जबकि औद्योगिका समाजों में भी क षका समाज के लक्षण अनिवार्य रूप से व्याप्त हैं। कुछ समाज इन दोनों के बीच (मिश्रित) की स्थिति के भी है। अतः 1957 में रिग्ज ने संक्रमणकालीन (Tranistia) नामक साम्यावस्था का प्रतिमान प्रस्तुत किया संक्रमणकालीन समाज वे माने गए जो क षका से औद्योगिका की ओर रूपान्तरित हो रहें हैं। संक्रमणकालीन समाज में दोनों प्रकार के समाजों के लक्षण समाहित माने गए।

रिग्ज के इस प्रतिमान की सीमाएं या कमियां आलोचनाओं की शिकार हुई। विद्वानों का मानना था कि-

(1) क षका- औद्योगिका प्रतिमान रूपान्तरित होते समाजों के अध्ययन मे सहायता नहीं करता है।

(2) प्रतिमान मिश्रित समाजों के विश्लेषण के लिए पर्याप्त आधार या मापदंड प्रस्तुत नहीं करता हैं क्योंकि आधुनिक एंव औद्योगिका समाजों में भी सदैव कुछ क षकीय गुण अवश्य रहते हैं।

(3) इस प्रतिमान में क षका से औद्योगिका की ओर गति को ''एक दिशात्मक'' मान लिया जाता है।

(4) या प्रतिमान मूल प्रशासनिक व्यवस्था के विश्लेषण पर बहुत कम बल प्रदान करता है जबकि प्रशासनिका व्यवस्था की पारिस्थितिकी पर अधिक जोर देता है।

क षका-औद्योगिका समाज प्रतिमान की विसंगतियों को देखते हुए रिग्ज ने एक नया प्रतिमान प्रस्तुत किया जो ''संयोजि-समपार्श्वीय-विवर्तित'' प्रतिमान कहलाता है।

संयोजित-समपार्श्वीय-विवर्तित प्रतिमान

(Fused - Prismatic - Diffracted Model)

संयोजित (फ्यूज्ड) - समपार्श्वीय (प्रिज्मेटिक) - विवर्तित (डिफ्रेक्टेड) मॉडल रिग्ज द्वारा सन् 1959 में प्रतिपादत किया गया था। इस प्रतिमान में संयोजित समाज, कृषका का; समपार्श्वीय समाज, संक्रमणकालीन का; तथा विवर्तित समाज, औद्योगिका का प्रतिनिधित्व करते हैं; किन्तु इस मॉडल मे रग्जि ने बहुत से सुधार किया हैं।

रिग्ज के अनुसार किसी समाज को बहुकार्यात्मकता की द ष्टि से देखें तो सयोजित (Fused) समाज वे है। जहां कार्य विस त (Diffused) अर्थात् फैले हुए, बिखरे हुए रहते हैं। संयोजित समाजों में एक संरचना के पास नाना प्रकार के (बहुसंख्यक) कार्य रहते हैं। कार्यात्मक द ष्टि से जिन समाजों में विशिष्टता (Specificity) आ जाती है वे विवर्तित (Diffracted) समाज हैं अर्थात् इन उच्च स्तरीय समाजों में प्रत्येक कार्य को कोई विशिष्ट संस्था या संरचना करती है। इन दानों के बीच की स्थिती वाले समापार्श्वीय (Prismatic) समाज है। जो संयोजित समाजों की अवस्था से विवर्तित समाजों के बाहर बढ़ रहे होते हैं। रिग्ज इस तथ्य पर बहुत बल देते हैं कि '' मैनें संयोजित-समपार्श्वीय-विवर्तित समाजों का प्रतिमान, एक आदर्श प्रारूप एक रूप में प्रस्तुत किया है। यह आवश्यक नहीं है कि यथार्थ जगत में ऐसे समाज विशुद्ध रूप से मिल भी जांए।'' फिर भी रिग्ज का मानना है कि प्राचीन थाईलैण्ड संयोजित समाज का पर्याय था, आज का अमेरिका विवर्तित समाज है तथा समपार्श्वीय समाज में थाईलैण्ड एवं फिलिपीन्स को (भारत एवं आधुनिक चीन) भी रखा जाता है।

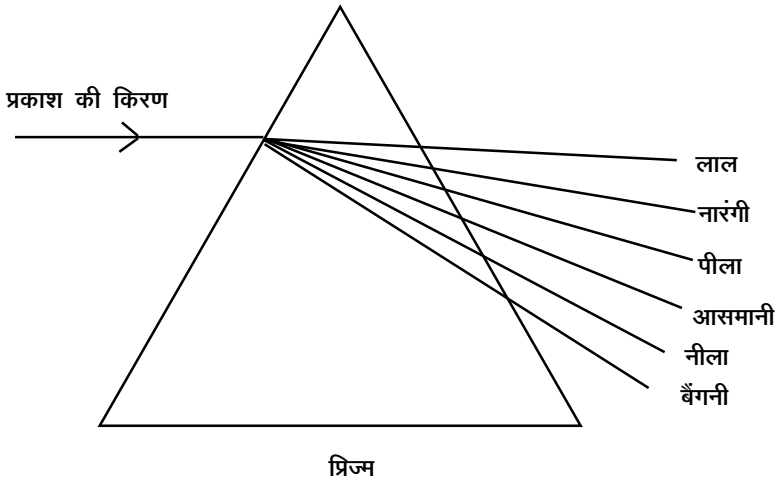

रिग्ज का यह प्रतिमान मूलतः भौतिकशास्त्र के एक सिद्धांत पर आधारित हैं। कांच के त्रिकोणात्मक एवं पारदर्शी टुकड़े को प्रिज्म (Prism) कहते है। यह प्रिज्म किसी भी साधारण वैज्ञानिक प्रयोगशाला (स्कूल/महाविद्यालय) या बाजार में सहजता से मिले सकता है प्रकाश की कोई किरण जब प्रिज्म में प्रवेभ करके बाहर निकलती है तो वहि सप्तरंगी इन्द्रधनुष के रूप में स्पैक्ट्रम बनाती है।

यहां प्रकाश की किरण एक रूप में प्रिज्म में प्रवेश करने से पूर्व की स्थिति में संयोजित समाजों की प्रतीक है। प्रकाश की किरण में सात रंग प्राकृतिक रूप से विद्यमान है। उसी प्रकार संयोजित समाजों में एक संरचना कई प्रकार के कार्य करती है। प्रकाश की किरण प्रिज्म अर्थात् समपार्श्व (जिसकी सभी बगल समान हों) में प्रवेश करके कंपन के दौर से गुजरती हैं। उसी प्रकार संयोजित समाज भी संक्रमणकाल के दौर से गुजरते है। प्रिज्म से बाहर आकर किरण सात रंगों में स्पष्टताः विभक्त हो जाती है। ये तो प्राकृतिक रंग बैंगनी, नीला, आसमानी, हरा, पाला, नारंगी तथा लाल (V.I.B.G.Y.O.R) है। प्रिज्म किरणें को बाहर निकल कर प थक् प थक् छितराना विवर्तन (Difraction) कहलाता है। रिग्ज ने विवर्तन के लिए पहले ''रिफ्रेक्शन'' (Refraction) शब्द प्रयुक्त किया था। वस्तुतः रिफ्रेक्शन तो प्रकाश मार्ग या कोण बदलने का (अपवर्तन) पर्याय था जो इस प्रतिमान की सही व्याख्या नहीं करता था अतः उन्होंने विवर्तित समाजों का (Refracted) के बजाय (Diffracted) नाम दिया। प्रकाश का सात रंगों में विभक्त होना या विवर्तित समाजों में प्रत्येक कार्य विशिष्ट संस्थाओं द्वारा समादित करना समानार्थक है।

यहां ''एक्स'' का तात्पर्य उस स्थान से है जहां वह समाज वास्तव में मिल सकता है। ''एक्स'' आदर्श स्थिति को दर्शाता है। ''एस'' प्राचीन थाईलैण्ड अर्थात् स्याम (पुराना नाम) को बताता है, ''टी'' आज के थाइलैण्ड (साठ के दशक का थाईलैण्ड) को बताता है, ''पी'' - फिलीपीन्स का बताता है जबकि ''ए'' - अमेरिका के लिए प्रयुक्त किया गया है। रेखचित्र से स्पष्ट है कि रिग्ज ने किसी भी देश के समाज को आदर्श के रूप में नहीं बताया है बल्कि स्याम को संयोजित समाजों की विशेषताओं से युक्त तो माना है किन्तु इसका झुकाव समपार्श्वीय की ओर है अर्थात् स्याम से भी प्राचीन समाज संयोजित का आदर्श उदाहरण है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् के थाईलैण्ड तथ फिलीपीन्स के बीच के समाज आदर्श समपार्श्वीय समाज हैं। विवर्तित समाजों में अमेरिका का नाम है किन्तु उसका झुकाव समपार्श्वीय की ओर है। आदर्श विवर्तित समाज बनाने के लिए अमेरिका में अभी और विशिष्टताएं आनी शेष है।

	संयोजित		समपार्श्वीय		विवर्तित
(1)	क्षेत्रीयता या केन्द्रित विशिष्टवाद	(1)	चयनवाद	(1)	सार्वभौमवाद
(2)	आरोपित (प्राप्त) मूल्य	(2)	प्राप्ति (आपाधापी)	(2)	उपलब्धि
(3)	कार्यात्मक विस त (बिखरे हुए)	(1)	बहुकार्यात्मकवाद	(1)	कार्यात्मक विशिष्टता

रिग्ज ने संयोजित - समापार्श्वीय - विवर्तित प्रतिमान के आदर्श प्रारूप विकसित करने के लिए चरों की ''पारसोनियन'' पद्धति (शोध प्रविधि टालकॉट पारसंस) को अपनाते हुए प्राक्कल्पना का निर्माण किया था ताकि विभिन्न समाजों को समझा जा सके। इन तीनों प्रकार के समाजों के प्रमुख लक्षणों को रिग्ज ने इस प्रकार विभाजित किया है।

रिग्ज के अनुसार संयोजित समाज में क्षेत्रीयता या केन्द्रिय विशिष्टवाद (Particularism) पर बल रहता है अर्थात् विशेषज्ञता या विशेषीव त संस्थाओं पर जोर नहीं बल्कि कुछ कार्य थोपे हुए रहते हैं जैसे भारत में खेती कार्य, क षक जाति करें, चमडें का कार्य पिछड़ी जाति करें, व्यापारिक कार्य महाजन ही करें, कुछ देश ऐसा करें कुछ न करें, कुछ शासक हों, कुछ शासक हरें समपार्श्वीय समाजों में यह स्थिति चयनवाद (Selectivism) में परिवर्तित हो जाती है अर्थात् लोग एवं संस्थाएं इच्छा से कार्य चुनने लगती हैं जबकि विवर्तित समाजों में विश्वव्यापी विचार या सार्वभौमवाद (Universalism) का प्रसार हो जाता है अर्थात् स्वतंत्रता बढ़ जाती है। दूसरे लक्षण मूल्यों तथा प्रयासों से सम्बन्धित है। संयोजित समाज में आरोपति मूल्य (Ascriptive Value) प्रभावी रहते हैं अर्थात् जो प्रस्थिति घर-परिवार में प्राप्त हो जाए उसी को शिराधार्य मान कर व्यक्ति संतुष्ट रहता है। समापार्श्वीय समाजों में व्यक्ति प्राप्ति (Attainment) पर जोर देता है अर्थात् दुनिया की आपाधापी या भागदौड़ में जो मिल जाए जैसे भी मिल जाए उसे समेट लो। विवर्तित समाजों में उपलिब्धि (Achievement) अर्थात् विशेषीक त प्रयासों एवं कौशल से जो सफलता मिले, वह महत्त्वपूर्ण है। तीसरे लक्षण में संयोजत समाज कार्यात्मक द ष्टि से विस त्त (Functionally Diffuse)

अर्थात् बिखरे हुए होते है। तारतम्यता एवं एकीकरण का आभाव रहता है। समापार्श्वीय समाज में बहुकार्यात्मकवाद (Poly-Functionalism) पाया जाता है अर्थात् न कार्य बिखरा हुआ और न ही विशिष्टतायुक्त होता है। विवर्तित समाज में प्रत्येक संस्था कार्यात्मक द ष्टि से विशिष्टता (Functionally Specificitiy) प्राप्त रहती है।

(Ascriptive Value) प्रभावी रहते हैं अर्थात् जो प्रस्थिति घर-परिवार में प्राप्त हों जाए उसी को शिरोधार्य मान कर व्यक्ति संतुष्ट रहता है। समापार्श्वीय समाजों में व्यक्ति प्राप्ति (Attainment) पर जोर देता हैं अर्थात् दुनिया की आपाधापी या भागदौड़ में जो मिल जाए जैसे भी मिल जाए उसे समेट लो। विवर्तित समाज में उपलब्धि (Achievement) अर्थात् विशेषीक त प्रयासों एवं कौशल से जो सफलता मिले, वह महत्त्वपूर्ण है। तीसरे लक्षण में संयोजित समाज कार्यात्मक द ष्टि से विस त (Functionally Diffuse) अर्थात् बिखरे हुए होते है। तारतम्यता एवं एकीकरण का आभाव रहता है। समापार्श्वीयसमाजों बहकार्यात्म्कवाद व Poly-Functionalism) पाया जाता है अर्थात् न कार्य बिखरा हुआ और न ही विशिष्टतायुक्त होता है। विवर्तित समाज में प्रत्येक संस्था कार्यात्मक द ष्टि से विशिष्टता (Functionally Specificity) प्राप्त करती है।

बहुकार्यात्मक समाज

(Fused Society)

बहुकार्यात्मक समाज की अवधारणा को स्पष्ट करते हुए उदाहरण के रूप में रिग्स ने चीन तथा क्राान्तिपूर्ण थाईलैण्ड देशों को चुना। इन समाजों में कार्यों को कोई वर्गीकरण नहीं था तथा एक संरचना अनेक प्रकार से कार्य करती थी। ये समाज क षि पर बहुत अधिक निर्भर थे तथा उनका औद्योगीकरण या आधुनिकीकरण नहीं हुआ था। उनकी आर्थिक व्यवासायिक उस विनयम के कानून तथा परविर्तन व्यवस्था पर आधारित थी जिसे रिग्स ने 'पुनविर्तरण प्रारूप' कहा। देश के प्रशासन में शाही परिवार ने बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी थी। राजा तथा उसके द्वारा नामित आधिकार सभी प्रकार के प्रशासनिक, आर्थिक तथ अल्प कार्य स्वयं ही करते थे। आर्थिक और प्रशासनिक कार्य करने की कोई अलग व्यवस्था नहीं थी। जनता किसी भी चीज की आशा किये बिना राजा को अपनी सेवाएँ तथा भौतिक वस्तुएँ देकर उनके प्रति सम्मान प्रदर्शित करती थी। सरकार जनता के प्रति उत्तरदायी नहीं थी यद्यपि जनता सरकार के आदेशों को मानने के लिए बाध्य थी।

अल्पकार्यात्मक समाज

(Diffracted Society)

ये समाज सार्वभौमिक सिद्धान्तों पर आधारित हैं तथा इनके व्यवहार में भेद नहीं होता है, बहुत अधिक विशेषीकरण होता है तथा प्रत्येक संरचना एक विशेष कार्य करती है। आरोपित मान्यताएँ समाप्त हो जाती है। तथा उपलब्धि मान्यताओं का आगमन होता है। समाज अत्याधिक रूप से गतिशील तथा अल्पकार्यात्मक होता है। इन समाजों में खुली वर्ग संरचनाएँ होती है जिनके प्रतिनिधित्व विभिन्न संघ करते हैं। आर्थिक बाजार व्यवस्था पर आधारित होती है। बाजार का प्रभाव समाज के अन्य पहलुओं का प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष दोनों रूप से प्रभावित करता है। रिग्स ने इस 'बाजारक त' (मार्केटाइज्ड) समाज कहा है। विभिन्न संघ अलग-अलग कार्य करते है। संचार व्यवस्था तथा प्रौद्योगिकी बहुत अधिक विकसित होती है तथा सरकार सौहार्दपूर्ण जनसम्पर्क व्यवस्था को उच्च प्राथमिकता देती है। सरकार लोगों की आवश्यकताओं के प्रति सजग होती हैं तथा मानव अधिकारों की रक्षा करती है।

समपार्श्वीय समाज

(Prismatic Society)

रिग्स ने समपार्श्वीय समाजों के अध्ययन पर अपना ध्यान केन्द्रित किया। उनके अनुसार समपार्श्वीय समाज वह है जिसमे विशिष्टीकरण का स्तर, आधुनिक प्रौद्योगिकी के लेनदेन में आवश्यक भूमिकाओं का विशेषीकरण प्राप्त कर लिया हो परन्तु न भूमिकों को जोड़ने में असफल रहा हो। बहुकार्यात्मक और अल्कार्यात्मक के बीच का समाज समपार्श्वीय समाज है। यह इन दानों मॉडलों का 'केन्द्र-बिन्दु' है।

रिग्स ने समपार्श्वीय समाज को दोनों मॉडल प्रकारों के बीच स्थित केन्द्र-बिन्दु माना है जिसमें दानों के स्वीक त और वियोजित लक्षण शामिल होते है। उनकी विशिष्ट बहुरूपता होती है अर्थात् विभिन प्रकार की प्रणाली, रीतियाँ तथा द ष्टिकोण उपस्थित रहते हैं। फिर, औपचारिकता (वह सीमा जहाँ औपचारिक ढाँचे और वास्तविक रीतियों के बीच अन्तर हो) तथ अतिक्रमण (वह

सीमा जिसे प्रशासकीय व्यवहार कहा जाता है जिसका निर्धारण प्रशासकीय मानदण्ड से हो) होता है। समपार्श्विय समाज में परिवर्तन के लिए बाहर और भीतर दोनों ओर से दबाव पड़ता है। जब यह बाहरी होता है तो इसे 'बहिर्जात' कहा जाता है तथा जब यह भीतरी होता है तो इसे 'अन्तर्जात' कहा जाता है। उनके अनुसार औपचारिकता, बहुरूपता तथा अतिक्रमण आन्तरिक समापार्श्वी समाजिक तुलना में बाह्य समपार्श्वीय समाज से अधिक होते है। यथासम्भव कम से कम समय मे सामाजिक परिवर्तन को समाविष्ट करने के प्रयास में लगे समपार्श्वीय या संक्रान्तिपूर्ण समाजों को औपचारिकता, बहुरूपता तथा अतिक्रमण की समरूपताओं का अधिक सामना करना पड़ता है।

रिग्स मानते है। कि जहाँ तक प्रशासकीय प्राणी अपने सामाजिक, सांस्क तिक, राजनीतिक और आर्थिक वातावरण केन्द्र में परिचालित होती है। तथा प्रशासकीय प्रणाली अनवरत है, वहाँ तक इनका द ष्टिकोण लोक प्रशासन पर एक समेकित परिप्रेक्ष्य प्रस्तुत करता है। दोनों एक-दुसरे से अन्तःक्रिया करते हैं तथा एक-दूसरे को प्रभावित करते हैं। वे यह बात स्पष्ट शब्दों में कहते है कि अलग-अलग सामजिक परिवेश में प्रशासन अलग-अलग होते है। अतः वह प्रशासकीय प्रणाली तथा उस समाज के बीच स्पष्ट अन्तर्सम्बन्ध पर ध्यान आकर्षित करते हैं जिसमे वह प्रणाली आरोपित है।

आगे चलकर रिग्स ने अपने समापार्श्विक समाज के विषय में अपने मूल द ष्टिकोण को परिवर्तित किया है। 'समपार्श्विक समाज का पुनरावलोकन' (1975) नामक अपने प्रकाशन में उन्होंने यह माना कि उनकी एक परिमाणात्मक द ष्टिकोण द्वि-परिमाणात्मक द ष्टिकोण पर आधारित समपार्श्विक समाज की नीवन व्याख्या प्रस्तुत की। मूल परिणाम विभेदीकरण के स्तर का था तथा इसके साथ ही परिमाणात्मक समाजों को तीन प्रकार के समेकित, समपार्श्विक तथा वियोजित समाजों में वर्गीकृत किया था। अपने नवीन प्रतिपादन में रिग्स ने विभेदीकृत समाज की संरचनाओं में सगंठन के अंश का दूसरा अध्याय जोड़ा है। सामाजिक ढाँचे में बुरे-समेकन या समन्वय के अभाव की सम्भावना विभेदीकरण की प्रक्रिया का साथ देती है। उनके अनुसार विभेदीकृत सामाजिक प्रणालियाँ समेकन स्तर बुरे-समेकन पर पदासीन हो सकती हैं। फिर वियोजित एवं समापर्श्विक के दो आधारभूत सामाजिक मॉडल समेकन के स्तर के आधार पर लघु समूहो में उपविभजित हैं। इन वियोजित समाजों को अर्थ-वियोजित, अस्थि-वियोजित तथा नियो (Neo) समाजों के रूप में वगीकृत किया गया है इसी प्रकार समापर्श्विक समाज कें भी अस्थि-समपर्शिवक, अस्थि-समपार्श्विक तथा नियो-समपार्श्विक समाजों में विभाजित किया गया है। इस पुननिर्धारण का आशय यह है कि समपार्श्विक मॉडल ऐसे समाज को भी अपने में सम्मिलित करेगा जो विभेदीकृत के साथ बुरे-समेकित भी है। रिग्स दावा करते है कि द्वि-परिमाणत्मक द ष्टिकोण में समपार्श्विक दशाओं के अंबीकरण के लाभ सम्मिलित होते हैं जिन्हें अल्पविकसित देशों के साथ विकसित देशों सहित विभेदीकरण के किसी भी स्तर पर समाज में पायी जा सकती है।[1]

रिग्स के अनुसार समपार्श्वीय समाज की तीन चारित्रिक विशेषताएँ होती हैं। ये हैः

(1) **विजातीयता (Heterogeneity)** : समपार्श्वीय समाज में अत्यधिक विषमता या विजितयता पायी जाती हैं इसका अर्थ है विभिन्न प्रकार की व्यवस्थाओं, व्यवहारों, द ष्टिकोणों, परम्पराओं, आदि की एक साथ उपस्थिति। यह असमान सामाजिक परिवर्तन का परिणाम होती हैं। पूर्णतया विरोधी द ष्टिकोणों के समानान्तर सहअस्तित्व के कारण एक समपार्श्वीय समाज में नया-पुराना, पूर्व-पश्चिम, गाँव-शहर, पूँजीवाद-समाजवाद जैसी परस्पर विरोधी प्रव त्तियाँ साथ-साथ चलती रहती है।

(2) **औपचारिकता (Formalism)** : ऐसे समाजों में संविधान, कानून, नियम, सरकार आदि औपचारिक रूप से विद्यमान रहते है। तथापि प्रभावी रूप से व्यवहारित मानदण्डों तथा वास्तविकताओं में अन्तर पाया जाता है। इसके द्वारा औपचारिक रूप से कहा गया और वास्तविक रूप से की गयी के बीच अन्तर देखने को मिलता है। यदि औपचारिक रूप से स्थापित और प्रभावशील रूप से व्यवहार के बीच एकरूपता रहती है तो यथार्थता है और यदि दोनों के बीच दूरी है तो औपचरिकता है। बहुकार्यात्मक और अल्पकार्यात्मक समाजें मे यथार्थता रहती है जबकि समपार्श्विक समाजों में औपचारिकता अधिक रहती है। वास्तव में प्रिज्मैटिक समाज में औपचारिकतावाद का स्तर अधिक उच्च होता है। अधिकारियों का वास्तविक व्यवहार कानूनी, अध्यादेशों, नियमों, नियन्त्रणं एवं निर्धारित मानदण्डों से मेल नहीं खाता है। फिर भी कुछ सार्वजनिक अधिकारी कानूनों का अक्षरतः अनुसरण करते हैं तो कुछ कानूनों की उपेक्षा करते हैं। स्वभाविक है कि ऐसा होने से सार्वजनिक अधिकारियों का नियमों, कानूनों एवं प्रकियाओं के कार्यान्वयन में अपनी इच्छानुसार कार्य करने की काफी हद तक स्वतन्त्रता मिल गया है। इससे प्रशासनिक चुस्ती समाप्त होती है और व्यवस्था में भ्रष्टाचार व्याप्त जाता है।

रिग्स के अनुसार यथार्थवाद-औपचारिकतावाद द्विभाजन की नीति का परिणाम यह है कि एक डिफ्रैक्टैड (Diffracted) समाज की प्रशासनिक संस्थाओं में औपचारिक सुधार द्वारा प्रशासनिक व्यवहार में परिवर्तन भी आ सकता है, जबकि एक प्रिज्मैटिक समाज में सम्भवतः इस प्रकार के सुधार केवल सतही प्रभाव डालते है। इसलिए प्रिज्मैटिक समाजों में किन्हीं सांस्थनिक परिवर्तनों को लाने के पूर्व सार्वजनिक अधिकारियों में यथार्थवाद को प्रोत्साहित करने की प्रव त्ति विकसित की जानी चाहिए।

(3) **परस्पर-व्यापन (ओवरलैपिंग)** (Overlapping) : एक समपार्श्वीय समाज में नये या आधुनिक संगठन निर्मित किए जाते हैं फिर भी वास्तव में पुराने या विभेदीक त संगठन समाज में प्रभुत्व जमाये रखते हैं। दूसरों शब्दों में जब संरचना का औपचारिक रूप प्रभावशाली नहीं बन जाता है तब परस्पर-व्यापन की समस्या उत्पन्न होती है। बहुकार्यात्मक और अल्पकार्यात्मक समाजों में यह समस्या होती है। यहाँ नवीन अथवा आधुनिक सामाजिक संरचनाएँ बन जाती हैं, किन्तु पुरानी संस्थाएँ सामाजिक व्यवस्था को प्रभावित करती रहती है। किसी प्रशासनिक उप-व्यवस्था में परस्पर-व्यापन को उस सीमा के आधार पर जाना जा सकता है। जिस सीमा तक निर्धारित प्रशासनिक व्यवहार अप्रशासनिक मानकों-राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक आदि से प्रभावित होते हैं। इनके अनेक पहलू होते है जैसे भाई-भतीजावाद, बहु-साम्प्रयवाद बाजार कैण्टीन की अर्थव्यवस्था, बहुमूल्यता एंव सत्ता और शक्ति का प थक्करण। यहाँ इन पहलू का अध्ययन करने का प्रयोग किया गया।

साल मॉडल

(Sala model)

रिग्स ने जब समपार्श्वीय समाज के लिए लोक प्रशासन का अध्ययन किया तो साल 'मॉडल' की रचना की। साल स्पेनिश भाषा का शब्द है। इसका प्रयोग प्रायः लैटिन अमरीकी देशों में सरकारी कार्यालयों के लिए किया जाता है। रिग्स ने समपार्श्वीय समाज में नौकरशाही के लिए 'साल' शब्द का प्रयाग किया है। परन्तु यह नौकरशाही का समानार्थक नहीं है। इसकी प्रव ति इतनी जटिल है कि इसमें नौकरशाही के समस्त लक्षणों को पाना सम्भव नहीं है। एक अल्पकार्यात्मक समाज में इसे 'ब्यूरो' तथा एक बहुकार्यात्मक समाज में इसे 'चेम्बर' कहते हैं।

रिग्स ने समपार्श्वीय समाज की नौकरशाही के लिए 'साल' शब्द का प्रयोग किया है। साल मॉडल, विकासशील देशों की जिन्हें सामपार्श्विक समाज कहता है, प्रशासन व्यवस्थाओं का आदर्श प्रकार से प्रतिनिधित्व करता है। इसमें प्राचीन एवं आधुनिक, दोनों प्रकार के प्रशासन की विशेषताएँ पायी जाती हैं। सरकारी अधिकारी प्रतियोगिता परीक्षाओं के आधार पर लिया जाते हैं। किन्तु चयन में भाई-भतीजावाद, बेईमानी, रिश्वत, आदि चलते हैं। 'साल' अधिकारी समाजिक कल्याण की उपेक्षा निजी उन्नति या धन प्राप्ति को प्राथमिकता देता है। उसका व्यवहार तथा निष्पादन पुरातनवाद या रूढ़िवाद से प्रभावित होता हैं जिसके फलस्वरूप नियमों एवं विनियमों का क्रियान्वयन व्यापक रूप से सही दिशा में नहीं किया जाता है।उन्होंने समपार्श्विक समाज को एक असन्तुलित राज्य कहा है जिसमें राजनीति नेताओं की संविधानिक शक्तियों के होते भी नौकरशाही का प्रभुत्व होता है। फलस्वरूप साल अधिकारी समापार्श्विक समाज की नीति-निर्माण प्रक्रियाओं में अल्पकार्यात्मक समाज की तुलना में अधिक प्रभावशाली भूमिका निभाते हैं। रिग्स का कथन है कि नौकरशाही के व्यवहार तथा प्रशासनिक क्रियाओं में घनिष्ठ सम्बन्ध है, एक नौकरशाह जितना अधिक शक्तिशाली होगा, उतनी ही वह प्रभावहीन प्रशासक होता है। इस प्रकार अपने हितों की रक्षा के लिए सत्ता प्राप्त करने के उद्देश्य से नियन्त्रित होने के कारण कानूनों से संचालन में अकुशलता, भ्रष्टाचार तथ भर्ती में पक्षपात 'साल' की विशेषताएँ हैं। इनका वर्णन अग्र प्रकार किया जा रहा है।

(1) **भाई-भतीजवाद** (Nepotism) : आवर्तित समाज में प्रशासनिक व्यवहार सर्वसम्मत मानकों से शासित होते है। संयुक्त समाज में विशिष्टवादी मानकों, जैसे परिवार, वंश आदि का अस्तित्व होता है। प्रिज्मैटिक समाज में आदर्श तथा व्यवहार या कथनी और करनी के बीच भारी अन्तर पाया जाता है। प्रिज्मैटिक समाज में परिवार एवं वंश पर आधरित सामाजिक व्यवस्था के ऊपर प्रशासन की औपचारिक संरचना को लाद दिया जाता है। ऐसी स्थिति में चयनवादी मानक प्रशासनिक व्यवहारों को निर्धारित करते हैं। अर्थात् यहाँ ऊपर से सामान्य हित और कानूनों के कठोर अनुशासन को महत्वपूर्ण बताया जाता है, किन्तु वास्तव में संकीर्ण और स्वार्थपूर्ण मनोव त्ति व्याप्त रहती है। सरकारी अधिकारियों की नियुक्ति में भाई-भतीजावाद का पूरा बोलबाल रहता है।

(2) **बहु-सम्प्रदावाद (Poly-Communalism)** : प्रिज्मैटिक समाज में एक ही साथ विभिन्न वर्ग, धर्म और जाति-समूह निवास करते है। जो परस्पर-विरोधी सम्बन्धों मे उलझे रहते हैं। ऐसे समाज में पाये जाने वाले-हित-समूहों का गठन साम्प्रदायक आधार पर होता है। इसमें बहु-साम्प्रदायिकता का विकास होता है। ये सम्प्रदाय आधुनिक संस्थागत रूप से गठित होते हुए भी कार्य परम्परागत रूप से करते हैं। बहु-सम्प्रदायवाद साल की प्रकृति को भी प्रभावित करता है। उसमें सरकारी अधिकारी सरकार की तुलना में अपने सम्प्रदाय के प्रति अधिक निष्ठावान होता है। बहु-सम्प्रदायवाद एवं चयन प्रशासनिक उप-व्यवस्था को प्रभावित करते हैं। फलस्वरूप, यहाँ विभिन्न समुदायों के बीच परस्पर तनाव एवं द्वेवषभाव रहता है और विरोधी समुदायों से युक्त सरकारी अभिकरणों के बीच असहयोग उत्पन्न हो जाता है।

कभी-कभी 'साल' अथवा इसका कोई उत्पन्न किन्हीं 'क्लैक्टस' के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित कर लेता है अथवा स्वयं एक 'क्लैक्टस' की भाँति कार्य करने लगता है। इसके द्वारा सर्वव्यापी सद्धिन्तों की सिर्फ बात की जाती है, फिर भी यह उपलब्धि और सार्वभौमिक मानकों को दिखावटी समर्थन देना जारी रखता है। इस प्रकार की प्रशासनिक उप-व्यवस्था एवं चयन के गठजोड़ की स्थिति में भ्रष्टाचार की स्म्भावना काफी अधिक होती है।

(3) **बाजार-कैण्टीन अर्थव्यवस्था (Bazar-Canteen Economy)** : एक विवर्तित (डिफ्रैक्टेड) समाज में आर्थिक व्यवस्था के क्षेत्र मे मूल्य-निर्धारण बाजार की माँग और पूर्ति तत्वों द्वारा किया जाता है। इसके विपरीत, मिले हुए (फ्यूण्ड) समाज में, इन कार्यों का निष्पादन कार्यक्षेत्रीय कारकों-शक्ति-सन्तुलन, प्रतिष्ठा, भाईचारा-आदि के द्वारा सम्पन्न होता है।

प्रिज्मैटिक समाज में मूल्य-निर्धारण बाजारीय एवं कार्यक्षेत्रीय कारकों के संयोजन का परिणाम होता है। रिग्स द्वारा प्रिज्मैटिक समाज में विनियम सम्बनधों का अध्ययन किया गया है। अपने प्रिज्मैटिक समाज की सैद्धान्तिक संरचना में उन्होंने बताया कि सरकारी अधिकारियों और उनके आदमियों के बीच विनियम सम्बन्धों का निर्धारण उन्हीं शर्तो के अनुसार होता है। जो खरीददार और विक्रेता के सम्बन्धों में रहती हैं। अधिकारी और आसामी के बीच स्थित अन्तर के अनुसार ही लोक-सेवाओं की कीमत में अन्तर आ जाता है। अधिकारी स्वयं के समुदाय को कम कीमत पर सेवाएँ प्रदान करता है और समुदाय के बाहर के लोगों से अधिक कीमत वसूल करता है। इस व्यवस्था को रिग्स ने बाजार कैण्टीन मॉडल का नाम दिया है। प्रिज्मैटिक समाज में मूल्यों का निर्धारण बाजार जैसा वातावरण तैयार करता है। काफी अधिक मोलभाव इसकी विशेषता है, यहाँ तक कि आर्थिक प्रशासन जैसे बजट बनाना, लेखा तैयार करना, कर जमा करना आदि भी इस मोलभाव से प्रभावित होते है। यह कर, छूट, फीस आदि की दर को प्रभावित करता है। कीमतों में अनिश्चितता के कारण सरकारी अधिकारियों को वेतन कम दिया जाता है और वेतन की कमी के कारण कर्मचारी अवैध तरीकों से अपनी आमदनी बढ़ाने को प्रयास करते हैं। इस प्रकार शासकीय व्यवहार के मानकों पर आर्थिक उपतन्त्र का प्रभाव पड़ता है और यह मानक प्रिज्मैटिक समाज के आर्थिक को भी प्रभावित करते हैं।

(4) **बहु-मूल्यता (Poly-Normativism)** : एक प्रिज्मैटिक समाज में मानकों और नियमों में नवीन समूह' पारस्परिक व्यवहार प्रणालियों के साथ-साथ विद्यमान रहते हैं। समाज में विभिन्न वर्गो के व्यवहार के मानकों के सन्दर्भ में कोई सर्वसम्मति नहीं होती । 'बहुमानकवाद' की इस प्रकार की स्थिति का प्रभाव 'साल' पर पड़ता है, जहाँ सरकारी अधिकारी सार्वजनिक रूप से तो वस्तुनिष्ठता, सार्वभौमिकता और उपलब्धि उन्मूल मानकों के पालन का दावा करते है। परन्तु व्यवहार में वे व्यक्तिवादी आरापेपित मानकों एवं विश्ष्टितावादी रीतियों को मानते हैं। वे पद-स्थिति की परम्परागत कठोर पद-सोपानात्मक व्यवस्था का भेद करते हैं। ये अधिकारी दावा करते हैं कि वे अपने व्यवहार में विकासयुक्त मानकों का अनुसरण करते हैं, जबकि वास्तव में वे परम्परागत व्यवहारों का अनुसरण कर रहे होते हैं।

प्रिज्मैटिक समाज में सार्वजनिक सेवा में चयन सामान्यतः एक खास समूह तक ही सीमित होता है। अगर भर्ती शिक्षा, प्रतियोगी परीक्षाओं एवं योग्यता के आधार पर होती भी है, तो सेवाओं में उन्नति के अवसर सबमें वरिष्ठता एवं उच्चाधिकारी से मिलने वाले समर्थन पर ही निर्भर करती हैं। सामान्य नागरिक प्रशासन के प्रति बहुमानकवाद होता है। ये अपने लाभ के लिए नियामों का उल्लंघन करने को तैयार रहते हैं परन्तु आशा करते हैं कि सावर्जनिक अधिकारी ईमानदार बने रहेगें और कानून के अनुसार प्रशासन करेगें।

(5) **शक्ति का बँटवार-अधिकार एवं शक्ति के बीच द्वन्द्व (Separation of Authority and Control)** : प्रिज्मैटिक समाज की सत्ता-संरचना में केन्द्रीक त अधिकारों की संरचनाओं तथा स्थानीयक त नियन्त्रण के बीच परस्पर-व्यापन पाया जाता है। ऐसे समाज में अधिकार एवं निमन्त्रण का प थक्करण होता है। साल के अधिकार तथा समाज के नियन्त्रण की

संरचनाओं-जो बहु-सम्प्रदायवाद एवं बहु-मानकवाद पर आधारित हैं-के बीच परस्पर-व्यापन होता है। इस प्रकार प्रशासनिक कार्य प्रशासनिक संरचनाओं के अतिरिक्त गैर-प्रशासनिक संरचनाओं द्वारा भी सम्पारिद किया जाते है। इस प्रकार परस्पर-व्यापन राजनीतिज्ञों एवं प्रशासकों के सम्बन्धों को प्रभावित करता है। इससे प्रशासनिक क्षेत्रों में राजनीति हस्तक्षेप की घटना का विकास होता है। राजनीतिज्ञों के द्वारा यह महसूस किया जाता है कि प्रशासकों के द्वारा अपना काम नहीं किया जा रहा है। और इसलिए वे इन कार्यों को स्वयं करने का प्रयास करते है। दूसरी ओर, प्रशासकों के द्वारा यह महसूस किया जाता है कि रानीतिज्ञों के द्वारा अपनी कार्य-सीमा का उल्ल्घन किया जा रहा है और उनके वैधानिक कार्यों में अनिधक त हस्तक्षेप किया जा रहा है।

सामान्यता, प्रिज्मैटिक समाज में रिग्स के अनुसार एक असन्तुलित राजतन्त्र पाया जाता है जिसके अन्तर्गत राजनीति -प्रशासनिक तन्त्र पर प्रशासकों का प्रभुत्व होता है। इसके बावजूद राजनीतिज्ञों के पास आपैचारिक रूप से नीति-निर्माण का अधिकार विद्यमान होता है। इस प्रकार एक विवर्तित समाज के प्रशासनिक तन्त्र की अपेक्षा 'साल' प्रशासकों की भूमिका अधिकार प्रभावकारी होती है। प्रिज्मैटिक समाज में एक प्रशासनिक अधिकारी साल के उत्पादकता के स्तर को पर्याप्त रूप से प्रभावित करता है। रिग्स ने सुझाया है कि प्रशासनिक उत्पादकता और अधिकारीतन्त्रीय सत्ता के बीच एक विपरित अनुपात होता हैः अधिकारी जितने अधिक शक्तिशाली होते है, प्रशासक के रूप में वे उतने ही कम प्रभावशील होते हैं। साल के विभिन्न लक्षणों में से कुछ हैं : लोगों के प्रति उदासीनता, प्रशासनिक भर्ती-व्यवस्था में स्वजन-पक्ष, भ्रष्टचार, अप्रभावी प्रशासन, उपव्यय आदि।

परिर्वतन की समस्या

(Problem of Change)

समपार्श्वीय समाजों में परिवर्तन के दो स्त्रोत होते हैं

(क) आंतरिक दबाव

(ख) बाह्य दबाव

विदेशी अनुदान, तकनीकी एवं औद्योगिकी सहायता को रिग्ज ने बाह्य (Exogeneous) परिवर्तन का स्त्रोत माना है जबकि प्रशासनिक सुधार इत्यादि को आंतरिक (Endogeneous) परिवर्तन के रूप में देखा है। यदि दोनों कारकों से परिवर्तन हो तो उस सम स्त्रोतजात (Equi-Genetic) कहा है। रिग्ज के अनुसार यदि बाह्य कारकों से परिवर्तन की प्रक्रिया हो तो उस समाज की समपार्श्वीय अवस्था उतनी ही अधिक पारम्परिक एवं वित्तीय होगी तथा आन्तरिक कारकों में पारम्परिकता एवं विजातीयता कम रहेगी। रिग्ज के अनुसार आन्तरिक कारकों से परिवर्तन होने पर स्वाभाविक रूप से परिवर्तन के साथ ही प्रभावी व्यवहार नई औपचारिक संस्थाओं के निर्माण से पहले आ जाता है अतः यह समाज के लिए लाभदायक रहता है बाकि बाहरी कारकों से परिवर्तन होने पर नई औपचारिक संस्थाएं पहले तथा प्रभावी व्यवहार बाद मे विकसित होता है। इस बीच उच्चतर औपचारिकता, विजातीयता तथा क्रांतिकारी तनावों की संभावना बनी रहती है।

रिग्ज के अनुसार समपार्श्वीय समाजों मे बहुमानकवाद (Poly Normativism) भी पाया जाता है। तथा नये आधुनिक विचार तथा परम्परागत व्यवहार प्रणालियां एक साथ कार्य करती है। इससे दुविधा की सिथति उत्पन्न होती है। बहुमानकवाद या मानकतरहितता से ''साल'' पर पभाव पड़ता है क्योंकि प्रशासनिक अधकारी न देशी परिस्थितियों में ढलना चाहते हैं और न साहब का विदेशी स्वरूप जनता के बल उतरता है।

इसके अतिरिक्त रिग्ज ने विकास की अवधारणा भी प्रतिपाद की है। रिग्ज ने विकास की प्रक्रिया को विवर्तन के बढ़ते स्तर द्वारा संभव सामाजिक व्यवस्था की स्वायत्तता में व द्धि करने वाली प्रक्रिया के रूप मे परिभाषित किया है। समाज मे विशिष्टीकरण (Differentiation) तथा एकीकरण (Integration) नामक दो प्रमुख तत्त्व विकास की बातों को प्रभावित करते है।

(1) **सीसोंन** के अनुसार रिग्ज के प्रतिमानों की शब्दावली बहुत कठिन तथा अटपटी है सीसोन कहते है कि रिग्ज को समझने के लिए तीन बार पढ़ना है। एक बार उनकी भाषा समझने के लिए, दूसरी बार उनकी अवधारणा समझने के लिए तथा तीसरी बार यह जानने के लिए कि उसमें सीखने की कुछ सामग्री है या नहीं। प्रिज्म, फ्यूज्ड, डिफ्यूज्ड, डिफ्रेक्टैड, रिफ्रक्टेड जैसे भौतिकशास्त्रीय शब्द एवं साला, क्लेक्ट्स, पेरियार, एक्सक्रिप्टिव, अटेनमेन्ट - एचीवमेन्ट भेद इत्यादि

दुविधा उत्पन्न करते हैं अतः चैपमैन ने सुझाया है कि रिग्ज को अपनी शब्दावली समझाने हेतु एक शब्दकोष बनाना चाहिए था।

(2) **हाहन - बीनली** का कहना है रिग्ज के प्रतिमानों से समाजिक परिर्वतन की प्रक्रिया को समझना कठिन है। अगर प्रशासन का लक्ष्य, व्यवस्था को बनाए रखने की बजाय उसमें परिवर्तन लाना है तो रिग्ज के प्रतिमान सर्वथा अनुपयोगी सिद्ध होते हैं।

(3) विश्व के सभी विकासशील राष्ट्रों के समाज एक समान नहीं है। बल्कि सभी में अपनी-अपनी विशिष्टताएं है। अतः एक प्रतिमान से सभी विकासशील समाजों को अध्ययन असंसभव है।

(4) रिग्ज की इस मान्यता की भी आलोचनाएं हुई हैं कि समपाश्वीय समाजों मे विधायिका पर, सत्तारुढ़ दल (कार्यपालिका) का प्रभाव रहता है तथा विधायिका अपनी भूमिका सही प्रकार से नहीं निभाती है। इसी प्रकार नौकरशाही का राजनीतिक सत्ता पर प्रभुत्व रहता है। भारत, मिश्र, फिलीपीन्स तथा अन्य कई देशों में कई बार राजनीतिक सत्ता एवं विधायिका सशक्त रूप में सामने आ चुकी हैं।

(5) रिग्ज ने लोक प्रशासन को अन्तरविषयी तथा सर्वविषयी द ष्टिकोण की ओर अग्रसर किया है। यद्यपि यह आवश्यक है किन्तु इससे लोक प्रशासन की मूलभूत समस्याओं तथा क्षेत्र से ध्यान हटता है।

(6) **चैपमैन** यह मानते हैं कि एक सुनिश्चित मापदंड की कमी मे संयोजित, समपाश्वीर्य तथा विर्तित समाजों, का आकल्प नहीं हो सकता है।

(7) अधिसंख्य विद्वान यह कहते हैं कि रिग्ज ने अमेरिका समाज को आधार बना कर विकासशील समाज सें नकारात्मक पक्ष को ही उजागर किया है बिल्कि समपाश्वीय समाजों में भी बहुत सी अच्छाइयाँ हैं। इसी प्रकार समपाश्वीर्य प्रतिमान विकासशील समाजों का वर्णन तो करता है। किन्तु समाज में प्रशासन की भूमिका समझाने में असमर्थ है।

(8) रिग्ज के अध्ययनों में मितव्ययता, कार्यकुशलता तथ नैतिकता के वे आधार है जो पश्चिमी देशों में प्रचलित हैं। यह आवश्यक नहीं है कि विकासशील देशों की व्याख्या भी उसी सदर्भ में हो सकती है क्योंकि परिस्थितियाँ भिन्न-भिन्न हैं।

(9) रिग्ज की यह मान्यता कि औपचारिकतावाद ज्यादातर या हर परिस्थिति में अकर्मणय है, अपने आप में गैर परिस्थितिकीय द ष्टिकोण को इंगित करता है। रिग्ज की इस ऋणात्मक औपचारिकतावाद को संतुलित करने के लिए वाल्सन ने सकारात्मक औपचारिकतावाद की अवधारणा प्रस्तुत की है।

नया प्रतिमान

(New Model)

संयोजित-समपाश्वीय-विवर्तित प्रतिमान से सम्बन्धित आलाचनाओं और कमियों को देखते हुए फ्रेड रग्जि ने 1975 में ''प्रिज्मैटिक सोसायटी रिविजिटेड'' नामक कार्य के द्वारा कुछ सुधार प्रस्तुत किए। नये प्रतिमान मेंरग्जि ने स्वीकारा है कि केवल विशेषीकरण या विभेदकीकरण के स्तर ही विभिन्न समाजों की सटीक व्याख्या नहीं कर सकते हैं बल्कि समन्वय प्रकिया भी निर्णायक भूमिका निभाती है। रिग्ज ने संस्थाओ के विभदे तथा समन्वय के दोहरे द ष्टिकोण के माध्यम से समाजों को समन्वय तथा असमन्वय के आधार पर विभाजित किया है। विवर्तित तथा समपाश्वीर्य समाजों के प्रतिमान को समन्वय के आधार पर उपविभाजित भी किया है। विवर्तित समाजों आर्थो डिफ्रेक्टेड तथा नियो डिफ्रेक्टेड में वर्गीक त किया है बल्कि समपाश्वीय समाजों को को-प्रिज्मेटिक, आर्थो-प्रिज्मेटिक तथा नियो पिज्मैटिक में वगीक त करके रिग्ज ने बताया है किए विवर्तित समाज वह है जो विशेषीक त (विभेद) तथा समन्वित है जबकि समपाश्वीय समाज विशेषीक त किन्तु असमन्वित होता है। रिग्ज के अनुसार अल्पविकसित देशों में सामाजिक स्थिरता या शांतिपूर्ण माहौल विशेषीकरण तथा समन्वय के बीच के कम अंतर को बताते हैं जबकि अमेरिका में व्याप्त हिंसा, विद्यार्थी आन्दोलन तथा सामाजिक तनाव विशेषीकरण और समन्वय के दूषित समायोजन के प्रतीक हैं।

समस्त विंसगतियों तथा आलाचनाओं के उपरांत भी कटु सत्य यह है कि रिग्ज ने तुलनात्मक लोक प्रशासन तथा विकासशील समाजों के अध्ययन में कठोर परिश्रम किया है तथा निस्सदेह सिद्धांत निर्माण के नये द्वारा खोले हैं।

अध्याय-12
प्रोफेसर फैरल हैडी का तुलनात्मक लोक प्रशासन में योगदान
(Contribution of Prof Ferrel Heady in Comparative Public Administration)

जीवन परिचयः

अमेरिका के प्रमुख विद्वानों में से एक विद्वान फैरेल हैडी का नाम लोक प्रशासन के अध्ययन में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। इन्होंने Ph.D. की डिग्री वाशिंगटन यूनिवर्सिटी से सेन्ट ल्यूरस मैसोरी में अध्ययन के बाद प्राप्त की। 1946-66 तक का समय इन्होंने कई क्षेत्रों मे अपना योगदान देकर व्यतीत किया। इस दौरान इन्होंने पढ़ाने के अलावा लोक-प्रशासन के संस्थान में सहायक डायरेक्टर के रूप में भूमिका निभाई। इन्होंने फिलीपिन्स यूनिवर्सिटी में लोक-प्रशासन संस्थान में डारेक्टर के रूप में 1953-54 तक कार्य किया। इस दौरान इन्होंने राष्ट्रीय एवं राज्य प्रशासन के संदर्भ में अनुभव प्राप्त किया। 1968-75 तक न्यू मैक्सिको यूनिवर्सिटी में लोक-प्रशासन एवं राजनीति-विज्ञान संस्थान के अध्यक्ष के रूप मे कार्य किया। 1954-68 तक का समय इन्होंने व्यर्थ नहीं गुज़ारा बल्कि ये किसी न किसी रूप में लोक प्रशासन के अध्ययन से जुड़े रहे। फैरल हैडी ने C.A.G. एवं SICA के विद्वानों के साथ मिलकर काम किया। इन विद्वानों का शोध बिन्दू था- विकासशील देश अर्थात् दक्षिणी-पूर्वी एशिया के देश जो 1950 के दशक में आस-पास आजाद हुए। वे देश इनके शोध एवं अध्ययन का केन्द्र बिन्दु थे। इसी संदर्भ में इनका प्रमुख उद्देश्य था कि ये C.P.A. के क्षेत्र में सिद्धांतों का निर्माण करना चाहते थे। इसके अलावा इन्होंने राजनीति-प्रशासनिक विकास के पहलुओं का भी अध्ययन किया। उपर्युक्त प्रयास C.P.A. के क्षेत्रा को बढ़ाने में कारगर सिद्ध हुए। इस प्रकार फैरेल हैडी का लोक-प्रशासन के C.P.A. के क्षेत्र में योगदान काफी सराहनीय एवं प्रशंसा का पात्र है।

लेखः Comparative Public Administrative : Concerns Prionties

कृतिः 1.Public Administrative: A comparative Perspective

Book 2. Papers on Comparative Public Administrative (ed.) in Co-Outhorship of Sybil and Stokes

हैडि ने उन देशों को अपने अध्ययन का केन्द्र बनाया जो Decoloniyation के परिणामस्वरूप 40 के दशक के उत्तरार्ध एवं 50 के दशक के पूर्वाध में अस्तित्व में आए थें इनमें अफ्रीका, एशिया, लैटिन, अमेरिका आदि से संबंधित देश थे। इन देशों में विभिन्नताएं होने के बावजूद इन्हें विकासशील देशों की श्रेणी में रखा जाता है क्योंकि ये सभी देश सामाजिक बदलाव की प्रक्रिया में शामिल हैं। इन देशों में सामाजिक बदलाव की प्रक्रिया साधारण होने के बजाए काफी पेचीदापूर्ण है। ये देश उस स्थिति में हैं जो न तो पूर्ण रूप से पिछड़े हुए है और न ही पूर्ण रूप से विकसित हैं। इन देशों की विभिन्न परिद श्य में अलग-अलग समस्याएं व्याप्त हैं। यह देश विकास को अपने प्रमुख मुद्दे के रूप में स्वीकार करते हैं। हैडि ने इन देशों में विकास को केन्द्र बिन्दू मानकर इनके राजनीतिक एवं प्रशासनिक पहलुओं का अध्ययन किया है।

1. **विकास की विचारधारा** [Ideology of Development]: इस संदर्भ में फैरेल हैडि ने दो बातों पर विशेष बल दिया हैः-

   क. राष्ट्र निर्माण

ख. सामाजिक-आर्थिक उन्नति

क. राष्ट्र निर्माणः इस संदर्भ में हैडि कहता है कि इन देशों में ऐतिहासिक, भौगोलिक, सांस्कृतिक, भाषायी आधार पर विविधता होने के बावजूद विकास की विचारधारा के संबंध में ये देश एकमत हैं। जो इस बात को प्रदर्शित करता है कि राष्ट्र-निर्माण को चाहते हैं। राष्ट्र निर्माण को यहाँ के लोगों ने उचित ठहराया है तथा इसे प्राप्त करने के लिए राजनेताओं पर सामूहिक दबाव भी बनाया है। राष्ट्र-निर्माण के संदर्भ में राजनेताओं ने भी अपनी सहमति प्रकट की है।

लेकिन देखा जाए तो ऐसे मुद्दे उठते तो रहते हैं, लेकिन उनमें कोई सफलता प्राप्त नहीं होती। हैडि का मानना था कि ये विकासशील देश आजाद होने से पूर्व एक राष्ट्रवाद की भावना से जुड़े हुए थे। क्योंकि इनका एक प्रमुख उद्देश्य था कि साम्राज्यवादी ताकतें या बाहरी ताकतों को अपने देश से उखाड़ फेंकना। आजादी के बाद उनकी राष्ट्रवाद की भावना बिखरने लगी। जब साम्राज्यवादी या बाहरी ताकतों ने इन्हें आजाद किया तो आजाद हुए देश ने उसी सीमा को अपना क्षेत्र मान लिया जिस पर साम्राज्यवादियों का नियंत्रण था। कुछ देशों का विभाजन भी हुआ, विभाजन करते समय बाहरी ताकतों ने क्षेत्रीयता को महत्व नहीं दिया बल्कि एक सजातीय वर्ग को विभाजित कर दिया। हैडि का मानना है कि आजादी के बाद इनमें राष्ट्रवाद की भावना में मुख्य रूकावट भाषा है। यूरोप में तो राष्ट्रवाद में यह बाधा आड़े नहीं आती है क्योंकि वहां एक प्रमुख भाषा संचार या अभिव्यक्ति व्यक्त करने के रूप में भूमिका निभाती है। इन विकासशील देशों में एक प्रमुख भाषा ना होने के कारण व्यक्ति अन्य व्यक्तियों से अपनी बात को सही रूप में नहीं व्यक्त कर पाता। इससे राष्ट्रीयता की भावना पैदा नहीं हो पाती है।

कुछ विद्वान जैसे इन्क्रली, स्मिथ, विद्वानों ने तो इस संदर्भ में यहाँ तक कहा है कि इन देशों में राष्ट्रवाद की बात करना काल्पनिक या थोड़ी बातें करने के समान है। हैडि का मानना है कि इन देशों में समस्याओं को देखने पर हमें नहीं लगता कि भविष्य में भी कभी राष्ट्रवाद की भावना जाग त होगी। इस संदर्भ में प्रसिद्ध इतिहासकार जोसफ स्ट्रेचर ने भविष्यवाणी की कि लगभग राजनीतिक व्यवस्थाएं, जो पिछले 50 वर्षों में अस्तित्व में आए हैं राष्ट्र निर्माण की प्रक्रिया को पूरा नहीं कर पाएंगे क्योंकि यह एक सहज एवं जटिल प्रक्रिया है।

ख. सामाजिक आर्थिक उन्नतिः विकासात्मक विचारधारा का दूसरा पहलू है- सामाजिक आर्थिक उन्नति। हैडि कहता है कि इस उद्देश्य की प्राप्ति करना भी एक जटिल काम नजर आता है। क्योंकि राजनीतिज्ञ एवं आम जनता के उद्देश्य अलग-अलग हैं। आम जनता सामाजिक-आर्थिक उन्नति चाहती है और इस संदर्भ में राजनेता कोरे आश्वासन के इलावा कुछ नहीं देते हैं। राजनेता अपने भाषणों में आश्वासन के तौर पर यह तो कहते हैं कि हम गरीबी हटाएंगे, जीवन-स्तर में सुधार, लाभों का समान वितरण, सबकों रोजगार के साधन उपलब्ध कराएंगे आदि दमदार बातें तो कहते हैं लेकिन व्यवहार में ये बाते उतनी ही थोथी दिखाई देती हैं यानि राजनेताओं की करनी और कथनी में काफी अंतर पाया जाता है।

सामाजिक-आर्थिक उन्नति के मार्ग में चाहे जो प्रयास इन देशों में रहे हो पर बिडंबना यही है कि विकास की विचारधारा एवं उद्देश्यों पर एकमत होने के बावजूद इसकी प्राप्ति के परिणाम कोसों दूर रहे हैं।

2. **विकास की राजनीतिः** विकासशील देशों के संदर्भ में हैडि ने विकास की राजनीति का गहन अध्ययन किया और विकासशील देशों में राजनैतिक अनुभव के सर्वेक्षण के आधार पर इनकी कुछ प्रमुख विशेषता निम्न हैः-

A. विकास की विचारधारा पर आम सहमति।

B. राजनैतिक क्षेत्र पर ज्यादा विश्वास।

C. राजनैतिक अस्थिरता।

D. उभरे या समर्थ लोग ही राजनीति में आ पाते हैं।

E. राजनैतिक संस्थाओं का नौकरशाही की तुलना में असुंतलित विकास।

A. **विकास की विचारधारा पर आम सहमतिः** विकास की राजनीति की एक प्रमुख विशेषता के रूप में हम इसे मान सकते हैं। इसके संदर्भ में फैरल हैडि ने इसके दो पहलूओं पर विशेष ध्यान दिया। वे थे - राष्ट्र निर्माण और सामाजिक आर्थिक उन्नति। इसके संदर्भ में हैडि ने कहा है कि इन विकासशील देशों में राष्ट्र निर्माण या राष्ट्रवाद

की भावना आजादी से पूर्व तो थी मगर वह राष्ट्रीयता अब कहीं भी नजर नहीं आती हैं अब चाहे इसके पीछे कारण चाहे जो रहें हों। राष्ट्र निर्माण के संदर्भ में आम जनता एवं राजनीति दोनों इस बात पर बल देते हैं कि राष्ट्रवाद पुनः स्थापित होना चाहिए। पर इसमें इतनी सफलता नहीं मिल पाई। इस संदर्भ में हैडि प्रमुख रूकावट यहां लोगों की भाषायी विविधता को मानता है।

इसका दूसरा पहलू है - सामाजिक आर्थिक उन्नति। इसके बारे में हैडि कहता है कि इसके लिए भी आम जनता और राजनैतिज्ञ दोनों तैयार हैं पर यदि कहीं कोई कमी है तो वह है - राजनीतिज्ञों की तरफ से। ये आश्वासन के इलावा कुछ नहीं करते हैं। इन दोनों में एक अतर यह भी है कि राजनेता अपने स्वार्थों के कारण जनता को केवल आश्वासन देकर बहलाना चाहता है जबकि आम जनता विकास या सामाजिक आर्थिक उन्नति चाहती है।

इन विकासशील देशों की इन समस्याओं को देखकर कई विद्वान इस संदर्भ में सशंकित है कि यहां कभी राष्ट्र निर्माण या सामाजिक आर्थिक उन्नति जैसे विषयों पर विकास हो सकेगा।

B. **राजनीतिक क्षेत्र पर ज्यादा विकासः** इन देशों में राजनैतिक क्षेत्र पर ज्यादा विश्वास किया जाता है क्योंकि राज्य को सामाजिक उद्देश्यों की प्राप्ति की दिशा में मुख्य साधन माना जाता है। पश्चिमी देशों की भांति इन देशों में निजी क्षेत्र के पास संसाधन की कमी के कारण ज्यादा महत्ता नहीं दी जाती। यहाँ राजनैतिक तत्व प्रधान होने के कारण राज्य की समाज के आधुनिकीकरण की दिशा में एक मुख्य भूमिका है।

इन देशों में आजादी से पूर्व राजनीतिज्ञों पर पूर्ण विश्वास था क्योंकि तब इनका और आम जनता का एकमात्र उद्देश्य बाहरी ताकतों को उखाड़ फेंकना था लेकिन आजादी के बाद राजनीतिज्ञों के उद्देश्यों के बदलने से राजनैतिज्ञों के प्रति विरोधाभास उभरने लगा था। इस विरोधाभास में विद्यार्थी वर्ग भी अछूता नहीं रहा। इस तरह के विरोधाभास को प्रोफेसर Shils ने इसे ''विरोधी मानसिकता'' का नाम दिया। इसी संदर्भ में Shils ने कहा है कि लोगों का राजनीतिक अविश्वास और राजनीतिज्ञों के सम्मान में कमी, इन लोगों के द ष्टिकोण की मुख्य विशेषता है। इन देशों में राजनीतिज्ञों को कायर, बेईमान, स्वार्थी, खर्चीला आदि उपनामों से पुकारा या संज्ञा दी जाती है। इन देशों में लोगों की राजनीतिज्ञों के प्रति कई उम्मीदें हैं। वहीं दूसरी तरफ इन्हीं लोगों को राजनीतिज्ञों को कोरे आश्वासन के इलवा कुछ नहीं मिलता। किसी उद्देश्य की सफलता प्राप्ति के संदर्भ में राजनीतिज्ञों का द ष्टिकोण अनिश्चित है। इसके परिणामस्वरूप राजनीतिक गतिविधियों में लोगों की जनसहभागिता अभी तक सुनिश्चित नहीं हो पाई है।

C. **राजनैतिक अस्थिरताः** विकास की राजनीति की फैरेल हैडि ने तीसरी विशेषता यह बताई है कि यहाँ राजनैतिक अस्थिरता पाई जाती है

हैडि के अनुसार

''विकसित राजनीति व्यवस्था की तुलना में विकासशील देशों की स्थिति नकारात्मक है जिसमें राजनैतिक अस्थिरता एवं अस्थायित्व केन्द्र बिन्दू है।''

इस प्रकार विकासशील देशों का प्रमुख लक्ष्य राजनैतिक स्थिरता पाना भी शामिल है। Vongor dor Mehden ने लगभग 100 विकासशील देशों के अध्ययन के बाद पाया कि लगभग 2/3 देशों में या तो तख्ता पलट कर दिया गया या तख्ता पलट करने की हर संभव कोशिश की गई। Gerald Hegar ने 1970 के मध्य दशक में यह निष्कर्ष दिया कि सभी विकासशील देशों के पूर्व वर्षों में राजनैतिक अस्थिरता की स्थिति किसी ना किसी रूप में बनी रही है। या यू कह सकते हैं कि राजनेताओं के मध्य अंतर्विरोध या दून्द्वात्मक विचार होने के कारण यह अस्थिरता रही है। इसी कारण Hegar ने कहा है कि यहाँ की राजनीति व्यवस्था को संगठित करना न केवल मुश्किल है वरन् असंभव है। इस स्थिति में इन देशों में ना चाहते हुए भी गठबंधन सरकार को एक अनचाहे विकल्प के रूप में सामने आना पड़ता है। इन देशों की कोई भी राजनीतिक पार्टी इस स्थिति में नहीं है कि वह सरकार की मशीनरी या सत्ता को अपने बलबूत पर प्राप्त कर सके। इसमें ना चाहते हुए भी सहयोगियों को एकमात्र विकल्प के रूप में चुनना पड़ता है। यदि यू कहा जाए कि यहां की गठबंधन की राजनीति इन देशों में राजनैतिक अस्थिरता की प्रमुख जड़ है तो ऐसा बिल्कुल गलत या अतिश्योक्ति नहीं होगा।

D. **समर्थ या उभरे लोग ही राजनीति में आते हैं:** हैडि इस संदर्भ में कहता है कि इन विकासशील देशों का नेत त्व ज्यादातर समर्थ या सम द्ध लोगों के हाथों तक ही सीमित रहता है। ये नेत त्व धारक वर्ग गरीबी जैसी समस्याओं के संपर्क में कभी आया नहीं, इस कारण गरीबी क्या चीज है? ये वर्ग इसे नहीं जानता और ना ही इसे समझ सकता है। यही थोड़े लोगों का शासक वर्ग राजनीतिक व्यवस्था में नीति निर्माण के संबंध में अहम् भूमिका निभाता है। यह वर्ग सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक तौर पर ज्यादातर समाज से अछूता रहता है। ये शासक वर्ग जनता का सेवक होने के बावजूद जनता की सेवा करना तो दूर की बात है, ये आम जनता को ही अपने से काफी दूर रखते हैं यनि स्वयं जनता से दूरी बनाए रखते हैं। इस दूरी की प्रमुख वजह शासक वर्ग की स्वार्थ प्रव ति है।

शासक वर्ग का जनता से दूर रहने के कारण जो कार्यक्रम सरकार बनाती है और लागू करती है और कार्यक्रम के प्रति आम जनता का नकारात्मक रवैया हो गया है। यदि आज हम हैडि को दूर किनारे रखते हुए व्यवहार में देखे तो कुछ बुजुर्ग लोग यह कहते हुए मिल जाएंगे कि इससे तो अच्छा शासन अंग्रेजों का ही था। शासक वर्ग बदलाव की तो बात करता है मगर स्वयं बदलाव लाना नहीं चाहता है। समाज में बदलाव तभी हो सकता है जबकि शासक वर्ग अपनी मानसिकता को बदले और राजनेता एवं जनता के मध्य दूरी को मिटा दिया या कम कर दिया जाए।

राजनैतिक संस्थाओं का नौकरशाही की तुलना में असंतुलित विकास: इस संदर्भ मे हैडि कहता है कि इन देशों में पाश्चात्य देशों की तरह नौकरशाही पर अंकुश रखने वाली कोई सवैधानिक या राजनैतिक संस्था नहीं है जो इन अनैतिक गतिविधियों पर अकुंश लगा सके। स्वयं शासक वर्ग भी इन पर अंकुश नहीं लगा पाता, हो सकता है कि इसके पीछे शासक वर्ग के गोपनीय निजी स्वार्थ हों। हैडि यह भी कहता है कि इन देशों ने उसी नौकरशाही पद्धति को अपना लिया है, जिसका निर्माण साम्राज्यवादी ताकतों ने अपने स्वार्थ की पूर्ति हेतु किया था, और उस नौकरशाही का प्रमुख कार्य था- शोषण करना। इन देशों ने यह भी नहीं सोचा कि यह नौकरशाही हमारे पर्यावरण के लिए अनुकूल है भी या नहीं। इन देशों ने मामूली सा फेर बदल करके उसी नौकरशाही को ग्रहण कर लिया। हालांकि उस नौकरशाही में बदलाव की बहुत अधिक आवश्यकता थी। इसी कारण इन देशों का प्रशासन काफी हद तक प्रभावित हुआ।

हैडी यह भी बताता है कि जिस समय ये विकासशील देश आजाद हुए उस समय तो नौकरशाही (चाहे कैसी भी हो) मजबूत थी और राजनीति का जन्म हुआ था। राजनीति इतनी मजबूत नहीं थी कि वह नौकरशाही पर नियंत्रण रख सकें। इसी कारण इन देशों में नौकरशाही का बोला-बाला है। इसके फलस्वरूप इन देशों के प्रशासनिक संगठन में नौकरशाही एक विशेषता बन गई है। हैडि यह भी बताता है कि इन देशों मे दबाव समूह, गैर-सरकारी संगठन, राजनैतिक पार्टियां, प्रबुद्ध प्रतिनिधियों के कमजोर होने या ना होने के कारण नौकरशाही पर अकुंश नहीं हो पाता।

इस प्रकार से इन देशों में नौकरशाही पूर्ण रूप से ही अपना प्रभाव बनाए हुए है। यहां की व्यवस्था की स्थिरता निर्भर करती है नौकरशाही की प्रतिबद्धता और वफादारी पर।

3. **Common Administrative Patterns:** फैरेल हैडि ने तीसरी दुनिया की प्रशासनिक व्यवस्थाओं के संदर्भ में कुछ महत्वपूर्ण विशेषता बताने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। हैडी का मानना है कि इन देशों में विकास के संदर्भ में प्रशासन की भूमिका को अहम रूप से स्वीकार कर लिया है। लेकिन इसके साथ-साथ इन देशों में प्रमुख समस्या यह है कि प्रशासनिक व्यवस्था कार्यक्रमों के प्रबंध की दिशा में अपर्याप्त है इन देशों के संदर्भ मे फैरल हैडी ने इन प्रशासनिक व्यवस्थाओं की जो विशेषताएँ बताई हैं वे निम्नलिखित है :-

1. प्रशासन के तौर-तरीके नकल किए गए है।
2. नौकरशाही की मुख्य पावर अकुशल है। Non-achievement orientation
3. प्राप्ति के लिए किसी दिशा का न होना।
4. कथनी और करनी या सिद्धांत एवं व्यवहार में अंतर।
5. कार्य करने की आजादी नौकरशाही की।

1. **प्रशासनिक रूप नकल पर आधारित:** हैडि ने कहा है कि इन देशों का प्रशासनिक स्वरूप या ढांचा पूर्णतय साम्राज्यवादी ताकतों का ही प्रशासनिक ढांचा अपनाया गया है। आजादी के बाद इन देशों ने अपना कोई स्वदेशी प्रशासनिक ढांचा

तैयार नहीं किया। आजादी से पहले वाले स्वरूप को ही अपना लिया चाहे इसके पीछे कोई भी कारण रहा हो। अपने समाज या पर्यावरण के प्रतिकूल प्रशासन अपनाने पर समाज में इसके बुरे प्रभाव दिखाई देते हैं। जहाँ आवश्यकता थी केवल वही नाममात्र का परिवर्तन किया गया है और कुछ बातें दूसरे देशों के प्रशासनों से उधार ली गई है।

जब ढांचा ही समाज के अनुकूल नहीं होगा तो वह प्रशासनिक रूप समाज की समस्याओं से जुझने में असफल होगा। यदि व्यवहार में देखें तो परिणाम भी प्रतिकूल नजर आ रहे हैं। इन देशों ने इस बात पर ध्यान नहीं दिया कि आजादी से पूर्व नौकरशाही का उद्देश्य शोषण करना था और आजादी के बाद नौकरशाही का उद्देश्य विकास या कल्याण करना है। यदि उसी नौकरशाही से विकास के कार्य करवाने हैं तो नौकरशाही को समाज की विकास संबंधी आवश्यकताओं के अनुरूप बदलना होगा। तभी यह नौकरशाही समाज की समस्याओं से जुझने में सक्षम होगी।

B. **नौकरशाही अप्रशिक्षितः** इन देशों की दूसरी विशेषता हैडि ने नौकरशाही का अप्रशिक्षित होना बताया है। और कहा है कि नौकरशाही की अप्रशिक्षित मानवीय शक्ति इन देशों के विकास में एक बाधा है। किसी भी देश में विकास के कार्यक्रमों को कार्यरूप देने के लिए प्रशिक्षित मानवीय शक्ति आवश्यक है। इन देशों में रोजगार के लिए बहुतायत में मानवीय शक्ति है, परंतु प्रशिक्षित मानवीय शक्ति बहुत ही कम मात्रा में है। इसके अलावा लोक सेवाओं में आवश्यकता से अधिक कर्मचारी कार्यरत हैं। प्रशासन का उच्च स्तर हो या निम्न स्तर, प्रशिक्षित मानवीय शक्ति का अभाव दोनों ही स्तर पर है। प्रशासनिक पदों के लिए प्रशिक्षित मानवीय शक्ति की मांग एवं पूर्ति के अंतर को कम करना बड़ा कठिन हैं। यह अंतर केवल प्रशिक्षण के प्रयासों के माध्यम से कम किया जा सकता है।

इसके अलावा हैडी यह भी बताता है कि इन देशों में शिक्षा प्रणाली की या तो कमी है या फिर सही नहीं है। यदि शिक्षा प्रणाली सही होती तो शिक्षित वर्ग के अपने आदर्श, मूल्य, नैतिक भावनाएँ होतीं। जो कि किसी देश के विकास में काफी सहायक भूमिकाएं निभाता हैं। हैडी यह भी कहता है कि यहाँ आरक्षण का सही उपयोग नहीं होता। इन देशों में आरक्षण के कारण भी Qualified main Popwer पीछे रह जाती है।

C. **प्राप्ति के लिए दिशा का अभावः** हैडी का मानना है कि यहाँ की नौकरशाही सामाजिक उद्देश्यों की प्राप्ति में असफल रही है। नौकरशाही का ये दायित्व बनता है कि वह समाज के हर पहलू जैसे - आर्थिक, नैतिक सांस्कृतिक और मनोवैज्ञानिक पर विकास में अपनी भूमिका निभाएं। क्योंकि यहीं बातें वहाँ की आम जनता से जुड़ी रहती हैं जब तक आम जनता का इन सामाजिक स्तरों पर विकास नहीं होगा तब तक समाज के विकास की बात करना भी पूर्णतया मिथ्या हैं जबकि व्यवहार में इन देशों में यह स्थिति विपरीत अवस्था में देखेने को मिलती है। नौकरशाही वर्ग समाज की आम जनता के इन विकास के उद्देश्यों को ताक पर रखकर अपना स्वार्थ सिद्ध करते हैं। नौकरशाही बस अपने स्वार्थों की पूर्ति में जुटी रहती है। चाहे इसके विपरीत जनता को कितने भी कष्ट झेलने पड़े। इसी संदर्भ में Riggs की भी यही धारणा एवं विचार रहें।

इन देशों में सिक्के का एक पहलू तो यह है कि यहाँ सेवीवर्गीय भर्ती का आधार Merit System है वही सिक्के का दूसरा पहलू यह भी है कि यहां भाई-भतीजावाद भी मौजूद है। इस व्यवस्था को जिस ने Bureau Cratic Recruirtment (''नौकरशाही द्वारा भर्ती'') का नाम दिया है। इन देशों के प्रशासन पर राजनेता क्रम, नौकरशाही जयादा प्रभावशाली होती है। इस कारण यहाँ को - कर्मिक प्रशासन दूसरे पहलू जैसे - पदोन्नति स्थानान्तरण, अनुशासनात्मक कार्यवाही, पदमुक्त करना आदि भी प्रभाावित होते रहते हैं।

इन देशों की नौकरशाही पर परंपरागत एवं आधुनिक मूल्य दोनों का प्रभाव पड़ता है। इन दोनों मूल्यों में से परंपरागत मूल्य इन देशों की नौकरशाही पर ज्यादा प्रभावी है। इसी कारण इन देशों में भ्रष्टाचार भी पाया जाता है। हैडी ने इन देशों के प्रशासन में इसी समस्या (भ्रष्टाचार) को सबसे हानिकारक माना है।

D. **सिद्धांत एवं व्यवहार में अंतरः** हैडी ने इन देशों के प्रशासन की विशेषताओं में एक विशेषता सिद्धांत एवं व्यवहार में अंतर का पाया जाना बताया है जिसे Riggs ने ''औपचारिकता'' का नाम दिया है। इसे हम दूसरे शब्दों मे कथनी और करनी में अंतर भी कह सकते हैं। इनके प्रशासन की आलोचना करते हुए हैडी ने कहा है कि इन देशों के प्रशासन में जो प्रव त्तियां देखने को मिलती हैं वे वास्तविकता से काफी परे हैं। इन देशों में विकास के जितने बड़े-बड़े वायदे किए जाते हैं। उन वायदों को आंशिक तौर पर भी पूरा नहीं किया जाता है। यह वायदे फाइलों में से तो अपनी जगह बना

लेते हैं। परंतु व्यवहार के धरातल पर ये एकपल भी नहीं टिक पाते। हैडी यह भी कहता है कि इन देशों में कथनी और करनी के अंतर को कम करने के लिए कुछ कानून तो बनाए जाते हैं परंतु शायद ही उन्हें कभी लागू नहीं किया जाता है।

E. **कार्यवाही की अधिक स्वायतता:** हैडी ने इन देशों की अगली विशेषता कार्यवाही की अधिक स्वायतता का पाया जाना बताया हैं। यानि नौकरशाही की स्वतंत्रतात्मक कार्यवाही। जब ये देश गुलाम थे तो साम्राज्यवादी ताकतों ने नौकरशाही को आम जनता के शोषण के लिए बहुत पॉवर या अधिकार दे रखे थे। जिन से आम जनता का खूब शोषण करते थे। आजाद होने के बाद भी इन नौकरशाह को बहुत पॉवर दे रखें हैं। इन पर अंकुश लगाने में भी राजनेता असमर्थतता महसूस करते हैं। जबकि इनके उच्च अधिकारी अपने ही देश के चुने हुए प्रतिनिधि है फिर भी ये कानूनों को ताक पर रखकर स्वतंत्र रूप से कार्य करने का प्रयास करते हैं और सफल भी होते हैं।

पराधीनता के समय तो इन नौकरशाह पर नियंत्रण दूर दराज बैठे उच्च अधिकारी करते थे जबकि आजाद होने के बाद इनके उच्च अधिकारी पास के स्थानों पर भी इन प्रभावी नियंत्रण नहीं रख पाते हैं।

यूं तो इन देशों के संविधान ने इनको अधिक अधिकार दे रखे हैं। कल्याणकारी कार्य करने के लिए जिससे सामाजिक विकास हो ये इन्हीं अधिकारों का दुरूपयोग करते हैं। इन पर जो नियंत्रण के लिए कानून बने हैं वो इन पर अधिक प्रभावी नहीं हो पाते हैं।

4. **Political Regime Variations:** फैरल हैडी का अन्य महत्वपूर्ण योगदान विकासशील एवं विकसित राष्ट्रों की प्रशासनिक व्यवस्था को विभिन्न श्रेणियों में वर्गीकरत करने के संबंध में है। उन्होंने विकसित राष्ट्रों के प्रशासनिक व्यवस्थाओं की निम्न चार श्रेणियों में विभक्त किया है -

1. **फ्रांस तथा जर्मनी** (Classic Administrative System): फ्रांस तथा जर्मनी के प्रशासन को 'क्लासिक प्रशासन' व्यवस्था कहा जाता है। ये दोनों देश पिछली दो शताब्दियों से राजनीतिक अस्थिरता से पीड़ित रहे हैं। यहां अनेक हिंसात्मक परिवर्तन हुए हैं। किंतु दोनों देशों मे प्रशासनिक निरंतरता रही है। डाइमंट (Diamant) ने लिखा है, ''गणराज्य समाप्त हो जाता है, किंतु प्रशासन बना रहता है।''[1]

इन देशों में नौकरशाह को एक लोक सेवक नहीं वरन् सरकारी अधिकारी माना जाता है। नागरिक सेवा जीवनपर्यत सेवा होती है। लोग कम उम्र में ही इसमें प्रविष्ट होते हैं और सेवानिव त्त होने तक कार्य करते हैं। बीच में कदाचित् ही कोई सेवा को त्यागता है। सेवा में प्रवेश के बाद कर्मचारियों को व्यापक प्रशिक्षण दिया जाता है और जिन संस्थाओं द्वारा अनुशासनात्मक कार्यवाही की जाती है उनमें अधिकारियों का प्रतिनिधित्व रहता है। पदोन्नति तथा स्तर परिवर्तनों का कार्य स्वयं नागरिक सेवा संपन्न करती हैं यह राजनीतिक कार्यों में सक्रिय भाग लेती है।

2. ब्रिटेन और अमेरिका (Adm of Civie Culture):

ऑमण्ड एवं वर्बा ने इन दोनों देशों की प्रशासन व्यवस्था को नागरिक संस्कृति (Civic Culture) के नाम से विभूषित किया है। इन देशों की राजनीतिक संस्कृति तथा संरचना समरूप है। यहां की राजनीतिक व्यवस्था अपेक्षाकृत सुस्थिर तथा विधिवत सुस्थापित है। राजनीतिक विकास क्रमिक रूप से हुआ है, इसलिए प्रशासन व्यवस्था समायोजित होती रही है। उच्च स्तर के नौकरशाह सरकारी निर्णय प्रक्रिया में प्रभावशाली योगदान करते हैं। दोनों देशों की नौकरशाही पर सामाजिक शक्तियों का भारी प्रभाव पड़ता है। यहां नागरिक लोक प्रशासन में व्यापक रूप से योगदान करते हैं।

3. जापान (Moernising Administration):

जापान के प्रशासन को आधुनिकीकृत प्रशासन (Modernizing Administration) कहा गया है। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद (1946) जापान का नया संविधान बनाया गया। इस संविधान की धारा 15 के अनुसार, ''सभी सरकारी अधिकारी किसी समूह विशेष के नहीं वरन् संपूर्ण समाज के प्रतिनिधि हैं।'' 1947 में एक नागरिक सेवा अधिनियम पारित किया गया। इसने लोक सेवाओं का प्रजातंत्रीकरण करने का प्रयास किया।

आज जापानी नागरिक सेवा की ओर अनेक युवक आकर्षित हो रहे हैं। यहां उच्च श्रेणी के पदाधिकारी राजनीतिक निर्णय प्रक्रिया योगदान करते हैं। तथा राजनीतिक जीवन में सक्रिय कार्यकर्त्ता के रूप में संलग्न रहते हैं। सेवानिव त्त होने के बाद

जापान के अधिकारी नागरिक निर्वाचित राजनीतिक पद प्राप्त कर लेते हैं औ नया जीवन प्रारंभ करते हैं।

4. सोवियत संघ (Administration under Communism):

सोवियत संघ में 1917 की क्रांति के बाद सर्वाधिकारवादी व्यवस्था का विकास हुआ। सोवियत सघ में साम्यवादी दल का वर्चस्व था और प्रशासन साम्यवादी दल की रीति-नीतियों से प्रभावित था। 1991 में सोवियत संघ का विघटन हो गया, और यह देश विश्व मानचित्र से ओझल हो गया। सोवियत संघ का विघटन बीसवीं शताब्दी की एक महत्वपूर्ण घटना है।

फैरल डैडी ने विकसित देशों की भांति विकासशील देशों की भी प्रशासनिक व्यवस्थाओं का विभिन्न श्रेणियों में वर्गीकरण किया है जो निम्नलिखित है -

1. **परंपरागत स्वेच्छाचारी व्यवस्था (Traditional-Autocraditic Systems):** इस श्रेणी में यमन, सऊदी अरब, लीबिया, मोरक्कों आदि निकट पूव्र तथा उत्तरी एवं पूर्वी अफ्रीका के देश और पेराग्वे और पेरू आदि शामिल हैं। इनमें कई राज्य क्षेत्र में विशाल हैं तथा इनकी पर्याप्त जनसंख्या है। इन राज्यों की शासन-प्रणाली परंपरागत है। यहाँ वंश परंपरा पर आधारित राजतंत्रात्मक या कुलीनतंत्रात्मक व्यवस्था है। इन देशों में अभी तक आधुनिकीकरण नहीं हो पाया है, किंतु परिवर्तन को प्रोत्साहन अवश्य दिया जाता है। इन देशों में स्पर्द्धापूर्ण राजनीति का कोई स्थान नहीं है। यहाँ राजनीतिक दल या हित समूह होते ही नहीं हैं। यहाँ विशिष्ट वर्ग द्वारा कोई राजनीतिक आंदोलन नहीं छेड़ा जाता और वे किसी राजनीतिक विचारधारा के प्रचलन में कोई रुचि नहीं लेते हैं। जनता में राजनीतिक चेतना का विकास कर उसे उच्च शिक्षा प्रदान कर जन नेता अपने लिए कोई मुसीबत खड़ी नहीं करना चाहते। यहां का शासक वर्ग अपने हितों की रक्षा सेना एवं नागरिक प्रशासन के माध्यम से करता है। प्रशासनिक यंत्र कार्य करने का मुख्य साधन होता है किंतु इनकी प्रभावशीलता इसकी अपनी परंपरागत विशेषताओं एवं कठिनाईयों द्वारा कम हो जाती है। इसके उपचार समय-समय पर प्रयास होते रहते हैं।

2. नौकरशाही विशिष्ट वर्ग व्यवस्था: नागरिक तथा सैनिक

(Bureaucratic Elite - System: Civil and Military)

विकासशील देशों के चारों ओर ऐसे राज्य हैं जहाँ राजनीतिक शक्ति सैनिक अथवा नागरिक सेवा के अधिकारियों के हाथ में केन्द्रित रहती है, जैसे - बर्मा (म्यानमार), इण्डोनेशिया, इराक, दक्षिण कोरिया, सूडान, सीरिया, थाईलैण्ड आदि। यहां परंपरागत विशिष्ट वर्ग का प्रभाव लुप्त प्रायः हो गया है। यहाँ के नेता आधुनिकीकरण लाने का दावा करते है किंतु जनता इससे प्रभावित नहीं होती। राजनीतिक कार्यों में अधिक लोग भाग नहीं लेते। विरोधी दल का अभाव रहता है। सरकार समर्थक कोई ऐसा दल नहीं होता जिसका कोई विशेष कार्यक्रम हो। राजनीतिक रिक्तता की पूर्ति नौकरशाही द्वारा की जाती हैं इसका लक्ष्य कानून और व्यवस्था की स्थापना करना होता है। यह जनता को संरक्षण प्रदान करती है। यह संरक्षक वर्ग धीरे-धीरे अपने नियंत्रण को एकीकृत करने के लिए प्रयत्नशील रहता है।

इस व्यवस्था में लोकसेवकों की अपेक्षा सैनिक अधिकारियों का प्रभाव अधिक रहता हैं वे राजनीतिक यंत्र प्राप्ति के लिए अधिक प्रभावशाली तथा साधन-संपन्न होते हैं। राजनीतिक शक्ति का प्रयोग करने के लिए सैनिक तथा असैनिक व्यावसायिक समूहों में संधि हो जाती है। इससे व्यावसायिक द ष्टिकोण, सामूहिक भक्ति तथा कार्य की प्रेरणा में सहायता मिलती है। राष्ट्र निर्माण (Nation-Building) तथा आर्थिक विकास के बीच समन्वय स्थापित किया जाता है। इस व्यवस्था की अपनी कमजोरियां हैं। इसमें राजनीतिक संबंधों में अविश्वास बना रहता है। इस द ष्टिकोण में स्पष्ट विचारधारा, सिद्धांत या जनशिक्षण का व्यवस्थिति प्रयास विकसित नहीं हो पाता है।

3. बहुजनीय स्पर्द्धापूर्ण व्यवस्थाएं

(Polyarchal Competitive Systems)

इस श्रेणी में फिलीपाइन्स, ग्रीस, मलाया, चिली, कोस्टारिका, इजरायल, लेबनान, अर्जेन्टाइना, ब्राजील, श्रीलंका, नाइजीरिया, टर्की आदि देश शामिल हैं। इन राज्यों की राजनीतिक व्यवस्था पश्चिमी यूरोप तथा अमेरिका के समकक्ष है। की मुख्य विशेषता यह है कि यहाँ राजनीतिक स्पर्द्धा है। यहाँ सुसंगठित राजनीतिक समूह राजनीतिक शक्ति प्राप्ति के लिए संघर्ष-रत रहते हैं। ये स्पर्द्धापूर्ण इकाइयां पश्चिमी तरीके के राजनीतिक दल नहीं होते। इन देशों में दूसरे देशों जैसा सुपरिभाषित राजनीतिक

विशिष्ट वर्ग नहीं पाया जाता। राजनीतिक शक्ति बिखरी रहती है। सामाजिक गतिशीलता बनी रहती है जिससे स्पर्द्धा को प्रोत्साहन मिलता है। राजनीतिक नेता जनमत प्रभावित करने के लिए अपील करते हैं तथा राजनीतिक समर्थन प्राप्त करने के लिए बदले में अनेक आश्वासन देते हैं। राजनीतिक सिद्धांत अनुभववादी तथा अवसरवादी बन जाते हैं। सरकार की गतिविधियां दबाव समूहों से प्रभावित होती हैं। सरकार के कार्यक्रम अल्पकालीन होते हैं। शिक्ष, कल्याण, स्वास्थ्य आदि क्षेत्रों में ऐसे लक्ष्य अपनाए जाते हैं जो आसानी से समझे जा सकें तथा प्रशंसा प्राप्त कर सके। प्रमुख आर्थिक और सामाजिक सुधारों वाले दीर्घकालीन लक्ष्य यहां प्रभावहीन रहते हैं। इस राजनीतिक व्यवस्था में सरकार कर, नियम लागू करने में कोई दबाव डालती है तो उसके पास शक्ति नहीं रहती। स्वयं नौकरशाही विरोधी राजनीतिक समूहों में स्पर्द्धा का कारण बन जाती है।

4. प्रभावशाली-दलः अर्द्ध-स्पर्द्धापूर्ण व्यवस्थाएँ

(Dominante Party Semi=Competitive Systems)

यह व्यवस्था विकासशील देशों की मुख्य विशेषता बन गई है। विचारकों ने इस व्यवस्था की व्याख्या भिन्न-भिन्न की है। आर. सी.टक्कर ने इसे एक दल के अधीन क्रांतिकारी जन-आंदोलन कहा है। इसकी क्रांतिकारी विचारधारा होती है, व्यापक जन-सहयोग बना रहता है तथा सैनिक केन्द्रीकृत विशिष्ट वर्ग का नेत त्व रहता है।[1] डेविड एप्टर ने इसे गतिमान व्यवस्था कहा है जिसका उद्देश्य समाज को बदलना होता हैं इस व्यवस्था के कुछ धर्मनिरपेक्ष मूल्य होते हैं। यह समानता, अवसर की उपलब्धि आदि को महत्व देती है तथा व्यक्तिगत स्वतंत्रता, जन प्रतिनिधित्व, बहुलवाद आदि का विरोध करती है। फेरेल हैडी ने ऐसी राजनीतिक सत्ताओं को तीन श्रेणियो मे विभक्त किया है- प्रभावशाली-दल अर्द्धस्पर्द्धापूर्ण व्यवस्थाएँ, प्रभावशाली-दल गतिमान व्यवस्थाएँ और साम्यवादी सर्वाधिकारवादी व्यवस्थाएँ। तीनों प्रकार की राजनीतिक व्यवस्थाओं में नौकरशाही के कार्य भिन्न होते हैं।

प्रभावशाली-दल अर्द्धस्पर्द्धापूर्ण व्यवस्था में वास्तविक राजनीतिक शक्ति पर एक दल का एकाधिकार रहता है तथा इसे पर्याप्त समय तक बनाए रखती है। दूसरे राजनीतिक दल वैधानिक माने जाते है तथा उनका अस्तित्व रहता हैं प्रभावशाली दल सभी दलों को प्रभावहीन बनाए रखता है तथा सभी चुनावों में भारी बहुमत प्राप्त करता है। यह गैर-तानाशाही प्रकृति का होता है तथा कोई विरोधी दल चुनावों में इसकी सत्ता को चुनौती दे सकता है। मैक्सिको की पी.आर.आई. तथा भारत की कांग्रेस पार्टी इसके उदाहरण हैं।

5. प्रभावशाली दलः गतिशील व्यवस्थाएँ

(Dominant Party: Mobilization System)

यह व्यवस्था अल्जीरिया, बोलीविया, मिस्र घाना, गिनी माली तथा कुछ अन्य पश्चिमी अफ्रीकी राज्यों में उपलब्ध है। इस श्रेणी के राज्य पूर्ववर्णित श्रेणी के राज्यों से भिन्न होतो हैं। यहाँ राजनीति में आज्ञाकारिता कम तथा सम्भावित दमन अधिक रहता है केवल प्रभावशाली दल ही एकमात्र वैध दल माना जाता है। यदि कहीं अन्य दलों को काम करने की स्वतंत्रता दी जाती है तो उन पर अनेक प्रतिबंध और सीमाएँ लगा दी जाती हैं ताकि वे कमजोर बने रहें तथा विरोधी दल के प्रतीक मात्र बने रहें। इस व्यवस्था में विचारधारा सैद्धांतिक होती है तथा उस पर बार-बार जोर दिया जाता है।शासन के प्रति स्वामिभक्ति का व्यापक प्रदर्शन किया जाता हैं यहां का विशिष्ट युवक वर्ग शहकरीकृत, धर्मनिरपेक्ष, सुशिक्षित तथा विकासवादी राष्ट्रवाद की ओर झुका हुआ रहता हैं एक करिश्मावादी व्यक्तित्व किसी आंदोलन का नेत त्व सम्हाल लेता है। सत्ता प्राप्त व्यक्ति या वर्ग का भविष्य अधिक सुनिश्चित नहीं रहता और इसलिए वह अपनी सत्ता की जड़ें जमाने के लिए व्यापक जन समर्थन प्राप्त करने का प्रयास करता है।

6. साम्यवादी सर्वाधिकारवादी व्यवस्था

(Communist Totalitarian System)

सोवियत संघ के अतिरिक्त सभी साम्यवादी शासकों को इस श्रेणी में शामिल किया जा सकता हैं क्या वे सभी देश विकासशील कहे जा सकते हैं यह एक विवादपूर्ण प्रश्न है। साम्यवादी चीन का विशाल आकार तथ साम्यवादी जगत में उसकी प्रतिष्ठा देखकर इसे एक अलग ही वर्ग माना जा सकता हैं पूर्वी यूरोप के साम्यवादी देश भी पर्याप्त विकसित थे। 1991 तक रोमानिया, पोलैण्ड, चेकोस्लोवाकिया, हंगरी, बल्गेरिया तथा अल्बानिया में साम्यवादी शासन व्यवस्थाओं का पतन हो गया और इन देशों

में लोकतांत्रिक शासन व्यवस्थाओं की स्थापना हुई। उनका स्तर स्पेन या पुर्तगाल से कम नहीं माना जा सकता। केवल उत्तरी कोरिया, उत्तरी वियतनाम,, क्यूबा आदि देशों को ही अफ्रीका-एशिया और लेटिन अमेरिका के गैर साम्यवादी देशों की भांति विकासशील कहा जा सकता है। साम्यवादी देशों के विकास का स्तर भिन्न-भिन्न है, किंतु सभी में एक महत्वपूर्ण समानता यह है कि ये सभी मार्क्सवादी-लेनिनवादी विचारधारा के समर्थक हैं तथा सर्वाधिकारवादी राजनीतिक व्यवस्था अपनाते हैं। यही विचारधारा सभी कार्य का केन्द्र रहती है यहां आतंक और दमन को सामाजिक परिवर्तन के आधार पर न्यायोचित ठहराया जाता हैं। सर्वाधिकारवादी होने के नाते समस्त राजनीतिक शक्ति पर एक राजनीतिक दल का एकाधिकार हो जाता है यहां खुले विरोध की विधिवता को स्वीकार नहीं किया जाता है। शिल्स ने लिखा है, ''इस व्यवस्था में जीवन के प्रत्येक क्षेत्र को प्रशासित किया जाता है तथा पूर्ववर्ती स्वतंत्र सत्ता के सभी केन्द्रों को समाप्त कर दिया जाता है।[1]

इस शासन व्यवस्था में अवांछनीय प्रशासन का रूप जटिल होता है। इस पर विश्वसनीय दल का पर्यवेक्षण रखा जाता है तथा इसके नियंत्रण की समग्र व्यवस्था सत्ता पार्टी के विशिष्ट नेत त्व के हाथ में केन्द्रित हो जाती है। राज्य की नौकरशाही के साथ-साथ उसी के समकक्ष दलीय नौकरशाही का गठन किया जाता है। इन देशों की नौकरशाही तथा प्रशासनिक व्यवहार के संचालन में बहुत कम जानकारी होती है और कतिपय रचनाएँ ही उपलब्ध होती हैं।

दल तथा राजा के पद सोपान आपस में जुड़े रहते हैं। एक ही व्यक्ति दोनों पद संभाल लेता है, ऐसी स्थिति में नौकरशाही के सदस्य दलीय नियंत्रण के विषय बन जाते हैं। लोक प्रशासकों की भर्ती के समय दो तथ्य देखे जाते हैं (1) प्रत्याशी साम्यवादी विचारधारा का अनुयायी होना चाहिए तथा (2) अपने कार्य का विशेषज्ञ होना चाहिए। दोनों लक्ष्यों में से अनेक बार चयन करना पड़ता है।

साम्यवादी व्यवस्था में प्रशासन की मुख्य समस्या यह है कि दलीय इकाइयों तथा सरकारी अभिकरणों में निरंतर संघर्ष बना रहता है। फलस्वरूप संगठन की कार्यकुशलता को धक्का लगता है। सरकारी अधिकारी विरोधी दायित्वों के बीच उलझ जाता है। वह पहल अथवा प्रयोग करने का अवसर खो देता है। इस व्यवस्था में स्वतंत्र नौकरशाही की रचना विशिष्ट वर्ग की शक्ति स्थिति के लिए एक चुनौती बनती जा रही है। इसकी प्रव त्तियों से प्रतीत हो रहा है। इन साम्यवादी देशों में होने वाले प्रशासनिक परिवर्तन इनको भविष्य में गैर-साम्यवादी विकसित और विकासशील देशों से पर्याप्त भिन्न बना देंगे।

फैरल हैडी के योगदान का मूल्यांकनः

मूल्यांकन के रूप में हम यह कह सकते है कि हैडी को C.A.G. के विद्वानों के साथ मिलकर एशिया, अफ्रीका तथा लैटिन अमेरिका के देश जो 1940-50 के दशक के आस-पास आजाद हुए थे की प्रशासनिक व्यवस्या को अपने शोध का विषय बनाया। इन विद्वानों को आर्थिक सहायता अमेरिका ने दी। शोध के परिणामस्वरूप तुलनात्मक लोक-प्रशासनक विषय के संबध में अत्यधिक इस शोध में Administrative Ecology (प्रशासन संबंधी परिस्थितिकीय) को अहम मुद्दा बनाया गया। शोध के बाद इन देशों की विशेषता या निष्कर्ष के रूप में निम्नलिखित बातो समाने आई।

1. विकास की विचारधारा पर आम सहमति, परंतु सफलता कोसों दूर है।
2. सिद्धांत एवं व्यवहार में अंतर।
3. विकास की प्रक्रिया बहुत धीमी है।
4. न पूर्णतः पिछड़े ना पूर्णतः विकसित है, मध्य स्तर की स्थिति है।
5. शासक एवं शासित वर्ग मे पूर्णतः समन्वय का ना पाया जाना।
6. परंपरागत एवं आधुनिक विचारधाराओं का मिश्रण।
7. आधारभूत ढांचा कमजोर है सामाजिक व्यवस्था के संदर्भ में।

उपरोक्त विशेषताओं की हैडी इन देशों की कमियों के रूप में देखता है। हैडी ये भी कहता है कि यदि इन देशों को अपना विकास करना है तो शासक एवं शासित दोनों वर्गों को अपने नजरिए में बदलाव कर सकारात्मक रूख अपनाना होगा। इसके अतिरिक्त दोनों विकसित एवं विकासशील देशों की प्रशासनिक व्यवस्थाओं का विभिन्न श्रेणियों में फैरल के द्वारा किया गया स्पष्टतम वर्गीकरण एक सराहनीय कदम है।

फैरल हैडी के द्वारा प्रदान किए गए विचार तुलनात्मक लोक प्रशासन के विकास में अहमभूत सिद्ध हुए।

अध्याय-13
विलियम सिफिन का तुलनात्मक लोक-प्रशासन में योगदान
(Contribution of Professor William Siffen in Comparative Public Administration)

सिफिन ने ''इण्डियाना यूनिवर्सिटी'' में सहायक प्रोफेसर के रूप में कार्य करके Comparative Public Administration (C.P.A.) के क्षेत्र में काफी महत्वपूर्ण सहयोग दिया। इस यूनिवर्सिटी में उन्होंने लोक सेवाओं से संबंधित प्रशिक्षण संस्थान में भी शोध कार्य किया है। इसके अलावा इन्होंने Temmesse Authority के रूप में भी कार्य किया है। अन्य विद्वानों की तरह विकासशील देश इनके शोध का विषय रहे। जिनमें दक्षिण-पूर्वी एशिया प्रमुखतः हैं। 1950-60 के दौरान इन्होंने वियतनाम, थाइलैण्ड, फिलीपिन्स आदि देशों की संस्कृति, समाज, अर्थव्यवस्था और प्रशासनिक व्यवस्था के संदर्भ में शोध किया।

सिफिन का C.A.G. के अन्य विद्वानों के साथ मिलकर थाईलैण्ड के संबंध में नौकरशाही का मॉडल के विकास संदर्भ में महत्वपूर्ण योगदान रहा। जिसे Thai-Model of Bureaucracy कहा जाता है। C.A.G. के विद्वानों के साथ मिलकर Theory-Building में भी सिफिन की भूमिका सराहनीय रही। सिफिन के इस संदर्भ में प्रयास थे कि यह विकासशील देशों के विकास से संबंधित राजनैतिक एवं प्रशासनिक पहलू पर आधारित था। इन प्रयासों मे फैरल हैडी ने सिफिन का सहयोगात्मक साथ दिया।

C.A.G. के विद्वानो ने एक ऐसा मॉडल तैयार करने का प्रयास किया जो विकासशील देशों के संदर्भ में सार्वभौमिक हो। विलियम सिफिन ने इस टीम के एक मुख्य सदस्य की भूमिका निभाई।

कृतिः- Towards a Comparative Public Administration

C.P.A. में सिफिन का मुख्य योगदान निम्न प्रकार रहाः-

1. **प्रशासनिक संस्कृतियेां का तुलनात्मक अध्ययनः** तीसरी दुनिया की प्रशासनिक व्यवस्था के गहन अध्ययन की आवश्यकता को देखते हुए सिफिन ने इन देशों में सामाजिक एवं सांस्कृति पहलू का अध्ययन किया। यदि इस द ष्टिकोण से इन देशों का अध्ययन किया जाए तो विकास के संदर्भ में बनने वाली नीतियां सफल होने में असक्षम रहेगी। इसके अलावा इन देशों के प्रशासन के पास नीतियों का अभाव है। जो विकास के उद्देश्यों को पूर्ण प्राप्त कर सकें। इसी कारण इन देशों की प्रशासनिक व्यवस्था के विकास संबंधी नीति को कार्य रूप देने के संदर्भ में सामाजिक एवं सांस्कृतिक पहलूओं का अध्ययन आवश्यक हो जाता है। इस प्रकार दक्षिण पूर्वी एशिया के देशों की संस्कृतियों का तुलनात्मक अध्ययन काफी लाभदाय सिद्ध हुआ है।
2. **प्रशासनिक व्यवस्थाओं के पुनर्निर्माण पर बलः** इन देशों के सांस्कृतिक अध्ययन के आधार पर सिफिन ने बताया कि इन देशों की प्रशासनिक व्यवस्थाओं को पुनर्निर्माण की आवश्यकता है। खासतौर से पुरानी संस्थाओं को तो अनिवार्य रूप से बदलने का सुझाव दिया। इस तरह से पुननिर्माण किए बगैर इन देशों का विकास करना काफी पेचीदापूर्ण है पुरानी संस्थाओं के पुननिर्माण का कार्य धीरे-धीरे करना पड़ा न कि एक दम बदल दिया। अचानक बदलने से इसके दुष्परिणाम दिखाई दे सकते थे।

3. **भ्रष्टाचार का विश्लेषणः** इन विकासशील देशों में व्याप्त भ्रष्टाचार को भी सिफिन ने अध्ययन का मुद्दा बनाया। सिफिन ने न केवल भ्रष्टाचार के रूपों का अध्ययन किया बल्कि समस्या के सैद्धान्तिक पहलू का भी अध्ययन किया। सिफिन ने आम शब्दों में भ्रष्टाचार की परिभाषा नहीं दी उसने अपने अर्थों में परिभाषा दी कि सिफिन का मानना है कि भ्रष्टाचार केवल मुद्रा का लेन-देन मात्र नहीं है बल्कि अपने दायित्वों, अधिकारों का पूर्णतः निर्वहन करना भी भ्रष्टाचार है।'' एक द ष्टि से देखा जाए तो यह परिभाषा काफी महत्वपूर्ण है क्योंकि यह प्रशासन में अकार्य कुशलता एवं दूसरी बुराइयों को भी पीछे छोड़ देता हैं सिफिन ने इन देशों के भ्रष्टाचार को दो भागों में विभक्त किया हैः-

A. राजनैतिक भ्रष्टाचार

B. प्रशासनिक भ्रष्टाचार

A. **राजनैतिक भ्रष्टाचारः** इस प्रकार के भ्रष्टाचार को सिफिन ने **''सवैधानिक प्रावधानों का उल्लंघन''** कहा है इस तरह का भ्रष्टाचार इन देशों में उच्च से निम्न स्तर तक पाया जाता है। राजनैतिक स्तर पर लिए गए निर्णय सवैधानिक प्रावधानों के तहत सवैधानिक निर्णय दर्शाते हैं। इस कारण इनकी वैधानिकता पर प्रश्नचिन्ह लग जाता है। इस कारण सिफिन इन देशों की विशेषता के रूप में कहता है कि अतार्किक या तर्क रहित फैसला लेने की क्षमता इनकी एक अच्छी विशेषता हैं इन देशों की राजनीति के तर्क रहित निर्णयों के परिणामस्वरूप इन देशों में विकास के संदर्भ में व्यवस्थित नीति के बजाए जाने का अभाव रहा है। इस प्रकार ऐसी नीतियाँ देश के विकास में सहायक बनने की बजाए स्वयं विकास में बाधा बनती हैं।

B. प्रशासनिक भ्रष्टाचारः राजनैतिक स्तर के साथ-साथ इन देशों का प्रशासनिक स्तर भी भ्रष्टाचार में व्याप्त है। इसका प्रमुख कारण यह है कि विकास के लिए एक उचित नीति के ना होने पर नौकरशाही वर्ग अपनी शक्तियों का मनचाहा प्रोगय करती हैं। यानि यूं कहा जा सकता है कि ऐसी नीतियों को क्रियान्वयन करते समय ये अपने नियम कानूनों को सोपते हैं। इस स्थिति का एक कारण यह भी है जब नीतियां बनाई जाती हैं तो वह तार्किकता से परे होती हैं। इसी का फायदा नौकरशाही वर्ग उठाता है। सिफिन यह भी कहते हैं कि इन देशों में साधन तो हैं पर साध्य की अस्पष्टता हैं। इसी साध्य की अस्पष्टता के कारण प्रशासनिक व्यवस्था नामक धरातल पर भ्रष्टाचार नामक बीज अंकुरित होता है। भ्रष्टाचार की ऐसी प्रव तियों को सिफिन दो भागों में बांटता हैः-

   A. आंतरिकः इसनें नियमों कानूनों को लागू न करने की प्रव त्ति पाई जाती है।

   B. बाह्यः इसमें पर्यावरण से संबंधित बातें होती हैं।

   सिफिन कहता है कि यदि प्रशासनिक भ्रष्टाचार खत्म करना है तो पहले राजनैतिक भ्रष्टाचार खत्म करना होगा। सिफिन के इस प्रकार के विश्लेषण से राजनैतिक एवं प्रशासनिक भ्रष्टाचार की समस्या को समझने में काफी सहायक भूमिका निभाई है।

4. **विकास का नौकरशाही मॉडलः** इन देशों में सांस्कृतिक, सामाजिक, राजनैतिक व्यवस्था आदि का अध्ययन करने के बाद सिफिन ने विकास के मॉडल स्थापित करने के प्रयास किए। विकास के इस प्रतिमान को उसने राजनीतिक मॉडल को तत्व की महता दी है। इस संदर्भ मे सिफिन ने इन देशों के प्रशासन के संदर्भ में कुछ प्रक्रिया भी निर्धारित की है जो विकास की नीतियों को सही ढंग से क्रियान्वित कर सके। इन प्रक्रियाओं की प ष्टभूमि में नौकरशाही की भूमिका प्रमुखतः रहती हैं इस प्रकार निर्धारित प्रक्रियाएं, महत्वपूर्ण शर्तें इस प्रतिमान में रहेंगे। इसके साथ-साथ नौकरशाही के ढांचे को भी विकास के संदर्भ में महत्वपूर्ण बताया उसकी इस मान्यता का आधार इन देशों में राजनैतिक संस्थाओं की कमजोरी हैं और नौकरशाही ही इन देशों में सामाजिक विकास में प्रयासरत है।

5. **तकनीकी का महत्व या प्रभावः** सिफिन ने प्रशासनिक व्यवस्थाओं पर तकनीकी प्रभाव जाने के संदर्भ में शोध कार्य किए इसमें उसका योगदान हम दो भागों में बांट सकते हैं -

   A. सिफिन ने आधुनिक तकनीकी का प्रभाव प्रशासनिक संदर्भ में जानने के लिए बल दिया और यह भी बताया कि आधुनिक तकनीक की आधुनिक कार्यवाही में ज्यादा-से-ज्यादा प्रयोग विकासशील देशों की प्रशासनिक प्रक्रियाओं में सुधार एवं बदलाव ला सकता है।

B. दूसरी तरफ आधुनिक तकनीक का प्रशासनिक कार्यवाही में प्रयोग राजनैतिक प्रशासनिक भ्रष्टाचार को दूर करने में मदद कर सकता है। इन देशों की पुरानी तकनीक यहां की प्रशासनिक कार्यवाही की कार्यकुशलता में मुख्य बाधा हैं इस बाधा के कारण वे नीतियां सही रूप से क्रियान्वित नहीं हो पाती हैं जो विकास के संदर्भ में बनाई जाती हैं। आधुनिक तकनीक का प्रयोग केवल विकास नीति को प्रभावित करता है। बल्कि प्रशासन में निर्णय को बढ़ा देता है

6. **व्यवसायवाद का प्रभावः** विकासशील देशों में प्रशासनिक भ्रष्टाचार की समस्या को दूर करने के संदर्भ में इन देशों के प्रशासन में सिफिन ने व्यवसायवाद या व त्विता की आवश्यकता बताई है। व्यवसायवाद को भ्रष्टाचार दूर करने का एक महत्वपूर्ण तत्व माना है। इसके पीछे सिफिन की यह मान्यता है कि आर्थिक विकास के कार्यक्रम को लागू करने के लिए प्रशिक्षित मानवीय शक्ति की आवश्यकता होती है। इसलिए इन देशों की मानवीय शक्ति के व्यवसायवादिता पर आधुनिकीकृत करना अति आवश्यक है। इस प्रकार विकास के नौकरशाही के प्रतिमान, जो सिफिन ने विकासशील देशों के लिए, Proffessionalised मानवीय शक्ति पर बल दिया।

7. योगदान का मूल्यांकनः सिफिन ने C.P.A. के क्षेत्र में कार्य महत्वपूर्ण सहयोग दिया, विशेषकर C.A.G. के सदस्य के रूप में प्रमुख भूमिका निभाई। विकास का एक प्रतिमान बनाने की भी कोशिश की। जिसे नौकरशाही का प्रतिमान कहा जा सकता हैं यह प्रतिमान विकासशील देशों की प्रशासनिक व्यवस्था के स्वरूप को प्रदर्शित करता है। सिफिन ने सबसे पहले इन देशों की प्रशासनिक एवं राजनैतिक भ्रष्टाचार को परिभाषित करने की कोशिश की। सिफिन का मानना था कि इस समस्या को समझे बगैर इसका हल निकालना मुश्किल है। इसके अलावा आधुनिक तकनीक का अधिकतम प्रयोग का सुझाव दिया यह भ्रष्टाचार के उन्मुलन में सहायक रहता है। भ्रष्टाचार उन्मुलन में Professionalism व्यवसायवाद या व्यवसायीकरण मददगार रहता हैं। सिफिन C.P.A. के क्षेत्र में अपनी विचारधारा प्रदान करके इस क्षेत्र में काफी महत्वपूर्ण एवं सराहनीय कार्य किया है।

Unit-IV

अध्याय-14
ग्रेट ब्रिटेन में राजनीतिक कार्यपालिका
(Political Executive in Great Britain)

ग्रेट ब्रिटेन की संसदीय शासन पद्धति में सम्राट नाममात्र की कार्यपालिका है जिस स्वर्णिम शून्य तथा रबड़ की मुहर कहा जाता है। उसे देश का संवैधानिक और औपचारिक प्रधान माना जाता है, लेकिन देश की वास्तविक राजनीतिक कार्यपालिका वहां का प्रधान मंत्री व उसका मंत्रिमंडल है। ग्रेट ब्रिटेन की राजनीतिक कार्यपालिका में सम्राट तथा क्राउन, प्रधानमंत्री व मंत्रिमंडल आते हैं जिनका वर्णन निम्नलिखित है।

सम्राट तथा क्राउन
(King and the Crown)

एक समय था जब सम्राट स्वयं समस्त शक्तियों का प्रयोग करता था। लेकिन प्रजातंत्र के विकास के साथ-साथ राजा के अधिकार ताज में हस्तांतरित हो गए। वर्तमान में सम्राट केवल संवैधानिक अध्यक्ष बन गया और वास्तविक शक्तियों का प्रयोग क्राउन द्वारा होने लगा। राजा, मंत्रिमंडल व संसद के अद्‌भुत समन्वय को ताज कहते हैं। सम्राट व ताज के स्वरूप और शक्तियों में प्रमुख अंतर इस प्रकार हैं-

1. सम्राट अथा साम्राज्ञी एक व्यक्ति है जबकि ताज एक संस्था है। सम्राट की म त्यु हो सकती है, किंतु संस्था के रूप में ताज अमर रहता है। ब्लैकस्टोन के शब्दों में "हेनरी, एडवर्ड या जार्ज मर सकते हैं, लेकिन ताज कभी नहीं मरता"। ब्रिटेन में कहावत है कि "सम्राट मर गया, सम्राट चिरंजीव हो"। इसका अर्थ है कि व्यक्ति के रूप में सम्राट एक नश्वर प्राणी है, किंतु संस्था के रूप में वह अमर है।
2. सम्राट व ताज में भेद उस समय द ष्टिगोचर हुआ जब ब्रिटिश जनता के राजाओं के निरंकुश अधिकारों का विरोध किया। प्रारंभ में, सभी शक्तियां राजा में निहित थीं, किंतु कालांतर में उसकी शक्तियां ताज में हस्तांतरित होती चली गई। ताज वह संस्था है जो अब उन सभी परमाधिकारों और शक्तियों का प्रयोग करती है जिनका प्रयोग कभी राजा स्वयं करता था।
3. सम्राट एक शरीरधारी व्यक्ति होता है, जबकि ताज एक अमूर्त्त विचार है। फाइनर के शब्दों में, "जब हम राजनीति में ताज के कार्यो की विवेचना करते हैं तब हमारा तात्पर्य उस प्ररेक शक्ति से होता है जिसका निर्माण जनता, संसद तथा मंत्रिमंडल ने शताब्दियों के संवैधानिक विकास द्वारा स्थापित कुछ औपचारिक प्रबंधानुसार किया है। ताज इन राजनीतिक शक्तियों के असली केंद्र के ऊपर एक अलंक त उपाधि है।" ताज एक क त्रिम व्यक्ति है। वह संपूर्ण शक्तियों का प्रयोग जनता द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधियों की सलाह से करता है। अतः उसे 'जनता की इच्छा' भी कहा जा सकता है।
4. सम्राट का पद वंशानुगत है। वह केवल संवैधानिक अध्यक्ष है। वेड व फिलिप्स के शब्दों में, "ताज शब्द शासन की समस्त शक्तियों का प्रतीक तथा कार्यपालिका का पर्यायवाची है। ताज की कुछ शक्तियों के प्रयोग में सम्राट अपने व्यक्तिगत विवेक का प्रयोग कर सकता है। सम्राट कुछ शक्तियों का प्रयोग अपने मंत्रियों के पूर्ण उत्तरदायित्व पर करता है। कुछ शक्तियों के प्रयोग में सम्राट का कोई भाग नहीं होता। अधिकांश कानूनी शक्तियां मंत्रियों में निहित होती हैं और वे उनका प्रयोग अपनी सरकारी क्षमता के अनुसार करते हैं, यद्यपि उनका प्रयोग कम या अधिक रूप में ताज की ओर से होता है।"

क्राउन का शाब्दिक अर्थ है- "वह टोपी जिसे सम्राट राजपद के चिन्ह-स्वरूप पहनता है।" ताज की शक्तियां अपरिमित हैं किंतु उसके धारक सम्राट की शक्तियां सीमित हैं। वैद्यानिक द ष्टिकोण से सम्राट सर्वशक्तिमान है, किंतु व्यवहार में वह केवल एक संवैधानिक अध्यक्ष (Constitutional Head) है। यद्यपि सैद्धांतिक द ष्टिकोण से ब्रिटेन में आज भी राजतंत्र है, किंतु व्यवहार में यहां लोकतंत्रात्मक शासन पद्धति को अपनाया गया है। अभिसमयों के आधार पर समस्त अधिकार संसद और मंत्रिमंडल को प्राप्त हैं। जार्ज द्वितीय ने इस तथ्य को स्वीकार करते हुए 1774 में हार्डविक (Hardwicke) को कहा था कि "इस देश के मंत्रिगण ही वास्तविक राजा हैं।" लगभग सौ वर्षो बाद यह उक्ति सत्य सिद्ध हो गई। आज समस्त शक्तियां सम्राट सहित संसद को प्राप्त हैं।

क्राउन कोई व्यक्ति विशेष नहीं है। यह एक अमूर्त भावना है। सिडनी लॉ ने इसे एक 'सुविधाजनक कामचलाऊ उपकल्पना' (a convenient working hypothesis) कहा है। यह एक क त्रिम तथा विधि निर्मित व्यक्ति है। यह अनश्वर तथा अद श्य है। यह शासन की समस्त शक्तियों का मिश्रित रूप है। ऑग व जिंक के शब्दों में, "क्राउन सर्वोच्च कार्यपालिका तथा सरकार की नीति का निर्माण करने वाली संस्था है, जिसका अर्थ है राजा, मंत्रियों तथा संसद का सम्मिश्रण। यह वह संस्था है जिसे धीरे-धीरे राजा की समस्त शक्तियां तथा विशेषाधिकार हस्तांतरित कर दिए गए हैं।" इस प्रकार राजा, मंत्रियों तथा संसद के कुल योग को ताज कहते हैं।

क्राउन की शक्तियों के स्त्रोत

(Sources of Crown's powers)

क्राउन अथवा ताज की शक्तियों के दो मुख्य स्त्रोत हैं-

1. परमाधिकार (Prerogatives)
2. संविधि (Statutes)

मंत्रिमंडल व संसद को हस्तांतरित शक्तियों के उपरांत जो अवशिष्ट शक्तियां बचती हैं उन्हें ही सम्राट का परमाधिकार कहा जाता है। ये सामान्य विधि (Common Law) पर आधारित हैं। इसमें विभिन्न विभागों के संचालन अथवा नियंत्रण से संबंधित अधिकार सम्मिलित हैं। डायसी के अनुसार, "परमाधिकार उस स्वेच्छाधारी या निरंकुश शक्ति का अवशेष है जिसे किसी समय क्राउन के हाथों में छोड़ दिया गया हो।" इसी प्रकार ब्लैकस्टोन के शब्दों में, "परमाधिकार वह श्रेष्ठता है जो राजा को किसी कानून द्वारा प्राप्त न होकर उसको अपने राजसी महत्त्व के कारण अन्य सभी व्यक्तियों के अतिरिक्त प्राप्त हैं।" सामंत होने के कारण सत्रहवीं शताब्दी तक सम्राट को कुछ विशेषाधिकार प्राप्त थे। सम्राट तथा संसद के बीच हुए संघर्ष के फलस्वरूप सम्राट के व्यक्तित्व में निहित कुछ परमाधिकार संसद द्वारा अपहृत कर लिए गए। कुछ अधिकार अधिनियमों द्वारा अवैध घोषित कर दिए गए तथा अन्य प्रयोग में न आने के कारण स्वयंमेव लुप्त हो गए। अवशिष्ट परमाधिकार को क्राउन ने अंगीक त कर लिया। उदाहरणार्थ, संसद के अधिवेशन को बुलाना, युद्ध अथवा तटस्थता की घोषणा करना, संधि और समझौते करना, न्याय करना, सेनाओं का संचालन करना, इत्यादि क्राउन के उल्लेखनीय परमाधिकार हैं। इन परमाधिकारों का प्रयोग सम्राट अपने मंत्रिमंडल के परामर्श से करता है।

क्राउन की बहुत सी शक्तियां संसद द्वारा निर्मित अधिनियमों पर भी आधारित हैं। संविधि द्वारा प्राप्त शक्तियां वे शक्तियां हैं जिन्हें संसद द्वारा कार्यपालिका को सौंपा गया हो। इसमें विभिन्न विभागों के प्रबंध, महत्वपूर्ण नियुक्तियों और प्रशासनिक अधिकारियों पर नियंत्रण संबंधी प्राधिकार सम्मिलित हैं। इसके अतिरिक्त क्राउन की कुछ ऐसी शक्तियां हैं जो न परमाधिकार पर आधारित हैं और न ही संसदीय अधिनियमों पर। मूलतः वे अधिकार की उपज हैं, किंतु बाद में उन्हें अधिनियमों द्वारा परिभाषित अथवा सीमित कर दिया गया है। क्राउन की शक्तियों में निरंतर परिवर्तन होता रहता है जिसके फलस्वरूप उनमें कमी अथवा व द्धि होती रहती है। एक ओर अधिकार-पत्र, मैग्नाकार्टा व शक्तियों का प्रयोग न करने से क्राउन की शक्तियों में कमी आई है तो दूसरी ओर अभिसमयों तथा अधिनियमों के द्वारा उसकी शक्तियों में व द्धि भी हुई है। ऑग और जिंक के शब्दों में, "किसी भी समय क्राउन की शक्तियां इस खींचातानी से उत्पन्न अधिकारों का योग है।"

क्राउन की शक्तियां

(Powers of Crown)

क्राउन की समस्त शक्तियों का प्रयोग मंत्रिपरिषद के परामर्श पर सम्राट द्वारा किया जाता है। सम्राट एक नाममात्र का शासक है जो अपने किसी भी कार्य के लिए उत्तरदायी नहीं होता। संसदीय प्रणाली में शासन की समस्त गतिविधियों के लिए मंत्रिमंडल ही संसद के प्रति उतरदायी होता है। क्राउन की शक्तियों का विस्त त वर्णन इस प्रकार है-

1. **कार्यपालक-शक्तियां (Executive Powers)** - कार्यपालिका की सभी शक्तियां क्राउन में निहित हैं। यह समस्त देश के शासन के लिए उत्तरदायी होता है। प्रधानमंत्री, मंत्रिमंडल के सदस्यों, सेनाध्यक्षों, न्यायाधीशों व उच्च पदाधिकारियों की नियुक्ति क्राउन द्वारा की जाती है। इसी प्रकार अधिराज्यों (Dominions) के महाराज्यपाल (Governor-General) की नियुक्ति भी क्राउन द्वारा की जाती है। वह राष्ट्रीय कोष पर नियंत्रण रखता है तथा संसद की स्वीक ति से राजस्व को एकत्रित कर सकता है और व्यय भी। न्यायाधीशों को छोड़कर वह प्रशासनिक अधिकारियों को अपदस्थ भी कर सकता है। सम्राट राष्ट्रीय सेनाओं का सर्वोच्च सेनापति होता है। वह युद्ध अथवा तटस्थता की घोषणा कर सकता है। वह अन्य देशों के साथ संधि व समझौते करता है। ताज ही विदेशों में ब्रिटेन के राजदूतों और अन्य कूटनीतिक प्रतिनिधियों की नियुक्ति करता है। वह अन्य देशों से आए हुए राजदूतों के प्रमाण-पत्रों को ग्रहण करता है। क्राउन ही भारत, ऑस्ट्रेलिया, कनाडा, न्यूजीलैंड इत्यादि राष्ट्रमंडलीय देशों का औपचारिक (formal) अध्यक्ष होता है।

2. **विधायी शक्तियां (Legislative Powers)** - सम्राट सहित संसद को संवैधानिक द ष्टिकोण से विधि-निर्माण का अधिकार प्राप्त है। किसी भी विधेयक को जब संसद द्वारा कानून का रूप दिया जाता है तो उसमें लिखा होता है, "यह अधिनियम सम्राट द्वारा लार्ड सभा के सदस्यों की अनुमति से और उनके अधिकार से पारित किया जाता है।" सम्राट संसद के प्रथम अधिवेशन को बुलाने अथवा से भंग करने का अधिकार रखता है। यह संसद के प्रथम अधिवेशन को बुलाने अथवा उसे भंग करने का अधिकार रखता है। यह संसद के प्रथम अधिवेशन में भाषण देता है जिसे 'सिंहासन भाषण' (Speech from the Throne) कहा जाता है। इसमें शासन की राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय नीतियों पर प्रकाश डाला जाता है। इसके अतिरिक्त ताज सपरिषद आदेश (Orders-in-Council) जारी करता है। ये साधारण प्रशासकीय नियम हो सकते हैं अथवा संसद द्वारा आज्ञा प्राप्त अधिनियम भी। वर्तमान समय में इस प्रकार के आदेशों की संख्या बहुत बढ़ गई है। इनका महत्व कानून के सद श होता है। वित्त विधेयक सम्राट की पूर्वानुमति से ही लोक सदन में प्रस्तुत किए जा सकते हैं। सम्राट को विधेयकों पर निषेधाधिकार (Veto) प्राप्त है, परंतु 1707 के बाद से इनका प्रयोग नहीं किया गया है। अतः अब यह परंपरा बन गई है कि सम्राट इस विशेषाधिकार का प्रयोग नहीं करेगा।

3. **न्यायिक शक्तियां (Judicial Powers)** - ताज न्याय का स्त्रोत है। ब्रिटेन के समस्त न्यायालय सम्राट के न्यायालय हैं। प्राचीन समय में सम्राट का सद्विवेक न्याय की अंतिम शक्ति माना जाता था। यद्यपि ब्रिटेन में स्वतंत्र एवं निष्पक्ष न्यायालय की स्थापना की गई है, तथापि ताज को अनेक न्यायिक शक्तियां प्राप्त हैं। सम्राट ही मंत्रिपरिषद की सहमति से प्रमुख न्यायाधीशों की नियुक्ति करता है, किंतु न्यायाधीशों को संसद द्वारा महाभियोग लगा कर ही पदच्युत किया जा सकता है। समस्त फौजदारी मुकद्दमों पर ताज की ओर से ही विचार-विमर्श होता है। सम्राट प्रिवी कौंसिल की न्याय-समिति के आधार पर उपनिवेशों व अधिराज्यों की अपील भी सुनता है। सम्राट को दंड में कमी करने, दंड को स्थगित करने अथवा क्षमादान का भी अधिकार प्राप्त है। प्रशासनिक न्याय व्यवस्था के अंतर्गत कार्यपालिका के उच्च पदाधिकारी भी कुछ क्षेत्रों में ताज के नाम पर न्यायिक निर्णय करते हैं।

4. **धार्मिक शक्तियां (Religious Powers)** - ताज ब्रिटिश चर्च का अध्यक्ष है। ब्रिटेन में एंग्किलन (Anglican) व प्रेसबिटेरियन (Presbyterian) चर्च के ही अंग हैं। फलतः ताज की कैंटरबरी के आर्क बिशप, मिशन तथा अन्य धार्मिक पदाधिकारियों की नियुक्ति करता है। ताज ही चर्च की सभाओं का आयोजन करता है और अनुशासन संबंधी नियमों की अनुमति प्रदान करता है। धार्मिक न्यायालयों की अंतिम अपील प्रिवी कौंसिल की न्यायिक समिति के पास आती है। स्कॉटलैंड में स्थापित चर्च के संबंध में ताज की शक्तियां अधिक महत्वपूर्ण नहीं हैं किंतु ब्रिटिश चर्च की राष्ट्रीय सभा की समस्त गतिविधियां सम्राट की अनुमति से होती हैं।

5. **अन्य शक्तियां (Miscellaneous Powers)** - सम्राट सम्मान का स्त्रोत है। वह स्वयं समाज में सर्वाधिक सम्मानित व्यक्तित्व है। वह राष्ट्र की एकता एवं गौरव का प्रतीक है। अंर्तराष्ट्रीय क्षेत्र में भी उसका विशेष महत्त्व है। वह ब्रिटेन तथा अन्य प्रतीकात्मक अध्यक्ष है। सम्राट सामाजिक उत्सवों में सक्रिय भाग लेता है। वह अपने जन्म दिवस तथा नव वर्ष के उपलक्ष्य में विशिष्ट नागरिकों को उपाधियों से विभूषित करता है। सम्राट कुछ व्यक्तियों को संरक्षण (patronage) भी प्रदान कर सकता है। प्रधानमंत्री के परामर्श से वह नए 'पीअर' (peer) नियुक्त कर लार्ड सभा के सदस्यों की संख्या में व द्धि कर सकता है, जिसका राजनीति में विशेष महत्त्व हो सकता है।

सम्राट के विशेषाधिकार व उन्मुक्तियां

(Royal Privileges and Immunities)

वैधानिक द ष्टिकोण से सम्राट की स्थिति महत्त्वपूर्ण है। उसके विरुद्ध षड्यंत्र या विद्रोह की सजा मौत है। ऑग के शब्दों में, "राजा को कुछ व्यक्तिगत उन्मुक्तियां व विशेषाधिकार प्राप्त हैं। किसी न्यायालय में उसके व्यक्तिगत आचरण के विरुद्ध अभियोग नहीं लगाया जा सकता है और न ही कोई वैधानिक प्रक्रिया लागू की जा सकती है। न उसे बंदी बनाया जा सकता है और न ही उसकी संपत्ति नीलाम हो सकती है और जब तक वह किसी राजमहल में रहता है वहां उसके विरुद्ध कोई न्यायिक प्रक्रिया शुरू नहीं की जा सकती।"

सम्राट की वास्तविक स्थिति

(Real Position of the Sovereign)

यद्यपि सरकार की वास्तविक सत्ता सम्राट में निहित नहीं होती, तथापि सम्राट का पद महान प्रतिष्ठापूर्ण, गौरवशाली तथा प्रभावकारी है। साम्राज्ञी विक्टोरिया के विषय में कहे गए बैजहॉट के शब्द आज भी उसके उत्तराधिकारियों के विषय में सत्य सिद्ध होते हैं, "एक गौरवपूर्ण स्थिति में साम्राज्ञी की उपयोगिता अतुलनीय है। यदि वह ब्रिटेन में न हो तो वर्तमान अंग्रेजी सरकार विफल हो जाएगी और उसका अंत हो जाएगा।" सम्राट राज्य का प्रतीक है। वह सुदूर व्याप्त साम्राज्यों की एकता का आधार है। यदि ब्रिटेन में गणराज्य स्थापित हो जाए तो राज्याध्यक्ष को कनाडा, ऑस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड इत्यादि देशों से वह सम्मान नहीं मिलेगा जो वर्तमान साम्राज्ञी एलिजाबेथ को प्राप्त है। सम्राट ब्रिटिश तथा अन्य अधिराज्यों और उपनिवेशों के बीच कड़ी का काम करता है। सिडनी तथा बीट्रिस वैब के शब्दों में, "ब्रिटिश सम्राट का विशेष कार्य, किसी भी रूप में, शासन की शक्तियों का प्रयोग करना नहीं है, अपितु इससे सर्वथा भिन्न है, वह उन संस्कारों को सम्पन्न करता है जो ब्रिटिश जाति की राजनीतिक संस्थाओं को ऐतिहासिक निरंतरता का सौंदर्य प्रदान करते हैं और जो वर्तमान स्थितियों में राष्ट्रमंडल की जातियों तथा मतावलम्बियों में एकता की भावना बनाए रखने में अत्यधिक सहायक सिद्ध हुए हैं।" सम्राट कुछ उपयोगी कार्य भी करता है जैसे विदेशी राजदूतों का स्वागत करना, सिंहासन-भाषण देना तथा पीअर की नियुक्ति इत्यादि। सम्राट सम्मान तथा शक्ति दोनों का प्रतीक है।

सम्राट का पद केवल एक अलंकरण की वस्तु नहीं है और न ही उसकी स्थिति स्वर्णिम शून्य (golden zero) की है। अनेक अवसरों पर सम्राट अपनी बुद्धिमत्ता, निष्पक्षता, कूटनीतिज्ञता व कार्यकुशलता द्वारा शासन पद्धति पर व्यापक प्रभाव डाल सकता है। प्रश्न उठता है कि क्या ब्रिटिश सम्राट मंत्रिमंडल के परामर्श के बिना, स्वेच्छापूर्वक कोई कार्य कर सकता है? बेजहॉट, एन्सन, कीथ इत्यादि की द ष्टि में ब्रिटेन का सम्राट स्वेच्छा से प्रधानमंत्री की नियुक्ति कर सकता है, लोक सदन को भंग करा सकता है और पुननिर्वाचन भी करा सकता है। सम्राट के इन परमाधिकारों का वास्तविकता में प्रयोग नहीं किया जाता, फिर भी विशेष राजनीतिक तथा राष्ट्रीय आपातकालीन स्थितियों में उनके फिर से महत्वपूर्ण हो जाने की संभावना से इंकार नहीं किया जा सकता।

प्रधानमंत्री की नियुक्ति करना सम्राट का एक महत्वपूर्ण अधिकार है जिसके प्रयोग के लिए वह निव त होने वाले प्रधानमंत्री के परामर्श को मानने के लिए बाध्य नहीं है। प्रधानमंत्री को चुनने का उसका अधिकार सीमित है। सम्राट लोकसदन के बहुमत प्राप्त दल के नेता को ही प्रधानमंत्री चुनता है, किंतु कई बार स्पष्ट बहुमत प्राप्त न होने की स्थिति में, सम्राट स्वेच्छापूर्वक निर्णय ले सकता हैं 1894 में ग्लैडस्टोन के बाद साम्राज्ञी विक्टोरिया ने सर विलियम हारकोर्ट बटलर के स्थान पर लार्ड रोजबरी को प्रधानमंत्री नियुक्त किया। 1923 में सम्राट जार्ज प्रथम ने प्रधानमंत्री बोनर ला के त्यागपत्र दे देने पर, उपप्रधानमंत्री लार्ड कर्जन के स्थान पर बाल्डविन को प्रधानमंत्री बनाया। इसी विशेषाधिकार का प्रयोग कर 1931 में जार्ज पंचम ने मैक्डानल को संयुक्त

सरकार का प्रधानमंत्री नियुक्त किया। उदार बल के समर्थकों ने इसे सम्राट की सफलता माना और संवैधानिक भी, किंतु लास्की व ग्रीव्स के अनुसार, सम्राट का यह आचरण संवैधानिक भावना के अनुकूल न था। इसी प्रकार 1940 में चेम्बरलेन के स्थान पर चर्चिल, 1957 में उपप्रधानमंत्री बटलर के स्थान पर हैराल्ड मैक्मिलन को प्रधानमंत्री चुना गया जिससे सिद्ध होता है कि सम्राट प्रधानमंत्री के चुनाव में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।

विशेष राजनीतिक परिस्थितियों में सम्राट संसदीय शासन में हस्तक्षेप भी कर सकता है। जैनिंग्स के मतानुसार, यदि सम्राट को ऐसा विश्वास हो जाये कि सत्तारूढ़ दल को लोकसदन में बहुमत प्राप्त नहीं है तो वे मंत्रिमंडल को त्यागपत्र देने अथवा लोकसदन के विघटन पर जोर दे सकता है। 1918 से यह परंपरा स्थापित हो चुकी है कि सम्राट प्रधानमंत्री के परामर्श पर ही लोकसदन को विघटित करेगा। कार्टर का विचार है कि "जब राजा स्वेच्छा से कार्य करे तो उसे प्रत्यक्ष आलोचना के लिए भी तैयार रहना चाहिए क्योंकि वास्तव में विवादास्पद समस्याओं में हस्तक्षेप करना उचित नहीं है।" कीथ के शब्दों में, "इस शक्ति का प्रयोग बुद्धिमत्तापूर्वक केवल गंभीर परिस्थितियों में ही किया जाना चाहिए।"

सम्राट को केवल संवैधानिक अध्यक्ष के रूप में स्वीकार करना प्रतिक्रियावादी तत्त्वों को बढ़ावा देना मात्र है। शासन के दैनिक कार्यों, मंत्रिमंडल की नीतियों, विरोधी दलों के व्यवहार, संसद में विधि-निर्माण इत्यादि पर सम्राट का विशेष प्रभाव पड़ता है। एक बार रूढ़िवादी दल ने 'आयरिश स्वशासन विधेयक' को ग ह-युद्ध का सूचक मानकर सम्राट जार्ज प्रथम से उदारवादी सरकार व लोकसदन को भंग करने की मांग की थी। सम्राट के प्रभाव से प्रधानमंत्री एस्क्विथ ने एक समझौते को स्वीकार कर लिया जिसके परिणामस्वरूप उक्त विधेयक में कुछ संशोधन कर दिए गए। एक अन्य अवसर पर सामंत सदन के निषेधाधिकार को समाप्त करने के लिए लोकसदन में एक प्रस्ताव प्रस्तुत किया गया। प्रधानमंत्री ने तत्कालीन सम्राट जार्ज पंचम से सामंत सदन में नए पीअर बनाने की मांग की, ताकि इस प्रस्ताव को सामंत सदन में पारित कराया जा सके। इसी प्रश्न पर दो बार लोकसदन को भी भंग किया गया। अंत में सम्राट ने सूझ-बूझ से काम लिया। उसने गुप्त रूप से सामंत-सदन के सदस्यों को समझाया। इस प्रकार बिना नए पीअरों की नियुक्ति के उक्त विधेयक अधिनियम बना दिया गया। डायसी तथा एन्सन के अनुसार, सम्राट विशेष परिस्थितियों में प्रधानमंत्री की सलाह के बिना कार्य कर सकता है। 'आयरलैंड होमरूल बिल' पर सम्राट उस समय भी निषेधाधिकार का प्रयोग कर सकता था। कानूनी तौर पर सम्राट द्वारा परमाधिकारों के प्रयोग पर कोई बाधा नहीं है।

ब्रिटिश सम्राट का पद अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है। राजनीतिक और सार्वजनिक विषयों पर उसका विशेष प्रभाव द ष्टिगोचर होता है। जैनिंग्स के शब्दों में, "सम्राट केवल नाममात्र का प्रधान नहीं है। यद्यपि वह शासन-पोत का चालक नहीं है फिर भी उसे देखना है कि प्रधान-पोत क्रियाशील रहे।" इसी संदर्भ में बेजहॉट के ये शब्द स्मरणीय हैं कि, "प्रशासन तथा नीति निर्धारण के संबंध में सम्राट के तीन अधिकार हैं- परामर्श के लिए पूछे जाने का अधिकार, प्रोत्साहित करने का अधिकार व चेतावनी देने का अधिकार।" एक कुशल सम्राट इन अधिकारों के द्वारा राजनीति के प्रवाह पर महत्त्वपूर्ण प्रभाव डाल सकता है। 'आयरिश स्वशासन विधेयक' पर जार्ज पंचम द्वारा प्रधानमंत्री एस्किवथ को दी गई चेतावनी राजनीतिक द ष्टि से बहुत प्रभावकारी सिद्ध हुई। जैनिंग्स के शब्दों में ब्रिटिश सम्राट को, "मंत्रिमंडल का लगभग एक सदस्य ही कहा जा सकता है, और वह एकमात्र निर्दलीय सदस्य होता है। वह सबसे अधिक जानकारी रखने वाला सदस्य भी होता है। केवल वही एक सदस्य है जिसे चुप रहने के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता। उसका पद अपने विचारों को एक प्रस्ताव में रखने वाले मंत्री अथवा प्रस्ताव न करने वाले मंत्रियों पर दबाव डाल सकता है। वह इससे भी अधिक कर सकता है, वह अपने विचारों को मानने के लिए प्रधानमंत्री पर जोर डाल सकता है जिसकी सत्ता मंत्रिमंडल के फैसलों में निर्णयकारी सिद्ध हो सकती है।" राजा शासन का 'आलोचक, परामर्शदाता और मित्र' होता है। राबर्ट पील के अनुसार, "राजा को, राज्य करने के पश्चात सरकारी तंत्र का ज्ञान समस्त देश में सबसे अधिक हो जाना चाहिए।" सम्राट ही एक ऐसा व्यक्ति होता है जो कि राष्ट्र हितों को सबसे अधिक समझ सकता है। वह सदैव राष्ट्रहित में मंत्रिमंडल की नीतियों को प्रोत्साहित कर सकता है।

राजनीतिक क्षेत्र में नहीं, अपितु राष्ट्रीय जीवन के सभी क्षेत्रों में सम्राट का प्रभाव व्याप्त है। उसका आचार-व्यवहार समाज के समक्ष आदर्श प्रस्तुत करता है। वह कला, विज्ञान, संस्क ति की उन्नति में विशेष रूचि लेता है। राजपरिवार के सदस्य अनेक प्रकार की सामाजिक सेवाओं में लग्न रहते हैं। राजतंत्र का ब्रिटिश जनता पर मनोवैज्ञानिक प्रभाव भी पड़ा है। ऑग व जिंक के शब्दों में, "जब सम्राट बकिंघम के महल में हो तो जनता सुख की नींद सोती है।" सम्राट के जीवन काल में उसके प्रभाव का अनुमान नहीं लगाया जा सकता, क्योंकि समस्त गतिविधियां गुप्त रखी जाती हैं। अब हम निश्चित रूप से कह सकते हैं

कि आयरलैंड के विभाजन के लिए स्वयं जार्ज पंचम भी उत्तरदायी था। अतः सिद्ध है कि सीमित राजतंत्र की मर्यादा में भी सम्राट की राजनीतिक शक्तियां नगण्य नहीं हैं।

ब्रिटिश प्रधानमंत्री
(The Prime Minister)

जिस प्रकार अध्यक्षीय प्रणाली मे राष्ट्रपति की स्थिति है उसी प्रकार संसदीय शासन व्यवस्था में प्रधानमंत्री सर्वोच्च शासक होता है। ब्रिटिश प्रधानमंत्री को अमेरिकी राष्ट्रपति की भांति शक्तिशाली पदस्थिति प्राप्त है। यद्यपि ब्रिटेन में मंत्रिमंडल तथा प्रधानमंत्री जैसी संस्थाएं बहुत प्राचीन हैं किंतु आधुनिक संसदीय प्रणाली के अनुरूप सन् 1721 में नियुक्त वाल्पोल को प्रथम प्रधानमंत्री माना जाता है। जब सम्राट जार्ज प्रथम ने केबिनेट की बैठकों में आना बंद किया तब से केबिनेट की अध्यक्षता के लिए प्रधानमंत्री पद बना। यद्यपि भारत की तरह ब्रिटेन में भी सामान्यतः उपप्रधानमंत्री पद स जित नहीं किया जाता है किंतु कभी-कभी उपप्रधानमंत्री भी बनाया जाता है।

योग्यताएं
(Qualifications/Eligibility)

ब्रिटेन में प्रधानमंत्री पद के लिए कोई निश्चित योग्यताएं निर्धारित नहीं हैं तथापि निम्नांकित परंपराएं निभाई जाती हैं-

1. उसे लोक सदन में बहुमत वाले राजनीतिक दल का नेता होना चाहिए। लॉर्ड सभा का सदस्य भी प्रधानमंत्री बनाया जा सकता है लेकिन सुस्थापित परंपरा यही है कि प्रधानमंत्री को लोक सदन का सदस्य होना चाहिए। यदि प्रधानमंत्री संसद का सदस्य नहीं है तो 6 माह में सदस्यता मिलनी आवश्यक है। यही शर्त मंत्रिपरिषद के सदस्यों पर लागू होती है।
2. उसकी छवि जनसाधारण के बीच लोकप्रिय एवं विश्वसनीय होनी चाहिए।
3. यदि कोई सत्तारूढ़ प्रधानमंत्री एवं मंत्रिमंडल अविश्वास प्रस्ताव इत्यादि के कारण त्यागपत्र देता है तो विपक्षी दल के नेता को प्रधानमंत्री पद का अवसर मिलता है यदि सदन में उसका बहुमत हो।

प्रधानमंत्री की नियुक्ति सम्राट द्वारा की जाती है तथा प्रधानमंत्री की अनुंशसा पर मंत्रिपरिषद के अन्य सदस्यों की नियुक्ति भी सम्राट ही करता है।

पदमुक्ति

प्रधानमंत्री अपनी इच्छा से त्यागपत्र दे सकता है। नये आम चुनावों के पश्चात् नये मंत्रिमंडल का गठन किया जाता है। लोक सदन में प्रधानमंत्री तथा उनके मंत्रिमंडल के विरुद्ध अविश्वास प्रस्ताव पारित होने अथवा विश्वास मत में हार हो जाने पर प्रधानमंत्री को पद त्याग करना पड़ता है।

प्रधानमंत्री की शक्तियां
(Powers of the Prime Minister)

ग्लैडस्टोन ने सच ही कहा है कि "कही भी इतने छोटे पदार्थ की इतनी बड़ी छाया नहीं पड़ती, कही भी ऐसा कोई मनुष्य नहीं है जिसे वास्तव में इतनी शक्ति प्राप्त हो, परंतु दिखाने के लिए जिसका औपचारिक अधिकार इतना कम हो।" वास्तव में प्रधानमंत्री उस समय तक अनियंत्रित रूप से शासन कर सकता है जब तक कि उसे लोकसभा में बहुमत प्राप्त हो। प्रधानमंत्री को ही सामान्य हितों का संरक्षक माना जाता है। रेमजे म्योर के शब्दों में, "उसकी शक्तियों को वैधानिक आधार प्राप्त नहीं है परंतु उसकी जितनी व्यापक शक्तियां प्राप्त है उतनी विश्व में किसी संवैधानिक अध्यक्ष को, यहां तक कि अमरीका के राष्ट्रपति को भी प्राप्त नहीं है।" प्रधानमंत्री ही वह केंद्र है जिसके चारों ओर समस्त शासनतंत्र परिक्रमा करता है। वह मंत्रिमंडल का अध्यक्ष, संसद का नेता, सम्राट का प्रमुख परामर्शदाता, अपने दल का सर्वमान्य नेता तथा सर्वोच्च शक्ति का साकार रूप है।

1. **मंत्रिमंडल का नेता** (Leader of the Cabinet) - प्रधानमंत्री मंत्रिमंडल का अध्यक्ष एवं नेता है। वह सम्राट की सहमति से मंत्रिमंडल के सदस्यों की नियुक्ति करता है तथा उनमें विभिन्न विभागों का वितरण करता है। उसे मंत्रियों के चुनाव

में पर्याप्त स्वतंत्रता होती है। वह उन्हें त्यागपत्र देने के लिए भी बाध्य कर सकता है। एमरी के शब्दों में, "अपने मंत्रिपरिषद के निर्माण में प्रधानमंत्री की जितनी स्वेच्छाचारी शक्ति होती है, उतनी शक्ति का उपभोग कोई अधिनायक भी नहीं करता।" मंत्रिमंडल के सदस्यों की संख्या कितनी हो अथवा उसमें कौन-कौन व्यक्ति लिए जायें, इत्यादि निर्णय प्रधानमंत्री संसद तथा दलीय कार्यपालिका के प्रभाव से मुक्त होकर करता है। व्यवहार में, प्रधानमंत्री को मंत्रिमंडल का निर्माण करते समय विभिन्न वर्गो, धर्मो, क्षेत्रों इत्यादि को प्रतिनिधित्व देना पड़ता है। प्रधानमंत्री ही मंत्रिमंडल को गति प्रदान करता है। मंत्रिमंडल की समस्त गतिविधियों पर उसका नियंत्रण होता है। विभिन्न मंत्रालयों में उत्पन्न मतभेदों का समाधान करना, विभिन्न विभागों में समन्वय स्थापित करना तथा उनकी समस्याओं पर विचार करना इत्यादि भी प्रधानमंत्री का कार्य है। प्रधानमंत्री ही मंत्रिमंडल की बैठकों की अध्यक्षता करता है। उसी के साथ समस्त मंत्रिमंडल का भविष्य जुड़ा हुआ होता है। यदि प्रधानमंत्री और किसी मंत्री में मतभेद हो जाएं तो मंत्री को ही त्यागपत्र देना पड़ता है। लास्की के अनुसार, "ब्रिटिश प्रधानमंत्री मंत्रिमंडल के निर्माण, उसके जीवन एवं म त्यु के लिए केंद्रीय स्थिति रखता है।"

2. **लोकसभा का नेता** **(Leader of the House of Commons)** - प्रधानमंत्री लोकसभा का नेता होता है। शासन का प्रमुख अधिवक्ता होने के नाते वह समस्त सरकारी नीतियों पर अधिकारपूर्वक निर्णय देता है। किसी भी विषय पर उसका वक्तव्य प्रामाणिक तथा अंतिम माना जाता है। सरकार की नीतियों और कार्यक्रमों के विषय में महत्त्वपूर्ण घोषणाएं प्रधानमंत्री द्वारा की जाती हैं। लोकसदन में पूछे गए प्रश्नों का उत्तर देना अथवा किसी सहयोगी मंत्री द्वारा दिये गए भाषण से उत्पन्न त्रुटियों में सुधार लाना भी प्रधानमंत्री का कर्त्तव्य है। प्रधानमंत्री ही लोकसदन को नेत त्व प्रदान करता है। बजट तैयार करना, सरकारी विधेयक तैयार करना इत्यादि कार्य प्रधानमंत्री के निरीक्षण में ही संपादित किए जाते हैं। वही इस बात का निश्चय करता है कि संसद का अधिवेशन कब और कितने समय के लिए बुलाया जाए। सरकारी तथा व्यक्तिगत विषयों पर लोकसभा में समय का विभाजन भी उसी की सहमति से किया जाता है। उसे लोकसभा को विघटित करने की शक्ति भी प्राप्त है। 1942 तक प्रधानमंत्री स्वयं लोकसदन का नेता नियुक्त करता था, परंतु कार्यो की अधिकता के कारण 1942 में बटलर को लोकसदन का नेता नियुक्त किया गया। तब से प्रधानमंत्री व लोकसदन के नेता दो भिन्न-भिन्न व्यक्ति हो सकते हैं, किंतु इससे प्रधानमंत्री के उत्तरदायित्वों व शक्तियों में कोई कमी नहीं आती। 1977 में माइकल फुट (Michael Foot) को लोकसभा का नेता नियुक्त किया गया था।

3. **दल का नेता** **(Leader of the Party)** - प्रधानमंत्री दल का प्रमुख नेता होता है। बहुमत दल का नेता होने के कारण उसका व्यक्तित्व सार्वजनिक रूप ग्रहण कर लेता है। वह दलीय प्रचार में पूर्ण रूप से सक्रिय रहता है। वह अपने दल की केंद्रीय समितियों तथा संगठनों का प्रमुख होता है। प्रधानमंत्री के व्यक्तित्व के साथ ही दल का भविष्य जुड़ा हुआ होता है। सामान्य निर्वाचन एक प्रकार से प्रधानमंत्री पद के प्रत्याशियों के बीच जनमत-संग्रह (refrendum) होता है। 1945 के अनुदार दल की अपेक्षा चर्चिल ने व्यक्तिगत रूप से जनता से अपील की थी। उस निर्वाचन का प्रमुख नारा था ' चर्चिल या लास्की'। इसी प्रकार 1966 का चुनाव अनुदार और श्रमिक दल में मुकाबला न होकर विल्सन और हीथ के बीच मुकाबला था। प्रधानमंत्री ही संसदीय दल का प्रमुख होता है। एक बार प्रधानमंत्री बन जाने पर उसे राजनीतिक दल द्वारा नेत त्व से वंचित करना कठिन हो जाता है। उदाहरणार्थ, चर्चिल और उसके अनुयायी, चेम्बरलेन को प्रधानमंत्री के पद से हटाने में सफल न हो सके। निर्वाचन में सफलता के कारण वह राष्ट्र की एकता का प्रतीक बन जाता है। 1983 में प्रधानमंत्री थैचर के विषय में कहा गया कि वह अनुदार दल का सबसे अधिक शक्तिशाली 'पुरुष' (The strongest 'man' in Conservative Party) है। मुनरो के अनुसार, "यह कोई नहीं जानता कि अन्य मंत्री कहां रहते हैं। परंतु मूर्ख से मूर्ख व्यक्ति भी जानता है कि 10, 'डाउनिंग स्ट्रीट' का क्या अर्थ है?" प्रधानमंत्री अपने दल की शक्ति तथा प्रतिष्ठा का मूर्त्त रूप होता है। वह दल की एकता का मुख्य आधार होता है।

4. **सम्राट तथा मंत्रिमंडल के बीच कड़ी** **(Link between the sovereign and the cabinet)** - प्रधानमंत्री मंत्रिमंडल और सम्राट के बीच कड़ी का काम करता है। सम्राट और मंत्रिमंडल के साथ मध्य पत्र व्यवहार प्रधानमंत्री के माध्यम से ही होता है। उसका उपनिवेशों के प्रधानमंत्रियों से सीधा संबंध होता है। वह मंत्रिमंडल के निर्णयों से सम्राट को सूचित करता है। पहले अन्य मंत्री स्वयं भी सम्राट से सीधा संपर्क स्थापित कर लेते थे, किंतु अब केवल प्रधानमंत्री ही ऐसा कर सकता है। विभिन्न मंत्रियों के निजी विचारों से सम्राट को सूचित करना आवश्यक नहीं है। अपवादस्वरूप, प्रधानमंत्री डिजरेली तत्कालीन साम्राज्ञी विक्टोरिया को मंत्रिमंडलीय बैठकों की कार्यवाही की विस्त त सूचना दिया करते थे, किंतु यह परंपरा

उचित नहीं है। इससे सम्राट के मन में किसी भी मंत्री के प्रति गलत धारणा बन सकती है। प्रधानमंत्री सम्राट के व्यक्तिगत जीवन के विषयों पर भी मित्रवत परामर्श दे सकता है। उदाहरणार्थ, बाल्डविन ने एडवर्ड अष्टम को श्रीमती सिम्पसन से विवाह न करने का परामर्श दिया था सम्राट किन समारोहों में भाग लेगा, किन साम्राज्यों तथा देशों की यात्रा करेगा इत्यादि निर्णय प्रधानमंत्री द्वारा ही लिए जाते हैं।

5. **विदेश नीति का निर्माता (Formulates foreign policy)** - प्रधानमंत्री विदेश नीति का प्रमुख निर्माता होता है। वह अंतर्राष्ट्रीय प्रश्नों पर शासन का अधिक त वक्ता होता है। यद्यपि विदेश विभाग उसके अधीन नहीं होता तथापि विदेश नीति के निर्माण और क्रियान्वयन पर उसका विशेष प्रभाव होता है। विदेश नीति संबंधी सभी महत्वपूर्ण घोषणाएं प्रधानमंत्री द्वारा ही की जाती हैं। प्रधानमंत्री का विदेश मंत्री पर पूर्ण नियंत्रण रहता है जैसे चेम्बरलेन द्वारा इडेन पर तथा मैक्डोनेल्ड द्वारा हेन्डरसन पर था। विदेश मंत्री कोई भी निर्णय लेने से पूर्व प्रधानमंत्री से परामर्श करता है। उदाहरणार्थ, सर एडवर्ड ग्रे ने 30 जुलाई, 1914 को प्रधानमंत्री एस्क्विथ के परामर्श से ही ब्रिटिश तटस्थता संबंधी तार भेजा था। प्रधानमंत्री तथा विदेश मंत्री में घनिष्ठ संबंध होता है। अपने कार्यकाल में प्रधानमंत्री चेम्बरलेन स्वयं विदेश नीति के निर्माता थे। वे ही 'म्यूनिख पेक्ट' के लिए भी उत्तरदायी थे। इसी दौरान प्रधानमंत्री चर्चिल ने छह बार राष्ट्रपति रूजवेल्ट और दो बार स्टालिन से मुलाकात की। अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में प्रधानमंत्री समस्याओं पर विचार-विमर्श करता है। राष्ट्रमंडलीय देशों के साथ प्रधानमंत्री ही मंत्रिमंडल की ओर से बातचीत करता है। अंतर्राष्ट्रीय क्षेत्र में प्रधानमंत्री ही ब्रिटेन का प्रतिनिधित्व करता है। युद्ध तथा आर्थिक संकट के समय में इसकी शक्तियां और अधिक बढ़ जाती हैं।

6. **नियुक्ति तथा उपाधि संबंधी शक्ति (Powers related to patronages)** - प्रधानमंत्री को नियुक्ति संबंधी अपार शक्तियां प्राप्त है। राज्य तथा साम्राज्यों की सभी महत्त्वपूर्ण नियुक्तियां प्रधानमंत्री द्वारा ही की जाती हैं। बिशपों, राजदूतों, न्यायधीशों, विभागों के अध्यक्ष तथा उपनिवेशों के राज्यपाल इत्यादि प्रधानमंत्री द्वारा ही नियुक्त किए जाते हैं। प्रधानमंत्री वित्त मंत्रालय के माध्यम से लोकसेवाओं और मंत्रिमंडलीय सचिवालय पर नियंत्रण रखता है। प्रधानमंत्री के परामर्श पर ही सम्राट विशिष्टजनों को उपाधियों से विभूषित करता है तथा नए पीअरों की नियुक्ति करता है। इसके अपवाद स्वरूप, सम्राट को नौसेना, स्थलसेना और वायुसेना संबंधी उपाधियां प्रदान करने का अधिकार दिया गया है

प्रधानमंत्री की शक्ति के स्त्रोत

(Sources of the Strength of the Prime Minister)

एक बार प्रधानमंत्री पद पर चुन लिए जाने के बाद ब्रिटिश प्रधानमंत्री व्यापक शक्तियों का प्रयोग करता है। प्रधानमंत्री की शक्तियों की मात्रा (degree of power) में अंतर हो सकता है। यह प्रधानमंत्री के व्यक्तित्व तथा राजनीतिक परिस्थितियों पर निर्भर करता है। यहां पर प्रधानमंत्री की शक्तियों के स्त्रोतों तथा उसकी शक्तियों पर प्रतिबंधों (limitations on powers) पर विचार किया जा रहा है-

1. **दलीय निष्ठा (Party loyalty)** - किसी भी प्रधानमंत्री की स्थिति दलीय निष्ठा की मात्रा पर निर्भर करती है। बहुमत दल सदैव अपने नेता की सफलता की ही कामना करता है। यदि प्रधानमंत्री की नीतियों और तरीकों (methods) की सराहना होती है तो दल के सदस्यों को भी इसका लाभ पहुंचता है। इस प्रकार की स्थिति में अगले चुनाव में उनके जीतने की संभावनाएं बढ़ जाती हैं। यदि किसी कारणवश, प्रधानमंत्री को कुछ दिक्कतों का सामना करना पड़ता है और विरोधी दल तथा प्रेस द्वारा आलोचनाओं का शिकार बनना पड़ता है तो भी प्रधानमंत्री के दल के साथी उसका साथ देते हैं। यदि इस प्रकार की आलोचनाओं का द ढ़तापूर्वक प्रत्युत्तर न दिया जाए तो समस्त दल को नुकसान पहुंच सकता है। लोकसभा में विश्वासघात (disloyalty in the commons) करने पर सरकार का पतन (collapse of the government) हो सकता है और फिर सभी संसद सदस्यों को नए चुनावों का सामना करना पड़ सकता है। इस प्रकार की प्रतिकूल परिस्थितियों में सत्तारूढ़ दल के फिर से जीतने की संभावना बहुत कम होती है। अतः बहुमत दल के सदस्य प्रत्येक स्थिति में अपने नेता का साथ देने में ही अपनी भलाई समझते हैं।

   दलीय निष्ठा और दलीय सचेतक (party whips) ब्रिटिश राजनीति का अभिन्न अंग बन चुके हैं। दलीय सचेतक संसद सदस्यों पर पर्याप्त दबाव रखते हैं। उन्हें दलीय निष्ठा के कारण अपने दल के सदस्यों का पर्याप्त समर्थन मिलता है।

अधिकांश संसद सदस्य अपने चुनाव के अनेक वर्षो से पहले से दल के सदस्य के रूप में काम कर चुके होते हैं। वे दल की सामान्य नीति (general approach of the party) के प्रति निष्ठा रखते हैं। वे जानते हैं कि दलीय नीति की हार से उन्हें गहरा आघात पहुंच सकता है। वे दलीय बैठकों में दल की नीति में परिवर्तन की मांग कर सकते हैं, अथवा मंत्रिमंडल और प्रधानमंत्री की नीतियों से असहमति प्रकट कर सकते हैं, तथापि जनता के सामने वे दल की नीतियों का समर्थन ही करते हैं। लोकसभा के विघटन की धमकी (threat of dissolution) के द्वारा भी प्रधानमंत्री अपनी बात मनवा सकता है, क्योंकि कोई भी संसद सदस्य समय से पूर्व आम चुनाव का सामना नहीं करना चाहता।

संरक्षण (patronage) तथा लाभों के वितरण (distribution of rewards) के कारण भी प्रधानमंत्री को अपने दल के सदस्यों का समर्थन मिलता रहता है। प्रधानमंत्री द्वारा संरक्षण अनेक प्रकार का हो सकता है। लोकसभा में ही लगभग 100 स्थान ऐसे हैं जिन पर प्रधानमंत्री स्वेच्छापूर्वक अपने व्यक्तियों को नियुक्त कर सकता है। इसके अतिरिक्त प्रधानमंत्री के परामर्श पर सम्राट किसी भी व्यक्ति को पीअर की उपाधि प्रदान कर सकता है, जिसके फलस्वरूप उस व्यक्ति को लार्ड सभा की सदस्यता प्राप्त हो जाती है। दलीय सचेतक भी अपने दल के संसद सदस्यों को विभिन्न समितियों में स्थान दिला सकते हैं। इस प्रकार दलीय निष्ठा प्रधानमंत्री की शक्ति का प्रमुख स्त्रोत बन जाता है।

2. **मंत्रिमंडल तथा सेवाओं द्वारा सहयोग (Support of the Cabinet and the Civil Services)** - मंत्रिमंडल तथा लोकसेवाओं के सहयोग के कारण भी प्रधानमंत्री की स्थिति मजबूत होती है। प्रधानमंत्री मंत्रिमंडल का नेता होता है। वह इच्छापूर्वक मंत्रियों का चुनाव कर सकता है अथवा उन्हें त्यागपत्र देने के लिए मजबूर कर सकता है। दूसरी ओर, उसे मंत्रिमंडल सचिवालयों (cabinet secretariat) का भी पर्याप्त समर्थन मिलता है। लोक सेवा आयोग (Civil Service Department) भी प्रधानमंत्री के प्रति उत्तरदायी होता है। यह शासन तंत्र (government machinery) को चलाने में प्रधानमंत्री की मदद करता है। अधिकांश प्रधानमंत्री विदेश मामलों (foreign affairs) में विशेष रूचि रखते हैं। फलस्वरूप, ब्रिटिश शासन प्रणाली में प्रधानमंत्री की स्थिति और अधिक महत्त्वपूर्ण हो गई है। उदाहरण के लिए, 1971 में राष्ट्रपति पोम्पीडोय (President Pompidou) के साथ प्रधानमंत्री हीथ की वार्तालाप के कारण ही ब्रिटेन को यूरोपीय साझा बाज़ार (EEC) की सदस्यता प्राप्त हो सकी। इसी प्रकार घरेलू राजनीति में भी प्रधानमंत्री मैकमिलन, विल्सन, हीथ इत्यादि ने महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया।

अधिकांश प्रधानमंत्री नीतियों के निर्माण अथवा क्रियान्वयन के लिए मंत्रिमंडलीय सचिवालय की मदद लेते हैं। किसी भी निर्णय तक पहुंचने से पूर्व से आंतरिक मंत्रिमंडल (inner cabinet) की बैठकों में वरिष्ठ मंत्रियों से परामर्श करना अधिक उपयुक्त समझते हैं। प्रधानमंत्री और मंत्रिमंडल के सदस्यों का उद्देश्य एक ही होता है। अतः वे एक साथ मिलकर काम करना अधिक लाभकारी समझते हैं। प्रधानमंत्री ही मंत्रिमंडल की बैठकें बुलाता है, विभिन्न विभागों में समन्वय स्थापित करता है इत्यादि। यदि प्रधानमंत्री और किसी मंत्री के बीच मतभेद हो जाए तो मंत्री को ही त्यागपत्र देना पड़ता है, प्रधानमंत्री को नहीं। यदि कोई मंत्री त्यागपत्र न दे, तो प्रधानमंत्री नए मंत्रिमंडल का गठन कर सकता है। अब प्रधानमंत्री की 'समकक्षों में प्रथम' (first among equals) की नहीं रही।

सर ए डगलस होम के अनुसार आज एक मंत्री की स्थिति प्रधानमंत्री के एजेंट जैसी हो गई है। प्रधानमंत्री ही मंत्रिमंडल का नेता होता है। वही मंत्रिमंडल की ओर से साम्राज्ञी से बातचीत करता है। दलीय निष्ठा तथा प्रधानमंत्री द्वारा संरक्षण के कारण ही मंत्रियों की स्थिति इस प्रकार की हो गई है। इसके अतिरिक्त प्रधानमंत्री को प्रशासन का भी पर्याप्त समर्थन मिलता है। प्रधानमंत्री की सहायता के लिए अनेक निजी कर्मचारी होते हैं। कुछ उसके निर्वाचन क्षेत्र तथा राजनीतिक पत्र-व्यवहार (political correspondence) की देखभाल करते हैं, कुछ 'डाउनिंग स्ट्रीट' (प्रधानमंत्री का निवास स्थान) में रहकर प्रधानमंत्री के दिन-प्रतिदिन की आवश्यकताओं को पूरा करते हैं और उसकी नीतियों के निर्माण और क्रियान्वयन में सहायता करते हैं। मंत्रिमंडलीय सचिवालय और इसकी अनेक समितियां भी प्रधानमंत्री की सहायता के लिए तैयार रहती हैं।

3. **संचार साधनों पर व्यापक प्रभाव (Influence over the mass media)** - प्रधानमंत्री अपने 'प्रैस सहायक अधिकारियों' (Press-aids) के माध्यम से जनसंबंधों (public relations) पर पूर्ण नियंत्रण रखता है। प्रधानमंत्री को समस्त मंत्रिमंडल का अधिक त वक्ता माना जाता है। प्रधानमंत्री ही समस्त सरकारी नीतियों की व्याख्या करता है। समाचार पत्र, पत्रिकाएं, रेडियो और टेलीविजन के रिपोर्टर 10, 'डाउनिंग स्ट्रीट' को ही सूचना का केंद्र मानकर चलते हैं और इसीलिए प्रधानमंत्री

और उसके कर्मचारी (staff) के क पापात्र बने रहना चाहते हैं। प्रधानमंत्री ही विदेश यात्राओं तथा विदेशों से आए मेहमानों का प्रधानमंत्री द्वारा स्वागत इत्यादि, कुछ ऐसे अवसर होते हैं जिन्हें समाचार पत्रों और दूरदर्शन द्वारा बहुत महत्त्व दिया जाता है। इसका जनमत पर व्यापक प्रभाव पड़ता है। सत्ता में होने के कारण प्रधानमंत्री इस बात के लिए स्वतंत्र होता है कि कब और कैसे बर्ताव किया जाए जबकि विरोधी दल के नेता को अपनी प्रतिक्रियाएं (reactions) व्यक्त करके ही संतुष्ट हो जाना पड़ता है।

4. **आम चुनाव की तिथि निर्धारित करने का अधिकार (Right to choose the date of the election)** - प्रधानमंत्री ही सरकार के राजनीतिक दांवपेचों (Political Strategies) के लिए उत्तरदायी होता है। प्रथम विश्वयुद्ध के बाद से ही यह परंपरा स्थापित हो गई है कि आम चुनाव की तिथि प्रधानमंत्री द्वारा ही निर्धारित की जाती है। प्रधानमंत्री मंत्रिमंडल के सदस्यों, दलीय सचेतकों तथा अन्य दलीय उच्चाधिकारियों से परामर्श कर सकता है, किंतु उसका निर्णय ही (सही अथवा गलत) अंतिम होता है। प्रधानमंत्री थैचर ने जून, 1983 में मध्यावधि चुनाव कराया जिससे अनुदार दल को भारी लाभ पहुंचा। यही कारण है कि अब मंत्रिमंडलीय अधिनायकत्व के स्थान पर प्रधानमंत्री द्वारा तानाशाही की बात की जाने लगी है। प्रत्येक मंत्रिमंडल प्रधानमंत्री से ही जीवन प्राप्त करता है। इसीलिए ब्रिटिश मंत्रिमंडल को उसके प्रधानमंत्री के नाम से पुकारा जाता है। जैसे 'विल्सन मंत्रिमंडल', 'मैकमिलन मंत्रिमंडल', 'थैचर मंत्रिमंडल' इत्यादि।

प्रधानमंत्री पद की सीमाएं

प्रधानमंत्री की शक्तिशाली भूमिका होने के बावजूद वह स्वेच्छाचारी तथा अनियंत्रित कदापि नहीं है क्योंकि व्यवहार में उसके आचरण पर अनेक मर्यादायें हैं। जैसे-दलीय अनुशासन, संसदीय नियंत्रण, बहुमत का दबाव, जनमत, दबाव समूह, सम्राट का परामर्श, साथियों का प्रभाव, अंतर्राष्ट्रीय परिस्थितियां, अप्रत्याशित घटनाएं तथा परिस्थितियां, विरोधी दल की आलोचनाएं आदि। ये सभी मर्यादाए पूर्णतः प्रभावहीन नहीं हैं। वह इन सबसे कितना प्रभावित होगा यह उसके स्वयं के व्यक्तित्व और प्रतिभा पर निर्भर करता है।

प्रधानमंत्री की स्थिति

(Position of the Prime Minister)

प्रधानमंत्री देश का यथार्थ शासक है। उसकी शक्तियां अपार हैं। लास्की के मतानुसार, "प्रधानमंत्री वह धुरी है जिसके चारों ओर संपूर्ण शासनतंत्र परिक्रमा करता है। वह कार्यपालिका के प्रभावशाली भाग का अध्यक्ष है। वह विभागों के बीच मतभेदों को दूर करता है, राजा की अनुमति से किसी भी मंत्री से त्यागपत्र मांग सकता है तथा महत्त्वपूर्ण नियुक्तियों के संदर्भ में उसका मत निर्णायक होता है। वह सभी विभागों, विशेषकर विदेश विभाग पर नियंत्रण रखता है तथा नीति के समन्वयकर्त्ता के रूप में कार्य करता है। वह लोकसदन का नेता होता है। यदि विशेष कठिन परिस्थितियों में, अन्य मंत्री संसद को संतुष्ट नहीं कर पाते तो संसद के सदस्य प्रधानमंत्री से रक्षित शक्ति (reserve power) के नाते अपील करते हैं। वह सम्राट तथा मंत्रिमंडल के बीच प्रभावकारी कड़ी का काम करता है। प्रधानमंत्री के विरुद्ध उस समय तक विद्रोह नहीं हो सकता जब तक कि उसने अपने कार्यो से व्यापक असंतोष उत्पन्न न कर लिया हो। बेजहॉट के अनुसार प्रधानमंत्री, "ब्रिटिश संविधान के दक्ष भाग का प्रधान है।" मेरियट के शब्दों में, "वह देश का राजनीतिक शासक है।" जैनिंग्स के मतानुसार, "प्रधानमंत्री को संपूर्ण संविधान की आधारशिला कहना उपयुक्त है।" प्रधानमंत्री केवल समकक्षों मे प्रथम (first among equals) ही नहीं है, अपितु वह सूर्य है जिसके चारों ओर अन्य नक्षत्र घूमते हैं।

प्रधानमंत्री की स्थिति इतनी महत्त्वपूर्ण होने पर भी, फाइनर के शब्दों में, "वह सीजर नहीं है। वह ऐसा देवता नहीं है जिसे चुनौती न दी जा सके। उसके विचार ही आदेश नहीं होते, वह सदैव दया पर निर्भर रहता है। उसकी अवधि उसके द्वारा की गई लाभदायक सेवा पर्यन्त है। किसी भी क्षण कोई विरोधी उसको अपदस्थ कर सकता है।" आधुनिक समय में सरकार के कार्यो में व द्धि के फलस्वरूप प्रधानमंत्री की शक्तियों में कोई कमी नहीं आई है। जब तक दल पर उसका पूर्ण नियंत्रण होता है, कोई भी उसका विरोध नहीं कर सकता। वस्तुतः वह राष्ट्र का नेता होता है। प्रधानमंत्री पर अनेक नियंत्रण होते हैं। उसे विभिन्न वर्गो को मंत्रिमंडल में प्रतिनिधित्व देकर संतुष्ट करना पड़ता है। लॉवेल के मतानुसार, "मंत्रिमंडल का निर्माण विभिन्न प्रकार के असमान और विभिन्न आक ति वाले टुकड़ों से किसी वस्तु के निर्माण के समान है।"

लास्की ने इस स्थिति की समीक्षा इन शब्दों में की है, "उसे अनेक परिस्थितियों को ध्यान में रखना पड़ता है। दल के नेता के रूप में वह कुछ प्रमुख साथियों की उपेक्षा नहीं कर सकता, क्योंकि उनकी उपस्थिति दलीय शासन के लिए अपेक्षित है। उसके कुछ साथी इतने महत्त्वपूर्ण हो सकते हैं कि वे जिस विभाग को लेना चाहें उन्हें वहीं विभाग देना पड़ता है। वास्तव में एक सक सावयवी इकाई का निर्माण करता है जिसके सदस्य एक दूसरे के कार्यो के लिए सामूहिक उत्तरदायित्व वहन करने को तत्पर रहते हैं।" यह सच है कि संसदीय समितियों तथा उच्च प्रशासकीय अधिकारियों के युग ने प्रधानमंत्री को पहले से कहीं अधिक शक्तिशाली बना दिया है। सभी महत्त्वपूर्ण निर्णय विभागाध्यक्ष तथा प्रभावशाली प्रशासकों की सहायता से प्रधानमंत्री द्वारा ही लिए जाते हैं। मंत्रिमंडलीय सचिवालय पर भी प्रधानमंत्री का पूर्ण नियंत्रण होता है। इसके माध्यम से उसे सभी विभागों की आवश्यक जानकारी मिलती रहती है। आर० एच० एस० क्रॉसमैन (R.H.S. Crossman) जे० पी० मैकिन्टोश (J.P. Mackintosh), इत्यादि आधुनिक विचारकों का मत है कि प्रधानमंत्रीय शासन (Government by Prime Minister) ने मंत्रिमंडलीय अधिनायकत्व का स्थान ग्रहण कर लिया है। आज प्रधानमंत्री पर तानाशाह होने पर आरोप लगाया जाता है।

क्रॉसमैन के अनुसार ब्रिटिश मंत्रिमंडल की स्थिति अब अन्य सम्मानिय संस्थाओं के समान हो गई है। सभी महत्त्वपूर्ण निर्णय प्रधानमंत्री के द्वारा ही लिए जाते हैं। ब्रिटेन में एटम बम बनाने का निर्णय तत्कालीन प्रधानमंत्री एटली का ही था। क्रॉसमैन के अनुसार यह निर्णय मंत्रिमंडल की पूर्व सम्मति पर आधारित नहीं था। प्रधानमंत्री के कुछ घनिष्ठ मित्रों को छोड़कर अन्य किसी व्यक्ति को इसका ज्ञान तक नहीं था। किंतु, दूसरी ओर, यूरोपीय सांझा बाजार (European Common Market) के लिए आवेदन का निश्चय प्रधानमंत्री डगलस स्त्रोत द्वारा अनेक मंत्रिमंडलीय बैठकों के उपरांत ही लिया गया। प्रधानमंत्री की स्थिति एक अधिनायक के समान है, किंतु जहां एक अधिनायक स्वेच्छाचारी होता है, वहां प्रधानमंत्री सुस्थापित विधियों एवं परंपराओं के अनुकूल देश का शासन करता है। सामूहिक उत्तरदायित्व की परंपरा तथा आधुनिक शासन की जटिलताओं के होते हुए 'प्रधानमंत्री द्वारा शासन' (Prime Minister's Government) का आरोप केवल एक कल्पना मात्र है। हैंस डालडर के शब्दों में, "स्वयं प्रधानमंत्री का कार्यभार कुछ विशेष महत्त्वपूर्ण विषयों को छोड़कर अन्य विषयों में हस्तक्षेप के लिए निरोधक का काम करता है। किसी विषय को स्वतंत्र छोड़कर ही वह अपनी इच्छा को मनवा सकता है।"

जैनिंग्स के ये शब्द प्रधानमंत्री की स्थिति के संदर्भ में महत्त्वपूर्ण हैं कि, "प्रधानमंत्री का पद वैसा होता है जैसा कि उस पद पर आसीन व्यक्ति उसे बनाना चाहते हैं और जैसा कि अन्य मंत्रिगण उसे उसको बनाने देते हैं।" कहने का तात्पर्य है कि प्रधानमंत्री की स्थिति बहुत कुछ उसके अपने व्यक्तित्व, प्रतिष्ठा तथा सहयोगियों के साथ उसके संबंधों पर निर्भर करती है। डिजरेली, ग्लैडस्टोन, पील और चर्चिल जैसे प्रधानमंत्री बहुत प्रभुत्वशाली थे। उनकी सत्ता को सरलता से चुनौती नहीं दी जा सकती थी। दूसरी ओर, लॉर्ड सैलिसबरी, लॉर्ड रोजवरी इत्यादि का अपने मंत्रिमंडल पर भी पर्याप्त नियंत्रण नहीं था। प्रधानमंत्री की योग्यता, ज्ञान की व्यापकता, नेत त्व शीघ्र कार्य करने तथा शीघ्र निर्णय लेने की क्षमता इत्यादि का उसकी शक्तियों ओर स्थिति पर व्यापक प्रभाव पड़ता है। फाइनर ने इसका वर्णन बड़े रोचक शब्दों में किया है, "वह जीन पर द ढ़ता से अवस्थित है, लेकिन वह मंजा हुआ सवार है या लुढ़कने वाला, भाड़े के टट्टू के लायक है या फौजों और घुड़दौड़ के घोड़े के लायक, यह उस पर निर्भर करता है।"

प्रो० चेस का मत है कि आधुनिक काल में ब्रिटिश प्रधानमंत्री की स्थिति अर्द्धअध्यक्षात्मक (Quasi-Presidential) हो गई है। इसका तात्पर्य यह है कि प्रत्यक्ष रूप से निर्वाचित होने के कारण वह मंत्रिमंडल और संसद के सदस्यों से स्वतंत्र रूप में अपने पद का उपभोग करता है। सिडनी लॉ के अनुसार, "वह जर्मन सम्राट तथा अमेरिका के राष्ट्रपति एवं संयुक्त राज्य की कांग्रेस समितियों के सभापतियों से भी अधिक शक्तिशाली होता है।" वैधानिक शासकों में वह विश्व का सर्वाधिक शक्तिशाली शासक है। लास्की, प्रधानमंत्री की अमेरिका के राष्ट्रपति से तुलना को उपयुक्त नहीं मानता। उसके अनुसार, "ब्रिटिश प्रधानमंत्री की स्थिति अमेरिका के राष्ट्रपति के समान कहना उचित नहीं है। दलीय संगठन के परिपेक्ष्य में उसकी स्थिति कहीं अधिक प्रभावपूर्ण है। उसकी शक्ति का आधार सुनिश्चित रूप में प्रदत्त शक्तियां नहीं हैं। लेकिन मैं यह समझता हूं कि मंत्रिमंडल पर प्रधानमंत्री का नियंत्रण जितना अधिक होता हैं, संसदीय प्रणाली के सफलतापूर्वक चलाने की आशा उतनी ही अधिक होती है।" अतः कहा जा सकता है कि ब्रिटिश शासन-प्रणाली में प्रधानमंत्री का स्थान सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है। जब तक उसे अपने दल का समर्थन प्राप्त नहीं होता है, वह स्वेच्छापूर्वक काम कर सकता है, किंतु उसे एक अधिनायक नहीं कहा जा सकता। जहां एक अधिनायक मनमानी करता है, वहां प्रधानमंत्री सुस्थापित नियमों और परंपराओं के अनुकूल शासन करता है।

ब्रिटिश मंत्रिमंडल
(The British Cabinet)

ब्रिटिश मंत्रिमंडल को संसदीय प्रणाली का सर्वश्रेष्ठ उदाहरण माना जा सकता है- अपने गौरव के लिए, अपितु अपनी सूक्ष्मता, अपनी परिवर्तनशीलता तथा बहुमुखी शक्तियों के लिए। ब्रिटिश मंत्रिमंडल को संवैधानिक मशीनरी का सबसे महत्वपूर्ण पुर्जा कहा जा सकता है।

इसे संविधान का केंद्रीय तत्त्व माना जा सकता है। डायसी के अनुसार, "राज्य का हर कार्य सम्राट के नाम से किया जाता है। परंतु इग्लैंड की शासन व्यवस्था में वास्तविक कार्यपालिका मंत्रिमंडल है।" यद्यपि वैधानिक द ष्टि से संप्रभुता सम्राट तथा संसद में निहित है; किंतु व्यवहार में मंत्रिमंडल ही सम्राट तथा मंत्रिमंडल की शक्तियों का उपयोग करता है। मंत्रिमंडल संयोग एवं बुद्धि की संतान (a child of accident and design) है। शासन के क्षेत्र में ब्रिटिश मंत्रिमंडलीय कार्यपालिका का विकास सर्वाधिक शिक्षाप्रद है। भारत, कनाडा, ऑस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड इत्यादि अनेक देशों ने इसका अनुकरण किया है।

ब्रिटिश मंत्रिमंडल का विकास
(Development of British Cabinet System)

ब्रिटिश मंत्रिमंडल क्रमिक विकास का फल है। यह बहुमत दल के संसदीय प्रमुखों का स्थायी, किंतु अनौपचारिक संगठन है। 1937 में 'ताज के मंत्री अधिनियम' (Ministers of the Crown Act) के बनने से पहले तक इसे कोई वैधानिक मान्यता प्राप्त नहीं थी। वास्तव में, यह ऐतिहासिक परिस्थितियों, अवसर एवं योजना का परिणाम है। मंत्रिमण्डल का अभ्युदय प्रिवी परिषद से हुआ। विस्त त आकार के कारण प्रिवी परिषद परामर्शदात्री समिति के योग्य नहीं रह गई थी। फलतः सम्राट ने प्रिवी परिषद की अपेक्षा इसके कुछ विश्वासपात्र सदस्यों से महल के एक छोटे कमरे (Cabinet) में विचार-विमर्श करना शुरू कर दिया। चार्ल्स द्वितीय के शासन काल को मंत्रिमंडल का आरंभिक काल माना जा सकता है। इसके परामर्शदाताओं की समिति 'कबाल' कहलाती थी जिसका प्रमुख कार्य सम्राट को परामर्श देना और संसद में विधि निर्माण के लिए प्रस्ताव प्रस्तुत करना था। वह केवल सम्राट के प्रति उत्तरदायी होती थी। बेकन (Becon) ने पहली बार 'केबिनेट' शब्द का प्रयोग किया। यद्यपि, चार्ल्स प्रथम के समय में ही संसद और सम्राट की शक्तियों के संघर्ष के परिणामस्वरूप, संसद के प्रति मंत्रियों के उत्तरदायित्व के सिद्धांत को चार्ल्स द्वितीय के समय में ही निश्चित रूप प्राप्त हुआ। इसी समय बकिंघम पर महाभियोग लगाया गया और 1679 में डेनबी पर महाभियोग लगाया गया। अभी तक सामूहिक उत्तरदायित्व का विकास नहीं हुआ था। रक्तहीन क्रांति के बाद संसद की सर्वोच्चता का सिद्धांत प्रकाश में आया। इसी बीच राजनीतिक दलों का भी उद्भव हो चुका था। फलस्वरूप, मंत्रियों की नियुक्ति बहुमत दल के सदस्यों में से की जानी लगी। 1696 में, विलियम त तीय ने ह्विग दल में से ही अपने परामर्शदाताओं को चुना।

मंत्रिमंडल का वास्तविक विकास हैनोवर काल में हुआ। इसी समय मंत्रिमंडल के संगठन एवं कार्यपद्धति में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हुआ। जार्ज प्रथम और जार्ज द्वितीय दोनों ही जर्मन थे। अतः अंग्रेजी भाषा का ज्ञान न होने के कारण वे सरकारी कार्यों में कम रुचि लेते थे और मंत्रिमंडल की बैठकों में भाग भी नहीं लेते थे। सर राबर्ट वालपोल की अध्यक्षता में मंत्रिमंडल की बैठक होने लगी। वालपोल को प्रथम प्रधानमंत्री कहा जा सकता है। उसी ने ही 10, डाउनिंग स्ट्रीट को अपना कार्यालय बनाया जो आज भी प्रधानमंत्री का निवास स्थान है। 1730 में वालपोल ने टाउनसेंड (Townsend) को त्यागपत्र देने के लिए मजबूर किया, क्योंकि वह उसकी नीतियों से सहमत नहीं था। उसने प्रशासनिक नीतियों को निर्धारित किया तथा उन पर संसद का अनुमोदन प्राप्त किया। 1742 में लोकसदन में पराजित हो जाने पर उसने अपने पद से त्यागपत्र दे दिया। समस्त मंत्रिमंडल ने उसका अनुकरण किया। इस प्रकार सामूहिक उत्तरदायित्व (collective responsibility) के सिद्धांत की स्थापना हुई।

वालपोल सम्राट के प्रभाव से मुक्त नहीं था। मंत्रिमंडल उन्नीसवीं शताब्दी में ही निश्चित रूप प्राप्त कर सका। पोल, डिजरैली व ग्लैडस्टोन के समय तक यह चरम उत्कर्ष पर पहुंच चुका था। 1867 में पहली बार बेजहॉट ने अपनी पुस्तक 'ब्रिटिश संविधान' में मंत्रिमंडल के सदस्यों की संख्या में भी व द्धि हुई। आर्थिक संकटों और युद्धों का मुकाबला करने के लिए राष्ट्रीय तथा संयुक्त सरकारों (coalition governments) की स्थापना हो गई कि प्रधानमंत्री लोक सदन का ही सदस्य होना चाहिए, लार्ड सभा का नहीं। लार्ड कर्जन ने लार्ड सभा की सदस्यता को बनाए रखते हुए प्रधानमंत्री के पद से त्यागपत्र दे दिया था। मंत्रिमंडल के कार्यों में व द्धि के कारण मंत्रिमंडलीय समितियों का विकास हुआ। सप्ताह में दो बार मंत्रिमंडल की बैठक बुलाई

जाने लगी। 1937 में एक अधिनियम द्वारा इसे वैधानिक मान्यता (legal recognition) प्रदान की गई। इसके द्वारा मंत्रियों के वेतन भी निर्धारित किए गए।

मंत्रिमंडलीय व्यवस्था का स्वरूप एवं विशेषताएं

(Nature and Characteristics of Cabinet System)

मुनरों के शब्दों में, "मंत्रिमंडल ताज के नाम पर प्रधानमंत्री द्वारा नियुक्त किए गए उन राजकीय परामर्शदाताओं की संस्था का नाम है जिसे लोकसदन में बहुमत का समर्थन प्राप्त हो" मंत्रिमंडल शासन का केंद्रीय अंग है। यह समस्त ब्रिटिश शासनतंत्र को एकता प्रदान करता है। ग्लैडस्टोन के शब्दों में, "मंत्रिमंडल तीन मोड़ वाला वह कब्जा है जो ब्रिटिश संविधान के तीनों अंगों अर्थात् सम्राट, लार्ड सभा तथा लोकसदन में परस्पर संबंध स्थापित करने को प्रव त्त करता है। धक्का संभालने वाले यंत्र की स्प्रिंग के समान यह भी संपूर्ण भार का वहन स्वंय करता है और इसके भीतर ही उस धक्के के परस्पर विरोधी तत्व लड़-भिड़ कर शांत हो जाते हैं।" बाह्य रूप में यह केवल एक परामर्शदात्री संस्था है, किंतु व्यवहार में इसे कार्यपालिका की समस्त शक्तियां प्राप्त हैं। इसे न केवल कार्यपालिका अपितु व्यवस्थापिका की शक्तियां भी प्राप्त है। यह विधि निर्माण में सक्रिय भाग लेता है तथा समस्त प्रशासन का संचालन भी करता है। यद्यपि ब्रिटिश अभिसमयों के अनुसार मंत्रिमंडल अपने समस्त कार्यो तथा त्रुटियों के लिए लोकसदन के प्रति उत्तरदायी होता है, किंतु व्यवहार में मंत्रिमंडल ही इस पर नियंत्रण रखता है। यदि संसद राजनीति रूपी शरीर का हृदय है, तो मंत्रिमंडल इसका मस्तिष्क है। ब्रिटिश मंत्रिमंडलीय शासन पद्धति की मुख्य विशेषताएं इस प्रकार हैं-

1. **नाममात्र का अध्यक्ष (Nominal Head of the State)** - संसदीय शासन पद्धति में राज्याध्यक्ष नाममात्र का अथवा संवैधानिक अध्यक्ष होता है। ब्रिटिश मंत्रिमंडलीय व्यवस्था में भी, सम्राट को वास्तविक शक्तियां प्राप्त नहीं है। सम्राट मंत्रिमंडल का अंग नहीं होता और न ही वह इसकी बैठकों में भाग लेता है। उसे केवल सूचना प्राप्त करने, परामर्श देने, चेतावनी देने तथा प्रोत्साहन देने का अधिकार है।
2. **व्यवस्थापिका व कार्यपालिका में घनिष्ठ संबंध (Co-operation between Legislature and Executive)** - ब्रिटिश मंत्रिमंडल संसद का अभिन्न अंग है। यह व्यवस्थापिका और कार्यपालिका में पारस्परिक घनिष्ठ संबंधों का आधार है। बेजहॉट के शब्दों में, "व्यवस्थापिका तथा कार्यपालिका की एक-दूसरे से स्वतंत्रता अध्यक्षात्मक पद्धति का विशिष्ट लक्षण है और इन दोनों की एक-दूसरे में घनिष्ठता मंत्रिमंडलात्मक पद्धति का।"
3. **राजनीतिक सजातीयता (Political homogeneity)** - ब्रिटिश मंत्रिमंडलीय व्यवस्था की अन्य विशेषता राजनीतिक एकरसता है। सभी मंत्री प्रायः एक ही राजनीतिक दल तथा समान विचारधारा के होते हैं। मंत्रिमंडल की बैठकों में सभी सदस्य स्वतंत्र रूप से विचार-विमर्श कर सकते हैं, किंतु एक बार निर्णय लिये जाने पर सभी उसका समर्थन करते हैं। लार्ड सेलिसबरी के अनुसार, "मंत्रिमंडल के सभी निर्णयों के लिए हर वह सदस्य जो त्यागपत्र नहीं देता, पूर्णतः एवं अनिवार्यतः उत्तरदायी होता है।"
4. **सामूहिक उत्तरदायित्व (Collective responsibility)** - संसदीय शासन

(Author's not send manuscript matter after point 4)

मंत्रिमंडल का संगठन व कार्य

(Organisation and Functions of the Cabinet)

मंत्रिमंडल के संगठन के कार्यों को जानने से पूर्व मंत्रिमंडल और मंत्रिपरिषद में अंतर समझ लेना आवश्यक है। प्रायः मंत्रिमंडल तथा मंत्रिपरिषद शब्दों का प्रयोग पर्यायवाची शब्दों के रूप में किया जाता है, लेकिन कार्य, संगठन एवं शक्तियों की द ष्टि से दोनों में बहुत अंतर है। मंत्रि-परिषद एक बड़ी संस्था है; यदि मंत्रिपरिषद को एक बड़ा व त्त मान लिया जाए तो मंत्रिमंडल

उसके भीतर छोटा व त्त है। मंत्रिपरिषद में छोटे-बड़े सभी मंत्री सम्मिलित होते हैं, जबकि मंत्रिमंडल में केवल कुछ प्रमुख विभागों के मंत्री ही होते हैं। मंत्रिपरिषद के सदस्यों की संख्या 60 से अधिक ही होती है, जबकि एक आदर्श मंत्रिमंडल के सदस्यों की संख्या 20 के लगभग होती है। मंत्रिमंडल द्वारा निर्धारित नीति मंत्रिपरिषद द्वारा क्रियान्वित की जाती है। मंत्रिमंडल की बैठकों की तरह मंत्रिपरिषद की बैठकें नियमित रूप से नहीं होतीं। प्रत्येक सदस्य मंत्रि-परिषद का सदस्य नहीं होता, किंतु मंत्रिमंडल का प्रत्येक सदस्य मंत्रि-परिषद का सदस्य भी होता है। मंत्रिमंडल का सदस्य सामूहिक एवं व्यक्तिगत दोनों प्रकार से उत्तरदायी होता है। मंत्रिमंडल के त्यागपत्र के साथ-साथ मंत्रिपरिषद को भी त्यागपत्र देना पड़ता है। रेम्जे म्योर के शब्दों में मंत्रिमंडल की परिभाषा इस प्रकार की जा सकती है, "यह मंत्रि-परिषद का हृदय है, शासन का परिचालक यंत्र है जिसमें सभी महत्वूपर्ण विभागों के राजनीतिक अध्यक्ष सम्मिलित होते हैं; साथ ही कुछ प्राचीन तथा प्रतिष्ठित पदों के अधिकारी भी।" ब्रिटेन में मंत्रियों की चार प्रमुख श्रेणियां होती हैं-

1. इसमें कुछ विभागाध्यक्ष होते हैं जेसे विदेश मंत्री, ग हमंत्री, वित्त मंत्री, सुरक्षा मंत्री, इत्यादि।
2. इसमें कुछ मंत्री विभाग रहित होते हैं। ये प्रायः वयोव द्ध, अनुभवी और प्रभावशाली व्यक्ति होते हैं। लार्ड चांसलर, लार्ड प्रेसिडेंट, इत्यादि इस श्रेणी में आते हैं।
3. इसके अतिरिक्त कुछ संसदीय सचिव और उप-सचिव भी होते हैं जो कि विभागीय अध्यक्षों की सहायता करते हैं।
4. राजमहल के अधिकारी भी मंत्रिपरिषद के सदस्य होते हैं जैसे कोषाध्यक्ष (treasurer), नियंत्रक (comptroller), इत्यादि।

इस संयुक्त मंत्रिपरिषद के अतिरिक्त एक 'आंतरिक मंत्रिमंडल' (inner cabinet) भी होता है। प्रधानमंत्री सभी मंत्रियों से विचार-विमर्श नहीं कर पाता। वह देश की सर्वोच्च नीतियों और समस्याओं पर कुछ विश्वस्त एवं सहयोगी मंत्रियों से ही अनौपचारिक रूप में विचार-विमर्श करता है। इसी प्रकार युद्ध या विपत्ति के समय कुछ मंत्रियों की एक छोटी-सी समिति बना दी जाती है जिसे 'युद्ध मंत्रिमंडल (war cabinet) कहते हैं। ये मंत्रिगण अपना सारा समय युद्धकालीन राजनीतिक, आर्थिक तथा सैनिक समस्याओं को दे सकते हैं। ये शीघ्रतापूवर्क निर्ण भी ले सकते हैं। 1940 में चर्चिल ने पांच मंत्रियों को लेकर 'युद्ध मंत्रिमंडल' बनाया। इस प्रकार के मंत्रिमंडल अल्पकालीन होते हैं तथा युद्ध के समाप्त होने पर ये भी समाप्त हो जाते हैं। कभी-कभी किसी एक विशेष दल को लोकसदन में बहुमत प्राप्त न होने की स्थिति में कई दलों की मिली-जुली सरकार बनाई जाती है जिसे 'संयुक्त सरकार' (Coalition Government) कहते हैं। 1931 के आर्थिक संकट तथा द्वितीय विश्व युद्ध के समय ब्रिटेन में इस प्रकार की सरकारें बनी थीं।

छाया मंत्रिमंडल (Shadow Cabinet) ब्रिटिश मंत्रिमंडल के असाधारण रूपों में से एक है। ब्रिटिश राजनीतिक प्रणाली के अंतर्गत सरकारी तथा विरोधी, दोनों दलों को समान रूप से अस्तित्व प्रदान किया गया है। विरोधीदल को 'महामहिम के प्रतिपक्षी दल' के रूप में मान्यता प्राप्त है। सत्तारूढ़ दल की भांति विरोधी दल का भी अपना संगठन होता है। परिणामस्वरूप, विरोधी दल सदैव शासन का भार संभालने को तैयार रहता है। विरोधी दल का भी एक मंत्रिमंडल होता है जिसमें विभिन्न सदस्यों को अलग-अलग विभाग दिए जाते हैं। विरोधी दल का एक नेता होता है जिसे 1937 के 'ताज मंत्री अधिनियम' (Crown's Ministers Act) के अंतर्गत प्रतिवर्ष 15,000 पौंड की अतिरिक्त राशि दी जाती है, ताकि वह प्रभावशाली भूमिका निभा सके।

ब्रिटिश मंत्रिमंडल के कार्य

(Function of British Cabinet)

शासन का केंद्र-बिंदु होने के कारण मंत्रिमंडल के अनेक कार्य होते हैं। यह शासन का प्रमुख यंत्र है। इसके मुख्य कार्य इस प्रकार हैं-

1. **कार्यपालिका संबंधी कार्य (Executive functions)** - मंत्रिमंडल को देश की सर्वोच्च कार्यपालिका माना जा सकता है। इसका प्रमुख कार्य विदेश तथा ग ह नीति का निर्माण करना है। नीतियों का निर्माण करते समय मंत्रिमंडल को देश की सामाजिक व आर्थिक परिस्थितियों तथा जनता के हितों का ध्यान रखना पड़ता है। नीतियों को तैयार करना तथा उन पर संसद का अनुमोदन प्राप्त करना इसका सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण कार्य है। इसके अतिरिक्त यह विभिन्न प्रशासनिक विभागों पर भी नियंत्रण रखता है। विभागीय नीतियों के लिए यह संसद के लोक सदन के प्रति उत्तरदायी होता है। प्रदत्त विधायन (Delegated Legislation) के फलस्वरूप मंत्रिमंडल की शक्तियों में अपार व द्धि हुई है। प्रदत्त विधायन के अंतर्गत

संसद विभिन्न विधेयकों की रूपरेखा मात्र तैयार करती है। मंत्रिमंडल इस रूपरेखा के अंतर्गत अनेक नियम और उपनियम बना सकता है। साथ ही इसे नियुक्ति संबंधी व्यापक शक्तियां प्राप्त होती हैं। यह राजदूतों, उपनिवेशों के राज्यपालों, इत्यादि की नियुक्ति पर भी विचार करता है।

2. **व्यवस्थापिका संबंधी कार्य (Legislative functions)** - बेजहॉट के अनुसार, "मंत्रिमंडल राज्य के विधाई भाग को कार्यपालिका से जोड़ने वाला बकसुआ है।" संसद का अधिवेशन बुलाना, उसे भंग करना, इत्यादि कार्य मंत्रिमंडल के ही हैं। समस्त सरकारी विधेयक मंत्रिमंडल द्वारा ही प्रस्तुत किये जाते हैं। जब तक मंत्रिमंडल का संसद में बहुमत होता है, तब तक इसके द्वारा प्रस्तुत प्रस्ताव संसद में आसानी से पास हो जाते हैं। यह कहना गलत न होगा कि आजकल मंत्रिमंडल ही संसद की सहमति से विधि-निर्माण करता है। मंत्रिमंडल संसद में होने वाले वाद-विवाद के द्वारा देश के सम्मुख अपनी नीतियों को प्रतिपादित करता है। संसद के सामने सरकारी नीति प्रस्तुत करना, प्रश्नों के उत्तर देना तथा आवश्यक कानूनों का निर्माण करना मंत्रिमंडल के ही कार्य हैं। संसद की अवधि में कमी अथवा व द्धि करने, अधिवेशन बुलाने अथवा भंग करने इत्यादि के पीछे मंत्रिमंडल का ही हाथ होता है।

3. **वित्त संबंधी कार्य (Judicial functions)** - लॉर्ड चांसलर के परामर्श से ताज द्वारा महत्त्वपूर्ण न्यायाधीशों की नियुक्ति की जाती है। सम्राट क्षमा प्रदान करने, दंड को कम करने अथवा स्थगित करने जैसे परमाधिकार का प्रयोग ग हमंत्री के परामर्श से ही करता है।

पिछले 50-60 वर्षों में मंत्रिमंडल की शक्तियों में अपार व द्धि हुई है। इसे ब्रिटिश शासन प्रणाली का केंद्र बिंदु (central point) माना जा सकता है। मंत्रिमंडल उस दल के नाम पर समस्त शासन का संचालन करता है जिसे लोक सदन में बहुमत प्राप्त हुआ हो। संसद में बहुमत होने के कारण मंत्रिमंडल को कानूनी द ष्टि से सम्प्रभु संसद का सहयोग सहज ही मिल जाता है।

मंत्रिमंडलीय समितियां व सचिवालय

(Cabinet Committees and Secretariat)

मंत्रिमंडल का काम इतना बढ़ गया है कि उसे सहायता के लिए अनेक समितियों (committees) की नियुक्ति करनी पड़ती है। मंत्रिमंडल कुछ स्थायी (standing) और तदर्थ (ad hoc) समितियों का संगठन करता है। किसी भी महत्त्वपूर्ण निर्णय को लेने से पूर्व मंत्रिमंडल उस विषय को किसी एक समिति के विचारार्थ भेज देता है। प्रतिरक्षा समिति, नागरिक प्रतिरक्षा समिति, आर्थिक नीति समिति, उत्पादन समिति, नागरिक सेवा समिति, नागरिक उड्डयन समिति इत्यादि इसकी मुख्य समितियां हैं। प्रथम विश्वयुद्ध के समय मंत्रिमंडलीय सचिवालय की स्थापना की गई थी। इस सचिवालय के कार्यो में बैठकों के लिए कार्य सूची तैयार करना, सदस्यों को सूचित करना, समितियो के निर्णयों को लिपिबद्ध करना और प्रतिवेदन (Report) तैयार करना, इत्यादि प्रमुख हैं।

मंत्रिमंडल का अधिनायक्तव

(Dictatorship of the Cabinet)

बीसवीं शताब्दी को मंत्रिमंडलीय अधिनायकत्व का युग कहा जा सकता है। इससे पूर्व उन्नीसवीं शताब्दी तक मंत्रिमंडल संसद के अधीन रहकर कार्य करता था। वैधानिक द ष्टि से ब्रिटिश संसद को सर्वोच्च शक्ति प्राप्त थी और यथार्थ में भी वह सर्वोच्च सत्ताधारी थी, किंतु दलीय अनुशासन, प्रदत्त विधि-निर्माण, प्रशासकीय न्याय, मंत्रिमंडलीय उत्तरदायित्व, इत्यादि सिद्धांतों के कारण मंत्रिमंडल बहुत अधिक शक्तिशाली हो गया है। अब मंत्रिमंडल ही लोक सदन पर नियंत्रण रखता है। यही कारण है कि 1895 के बाद से किसी भी सरकार के प्रति अविश्वास प्रस्ताव पास नहीं किया गया। सैद्धांतिक द ष्टिकोण से संसद के अधीन होने पर भी व्यवहार में मंत्रिमंडल संसद का स्वामी है। रेम्जे म्योर के अनुसार, एक निकाय जो इतनी अधिक शक्तियों का प्रयोग करता है, उसे सर्वशक्तिमान ही कहा जायेगा चाहे व्यवहार में वह अपनी सत्ता के प्रयोग में कठिनाई ही क्यों न अनुभव करे। इसीलिए आज हम 'मंत्रिमंडलीय अधिनायकत्व' की चर्चा करने लगे हैं।

1. **मंत्रिमंडलीय अधिनायकत्व को संवैधानिक अधिनायकत्व (constitutional dictatorship)** कहना अधिक उपयुक्त है। वैब्स्टर के मतानुसार अधिनायक वह है, "जो सरकार की शक्तियों का, विशेषकर गणतंत्र में, असीमित रूप से प्रयोग करे।"

इस द ष्टिकोण से बिटेन के मंत्रिमंडल को संवैधानिक तानाशाह की संज्ञा दी जा सकती है। इसके अधिकारी संविधान द्वारा मान्यता प्राप्त होते हैं तथा वे संवैधानिक उपायों से ही प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हैं, स्वेच्छापूर्वक नहीं। कीथ के शब्दों में, "संसद के प्रति मंत्रिमंडल की स्थिति तानाशाह की है।" कार्यपालिका संबंधी कार्यो के अतिरिक्त मंत्रिमंडल अनेक प्रकार के प्रशासकीय, वित्तीय, न्यायिक और विधायी कार्यो को भी संपादित करता है। इसके अतिरिक्त संसद के साथ मंत्रिमंडल के संबंधों के आधार पर भी इसे अधिनायक सिद्ध किया जा सकता है। मुनरों का कथन है कि, "लोकसभा मंत्रिमंडल की इच्छा तथा नेत त्व के अनुसार कार्य करती है।" पिछली दो पीढ़ियों की अपेक्षा अब मंत्रिमंडलीय अधिनायक्तव अधिक कठोर है। संवैधानिक द ष्टि से मंत्रिमंडल आज भी संसद के प्रति उत्तरदायी है, किंतु व्यवहार में यह उत्तरदायित्व प्रभावपूर्ण नहीं है। इसी प्रकार निर्वाचक मंडल के साथ मंत्रिमंडल के संबंध भी मंत्रिमंडलीय अधिनायकत्व की पुष्टि करते हैं। सत्तारूढ़ होने पर भी मंत्रिमंडल जनता को दिए गए आश्वासनों को भुला भी सकता है। कीथ के शब्दों में, "यदि हम इसे एक पूर्वोदाहरण मानें तो कोई भी सरकार एक बार सत्तारूढ़ होने पर अपना यह अधिकार समझ सकती है कि निर्वाचन के समय दिए गए वचनों को भूल जाये।" जनता केवल 'हां' अथवा 'नहीं' के रूप में राजनीतिक दलों द्वारा प्रस्तावित नीतियों और कार्यक्रमों पर मत दे सकती है और बहुमत के बल पर मंत्रिमंडल सदन में कई बार अवांछित प्रस्ताव भी पास करा सकता है। जैनिंग्स के शब्दों में, "जिस सरकार की पीठ पर प्रबल बहुमत का हाथ हो, वह अल्पकाल के लिए अधिनायकत्व स्थापित कर लेती है।"

निर्वाचकों की संख्या में व द्धि हो जाने के कारण एक स्वतंत्र प्रत्याशी के लिए जन-संपर्क स्थापित करना कोई सरल कार्य नहीं है। इसके लिए व्यापक दलीय संगठन की आवश्यकता पड़ती है। आधुनिक काल में, एक मतदाता अपने प्रतिनिधियों को उनके नेताओं के नाम पर चुनता है। अतः सदस्यों को अपने नेताओं के आदेशों का पालन करना पड़ता है। लास्की के मतानुसार, अब संपूर्ण दलीय पद्धति का व्यावसायीकरण (professionalisation) हो गया है और कार्यों के क्षेत्र में व द्धि हो जाने के कारण, राजनीतिक दल सेना के समान कठोर अनुशासन रखने के लिए विवश हैं।

2. **सामूहिक उत्तरदायित्व (Collective responsibility)** - मंत्रिमंडल को अधिनायकत्व प्रदान करने में सामूहिक उत्तरदायित्व के सिद्धांत का भी हाथ है। सभी मंत्रिगण एक टीम की भांति काम करते हैं तथा सामूहिक रूप से लोक सदन के प्रति उत्तरदायी होते हैं। संसद में किसी एक मंत्री के प्रति अविश्वास समस्त मंत्रिमंडल द्वारा त्यागपत्र का कारण बन सकता है। अतः मंत्रिमंडल को द ढ़तापूर्वक काम करना पड़ता है। अमेरिका में सामूहिक उत्तरदायित्व के सिद्धांत का अभाव है। अतः अमेरिकी मंत्रिमंडल को ब्रिटिश मंत्रिमंडल के समान शक्तियां प्राप्त नहीं हैं और न ही वह व्यवस्थापिका पर उतना नियंत्रण रख सकता है।

3. **प्रदत्त व्यवस्थापन (Delegated legislation)** - राज्य के कार्यों में व द्धि के कारण संसद को प्रतिवर्ष एक बड़ी मात्रा में कानूनों का निर्माण करना पड़ता है। समयाभाव तथा कानूनों की जटिलताओं के कारण वह विधि निर्माण की शक्ति कार्यपालिका को दे देती है औ स्वयं केवल विधेयकों की रूपरेखा मात्र तैयार करती है। इसका प्रयोग मंत्रिमंडल 'सपरिषद्-आज्ञा' (Orders-in-Council) द्वारा करता है। प्रतिवर्ष सहस्त्रों की संख्या में ऐसे प्रशासकीय आदेश जारी किए जाते हैं। अतः विधि-निर्माण के क्षेत्र में मंत्रिमंडल को व्यापक शक्तियां प्राप्त हो गई हैं।

4. **प्रशासकीय न्याय (Administrative justice)** - प्रशासकीय न्याय के विकास ने भी मंत्रिमंडल की शक्तियों में व द्धि की है। कुछ विषयों में अपने विभाग से संबंधित अभियोगों के निर्णय का अधिकार विभिन्न मंत्रालयों को दे दिया गया है। 1913 में पारित 'मार्ग यातायात अधिनियम' (Road Traffic Act) के अनुसार यातायात तथा परिवहन मंत्री को किराये की मोटर-गाडी चलाने के लाइसेंस की अस्वीक ति की अपील सुनने का अधिकार है। प्रशासकीय न्यायाधिकारियों को सामान्य न्यायपालिका की कार्य-पद्धति के अनुसार काम करना आवश्यक नहीं है। इनसे केवल प्राक तिक नियमों (natural laws) का पालन अपेक्षित है। न्यायिक शक्तियों के कारण मंत्रिमंडल के सम्मान और प्रभाव में भी व द्धि हुई है।

5. **संसद को विघटित करने की शक्ति (Power to dissolve the House)** - मंत्रिमंडल को लोक सदन विघटित करने की महत्त्वपूर्ण शक्ति प्राप्त है। ब्रिटिश शासन पद्धति में मंत्रिमंडल के विरुद्ध अविश्वास प्रस्ताव पारित होने पर उसे तत्क्षण त्यागपत्र देने की आवश्यकता नहीं है। प्रधानमंत्री सम्राट से लोक सदन को भंग करने की मांग कर सकता है। ब्रिटिश अभिसमयों के आधार पर सम्राट इसको ठुकरा नहीं सकता। इस प्रकार मंत्रिमंडल को एक ब्रह्मास्त्र प्राप्त है। कीथ के मतानुसार, "दल के प्रति निष्ठा के अतिरिक्त मंत्रिमंडल के पास अपने अनुयायियों के अतिरिक्त, किसी सीमा तक

विरोधी दल के ऊपर प्रभाव डालने के लिए संसद का विघटन कर सकने का एक शक्तिशाली अस्त्र है। दूसरे शब्दों में, उसे अपने निर्माताओं को ही नष्ट करने का अधिकार प्राप्त है।" फाइनर ने भी कहा है कि, "लोकसभा का कुछ रचनात्मक उत्साह मंत्रिमंडल द्वारा उसे भंग करने की धमकी से नष्ट हो जाता है।" मंत्रिमंडल इस शक्ति का प्रयोग गंभीर स्थिति में ही करता है क्योंकि नए चुनाव में उसकी सफलता तत्कालीन राजनीतिक स्थिति, दल की आर्थिक स्थिति तथा संगठन की द ढ़ता पर निर्भर करती है।

6. **संसदीय जीवन स्तर** (Conditions of parliamentary life) - ब्रिटिश संसदीय जीवन स्तर भी मंत्रिमंडल पर प्रभावशाली नियंत्रण रखने में असफल सिद्ध हुआ है। मंत्रिमंडल संसद के सत्रकालों में ही उसके प्रति उत्तरदायी होता है। लगभग छह मास तथा उससे अधिक समय तक संसद का कोई अधिवेशन नहीं होता। इस अवकाश काल में समाचारपत्रों से प्राप्त सूचना के अतिरिक्त जनता को शासकों की गतिविधियों की कोई जानकारी नहीं होती। संसद के सदस्यों को अनेक निजी काम होते हैं और वे संसदीय कार्यों को पर्याप्त समय नहीं दे पाते। सिडनी लॉ के शब्दों में, "लोक सदन के सदस्य विभिन्न प्रकार से व्यस्त रहते हैं। लंदन के छोटे से अधिवेशन में उनकी अभिरुचि की बहुत सी चीजें रहती हैं। यद्यपि उनकी इच्छा उचित रूप से राजनीतिक कार्य करने की होती है, फिर भी परिस्थितियां उनके विरुद्ध होती हैं। आधा सदन कार्यरत रहता है तथा आधा आमोद-प्रमोद में व्यस्त।" परंतु हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि सदन के अधिकांश सदस्य विभिन्न समितियों में भाग लेकर पूरा साल काम करते रहते हैं।

ब्रिटिश प्रजातंत्र में शक्ति जन-प्रतिनिधियों के हाथ से निकल कर मंत्रिमंडल के हाथ में पहुंच गई है। इस विपर्यय को ही मंत्रिमंडलीय अधिनायकत्व कहा जाता है। लास्की, लॉवेल, एमरी आदि विचारकों ने मंत्रिमंडलीय अधिनायकत्व को अल्पकालीन अधिनायकत्व माना है। यह कभी भी जन-भावना की अपेक्षा नहीं कर सकता। लॉवेल के शब्दों में, "मंत्रिमंडलीय निरंकुशता वह निरंकुशता है जिसे अधिकतम प्रचार के साथ प्रयोग में लाया जाता है, जो सदैव आलोचना की कसौटी पर कसी रहती है और जनमत के अनुकूल ढलती है तथा जिसे अविश्वास प्रस्ताव और आगामी चुनाव का खतरा सदैव बना रहता है।"

पिछले कुछ वर्षों में, विश्व युद्ध, आर्थिक संकट तथा लोक कल्याणकारी राज्य की अवधारणाओं, इत्यादि के कारण कार्यपालिका की शक्तियों में अपार व द्धि हुई है। न केवल ब्रिटिश मंत्रिमंडल अपितु अमेरिका के राष्ट्रपति, स्विस संघीय परिषद इत्यादि की शक्तियों में भी व द्धि हुई है। लास्की ने ब्रिटिश मंत्रिमंडल की कार्य-पद्धति का समर्थन किया है। उसके मतानुसार प्रत्येक मंत्री के निर्णयों के पीछे संपूर्ण मंत्रिमंडल की सत्ता होती है। मंत्रिमंडलीय बैठकों में मंत्रियों को अपने विचार रखने की पूर्ण स्वतंत्रता होती है। विवादास्पद विषयों पर मंत्रिमंडल के सभी सदस्य विचार-विमर्श करते हैं। संसद की अपेक्षा मंत्रिमंडल प्रशासन पर अधिक कुशलतापूर्वक नियंत्रण रख सकता है। विशेषज्ञों का समूह न होने के कारण मंत्रिमंडल प्रशासन पर अधिक कुशलतापूर्वक नियंत्रण रख सकता है। विशेषज्ञों का समूह न होने के कारण मंत्रिमंडल राजनीतिक समस्याओं पर ही विचार कर सकता है। उसका कार्य तत्कालीन समस्याओं का उचित समाधान ढूंढना है।

किसी भी मंत्रिमंडल के लिए लोकमत की उपेक्षा करना संभव नहीं है चाहे वह कितना ही शक्तिशाली क्यों न हो। 1936 में सेमुअर होर को अबीसीनिया संबंधी नीति पर लोकमत के प्रबल विरोध के कारण ही त्यागपत्र देना पड़ा था। इसी प्रकार प्रधानमंत्री ईडन को स्वेज नहर की नीति पर जनता द्वारा तीव्र निंदा का सामना करना पड़ा तथा अपने पद से त्यागपत्र देना पड़ा। संसदीय अभिसमयों, अविश्वास प्रस्तावों तथा सदन में वाद-विवादों द्वारा मंत्रिमंडल को अधिनायकवादी होने से रोका जा सकता है। इस प्रकार कोई शासक अपने साथियों की प्रतिक्रियाओं की अवहेलना भी नहीं कर सकता। विरोधी दल का अस्तित्व भी मंत्रिमंडल की शक्तियों पर अंकुश रखता है। उदाहरणार्थ, 1963 के 'कीलर-प्रोफयूमों कांड' (Keeler-Profumo Scandal) में अपयश प्राप्त होने के कारण तत्कालीन रक्षामंत्री को त्यागपत्र देना पड़ा था।

ब्रिटिश मंत्रिमंडल जनता के प्रतिनिधियों द्वारा निर्वाचित न होकर प्रधानमंत्री के परामर्श पर सम्राट द्वारा नियुक्त होता है। अतः शासन संचालन में ब्रिटिश मंत्रिमंडल संसद का अनुगमन न करके उसका नेत त्व करता है। ब्रिटिश शासन पद्धति में लोकतंत्र का अर्थ है शासन पद्धति में लोकतंत्र का अर्थ है कि शासन संसद की सहमति से किया जाए न कि स्वयं संसद द्वारा। संसद का कार्य केवल नियंत्रण रखना है। शासन का संचालन जनहित में होना चाहिए। जिन देशों में लोकतंत्र को शासन की अपेक्षा प्राथमिकता दी जाती है वहां मंत्रिमंडल कमजोर तथा अस्थायी होते हैं। फाइनर के शब्दों में, "ब्रिटिश मंत्रिमंडलीय व्यवस्था शीघ्रगामी, गतिशील, विवेकी एवं उत्तरदायी नेत त्व प्रदान करती है। इस पर नियंत्रण रखा जा सकता है, परंतु इसका दमन संभव नहीं है। इससे प्रश्न किए जा सकते हैं, परंतु इसका अविश्वास नहीं किया जा सकता। राजनीतिक द्वेष होते हुए भी इसके

सदस्यों में व्यक्तिगत ईर्ष्या नहीं होती। इस पर उत्तरदायित्व की शक्ति, इसकी संस्थाओं एवं अनुमतियों द्वारा नियंत्रण रखा जा सकता है।" मंत्रिमंडलीय उत्तरदायित्व का सही अर्थ है कि यदि मंत्रिमंडल की नीतियों से संसद अथवा जनता सहमत नहीं हो तो उसे त्यागपत्र दे देना चाहिए। जब तक इसे संसद व जनता का विश्वास प्राप्त है तब तक इसे संसद को नेत त्व प्रदान करते रहना चाहिए। मंत्रिमंडलीय उत्तरदायित्व को अच्छी प्रकार समझ लेने पर ब्रिटिश मंत्रिमंडल पर अधिनायकत्व का आरोप निराधार सिद्ध होता है।

अध्याय-15

संयुक्त राज्य अमेरिका की राजनीतिक कार्यपालिका

(Political Executive of U.S.A.)

संयुक्त राज्य अमेरिका में अध्यक्षात्मक शासन प्रणाली है। यहां का राष्ट्रपति वास्तविक तथा नाममात्र की कार्यपालिका है। मंत्रिपरिषद के सदस्य शक्तिशाली नहीं वरन् उसके द्वारा नियुक्त तथा पदमुक्त किए जा सकते हैं। संयुक्त राज्य की राजनीतिक कार्यपालिका के दो अंग हैं- राष्ट्रपति और मंत्रिमंडल। इनमें राष्ट्रपति प्रमुख है तथा मंत्रिमंडल उसका सहायक है।

राष्ट्रपति
(The President)

संयुक्त राज्य अमेरिका का राष्ट्रपति, विश्व का सर्वाधिक प्रभावशाली राजनीतिक व्यक्तित्व माना जाता है। डब्ल्यू ए० मूनरों के शब्दों में- "अब तक एक लोकतंत्र में किसी भी व्यक्ति ने इतनी अधिक सत्ता का प्रयोग नहीं किया, जितना कि अमेरिका का राष्ट्रपति करता है।"

अमेरिकी संविधान में राष्ट्रपति का उल्लेख अनुच्छेद-2 में एक छोटे से वाक्य में किया गया है कि "अमेरिकी संघ की कार्यपालिका शक्ति एक राष्ट्रपति में निहित होंगी।" इस वाक्य से राष्ट्रपति की पदस्थिति तथा शक्तियां पूर्णतया स्पष्ट नहीं होती हैं क्योंकि संविधान निर्माताओं के मनोमस्तिष्क में राष्ट्रपति को अत्यधिक शक्तिशाली बनाने की इच्छा नहीं थी लेकिन कालान्तर में अमेरिकी राष्ट्रपति सशक्त होता चला गया।

योग्यताएं
(Eligibility)

संविधान के अनुच्छेद 2(1) के अनुसार राष्ट्रपति पद के लिए वही व्यक्ति पात्र होगा जो-

1. संयुक्त राज्य अमेरिका का जन्मजात नागरिक हो;
2. 35 वर्ष की आयु पूर्ण कर चुका हो;
3. संयुक्त राज्य अमेरिका का कम से कम 14 वर्ष निवासी रहा हो। (निरंतर 14 वर्ष निवास करना आवश्यक नहीं है)

लार्ड ब्राइस के अनुसार "व्यावहारिक रूप में अमेरिकी राष्ट्रपति पद का उम्मीदवार कोई ऐसा व्यक्ति होना चाहिए जो सार्वजनिक जीवन में किसी क्षेत्र में विशेष कार्य के लिए प्रसिद्ध रहा हो। कांग्रेस का सदस्य, किसी राज्य का गवर्नर, किसी बड़े नगर का मेयर, राजदूत, न्यायाधीश या असाधारण रूप से प्रसिद्ध पत्रकार हो सकता है।" सामान्यतः महत्त्वपूर्ण तथा घनी आबादी वाले राज्य का व्यक्ति, राष्ट्रपति पद तक पहुंचता रहा है।

कार्यकाल

अमेरिका राष्ट्रपति का कार्यकाल चार वर्ष निर्धारित है तथा एक व्यक्ति अधिकतम दो बार राष्ट्रपति रह सकता है। प्रारंभिक दिनों में लोकप्रिय राष्ट्रपति जैफरसन, जेम्स मेडिसन तथा जेम्स मुनरो ने तीसरा कार्यकाल पसंद नहीं किया था लेकिन फ्रेंकलिन डी० रूजवेल्ट लगातार चार बार निर्वाचित हुए थे। सन् 1951 में पारित 22वें संविधान संशोधन के द्वारा किसी व्यक्ति के दो बार से अधिक राष्ट्रपति चुने जाने पर प्रतिबंध लगा दिया गया है। यदि कोई उपराष्ट्रपति, आपात परिस्थितियों में राष्ट्रपति पद ग्रहण करता है तो वह अधिकतम 10 वर्ष का कार्यकाल ही पूरा कर सकता है।

निर्वाचन

अमेरिकी संविधान में कहा गया था कि राष्ट्रपति एवं उपराष्ट्रपति का निर्वाचन करने के लिए प्रत्येक राज्य अपनी विधायिका के आदेशानुसार निर्वाचक चुनें, जिनकी संख्या उस राज्य की सीनेट तथा प्रतिनिधि सभा के प्रतिनिधियों के बराबर हो। समय आने पर ये निर्वाचक अपने-अपने राज्य में एक स्थान पर एकत्र हों तथा लिखित रूप में अपने मत दो व्यक्तियों को दें, जिसमें से कम से कम एक उस राज्य का निवासी न हो, जिस राज्य की ओर से वे निर्वाचक नियुक्त किए गए हैं। इसके पश्चात् मतों को एक पेटी में मुहर लगा कर सीनेट के अध्यक्ष के पास भेज दिया जाए जो कांग्रेस के दोनों सदनों की उपस्थिति में मतों को गिनकर परिणाम की घोषणा करे। जिस व्यक्ति को सर्वाधिक मत मिलें तथा मतों का पूर्ण बहुमत भी मिले वह राष्ट्रपति तथा उससे कम मतों तथा उसी प्रकार के बहुमत वाला व्यक्ति उपराष्ट्रपति निर्वाचित होगा।

संविधान में वर्णित यह निर्वाचन-पद्धति अब परिवर्तित हो चुकी है। सन् 1800 में राष्ट्रपति एवं उपराष्ट्रपति को निर्वाचक मंडलों से 73-73 मत मिले थे। अतः 12वें संविधान संशोधन (1804) द्वारा राष्ट्रपति एवं उपराष्ट्रपति का निर्वाचन प थक होने लगा है। इसी प्रकार 23वें संविधान संशोधन (1961) के द्वारा कोलम्बिया जिले (राजधानी क्षेत्र) से भी निर्वाचक मंडल में 3 सदस्य लिये जाने का प्रावधान है। वर्तमान में राष्ट्रपति चुनाव प्रक्रिया यह है-

1. सर्वप्रथम राजनीतिक दल अपने उन उम्मीदवारों का निर्धारण करते हैं जिन्हें राष्ट्रपति, उपराष्ट्रपति का चुनाव लड़ना होता है। इस हेतु पार्टी के सभा-सम्मेलनों में पर्याप्त भाषणबाजी, गुटबाजी तथा मतदान प्रक्रिया अपनाई जाती है। सामान्यतः राष्ट्रपति एवं उपराष्ट्रपति देश के प थक-प थक हिस्सों से लिए जाते हैं। यह एक परंपरा बन चुकी है।
2. उम्मीदवारों द्वारा चुनाव प्रचार तथा संबंधित पार्टी द्वारा मतदाताओं को लुभाया जाता है।
3. राष्ट्रपति एवं उपराष्ट्रपति का चुनाव प्रत्यक्ष न होकर निर्वाचक मंडल (Electoral College) द्वारा होता है। इस मंडल में 538 सदस्य चुने जाते हैं। यह संख्या राज्यों से चुना जाने वाले सीनेटरों तथा प्रतिनिधि सभा के सदस्यों (435+1000) पहले अमेरिकी राष्ट्रपति 4 मार्च को शपथ ग्रहण करते थे किंतु 20वें संविधान संशोधन (1933) के पश्चात् अब 20 जनवरी को नवनिर्वाचित राष्ट्रपति पद ग्रहण करता है। सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश के सम्मुख यह शपथ ली जाती है -

   "मैं गम्भीरतापूर्वक शपथ लेता हूं कि अमेरिका के राष्ट्रपतिपद पर निष्ठापूर्वक कार्य करूंगा और अपनी योग्यतानुसार अमेरिका के संविधान का संरक्षण एवं प्रतिरक्षण करुंगा।"

वेतन, भत्ते एवं उन्मुक्तियां

राष्ट्रपति के वेतन, भत्तों, निःशुल्क सरकारी आवास तथा अन्य सुविधाओं का निर्धारण कांग्रेस द्वारा किया जाता है। कार्यपालिका प्रधान के रूप में राष्ट्रपति को अनेक उन्मुक्तियां (छूट) प्राप्त होती हैं। यद्यपि संविधान में इनका वर्णन नहीं है तथापि परंपरा के रूप में इनका पालन अवश्य होता है। राष्ट्रपति को गिरफ़्तार नहीं किया जा सकता है और न ही उनके विरूद्ध 'परमादेश' जारी किया जा सकता है। सामान्यतः किसी अदालत में आकर साक्ष्य देने के क्रम में राष्ट्रपति को छूट प्राप्त है। महाभियोग के समय सीनेट में बुलाया जा सकता है।

पदमुक्ति

राष्ट्रपति अपनी इच्छा से पद त्याग सकते हैं अथवा उन्हें महाभियोग द्वारा हटाया जा सकता है। संविधान के अनुच्छेद 2(4) के अनुसार राष्ट्रपति को देशद्रोह, भ्रष्टाचार या अन्य गंभीर अपराध (कदाचार) के मामलों में राष्ट्रपति पर महाभियोग लगाया जा सकता है। प्रतिनिधि सभा का कोई सदस्य या कुछ सदस्य राष्ट्रपति के विरूद्ध उपयुक्त आधार पर आरोप लगा सकते हैं जिनका न्यायिक या विशेष जांच समिति द्वारा परीक्षण किया जाता है। जांच समिति के प्रतिवेदन के पश्चात् यदि प्रतिनिधी सभा आवश्यक समझे तो एक प्रस्ताव बहुमत द्वारा पारित करती है तथा आरोप पत्र राष्ट्रपति को भेजा जाता है। इस प्रस्ताव पर सीनेट जांच हेतु न्यायालय के रूप में बैठती है तथा सर्वोच्च न्यायालय का न्यायाधीश बैठक की अध्यक्षता करता है। प्रतिनिधि सभा का एक सदस्य सीनेट को समस्त जानकारी (प्रस्ताव) प्रदान करता है। राष्ट्रपति स्वयं उपस्थित होकर या उनका वकील बचाव करता है। यदि सीनेट दो तिहाई बहुमत ये प्रस्ताव पारित कर दे तो राष्ट्रपति को पद त्यागना पड़ता है। अमेरिकी इतिहास में सर्वप्रथम 1867 में राष्ट्रपति एन्ड्रयू जॉनसन के विरूद्ध महाभियोग प्रस्ताव मात्र एक वोट से गिर गया था

जबकि 1974 में तत्कालीन राष्ट्रपति रिचर्ड निक्सन ने बहुचर्चित वाटरगेट कांड के कारण बनी प्रतिनिधि सभा की न्यायिक समिति की सिफारिश आते ही त्यागपत्र दे दिया था क्योंकि महाभियोग प्रस्ताव आने वाला था। तीसरी स्थिति सन् 1998 में राष्ट्रपति बिल क्लिंटन के सम्मुख आयी थी जबकि व्हाईट हाउस में कार्य करने वाली कर्मचारी मोनिका लेविंस्की ने राष्ट्रपति पर यौन शोषण का आरोप लगाया था। शुरू में राष्ट्रपति ने शपथ लेकर आरोपों को झुठला दिया था लेकिन लेविंस्की द्वारा प्रस्तुत प्रमाणों (वस्त्र, टेप इत्यादि) से यह सिद्ध हो गया था कि बिल क्लिंटन तथा मोनिका लेविंस्की के मध्य अवैध शारीरिक संबंध थे। कांग्रेस द्वारा स्वतंत्र वकील केनेथ स्टार द्वारा करवाई गई। जांच से आरोप सही सिद्ध हुए किंतु अधिसंख्य अमेरिकी इसे महाभियोग लायक अपराध नहीं मानते थे। राष्ट्रपति ने इस क त्य के लिए अपने परिवार एवं राष्ट्र से क्षमायाचना की तथा महाभियोग प्रस्ताव सीनेट में पारित न हो सका।

राष्ट्रपति की म त्यु, त्यागपत्र या हटाये जाने के पश्चात् उपराष्ट्रपति को राष्ट्रपति पद धारण करना होता है। सन् 1967 में पारित 25वें संविधान संशोधन से पूर्व उपराष्ट्रपति द्वारा राष्ट्रपति पद ग्रहण कर लेने पर उपराष्ट्रपति का पद रिक्त रहता था किंतु इस संशोधन से यह व्यवस्था की गई कि उपराष्ट्रपति का पद, राष्ट्रपति द्वारा नामजद व्यक्ति द्वारा भरा जाएगा, यदि कांग्रेस के दोनों सदन उसे स्वीक ति दे दें। सन् 1973 में उपराष्ट्रपति स्पाइसे टी० एग्नू द्वारा त्याग पत्र देने पर राष्ट्रपति रिचर्ड एम० निक्सन ने गेराल्ड आर० फोर्ड को उपराष्ट्रपति नामजद कर दिया जिसे कांग्रेस ने भी स्वीक ति दे दी। अगले ही वर्ष राष्ट्रपति निक्सन ने वाटरगेट कांड के कारण त्यागपत्र दे दिया तथा फोर्ड अमेरिका के राष्ट्रपति बन गए। बिना निर्वाचन के राष्ट्रपति बनने का यह विचित्र उदाहरण है जिसे अमेरिकी व्यवस्था ने सहजता से स्वीकार भी किया।

शक्तियां एव कार्य

संयुक्त राज्य अमेरिका का राष्ट्रपति अत्यधिक व्यस्त तथा शक्ति-संपन्न शासनाध्यक्ष है। यद्यपि संविधान के अनुसार राष्ट्रपति बहुत शक्तिशाली नहीं है तथापि विगत दो शताब्दियों की परपंराओं ने राष्ट्रपति को महान् एवं सशक्त बना दिया है। फरगुसन एवं मैक हेनरी ने इस तथ्य को रेखांकित करते हुए कहा है- "मंगल ग्रह से आने वाला व्यक्ति, अमेरिका के संविधान को पढ़ते हुए यही समझेगा कि राष्ट्रपति एक निर्बल कार्यपालिका है जो बहुत सीमा तक कांग्रेस की इच्छा के अधीन है। वह अमेरिका की शासन प्रणाली को कांग्रेस की सरकार कहेगा, किंतु उन शक्तिशाली व्यक्तियों (राष्ट्रपति जैफरसन, जैक्सन, लिंकन, क्लीवलैंड, थियोडर रूजवेल्ट, विल्सन तथा फ्रेंकलिन रूजवेल्ट) जिन्होंने इस पद को धारण किया, इस पद को अत्यधिक शक्तिशाली कार्यपालिकाओं में से एक बना दिया है।" अमेरिका का राष्ट्रपति निम्नांकित शक्तियों का प्रयोग करता है-

1. **कार्यपालिका शक्तियां**- एकल कार्यपालिका के रूप में अमेरिकी राष्ट्रपति शासन संचालन के समस्त व्यावहारिक क त्य संपादित करता है। संविधान का अनुच्छेद-2 संघ की समस्त कार्यपालिका-शक्तियां, राष्ट्रपति में निहित करता है। इन शक्तियों का प्रयोग निम्नानुसार करता है-

   i. अमेरिकी संविधान के अनुच्छेद 2(3) के अनुसार सभी संघीय कानूनों का समुचित रूप से क्रियान्वयन करवाना राष्ट्रपति का दायित्व है। कांग्रेस द्वारा पारित अधिनियमों तथा संधियों के निष्ठापूर्वक पालन से प्रशासनिक गतिविधियां नियंत्रित होती हैं।

   ii. संघीय कानूनों के अंतर्गत आने वाले समस्त प्रशासनिक तंत्र को नियंत्रित-निर्देशित करता है।

   iii. संपूर्ण संयुक्त राज्य अमेरिका में व्यवस्था बनाए रखने का दायित्व निभाता है। चूंकि प्रत्येक राज्य में गणतंत्रात्मक सरकार बनाए रखने एवं राज्य की बाहरी आक्रमण तथा आंतरिक हिंसा से बचाने का दायित्व संघीय सरकार का है अतः उपद्रव एवं अन्य हिंसक प्रदर्शनों के समय राष्ट्रपति, राज्यों को सहायता प्रदान करता है।

   iv. संघीय प्रशासन से संबंधित समस्त उच्च पदों पर नियुक्ति का कार्य राष्ट्रपति करता है। ज्यों ही कोई नया राष्ट्रपति निर्वाचित होता है कांग्रेस 2-3 हजार महत्त्वपूर्ण पदों से संबंधित सूची तैयार करती है इसे "प्लम बुक" (Plum Book) कहा जाता है। प्लम बुक में वर्णित पदों पर राष्ट्रपति अपने विश्वासपात्र व्यक्तियों को नियुक्त करता है, चाहे वे लोक सेवक हों या नहीं। नीति निर्धारण से संबंधित ये उच्च पद ही राष्ट्रपति की कार्यशैली को प्रमाणित करते हैं। राष्ट्रपति इन उच्च पदों जैसे मंत्रियों, न्यायाधीशों, निदेशकों, राजदूतों, महान्यायवादी, राजस्व अधिकारियों, महाडाकपाल, आयोगों, निगमों तथा ब्रोर्डो के अध्यक्ष एवं सदस्य इत्यादि पर अपने

राजनीतिक प्रशंसको, महिलाओं, अश्वेतों, अल्पसंख्यकों, क्षेत्रीय प्रतिनिधित्व इत्यादि सभी पक्षों को ध्यान में रखते हुए नियुक्ति देते हैं। इन नियुक्तियों की तीन श्रेणियां बनाई गई हैं। कुछ उच्च पदों पर सीनेट के परामर्श तथा बहुमत से स्वीक ति पर नियुक्ति वैध मानी जाती है तो दूसरी श्रेणी में निम्न पद रखे गए हैं जो कांग्रेस की सहमति से राष्ट्रपति या विभागीय अध्यक्ष तथा न्यायालय स्वयं नियुक्ति दे देते हैं। संविधान में निम्न पदों का वर्णन नहीं है। उच्च पदों पर नियुक्ति में सीनेट का शिष्टाचार अवश्य निर्वाहित किया जाता है। सामान्यतः (कुछ अपवादों को छोड़कर) सीनेट द्वारा, उन नियुक्तियों की पुष्टि कर दी जाती है जो राष्ट्रपति ने की हैं। यद्यपि संविधान में राष्ट्रपति के नियुक्त किए गए पदाधिकारियों को पद से हटाने के क्रम में शक्ति का वर्णन नहीं किया गया है तथापि परंपरानुसार राष्ट्रपति इस शक्ति का प्रयोग करते हैं। "मेयर्स बनाम संयुक्त राज्य" मुकदमें में यह कहा गया है कि राष्ट्रपति पद से हटाने की शक्ति रखता है।

v. संयुक्त राज्य अमेरिका के राष्ट्रपति को विदेशी संबंधों एवं नीतियों के निर्धारण के क्रम में पर्याप्त अधिकार दिए गए हैं। वह राजदूतों, वाणिज्य दूतों, प्रतिनिधियों तथा प्रतिनिधि मंडलों की नियुक्ति कर सकता है, विदेश नीति निर्मित कर सकता है, अमेरिकी विदेश नीति का अधिकारिक प्रवक्ता बन सकता है, विदेशी सरकारों (राष्ट्रों) को मान्यता प्रदान कर सकता है तथा संधियां कर सकता है। इन संधियों की पुष्टि सीनेट के दो तिहाई बहुमत से होनी आवश्यक है अतः कई बार उलझन से बचने के लिए संधि के स्थान पर प्रशासकीय समझौते भी कई राष्ट्रपति करते रहे हैं क्योंकि प्रशासकीय समझौते कार्यपालिका क्षेत्र में आते हैं जिनकी पुष्टि सीनेट से होनी आवश्यक नहीं है। राष्ट्रपति "गुप्त समझौते" भी कर सकता है।

vi. विदेश यात्रा करने वाले तथा प्रवासी अमेरिकियों को संरक्षण प्रदान करने तथा उनकी समस्याओं के समाधान का दायित्व राष्ट्रपति का है।

vii. संविधान के अनुसार राष्ट्रपति सेनाओं तथा सशस्त्र बलों का प्रधान सेनापति है। राष्ट्र की प्रतिरक्षा में वह सेनाओं का प्रयोग कर सकता है। वह सशस्त्र बलों को आदेश देने तथा युद्ध का संचालन करने का दायित्व निभाता है किंतु युद्ध की घोषणा कांग्रेस ही कर सकती है। वास्तविकता यह है कि राष्ट्रपति तात्कालिक घटनाओं को देखते हुए सेनाओं को आदेश दे देते हैं तथा कांग्रेस को बाद में युद्ध की घोषणा करनी पड़ती है। वास्तव में युद्ध के समय अमेरिकी राष्ट्रपति अधिनायक हो जाता है।

2. **विधायी शक्तियां**- यद्यपि विधायी शक्तियों का अधिकांश भाग, कांग्रेस में निहित है तथापि राष्ट्रपति के पास भी कुछ विधायी शक्तियां है, जैसे-

i. संविधान के अनुसार राष्ट्रपति का यह कर्त्तव्य है कि वह समय-समय पर कांग्रेस को संघ की स्थिति के बारे में जानकारी दे और उसके विचार के लिए ऐसे सुझावों की अनुशंसा करे, जिन्हें वह आवश्यक समझता हो। राष्ट्रपति कांग्रेस को वार्षिक संदेश प्रेषित करते हैं जिसमें सरकार की नीतियों एवं कार्यक्रमों सहित सुझाव भी होते हैं। सामान्यतः कांग्रेस, राष्ट्रपति के सुझावों पर अमल करती है।

ii. राष्ट्रपति को यह अधिकार है कि वह कांग्रेस के दोनों सदनों में मतभेद होने पर उन्हें स्थगित कर दे (सामान्य स्थिति में नहीं) तथा महत्त्वपूर्ण या अत्यावश्यक विषय पर विचार करने के लिए कांग्रेस के सत्र की अवधि बढ़ाने की सिफारिश कर सकता है। यदि कांग्रेस के सत्र की अवधि बढ़ाने की सिफारिश कर सकता है। यदि कांग्रेस स्वीकार न करे तो वह अधिवेशन समाप्ति के पश्चात् "विशेष अधिवेशन" बुलवा सकता है।

iii. कांग्रेस द्वारा पारित विधेयकों पर राष्ट्रपति के हस्ताक्षर होते हैं। राष्ट्रपति को निशेषाधिकार (Veto Power) प्राप्त है। विलम्बकारी निषेधाधिकार (Suspensive Veto) के अंतर्गत राष्ट्रपति किसी विधेयक को अपनी आपत्तियों सहित उस सदन को लौटा सकता है जहां से वह शुरू हुआ था। यदि पुनः वही विधेयक दोनों सदनों में दो तिहाई बहुमत से पारित हो जाए तो राष्ट्रपति के हस्ताक्षरों की आवश्यकता नहीं रहती है। वस्तुतः इस वीटो से विधेयक प्रायः म त हो जाता है क्योंकि दो तिहाई बहुमत मिलना आसान नहीं रहता है। जेबी (Pocket) निषेधाधिकार से तात्पर्य उस वीटो से है जब राष्ट्रपति किसी विधेयक पर निर्णय करना टाल देता है। ऐसा वह

अवकाश के दिनों के अतिरिक्त 10 दिन तक कर सकता है। दस दिन पश्चात् विधेयक स्वीक त माना जाता है यदि उस समय कांग्रेस का अधिवेशन समाप्त न हुआ हो। दूसरे शब्दों में कहें तो कांग्रेस के अधिवेशन के अंतिम दिनों में आने वाले विधेयक, राष्ट्रपति के जेबी वीटो के कारण निष्क्रिय हो सकते हैं। अमेरिका में सभी राष्ट्रपतियों ने वीटो शक्ति को पर्याप्त प्रयोग में लिया है।

iv. कांग्रेस द्वारा कानूनों के विषय में विस्त त नियम-विनिमय बनाने का कार्य कार्यपालिका का है। प्रदत्त विधान की इस व्यवस्था के कारण राष्ट्रपति एवं प्रशासन की कानून निर्माण में भूमिका बढ़ जाती है।

v. राष्ट्रपति अपने राजनीतिक दल के उन सदस्यों से जो कांग्रेस में हैं, के द्वारा विधान निर्माण एवं अन्य कार्यों में हस्तक्षेप करवा सकता है। अमेरिकी शासन व्यवस्था में 'लॉबी' (Lobby) तथा 'कॉकस' (Caucus) (बड़े संगठन में एक छोटा समूह जो गुप्त मंत्रगाएं करता है) का बहुत महत्त्व है।

न्यायिक शक्तियां

राष्ट्रपति को कतिपय न्यायिक शक्तियां भी दी गई हैं जैसे-

1. दंड प्राप्त अपराधियों को राष्ट्रपति क्षमा कर सकता है, दंड को कम या स्थगित कर सकता है। साथ ही एक ही अपराध में दंडित अनेक व्यक्तियों को सर्वक्षमा (Amnesty) कर सकता है जैसा कि सन् 1868 में राष्ट्रपति जॉनसन ने ग हयुद्ध में दक्षिण की ओर से लड़ने वालों को क्षमा किया था। राष्ट्रपति गेराल्ड फोर्ड ने 1974 में पूर्व राष्ट्रपति रिचर्ड निक्सन के मामलों में कानूनी कार्यवाही से पूर्व क्षमा कर दिया था। राष्ट्रपति की क्षमादान शक्तियों में दो शर्तें हैं।
2. वह केवल संघीय विधि के मामलों में दंडित व्यक्तियों को क्षमा कर सकता है, राज्यों की विधि के अंतर्गत नहीं।
3. महाभियोग द्वारा दंडित व्यक्तियों को क्षमा नहीं कर सकता है।

इसके अतिरिक्त संघीय न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति राष्ट्रपति करता है लेकिन उन्हें हटा नहीं सकता है।

संकटकालीन शक्तियां

विश्व की महान् राजनीतिक एवं आर्थिक शक्ति अमेरिका का राष्ट्रपति सामरिक, वित्तीय, वाणिज्यिक, राजनीतिक, आंतरिक अशांति तथा अन्य संकटों के समय तुरंत निर्णय कर सकता है। संकटकाल में उसे असीम अधिकार दिए जा सकते हैं शर्त यह है कि-

1. संकट वास्तविक होना चाहिए।
2. संकट से संबंधित कांग्रेस का पूर्व में कोई कानून बना हुआ न हो।
3. संकट की आकस्मिकता के कारण कांग्रेस को समुचित कदम उठाने का अवसर न मिल सका हो।

इस संबंध में राष्ट्रपति आइजनहावर का मानना था कि यदि अमेरिकी राष्ट्रपति देश पर आक्रमण होने पर आक्रांता पर तत्काल कार्यवाही नहीं करता तो उसे (राष्ट्रपति) म त्युदंड दिया जाना चाहिए। वस्तुतः अमेरिकी राष्ट्रपति की पदस्थिति संविधान निर्माण के पश्चात् निरंतर सुद ढ़ होती जा रही है। वह विश्व के सभी देशों के मामलों में किसी न किसी प्रकार के अवश्य सम्बद्ध हो जाता है क्योंकि अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर अमेरिका की तूती बोलती है। राष्ट्रपति के प्रमुख कार्यो में बजट निर्माण भी सम्मिलित है जिसे कांग्रेस द्वारा स्वीक ति प्रदान की जाती है। अमेरिका की खुफिया एजेंसियों को सुद ढ़ बनाने, अंतरिक्ष एवं अन्य तकनीकी कार्यक्रमों की दूरगामी योजना बनाने तथा अन्य राष्ट्रीयताओं के नागरिकों के संबंध में नीति बनाने में अनेक कार्यकारी अभिकरण स्थापित है तथापि राष्ट्रपति की इच्छा शक्ति निर्णायक भूमिका निभाती है। अमेरिकी राष्ट्रपति प्रति सप्ताह जनता को रेडियो प्रसारण द्वारा संदेश भी देते हैं।

अमेरिकी राष्ट्रपति अपने राजनीतिक दल के नेता के रूप में राष्ट्रीय समिति के अध्यक्ष को नियुक्त करता है। दल की नीतियों का प्रचार-प्रसार एवं क्रियान्वयन करता है। राष्ट्र के सर्वोच्च नेता के रूप में वह जनता को अपील एवं अन्य माध्यमों से संदेश प्रदान करता है। राष्ट्रपति विल्सन ने कहा था कि "अमेरिका का राष्ट्रपति यदि एक बार देश का विश्वास तथा प्रशंसा अर्जित कर ले तो कोई एक शक्ति उसका सामना नहीं कर सकती तथा कई शक्तियां भी उसे सरलता से हरा नहीं सकती।"

अमेरिका के राष्ट्रपति की स्थिति
(Position of the American President)

राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय क्षेत्र में अमेरिका के राष्ट्रपति का विशिष्ट स्थान है। राष्ट्रपति का स्वर जनता का स्वर होता है। आंतरिक क्षेत्र में जनता उसी के नेत त्व एवं निर्देश की आकांक्षा रखती है। विदेशी मामलों में वह राष्ट्र का एकमात्र प्रवक्ता होता है। उसकी प्रत्येक घोषणा का विश्वव्यापी प्रभाव होता है। राष्ट्रपति की शक्तियों में व्यक्ति तथा उसकी परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तन होता रहता है। वाशिंगटन, जैक्सन, लिंकन, रूजवेल्ट, केनेडी, जॉनसन, निक्सन इत्यादि ने अपने कर्त्तव्यों की जो व्याख्या की उससे राष्ट्रपति की शक्तियों में असाधारण व द्धि हुई है। अमेरिका के इतिहास का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि राष्ट्रपति तथा कांग्रेस के परस्पर संबंधों के आधार पर वहां बारी-बारी सुद ढ़ एवं दुर्बल राष्ट्रपति होते रहे हैं। मुनरों ने उचित ही कहा है कि "द ढ़ व्यक्तित्व और दुर्बल व्यक्तित्व के बीच पेंडुलम की भांति शक्ति-संतुलन, एक विशेषता रही है। शताब्दियों से जनता की मनोव त्ति कमजोर नेत त्व से शक्तिशाली नेत त्व, दकियानूसीपन से उदारतावाद तथा विद्रोह से प्रतिक्रिया के बीच द्वेलित होती रही है, किंतु गति सदैव दोनों ओर बनी रही है।" राष्ट्रपति की व्यापक शक्तियों का अध्ययन उसकी स्थिति का परीक्षण करने के लिए जितना लाभदायक हो सकता है, यह उतना ही भ्रामक भी सिद्ध हो सकता है। राष्ट्रपति एक इकाई है जो कि अनेक कार्यो को साथ-साथ सम्पादित करता है। एक क्षेत्र में उसकी सफलता दूसरे क्षेत्र में प्राप्त सफलता पर आधारित होती है।

राष्ट्रपति की शक्तियों पर प्रतिबंध (Impediments to Presidential Powers) - राष्ट्रपति की शक्तियों पर अनेक प्रतिबंध हैं। यदि राष्ट्रपति चाहता है कि उसकी नीतियां स्वीक त कर ली जाएं तथा उनको क्रियान्वित किया जाए तो उसे उच्च पदाधिकारियों, कांग्रेस में बहुमत तथा जनता के समर्थन पर निर्भर रहना पड़ता है। कभी-कभी न्यायपालिका के निर्णय भी उसके मार्ग में बाधक बन सकते हैं। यहां राष्ट्रपत की शक्तियों को प्रतिबंधित करने वाले कारकों का संक्षिप्त विवरण दिया जा रहा है।

सर्वप्रथम, राष्ट्रपति की संवैधानिक स्थिति उसकी शक्तियों पर सबसे बड़ा प्रतिबंध है। वह राष्ट्र का नेत त्व कर सकता है किंतु कांग्रेस का नहीं। वह कांग्रेस को केवल नीति का निर्देश दे सकता है किंतु उसे नीति की उपयोगिता एवं वांछनीयता के विषय में संतुष्ट नहीं कर सकता। वह कांग्रेस में अपने दल के सदस्यों पर अधिक निर्भर नहीं रह सकता। राष्ट्रपति चाहे किसी भी दल का क्यों न हो, कांग्रेस के सदस्यों के लिए वह केवल एक प्रतिद्वंदी मात्र होता है। 1961 में डेमोक्रेट राष्ट्रपति केनेडी को सीनेट में केवल 15 डेमोक्रेट सदस्यों का समर्थन प्राप्त होता था। कांग्रेस के सदस्यों का निर्वाचन क्षेत्र राष्ट्रपति के निर्वाचन क्षेत्र से सर्वथा भिन्न होता है तथा उनके लक्ष्य भी भिन्न होते हैं कांग्रेस में विभिन्न व्यक्तियों को दलीय आधार पर प्रतिनिधित्व प्राप्त होता है जो कि सीनेट एवं प्रतिनिधि सदन के रूप में संगठित होते हैं। कांग्रेस का स्वरूप अत्यधिक प्रादेशिक (parochial) प्राप्त होता है। प्रतिनिधि सदन के सदस्यों को चुनाव प्रति दो वर्ष के उपरांत होता है। अतः वे चुनाव में ही व्यस्त रहते हैं। सीनेट में समान प्रतिनिधित्व होने पर भी ऐरिजोना अथवा इदाहो की अपेक्षा न्यूयार्क तथा कैलिफोर्निया के विधायकों का अधिक महत्त्व होता है। इन सभी कारणों से राष्ट्रपति तथा कांग्रेस में सदैव संघर्ष की संभावना बनी रहती है। उदाहरणार्थ, कांग्रेस ने राष्ट्रपति विल्सन द्वारा की गई वार्सा संधि को ही अस्वीक त कर दिया था।

दूसरे राष्ट्रपति प्रशासनिक अधिकारियों को इस प्रकार आदेश नहीं दे सकता जैसे कि एक सेनापति अपने सैनिकों को आदेश दे सकता है। कांग्रेस के बाद नौकरशाही (bureaucracy) राष्ट्रपति के लक्ष्यों की प्राप्ति में सबसे अधिक बाधक सिद्ध हुई है। रोबर्ट डहल तथा डिंबलोम के शब्दों में, "नौकरशाही सामान्य उच्चतरों के नियंत्रण के प्रति उत्तरदायी, अनुशासित, अधीनस्थ कर्मचारियों के समूह की अपेक्षा अंतर्राष्ट्रीय राजनीति की रंगभूमि के अधिक करीब प्रतीत होती है।" कार्यो की अधिकता के फलस्वरूप राष्ट्रपति प्रशासन पर समुचित नियंत्रण नहीं रख पता। किसी भी निर्णय को लेने के लिए राष्ट्रपति प्रशासनिक अधिकारियों द्वारा प्रदत्त सूचनाओं पर निर्भर करता है। अधनीस्थ कर्मचारियों की छोटी सी भूल का राष्ट्रपति के निर्णयों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है। इसके अतिरिक्त निर्वाचन में समर्थन प्राप्त करने के लिए भी राष्ट्रपति कुछ नियुक्तियों की प्रतिज्ञा करता है। राष्ट्रपति द्वारा सुरक्षित पदाधिकारी यदि राष्ट्रपति की नीतियों से सहमत नहीं होते तो भी राष्ट्रपति उस समय तक उनके विरुद्ध कोई कदम नहीं उठा सकता जब तक कि उसे उनका राजनीतिक समर्थन प्राप्त होता है। इसी प्रकार गवर्नर, सीनेट अथवा दल की राष्ट्रीय समिति द्वारा नियुक्त कर्मचारियों की भक्ति अपने नियुक्तिकर्त्ताओं की ओर अधिक होती है। कुछ महत्त्वाकांक्षी व्यक्ति राष्ट्रपति को अपने प्रतिद्वंदी के रूप में ही देखते हैं।

तीसरे, न्यायिक पुनर्वलोकन की शक्ति (Power of Judicial Review) के आधार पर न्यायपालिका भी राष्ट्रपति की शक्तियों पर अनेक प्रतिबंध लगा सकती है। न्यायपालिका को व्यवस्थापिका एवं कार्यपालिका के कार्यो को असंवैधानिक घोषित करने का अधिकार है। राष्ट्रपति जैफर्सन ने स्पष्ट शब्दों में कहा था कि संविधान निर्माता शासन के तीनों अंगों को स्वतंत्र एवं एक दूसरे के हस्तक्षेप से मुक्त रखना चाहते थे। अतः न्यायपालिका का राष्ट्रपति के कार्यो की समीक्षा करने का अधिकार शक्ति प थक्करण एवं सीमित शासन के सिद्धांतों के सर्वथा विरुद्ध है। 1993 में राष्ट्रपति रूजवेल्ट ने अमरीका की अर्थव्यवस्था में सुधार लाने के लिए महत्त्वाकांक्षी कार्यक्रम प्रस्तुत किया था। इसे 'न्यू डील' (New Deal) कार्यक्रम के नाम से जाना जाता है। इस कार्यक्रम के अंतर्गत कांग्रेस द्वारा पारित अनेक विधियों में से सर्वोच्च न्यायालय ने 12 कानूनों को असंवैधानिक घोषित कर दिया था।

अंत में, अमेरिका में व्यापारी वर्ग के बढ़ते हुए आधिपत्य के विरुद्ध जनता में असंतोष की भावना भी राष्ट्रपति के शक्तिशाली शासन के विरुद्ध में रही है। जनता सरकारी नियंत्रण द्वारा व्यवस्था की स्थापना को संदेह की पुष्टि से देखती है। आधुनिक औद्योगिक युग में राष्ट्रपति की समस्याएं सर्वथा भिन्न हैं। लोंस्की के अनुसार, कांग्रेस की इच्छाओं से मर्यादित राष्ट्रपति की स्थिति अथाह समुद्र में एक ऐसे नाविक के समान है जो पूर्ण निश्चयपूर्वक आगे नहीं बढ़ सकता। राष्ट्रपति की सफलता उसकी लोकप्रियता पर भी निर्भर करती है। रोबर्ट कार तथा अन्य विचारकों के शब्दों में, "बहुत से विधायक (legislators) एक अलोकप्रिय राष्ट्रपति के कार्यक्रमों का समर्थन करने तथा कार्यपालिका के लोकप्रिय अध्यक्ष के प्रस्तावों का विरोध करने के इच्छुक नहीं होते।" एक अलोकप्रिय राष्ट्रपति को व्यवस्थापिका तथा कांग्रेस का पूर्ण सहयोग प्राप्त नहीं होता।

राष्ट्रपति का मंत्रिमंडल
(The President's Cabinet)

राष्ट्रपति का मंत्रिमंडल प थक, स्पष्ट एवं अध्ययन योग्य है। इसका अध्ययन योग्य है। इसका अध्ययन अधिक नहीं किया गया क्योंकि राष्ट्रपति की एक सहायक संस्था है जो निर्णायक प्रभाव नहीं रखती वरन् केवल परामर्श और सहयोग देती है। रिचार्ड फेनो (Richard Feno) ने लिखा है, "मंत्रिमंडल राष्ट्रपति का अपना साधन है, वह इसे जैसे चाहे प्रयोग में लाए।"

मंत्रिमंडल एक लंबे विकास का परिणाम है। रिचार्ड फेनो के कथनानुसार, "मंत्रिमंडल प्राचीन संस्था के लिए आधुनिक शब्दावली है। अमेरिकी मंत्रिमंडल एक अर्थ में कानून से परे रचना है। इसका अस्तित्व संवैधानिक या कानूनी प्रावधानों पर निर्भर नहीं है वरन् परंपराओं पर आधारित है। समय की परिस्थितियों, घटनाओं, नेताओं के व्यक्तित्व आदि ने इसके स्वरूप पर पर्याप्त प्रभाव डाला है। अमेरिकी मंत्रिमंडल का स्वतंत्र व्यक्तित्व नहीं है, वह राष्ट्रपति पर आश्रित है। उसकी इच्छा के विरुद्ध उस पर दबाव नहीं डाल सकता। एक अर्थ में राष्ट्रपति मंत्रिमंडल के जीवन और मरण का निर्णायक है।" जोनेथन डेनील के कथनानुसार, "कोई संस्था एक व्यक्ति के समर्थकों का ऐसा निकाय नहीं होती जैसे अमेरिकी राष्ट्रपति का मंत्रिमंडल है।" असल में मंत्रिमंडल राष्ट्रपति का अनुपूरक है, यह राष्ट्रपति के व्यक्तित्व की कमियों को पूरा करने की चेष्टा करता है।

मंत्रिमंडल के सदस्यों की नियुक्ति
(Appointment of Cabinet Members)

मंत्रिमंडल की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा की जाती है तथा राष्ट्रपति की इच्छा निर्णायक तत्त्व है किंतु दूसरे कई तत्व हैं जो राष्ट्रपति की स्वेच्छा के प्रयोग को सीमित कर देते हैं। रिचार्ड फेनो के मतानुसार, "प्रत्येक मंत्रिमंडल की रचना में पांच तत्त्व कम या अधिक मात्रा में सक्रिय रहते हैं।" ये पांच तत्त्व क्रमशः निम्नलिखित हैं-

1. **राष्ट्रपति का प्रभाव** - मंत्रिमंडल की नियुक्ति में राष्ट्रपति केंद्रीय तत्त्व होता है। सिद्धांततः द्वारा नियुक्त मंत्रिमंडल पर सीनेट के परामर्श एवं स्वीक ति का प्रावधान है, किंतु व्यवहार में यह औपचारिकता मात्र है। राष्ट्रपति मंत्रियों का चयन करते समय ऐसे व्यक्तियों को लेता है जो उसके विचार वाले हों तथा उसके साथ मिलकर कार्य कर सकें। कुछ राष्ट्रपति मंत्रिमंडल का चयन दलीय आधार पर करते हैं जबकि अन्य राजनीति को विशेष महत्त्व नहीं देते हैं।
2. **मंत्री पद की प्ररेणाएं एवं असुविधाएं**- मंत्री पद की कठिनाइयों के कारण राष्ट्रपति पसंद के व्यक्तियों को मंत्रिमंडल में नहीं ले पाता। मंत्री पद का वेतन कम है तथा मंत्री बनने के बाद व्यक्तियों को व्यवसाय छोड़ना पड़ता है। बाद में व्यक्ति को कुछ कार्य करने का अवसर नहीं मिल पाता। एक मंत्री का मुख्य कार्य कागजों एवं पत्रों पर अपने

हस्ताक्षर करना मात्र है। मंत्री को रचनात्मक कार्य करने का बहुत कम अवसर प्राप्त होता है। कार्य न करने पर भी उनकी आलोचनाएं होती हैं। उन्हें वांछित सम्मान नहीं मिलता है। मंत्रियों में ऊंच-नीच का भेद रहता है। इन सब कठिनाइयों से अनेक लोग मंत्रिमंडल में आना नहीं चाहते।

3. **समय की परिस्थितियां** - एक निश्चित समय में जनमत का द ष्टिकोण विभागों का तुलनात्मक महत्त्व और दलीय स्थिति मंत्रिमंडल के चयन को प्रभावित करती है। यदि जनमत प्रशासन में प्रयोग और नवीनीकरण का पक्षपाती है तो भिन्न प्रकार के मंत्रियों की आवश्यकता होगी। यदि कोई दल बहुत समय बात शक्ति में आता है तो मंत्री बनने वाले प्रत्याशियों की संख्या अधिक नहीं होगी।

4. **मंत्रिमंडल के आदर्श** - मंत्रिमंडल की रचना इस पर निर्भर करती है कि मंत्रिमंडल का आदर्श क्या है? एक मंत्रिमंडल अपने सदस्यों के व्यक्तिगत गुणों पर विशेष जोर देता है। थियोडर रूजवेल्ट के मतानुसार, मंत्री में विभाग का प्रशासकीय कार्य करने के पर्याप्त गुण होने चाहिए। वह प्रभावशाली नेता हो, मिलकर कार्य करने की योग्यता हो, तद्नुसार प्रत्येक पद पर योग्य व्यक्ति नियुक्त किया जाता है और सभी सदस्य मिलकर कार्य करते हैं।

5. **प्राप्य और संतुलन का मापदंड** - मंत्रिमंडल में विभिन्न पदों पर विभिन्न योग्यताओं की आवश्यकता रहती है। ये योग्यताएं देश के क्षेत्रीय अंतरों द्वारा संतुलित की जानी चाहिए। प्रत्येक योग्यता मंत्रिमंडल में हो यह चयन के समय देखा जाये।

स्पष्ट है कि मंत्रिमंडल की नियुक्ति में राष्ट्रपति की भूमिका विशेष महत्त्व रखती है, किंतु वह असीमित या अमर्यादित नहीं है। उस पर राजनीतिक दल, देश के भौगोलिक क्षेत्र, प्रशासनिक योग्यता आदि का प्रभाव पड़ता है।

परंपरागत ढंग से राष्ट्रपति के मंत्रिमंडल में कार्यपालिका विभागों के अध्यक्ष रहते हैं। पिछले कुछ वर्षो से उपराष्ट्रपति पद का महत्त्व बढ़ाने की द ष्टि से निक्सन को अपनी अनुपस्थिति में मंत्रिमंडल का सभापति नियुक्त कर दिया था। फ्रैंकलिन रूजवेल्ट ने गैरविभागीय अधिकारियों को मंत्रिमंडल में लेने की परंपरा डाली।

मंत्रिमंडल की मीटिंग्स
(The Cabinet Meetings)

परंपरा एवं प्रचलित व्यवहार द्वारा विकसित मंत्रिमंडल की मीटिंग्स का स्वरूप लचीला है। इसके सेवीवर्ग, प्रक्रिया और सामयिकता की द ष्टि से इसमें निरंतरता पायी जाती है। जॉर्ज वाशिंगटन के समय मंत्रिमंडल की मीटिंग्स राष्ट्रपति की इच्छा से मंगलवार एवं शनिवार को होती थी। कुछ राष्ट्रपतियों ने लंबे समय तक मंत्रिमंडल में विचार-विनिमय किए हैं जबकि राष्ट्रपति कूलिज मंत्रिमंडल की बैठकें कुछ मिनट के लिए आयोजित करता था। उपराष्ट्रपति मंत्रिमंडल की मीटिंग में नहीं बैठता था। मंत्रिमंडल की मीटिंग अनौपचारिक होती है। वह सामूहिक रूप से उत्तरदायी नहीं होता अतः उसमें न कभी मतदान कराया जाता है और न उसका अभिलेख रखा जाता है। अपवादस्वरूप कुछ राष्ट्रपतियों ने मंत्रिमंडल की मीटिंग में औपचारिकता, मतदान प्रणाली और अभिलेख रखने की परंपरा को अपनाया है।

मंत्रिमंडल मीटिंग्स की अध्यक्षता राष्ट्रपति करता है। राष्ट्रपति द्वारा कार्यसूची प्रस्तुत की जाती है। समस्या यह है कि मंत्रिमंडल की बैठकें किस समय व कितने समय बाद की होनी चाहिए। कुछ लेखकों ने नियमित मीटिंग का समर्थन किया है किंतु अनेक लेखक मीटिंग की नियमितता को अनावश्यक समय खराब करना कहते है। रिचार्ड फेनो के मतानुसार, "मंत्रिमंडल की मीटिंग की सफलता उसके नियमित होने पर निर्भर करती है। राष्ट्रपति की इसमें स्वेच्छापूर्ण शक्ति होनी चाहिए ताकि मंत्रिमंडल निरर्थक न बन जाए।" अन्य समस्या में मंत्रिमंडल की मीटिंग में कितनी औपचारिकता रखी जाए। लोचशीलता के लिए अनौपचारिता चाहिए, किंतु कार्रवाई की सार्थकता के लिए औपचारिकता भी अपेक्षित होती है। अनौपचारिक मीटिंग में वाद-विवाद नहीं हो पाता क्योंकि उसके लिए पहले से कोई तैयार नहीं होता।

मंत्रिमंडल के कार्य
(Functions of the Cabinet)

मंत्रिमंडल निम्नलिखित कार्य संपन्न करता है- (i) यह राष्ट्रपति का परामर्शदाता है और किसी निर्णय पर पहुंचने में उसकी सहायता करता है। (ii) सदस्य राष्ट्रपति को सूचनाएं देता हैं, अपने अनुभव बताते हैं और अपने निर्णयों से अवगत कराते हैं।

(iii) राष्ट्रपति को अनेक कार्यों के बुरे परिणामों से पहले ही अवगत करा देता है। (iv) विभिन्न कार्यों के लिए अनके विकल्प सुझाता है। (v) राष्ट्रपति के समन्वय कार्य को सुगम बनाता है। (vi) यह विभिन्न सदस्यों के बीच संचार-व्यवस्था का कार्य करता है।

राष्ट्रपति का सहायक
(The Assistant to President)

राष्ट्रपति अमेरिकी प्रशासन का सर्वोच्च अधिकारी है, किंतु एक व्यक्ति के रूप में उसकी कार्यक्षमता की सीमाएं हैं। प्रारंभ में राष्ट्रपति के कार्य एवं दायित्व सीमित थे। वह कुछ सचिवों, लिपिकों की सहायता से अपना पत्र-व्यवहार और अन्य कार्य संपन्न कर लेता था। जब राष्ट्रपति की शक्तियां बढ़ीं तो उसकी सहायता के लिए एक बड़े संगठन की आवश्यकता हुई। 1937 में प्रशासनिक प्रबंध समिति ने इस आवश्यकता पर बल दिया। 1939 में कांग्रेस ने एक पुनर्गठन अधिनियम पारित किया जिसमें राष्ट्रपति के निष्पादक कार्यालय का जन्म हुआ। इसे राष्ट्रपति सचिवालय कहा गया है। राष्ट्रपति निक्सन अपनी सहायता, परामर्श और सूचना के लिए व्हाइट हाउस कार्यालय का सहयोग लेते थे। 1969 के संघीय वित्त विधेयक द्वारा 17 राष्ट्रपति सहायक रखे गये। राष्ट्रपति के निष्पादक कार्यालय में अनेक अभिकरण आते हैं। कुछ प्रमुख अभिकरण ये हैं-

1. **व्हाइट हाउस कार्यालय** - इस कार्यालय में लगभग चार सौ व्यक्ति कार्य करते हैं। ये राष्ट्रपति के विभिन्न परंपरागत, व्यक्तिगत, राजनीतिक तथा जन संपर्क के कार्य संपन्न करते हैं। इसके अधिकारियों के कुछ नाम हैं, जैसे- राष्ट्रपति का सहायक या प्रेस सचिव, पदाधिकारी सचिव, विशेष सहायक, विशेष सलाहकार, प्रशासनिक सहायक, सैनिक सहायक आदि।

   कार्यालय स्टाफ द्वारा अनेक महत्त्वपूर्ण कार्य संपन्न किए जाते हैं। जैसे- (i) राष्ट्रपति को सार्वजनिक नीति संबंधी विषयों की सूचना देना, (ii) सरकार की कार्यपालिका एवं व्यवस्थापिका शाखाओं के बीच समन्वय कार्य करना, (iii) व्यक्तिगत मामलों में राष्ट्रपति को परामर्श देना तथा (iv) राष्ट्रपति के समस्त पत्र-व्यवहार का कार्य संपन्न करना।

2. **बजट ब्यूरो** - इसकी स्थापना 1921 के बजट तथा लेखांकन अधिनियम द्वारा की गई थी। यह 1921 से 1939 तक राजकोष विभाग से संलग्न रहा, किंतु यथार्थ में राष्ट्रपति के प्रति उत्तरदायी था। सन् 1939 की पुनर्गठन योजना के अंतर्गत बजट ब्यूरो (Bureau of the Budget) राष्ट्रपति के निष्पादक कार्यालय में हस्तांतरित कर दिया गया। ब्यूरो के मुख्य अधिकारी ये हैं- निदेशक, छः सहायक निदेशक तथा एक सामान्य परिषद। बजट ब्यूरो बजट का परिपत्र तैयार करता है। व्यवस्थापिका द्वारा स्वीक त होने के बाद इस बजट पर प्रशासन का नियंत्रण रहता है।

   8 सितंबर, 1939 के कार्यपालिका आदेश के अनुसार बजट ब्यूरो के कार्य ये हैं- (i) सरकार के राजकोषीय तथा वित्तीय कार्यों में राष्ट्रपति की सहायता करना, (ii) बजट प्रशासन का पर्यवेक्षण एवं नियंत्रण करना, (iii) प्रशासनिक प्रबंध योजनाओं के विकास में शोध करना तथा विभिन्न कार्यपालिका विभागों एवं अभिकरणों को परामर्श देना, (iv) कुशलता एवं मितव्ययता के साथ सरकारी सेवा संचालन में राष्ट्रपति की सहायता करना, (v) विभागों तथा अभिकरणों द्वारा रखे गए विधायी प्रस्तावों में समन्वय स्थापित करना, (vi) कार्यपालिका आदेशों तथा निषेधाधिकार संदेशों की तैयारी में राष्ट्रपति की सहायता करना, (vii) प्रशासनिक अभिकरणों के कार्यक्रम की प्रगति से राष्ट्रपति को सूचित करना, (viii) सांख्यिकीय सेवाओं के सुधार, विकास तथा समन्वय की योजनाएं बनाना एवं उनकी उन्नति करना। बजट ब्यूरो सरकारी व्यय को न्यूनतम बनाए रखने में भी सहयोग देता है।

3. **आर्थिक परामर्शदाताओं की परिषद** - इसकी स्थापना 1946 के रोजगार अधिनियम द्वारा की गई है। इस परिषद में राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त एवं सीनेट द्वारा स्वीक त तीन सदस्य होते हैं। यह राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की रक्षक का काम करती है, आर्थिक विकास में राष्ट्रपति को परामर्श देती है, राष्ट्रीय सरकार का आर्थिक नीतियों एवं कार्यक्रमों का मूल्यांकन करती है, आर्थिक विकास एवं स्थायित्व के लिए नीतियां सुझाती है तथा राष्ट्रपति द्वारा कांग्रेस को भेजी जाने वाली वार्षिक रिपोर्ट तैयार करती है।

   राष्ट्रपति के निष्पादक कार्यालय में कुछ अन्य इकाइयां रहती हैं। उदाहरण के लिए राष्ट्रीय सुरक्षा परिषद, केंद्रीय गुप्तचर अभिकरण, कार्रवाई समन्वयकर्ता मंडल आदि। ये सभी सहायक संस्थाएं राष्ट्रपति के कार्यों का निष्पादन करने में महत्वपूर्ण योगदान देती हैं।

अध्याय-16
फ्रांस की कार्यपालिका
(Political Executive of France)

फ्रांस की अध्यक्षीय प्रणाली में कतिपय विशिष्टताएं अमेरिकी शासन प्रणाली के समान दिखाई देती हैं तो कुछ समानताएं, ब्रिटिश संसदीय प्रणाली जैसी हैं। विशुद्ध रूप से यह न तो अध्यक्षीय व्यवस्था कहला सकती है और न ही संसदीय व्यवस्था के दायरे में आती है। जनरल डी० गाल ने यह मिश्रित व्यवस्था 1958 में तत्कालीन ग ह युद्ध की आशंका तथा अस्थिर राजनीति के परिप्रेक्ष्य में ग्रहण की थी लेकिन पंचम गणराज्य की वर्तमान विशेषताओं तथा शासन व्यवस्था के द्वारा फ्रांस ने केवल चार दशक से राजनीतिक रूप से स्थिर है बल्कि विश्व की गिनी चुनी महाशक्तियों में सम्मिलित है। प्रो० डूवर्ज ने पंचम गणतंत्र को "अर्द्ध अध्यक्षीय राज्य" कहा है लेकिन राष्ट्रपति की मंत्रिपरिषद पर उच्च स्थिति को देखते हुए फाइनर ने इसे उच्च अध्यक्षीय राज्य का नाम दिया है। निस्संदेह शासन व्यवस्था का वर्तमान स्वरूप फ्रांस के लिए वरदान ही सिद्ध हुआ है भले ही इसमें कई प्रकार की विसंगतियां एवं अपूर्णताएं ही क्यों न हों। फ्रांस की शासन व्यवस्था तथा कार्यपालिका के तीन मुख्य आधार स्तम्भ हैं-

1. **राष्ट्रपति** (The President)
2. **प्रधानमंत्री** (The Premier)
3. **मंत्रिपरिषद्** (Council of Ministers)

राष्ट्रपति
(The President)

फ्रांस का राष्ट्रपति केवल नाममात्र की ही संवैधानिक कार्यपालिका का प्रतीक नहीं है बल्कि वह राज्य का वास्तविक अध्यक्ष, राष्ट्र का प्रतीक, शासन का प्रमुख तथा तथा संविधान का संरक्षक है। त तीय एवं चतुर्थ गणराज्य के संविधान में राष्ट्रपति की स्थिति भारत के राष्ट्रपति या ब्रिटेन के सम्राट के समान कमजोर थी। परिस्थितिवश राष्ट्रपति की पदस्थिति सुद ढ़ बनाई गई है। मेंडल फ्रांस के अनुसार- "राष्ट्रपति एक अवंशानुगत सम्राट है जो अपने को वैधानिक अधिनायक बना सकता है।"

योग्यताएं

पंचम गणराज्य के संविधान में राष्ट्रपति की कोई योग्यता वर्णित नहीं है। अतः कोई भी मतदाता (18 वर्ष की आयु) इस पद का प्रत्याशी बन सकता है लेकिन व्यावहारिक स्थिति इतनी सरल नहीं है। अत्यंत लोकप्रिय, कुशल तथा अनुभवी राजनेता ही इस पद तक पहुंच सकता है। फ्रांस की नागरिक संहिता के अनुसार फ्रांस का कोई भी नागरिक (जन्मजात आवश्यक नहीं) राष्ट्रपति बन सकता है। सामान्यतः विदेशियों को 5 वर्ष में नागरिकता मिलती है किंतु पूर्व उपनिवेशों जैसे अमेरिका का अरकंसास प्रांत जो कभी फ्रांसिसी उपनिवेश था, के नागरिक फ्रांस में तुरंत नागरिकता पा सकते हैं।

निर्वाचन

पंचम गणराज्य के मूल संविधान में राष्ट्रपति के अप्रत्यक्ष निर्वाचन की व्यवस्था थ। एक "महान मंडल" जिसमें 80 हजार सदस्य होते थे, के द्वारा राष्ट्रपति का चयन होता था किंतु अक्टूबर 1962 में किए गए संविधान संशोधन द्वारा अब राष्ट्रपति का निर्वाचन सभी मतदाताओं के द्वारा प्रत्यक्ष रूप से किया जाता है। निर्वाचन के लिए पूर्ण बहुमत अर्थात् 50 प्रतिशत से अधिक मत आवश्यक हैं। यदि किसी भी उम्मीदवार को पूर्ण बहुमत नहीं मिलता है तो 15 दिन पश्चात् दूसरा मतदान होता है जिसमें केवल वे ही उम्मीदवार मैदान में रहते हैं जो प्रथम मतदान में प्रथम एवं द्वितीय मतपत्र योजना का सहारा लेना पड़ता

है। संविधान परिषद्, चुनाव से संबंधित सभी नियंत्रणकारी प्रावधान करती है। चुनावी अनियमितताओं की सुनवाई तथा राष्ट्रपति के निर्वाचन की घोषणा भी संविधान परिषद् ही करती है।

कार्यकाल

राष्ट्रपति 7 वर्ष के लिए चुना जाता है तथा पुनः निर्वाचित होने पर कोई प्रतिबंध नहीं है। फ्रांस में उपराष्ट्रपति के पद का प्रावधान नहीं है। राष्ट्रपति की अनुपस्थिति में सीनेट का सभापति अल्पकाल के लिए यह पद ग्रहण करता है लेकिन वह जनमत संग्रह (लोकनिर्णय), संधियों के अनुसमर्थन तथा संविधान संशोधन जैसे गंभीर मुद्दों पर निर्णय नहीं कर सकता है। ऐसा पूर्णकालिक राष्ट्रपति ही करता है। राष्ट्रपति की शारीरिक या मानसिक अस्वस्थता के समय संवैधानिक परिषद् सरकार की प्रार्थना पर पूर्ण बहुमत से निर्णय कर राष्ट्रपति-पद रिक्त घोषित कर सकती है। नये राष्ट्रपति का चुनाव कम से कम 20 तथा अधिकतम 35 दिनों के अंदर अनिवार्य है।

शक्ति व कार्य

फ्रांस का राष्ट्रपति अनेक द ष्टियों से शक्ति संपन्न कार्यपालिका है। वह संविधान का संरक्षक, राष्ट्र की एकता का प्रतीक तथा सर्वोच्च पदाधिकारी है।

कार्यपालिका शक्तियां

1. वह प्रधानमंत्री की नियुक्ति करता है तथा प्रधानमंत्री के प्रस्ताव पर सरकार के अन्य अधिकारियों को नियुक्त एवं पदमुक्त करता है। प्रधानमंत्री का त्यागपत्र भी राष्ट्रपति ही स्वीकारता है।
2. मंत्रिपरिषद की बैठकों की अध्यक्षता करता है।
3. फ्रांस के राजदूतों की नियुक्ति करता है तथा अन्य देशों के राजदूतों के नियुक्ति पत्र स्वीकारता है।
4. वह सेनाओं का प्रमुख सेनापति होता है। राष्ट्रपति सुरक्षा परिषद् तथा रक्षा समितियों की अध्यक्षता करता है।
5. अन्य देशों के साथ संधि वार्ताएं करता है तथा संधियों का अनुसमर्थन करता है।

विधायी शक्तियां

1. संसद द्वारा पारित विधेयकों को 15 दिन के अंदर स्वीक त कर कानून घोषित करता है। वह विधेयक को पुनर्विचार हेतु लौटा सकता है जिस पर संसद अनिवार्यतः विचार करती है।
2. मंत्रिपरिषद् द्वारा भेजे गए अध्यादेशों तथा विज्ञप्तियों पर हस्ताक्षर करता है।
3. संसद के दोनों सदनों में संदेश भेजता है किंतु उस संदेश पर वाद-विवाद नहीं होता है।
4. संसद के असाधारण सत्र आयोजित करवा सकता है।
5. सरकार के अथवा संसद के दोनों सदनों के संयुक्त संकल्प पर विधेयकों को लोक निर्णय के लिए प्रसारित कर सकता है यदि मामला जनसमर्थन से संबंधित हो।
6. प्रधानमंत्री तथा संसद के दोनों सदनों के सभापतियों के परामर्श पर राष्ट्रीय सभा को भंग कर सकता है।

न्यायिक शक्तियां

1. न्यायालयों द्वारा दंडित व्यक्तियों को क्षमादान दे सकता है।
2. उच्च न्यायिक परिषद् में नौ सदस्यों को मनोनित करता है।
3. उच्च न्यायिक परिषद् की अध्यक्षता करता है।
4. न्यायाधीशों की स्वतंत्रता बनाए रखने की गारंटी देता है।

आपातकालीन शक्तियां

संविधान के अनुच्छेद-16 के अनुसार "जब कभी गणराज्य की संस्थाओं, राष्ट्र की स्वतंत्रता, फ्रांस के क्षेत्रों की अखंडता या अंतर्राष्ट्रीय वचनबद्धताओं को पूरा करने में गंभीर तथा तत्कालिन खतरा उत्पन्न हो जाता है और संवैधानिक सरकार की सत्ताओं

के उचित एवं नियमित कार्यो में बाधा पड़ने लगती है तो राष्ट्रपति उस खतरे का सामना करने के लिए जिन उपायों को आवश्यक समझे, उठा सकता है।" संविधानुसार राष्ट्रपति इस संकट की सूचना राष्ट्र को देगा। प्रधानमंत्री, संसद के दोनों सदनों के सभापतियों तथा संविधान परिषद् से परामर्श करेगा। लेकिन राष्ट्रपति परामर्श मानने के लिए बाध्य है या नहीं, इस पर संविधान मौन है। आपातकाल आरंभ होते ही राष्ट्रीय सभा का अधिवेशन शुरू हो जाता है और विघटित नहीं किया जा सकता है। वास्तव में इस समय राष्ट्रपति का स्वविवेक ही निर्णायक रहता है।

डॉरोथी पिकल्स के अनुसार "राष्ट्रपति, जज और जूरी दोनों हो जाता है।" आपातकाल की समय सीमा निश्चित नहीं की गई है। ऐसे समय राष्ट्रपति भी निर्णय लेता है तथा राष्ट्रीय सभा भी उचित कदम उठा सकती है।

संविधान के अनुच्छेद-5 के अनुसार राष्ट्रपति, संविधान का संरक्षक भी होता है। वस्तुतः जनरल डी० गाल से लेकर अद्यतन, फ्रांस में राष्ट्रपति की स्थिति सुद ढ़ एवं किंचित सर्वेसर्वा जैसी प्रतीत हुई है।

राष्ट्रपति की शक्तियों का मूल्यांकन

(Evaluation of Presidential Powers)

फ्रांस का राष्ट्रपति एक शक्तिशाली पदाधिकारी है, वह नाममात्र की कार्यपालिका नहीं है। व्यापक प्रशासनिक तथा विधायी शक्तियां उसे महत्वपूर्ण अधिकारी बना देती हैं। उसे व्यवस्थापिका के अविश्वास प्रस्ताव द्वारा नहीं हटाया जा सकता। उसे केवल महाभियोग द्वारा हटाया जा सकता है, किंतु यह प्रक्रिया जटिल है। संकटकाल में राष्ट्रपति की शक्तियां बढ़ जाती हैं। वह संवैधानिक अधिनायक बन जाता है। इन शक्तियों का प्रयोग राष्ट्रपति द्वारा की किया जाता है। आलोचकों ने राष्ट्रपति की संकटकालीन शक्तियों में यह आपत्ति की है कि केवल राष्ट्रपति ही अंतिम निर्णय लेता है कि संकट है या नहीं और उसके लिए क्या उपाय किए जाएं ? राष्ट्रपति की संकटकालीन शक्तियां अस्पष्ट व अनिश्चित हैं। अनेक प्रश्नों का उपयुक्त उत्तर नहीं है। आलोचकों का कहना है कि पंचम गणतंत्र के संविधान ने एक ओर तो राष्ट्रपति को व्यापक शक्तियां प्रदान की हैं। दूसरी ओर संसद की शक्तियों पर कई प्रतिबंध लगाए हैं। ऐसी स्थिति में राष्ट्रपति को शक्तियों के दुरुपयोग से कोई नहीं रोक सकेगा। डी० वी० बर्ने (D.V. Burne) के कथानुसार, "यह ज्ञात करना कठिन है कि नए संविधान ने संसद की शक्तियों पर जो कड़े प्रतिबंध लगाए हैं उनके अधीन सीमित अध्यक्षात्मक शासन को अर्द्ध-अधिनायकवाद में रूपातंरित होने से कैसे रोका जाएगा।"

फ्रांस के राष्ट्रपति को संविधान ने व्यापक शक्तियां दी हैं किंतु वह तानाशाह हीं बन सकता। उसे संवैधानिक परिषद् द्वारा अयोग्य घोषित किया जा सकता है। उस पर राजद्रोह का मुकदमा चलाया जा सकता है। राष्ट्रपति की निरंकुश शक्तियों पर जनमत का नियंत्रण रहता है। यदि राष्ट्रपति ने शक्तियों के दुरुपयोग से जनता के अधिकार तथा स्वतंत्रताओं में बाधा डाली तो जनता का छठा गणतंत्र स्थापित करने में देर नहीं लगेगी। राष्ट्रपति के वास्तविक व्यवहार ने आलोचकों की आशंकाओं को निर्मूल सिद्ध कर दिया है। कोई महत्वाकांक्षी राष्ट्रपति पद का लाभ उठाकर तानाशाह बन सकता है। प्रो० एरोन (Prof. Aron) के कथनानुसार, "कागज पर फ्रांस का राष्ट्रपति अमेरिकी राष्ट्रपति से कम शक्तिशाली नहीं है।" फ्रांस के एक साम्यवादी नेता मोरिस थारेंज के कथनानुसार, "राष्ट्रपति को पुराने सम्राटों से अधिक शक्तियां प्राप्त हैं।" निष्कर्ष रूप में सिद्धांत और व्यवहार में राष्ट्रपति सर्वोच्च है।

फ्रांस का प्रधानमंत्री

(The Premier of France)

फ्रांस का प्रधानमंत्री (प्रीमियर) की पदस्थिति भारत या ब्रिटेन के प्रधानमंत्री के समान सशक्त कार्यपालिका की नहीं है। यद्यपि 1789 की क्रांति से ही प्रधानमंत्री-पद महत्त्वपूर्ण रहा है किंतु सर्वप्रथम चतुर्थ गणतंत्र के संविधान में यह पद वर्णित किया गया। वर्तमान (पंचम) गणतंत्र में भी प्रधानमंत्री का पद कार्यपालिका का आवश्यक अंग है।

नियुक्ति

संविधान के अनुच्छेद-8 के अनुसार प्रधानमंत्री की नियुक्ति का अधिकार राष्ट्रपति में समाहित है। यहां की व्यवस्था में राष्ट्रपति की पसंद अधिक महत्त्वपूर्ण है न कि बहुमत दल के नेता या अन्य संसदीय गुटों का प्रभाव है। राष्ट्रपति विभिन्न दलों से परामर्श

लेने के लिए बाध्य नहीं है। चौथे गणतंत्र में प्रधानमंत्री का पद "राष्ट्रीय सभा का प्रतिनिधि" का पर्याय था क्योंकि राष्ट्रपति द्वारा निर्दिष्ट व्यक्ति को राष्ट्रपति का सभा का विश्वास मत प्राप्त करना होता था उसके पश्चात नियुक्ति होती थी लेकिन अब वह व्यवस्था नहीं है अतः फ्रांस का प्रधानमंत्री राष्ट्रपति का प्रतिनिधि माना जाता है।

पदमुक्ति

फ्रांस के प्रधानमंत्री को राष्ट्रपति का विश्वास खो देने या राष्ट्रीय सभा में विश्वास खो देने पर त्यागपत्र देना पड़ता है। अनुच्छेद-50 के अनुसार सरकार के सिकी कार्यक्रम या नीति को राष्ट्रीय सभा द्वारा अस्वीकार कर देने या निंदा प्रस्ताव पारित करने पर प्रधानमंत्री को अपना त्यागपत्र, राष्ट्रपति को सौंपना होता है। वह स्वेच्छा से भी पदत्याग कर सकता है।

शक्तियां एवं कार्य

फ्रांस में राष्ट्रपति तथा प्रधानमंत्री नामक द्विशीर्षात्मक कार्यपालिका के होते हुए शक्तियों का बंटवारा स्पष्ट रूप से किया गया है। प्रधानमंत्री की निम्नांकित शक्तियां तथा कार्य हैं-

1. शासन संचालन के लिए यथावश्यक दिशा-निर्देश जारी करता है।
2. राष्ट्र की सुरक्षा के लिए सशस्त्र सेनाओं को निर्देश देता है।
3. अनुच्छेद-13 में वर्णित महत्त्वपूर्ण पदों को छोड़, शेष पदों पर नियुक्तियां करता है।
4. विधायिका द्वारा निर्मित कानूनों के क्रियान्वयन को सुनिश्चित करता है।
5. सरकार के समस्त अध्यादेशों तथा विज्ञप्तियों पर राष्ट्रपति के हस्ताक्षर करवाता है।
6. राष्ट्रपति द्वारा प्राप्त शक्तियों के अनुसरण में सुरक्षा परिषद् तथा अन्य समितियों की अध्यक्षता करता है।
7. विशिष्ट कार्यों, प्रदत्त शक्तियों तथा औपचारिक रूप में मंत्रिमंडल की बैठकों की अध्यक्षता करता है।
8. मंत्रिमंडल के सदस्यों, उनके विभागों तथा कार्यक्षेत्र का निर्धारण कर राष्ट्रपति को अवगत कराता है।
9. लोक सेवाओं में सुधार, नियंत्रण-निर्देशन तथा कार्यकुशलता बनाए रखने के प्रयास करता है।
10. संसद में सरकार की नीतियों, कार्यक्रमों तथा अन्य घोषणाओं का स्पष्टीकरण देता है तथा संसदीय प्रश्नों के उत्तर प्रस्तुत करता है।
11. राष्ट्रीय सभा में विश्वास मत प्रस्तुत करता है।
12. विधि निर्माण के लिए विधेयक प्रस्तुत करने की पहल करता है।
13. विशिष्ट कार्यसूची के अंतर्गत संसद का असाधारण सत्र आयोजित करने की प्रार्थना करता है।
14. राष्ट्रीय सभा को भंग करने या आपातकाल इत्यादि के संदर्भ में राष्ट्रपति को परामर्श देता है।

संविधान के अनुच्छेद-21 के अनुसार प्रधानमंत्री राष्ट्र की नीतियों के लिए उत्तरदायी होता है अतः नीति निर्माण में उसकी भूमिका भी सर्वाधिक रहती है।

प्रधानमंत्री की स्थिति

(The Position of the Prime Minister)

पंचम गणतंत्र के अधीन प्रधानमंत्री मंत्रिमंडल का मुख्य नायक है। संविधान की धारा 27 के अनुसार शासन का मुख्य संचालक है। उसे राष्ट्रपति का दायां हाथ कहा जाता है क्योंकि राष्ट्रपति अपने अधिकारों का प्रयोग उसके माध्यम से करता है। वह राष्ट्रपति का मुख्य परामर्शदाता है। उसके परामर्श से राष्ट्रपति देश में संकटकाल की घोषणा करता है, राष्ट्रीय सभा को भंग करने का निर्णय लेता है, मंत्रिपरिषद् के सदस्यों की नियुक्ति और बर्खास्तगी करता है।

प्रधानमंत्री मंत्रिपरिषद् के जीवन, मरण और कार्य संचालन पर व्यापक प्रभाव रखता है। वह मंत्रिमंडल के सदस्यों में कार्य बांटता है, उनके कार्यों का निरीक्षण, बैठकों की अध्यक्षता तथा नेत त्व प्रदान करता है। प्रधानमंत्री के त्याग-पत्र का अर्थ संपूर्ण मंत्रिपरिषद् का पतन है।

प्रधानमंत्री देश की सुरक्षा के लिए उत्तरदायी है। इस द ष्टि से वह देश की सशस्त्र सेनाओं को आवश्यक निर्देश देता है। वह संसद का सदस्य न होते हुए दोनों सदनों में बैठने तथा बोलने का अधिकारी व सरकार का मुख्य वक्ता है। उसके वक्तव्य सरकार की नीति के प्रतीक होते हैं। वह संसद द्वारा पारित कानूनों को कार्यान्वित करता है। वह अनेक सैनिक तथा असैनिक पदाधिकारियों की नियुक्ति प्रतिरक्षा परिषदों एवं समितियों की अध्यक्षता करता है।

प्रधानमंत्री का व्यावहारिक प्रभाव विशेषज्ञ समितियों के माध्यम से विशेष बढ़ जाता है। प्रधानमंत्री डेबरे (Debre) ने एक बड़ा व्यक्तिगत स्टाफ नियुक्त किया था जो प्रशासनिक नीतियों की कार्यान्विति और समन्वय में सहायता कर सके। Services of the Prime Minister नाम से एक अलग विभाग है। इसका एक डिवीजन केंद्रीय सचिवालय कहा जाता है। यह नीति समन्वय का कार्य संपन्न करता है। यह मंत्रियों के प्रस्ताव एकत्रित करता है, अध्यादेशों और सरकारी विधेयकों का प्रारूप तैयार करता है तथा उन्हें राज्य परिषद् के सामने प्रस्तुत करता है।

प्रधानमंत्री के अधीन अन्य कार्यालय रहते हैं जिनका संबंध अंतर्विभागीय कार्यों से रहता है, जैसे- अणुशक्ति आयोग, लोक सेवा प्रशासन, सूचना सेवायें आदि। प्रधानमंत्री नीति निर्णय लेते समय पहले अपने परामर्शदाताओं से विचार-विमर्श कर लेता है। उसके बाद उसे मंत्रिपरिषद् के सामने लाता है और मंत्रिपरिषद का महत्त्व एवं प्रभाव कम हो जाता है। संसदीय विरोध कम करने के लिए प्रधानमंत्री नीति संबंधी प्रश्नों पर संसद सदस्यों के साथ व्यक्तिगत विचार-विनिमय करता है। पंचम गणराज्य के संविधान ने संसदीय प्रक्रिया एवं शक्ति पर अनेक प्रतिबंध लगा दिए हैं। अब यह शक्ति मंत्रिपरिषद् के सामने एक रबर स्टाम्प मात्र रह गई है।

फ्रांस का प्रधानमंत्री प्रभावशाली है, किंतु संविधान द्वारा उसकी शक्तियों पर अनेक सीमायें हैं। प्रधानमंत्री के प्रत्येक कार्य पर संबंधित मंत्री के प्रतिहस्ताक्षर अनिवार्य होते हैं। प्रधानमंत्री अपने कार्य के लिए राष्ट्रीय सभा के प्रति उत्तरदायी है। यह उसे त्याग-पत्र देने के लिए बाध्य कर सकती है। बहुदलीय व्यवस्था होने के कारण प्रधानमंत्री का प्रभाव मंत्रिपरिषद् और राष्ट्रीय सभा दोनों पर कम रहता है। पंचम गणतंत्र में राष्ट्रपति की शक्तियां व्यापक हैं। अतः प्रधानमंत्री का पद कम महत्त्वपूर्ण है। वह अनेक कार्य राष्ट्रपति के बिना नहीं कर सकता। राष्ट्रपति की शक्तिशाली भूमिका ने प्रधानमंत्री पद को कमजोर बना दिया है।

फ्रांस की मंत्रिपरिषद्
(Council of Ministers of France)

फ्रांसिसी संविधान के अनुच्छेद-20 में एक मंत्रिपरिषद् का उल्लेख करते हुए तीन प्रमुख तथ्य वर्णित किए गए हैं-

1. फ्रांस का प्रधानमंत्री और अन्य मंत्रिगण मिलकर सरकार का निर्माण करेंगे;
2. सरकार, राष्ट्र की नीतियों का निर्माण करेगी;
3. सरकार, नीतियों के लिए संसद के प्रति उत्तरदायी होगी।

फ्रांस का प्रधानमंत्री, राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त किया जाता है तथा प्रधानमंत्री के परामर्श पर अन्य मंत्रियों की नियुक्ति भी राष्ट्रपति ही करता है। सामान्यतया प्रधानमंत्री के परामर्श को राष्ट्रपति स्वीकार कर लेता है। फ्रांस में प्रधानमंत्री तथा अन्य मंत्री संसद के सदस्य नहीं होते हैं। यदि कोई मंत्री या प्रधानमंत्री संसद का सदय है तो उसे संसद की सदस्यता से त्यागपत्र देना होता है। सामान्यतः फ्रांस की मंत्रिपरिषद में विषय विशेषज्ञों एवं वरिष्ठ लोक सेवकों को सम्मिलित किया जाता रहा है। कोई भी मंत्रिपरिषद् हो उसे राष्ट्रपति के दल का समर्थन प्राप्त करना व्यावहारिक रूप में आवश्यक रहता है क्योंकि बहुदलीय व्यवस्था में प्रायः एकदल के पास स्पष्ट बहुमत नहीं रहता है। मंत्रिपरिषद् के सदस्यों की संख्या, संविधान में वर्णित नहीं है किंतु इसका आकार प्रायः छोटा ही रहता है।

मंत्रिपरिषद् में दो श्रेणियों के मंत्री होते हैं-

1. विभागों के अध्यक्ष मंत्री
2. राज्य मंत्री तथा बिना विभागों के मंत्री

मंत्रिपरिषद् की बैठकों में सभी प्रकार के मंत्री सम्मिलित होते हैं। मंत्रिपरिषद्-बैठक की अध्यक्षता राष्ट्रपति करता है। लेकिन कुछ मंत्रियों के युक्त मंत्रिमंडल की बैठकों में कभी कभार प्रधानमंत्री अध्यक्षता करता है। मंत्रिमंडल एक अनौपचारिक संस्था है जबकि मंत्रिपरिषद् संवैधानिक एवं बड़ी संस्था है। मंत्रिपरिषद् की सप्ताह में दो बार बैठकें, राष्ट्रपति भवन में होती हैं।

पदमुक्ति

मंत्रिपरिषद् के सदस्यों को राष्ट्रपति पदमुक्त कर सकता है यदि उन्होंने राष्ट्रपति या राष्ट्रीय सभा का विश्वास खो दिया हो। सरकार के किसी कार्यक्रम या नीति को राष्ट्रीय सभा अस्वीक त कर दे, विश्वासमत अस्वीक त हो जाए या राष्ट्रीय सभा निंदा प्रस्ताव पारित कर दे तो मंत्रिपरिषद् को त्यागपत्र देना पड़ता है।

मंत्रिपरिषद् के कार्यों में राष्ट्रीय नीति, कानून तथा कार्यक्रम बनाना, बजट बनाना, कानूनों एवं बजट को लागू करना, प्रशासनिक व्यवस्था का संचालन करना, महत्वपूर्ण पदों जैसे- राजदूत महाअंकेक्षक, कौंसिलर इत्यादि पर नियुक्ति करना तथा संसद में सरकार का पक्ष प्रस्तुत करना प्रमुख हैं। दरअसल, फ्रांस की मंत्रिपरिषद् एक शक्तिहीन कार्यपालिका का उदाहरण है।

वास्तविक स्थिति

फ्रांस में मंत्रिपरिषद् की शक्तियों और लक्षणों या विशेषताओं के आधार पर इसकी स्थिति अत्यंत कमजोर है। देश में अध्यक्षात्मक व्यवस्था होने के कारण यह स्वाभाविक है। चतुर्थ गणतंत्र की तरह पंचम गणतंत्र के संविधान में मंत्रिपरिषद् की कमजोर स्थिति को बरकरार रखा गया। मंत्रिपरिषद् पर राष्ट्रपति का प्रभावशाली वर्चस्व और नियंत्रण है।

अध्याय-17
जापान की राजनैतिक कार्यपालिका
(Political Executive of Japan)

जापान में प्रारंभ से ही सम्राट का बहुत अधिक महत्त्व रहा है। पूर्वगामी संविधान के अंतर्गत सम्राट साम्राज्य का अध्यक्ष था जिसमें प्रभुता के सभी अधिकार केंद्रित थे। वह शासन का मुख्य स्तंभ था, लेकिन अपने अधिकारों का प्रयोग संविधान के अनुसार करता था। जापान की जनता सम्राट को ईश्वर का स्वरूप, पवित्र एवं गुणवान समझती थी। वह सम्राट की आज्ञाओं को ईश्वरीय आज्ञाएं मानती थी।

द्वितीय महायुद्ध से पूर्व सम्राट की स्थिति वास्तव में महान थी। जापान की जनता सम्राट तथा अपने बीच पिता-पुत्र का संबंध समझती थी। उस समय जनता इस संबंध में संशोधन के विषय में सोच भी नहीं सकती थी।

सम्राट की वर्तमान संवैधानिक स्थिति
(Constitutional Position of King in Modern Times)

वैधानिक अध्यक्ष - द्वितीय महायुद्ध के बाद जापान में सम्राट और जनता के बीच उपर्युक्त संवैधानिक सिद्धांत में परिर्वतन आ गया है। 13 मई, 1947 ई० को नवीन संविधान कार्यान्वित किया गया और साथ ही सम्राट की स्थिति में क्रांतिकारी परिवर्तन हो गया। जापान के संविधान में कहा गया है कि "सम्राट राज्य तथा जनता की एकता का प्रतीक होगा और अपनी स्थिति उन लोगों में ग्रहण करेगा, जिनके हाथ में प्रभुसत्ता निहित है।"

इस नवीन संविधान के अंतर्गत सम्राट का पद शक्ति का पद न रहकर वैधानिक अध्यक्ष का पद रह गया है। सम्राट अब शासन का अध्यक्ष न रहकर राज्य का प्रतीक मात्र है। अब राज्य की सर्वोच्च सत्ता सम्राट में निहित न रहकर राज्य का प्रतीक मात्र है। सम्राट-पद के मूल में जनता की इच्छा है अर्थात् जनता ही सम्राट ही इच्छा का स्रोत है। शासन-कार्य में किसी प्रकार की पहल स्वयं सम्राट की ओर से नहीं की जा सकती। यथार्थ में शासन संबंधी कोई भी कार्य सम्राट वैयक्तिक रूप में नहीं कर सकता।

सम्राट की संवैधानिक स्थिति में इस परिवर्तन का ही यह परिणाम हुआ है कि सम्राट के विषय में नाना अंध-विश्वासी प्रथाओं और कहानियों की समाप्ति हो गई है। अब सम्राट के विषय में वाद-विवाद किया जा सकता है, उसकी व्यक्तिगत एवं संस्थागत आलोचना की जा सकती है। युद्ध से पूर्व ऐसा करना असंभव था। इसके फलस्वरूप सम्राट को अब ईश्वरीय रूप में न मानकर उसे एक मानव बनाने का प्रयास किया गया है। आज सम्राट जन-जीवन के निकट आता जा रहा है। सम्राट और उसके परिवार को जीवनयापन भत्ता मिलता है। 10 जनवरी, 1977 के समाचारों के अनुसार जापान सरकार ने सम्राट हिरोहितों और उनके परिवार का जीवनयापन भत्ता अब बढ़ा दिया है जो 2 करोड़ 30 लाख येन (लगभग 80 हजार डॉलर) प्रतिवर्ष है।

इसके अतिरिक्त वर्तमान संविधान के अंतर्गत सम्राट को परामर्श देने वाली पूर्वगामी संस्थाओं- ज्युसिन और प्रिवी कौंसिल का अंत हो गया है। "संवैधानिक द ष्टि से अब सम्राट का शासन में भाग ब्रिटेन के राजा के समान रह गया है। कुलीनतंत्री शासन समाप्त हो गया है तथा सम्राट को प्रभावित करने वाले अन्य आंतरिक अंगों का कानून द्वारा लोप हो गया है।"

वंशानुगत पद (Hereditary Position) - संविधान की धारा 2 व्यवस्था देती है कि "साम्राज्यीय सिंहासन वंश परंपरानुकूल होगा और उसका उत्तराधिकारी डायट द्वारा पारित साम्राज्यीय ग ह कानून के अनुसार विनियमित होगा।"

सम्राट के कार्य एवं अधिकार
(Powers and Functions of Emperior)

मीजी संविधान में सम्राट की समस्त कानूनी सत्ता एवं राजनीतिक शक्ति का स्त्रोत था। संप्रभुता उसी में निहित थी। यद्यपि व्यवहार में अपनी शक्तियों का प्रयोग नहीं करता था, उसकी शक्तियां असीमित थीं तथा उसकी स्थिति सर्वोपरि थी। शोवा संविधान के अंतर्गत उसकी शक्तियां एवं स्थिति में आमूल परिवर्तन किए गए। वर्तमान सविधान के अनुसार, सम्राट 'राज्य और जनता की एकता का चिह्न' है। "उसका अस्तित्व जनता की इच्छा पर आधारित है और प्रभुसत्ता जनता में निहित है।" जापानी सम्राट की स्थिति अब ब्रिटिश सम्राट से भी कम महत्वपूर्ण तथा शक्तिहीन हो गई है।

जापानी सम्राट राज्य के विषय में स्वेच्छा से कोई कार्य नहीं करेगा। वह सभी कार्यों को मंत्रिमंडल के परामर्श से करेगा। मंत्रियों के परामर्श को मानने के लिए बाध्य होगा। सम्राट के कार्यों के लिए मंत्रिमंडल की उत्तरदायी होगा। संविधान की धारा 3 में सम्राट की इस स्थिति को स्पष्ट किया गया है- "राज्य के विषय में सम्राट के सभी कार्यों पर मंत्रिमंडल का परामर्श और अनुमोदन अनिवार्य होगा और वहीं उनके लिए उत्तरदायी भी होगी।" इस धारा से स्पष्ट होता है कि जापान के सम्राट की स्थिति राज्य-विषयक कार्यों के संबंध में ब्रिटिश सम्राट के समान है। ब्रिटिश सम्राट के बारे में कहा जाता है कि 'वह कोई गलती नहीं कर सकता'। वह सभी मंत्रियों के परामर्श से करता है। मंत्रियों के परामर्श के बिना वह कुछ भी नहीं कर सकता। अतः यह कहा जा सकता है कि सम्राट कोई कार्य करता ही नहीं, जिससे किसी गलती के लिए उसे उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता। यह कथन जापानी सम्राट के विषय में भी सही है। वह भी अपने मन से काई कार्य नहीं करता, उसके हर कार्य के लिए मंत्रियों का अनुमोदन अनिवार्य है, उसके हर कार्य के लिए मंत्री उत्तरदायी हैं और सम्राट का हर गलत या सही कार्य मंत्री की गलती या सही है। निष्कर्षतः, ब्रिटिश सम्राट की भांति जापान का सम्राट राज्य के विषय में वस्तुतः कुछ नहीं करता है।

जापानी सम्राट की शक्तियों के संबंध में दूसरी संवैधानिक धारा 4 है। इसमें कहा गया है कि "सम्राट राज्यों के मामले में केवल वही कार्य करेगा जिनकी संविधान में व्यवस्था की गई है और शासन के संबंध में उसकी कोई शक्तियां न होंगी।" इस धारा के अनुसार सम्राट की शक्तियां केवल राज्यकार्य से संबंधित होंगी, शासनकार्य से नहीं। राज्य से संबंधित कार्य केवल औपचारिकता मात्र होते हैं। राज्य के प्रधान के रूप में उन अलंकारिक कार्यों को सम्राट करता है। शासन के दैनिक कार्यों को मंत्रिमंडल संपन्न करता है। इस प्रकार सम्राट राज्य का केवल नाममात्र का प्रधान है।

संविधान में यह भी उपबंधित है कि सम्राट विधिवत अपने राज्य-विषयक कार्यों का प्रदत्तीकरण (delegation) कर सकता है।

जापान के वर्तमान संविधान के अनुसार सम्राट को निम्नलिखित अधिकार प्राप्त हैं-

1. **कार्यपालिका शक्तियां (Executive Powers)** - सम्राट को निम्नलिखित कार्यपालिका शक्तियां प्रदान की गई हैं-
   - i. वह प्रधानमंत्री की नियुक्ति करता है। प्रधानमंत्री कौन होगा इसका निश्चत डायट करती है। सम्राट केवल नियुक्ति की रस्म अदायगी करता है। इस संबंध में सम्राट का अधिकार केवल औपचारिकता मात्र है। इसके विपरित ब्रिटिश सम्राट या भारतीय राष्ट्रपति को प्रधानमंत्री की नियुक्ति के संबंध में विशेष परिस्थितियों में सीमित अधिकार अथवा विवेक का अवसर मिलता है।
   - ii. राज्य के मंत्रियों और कानून द्वारा व्यवस्थित अन्य अधिकारियों की नियुक्ति तथा पदच्युति को प्रमाणित करना।
   - iii. राजदूतों और मंत्रियों की शक्तियों एवं प्रमाणपत्रों को प्रमाणित करना।
   - iv. सम्मान के स्त्रोत (fountain of honour) के रूप में सम्राट सम्मान सूचक उपाधियां प्रदान करता है।
   - v. पुष्टिकरण आलेखों (insruments of ratification) और कानून द्वारा व्यवस्थित अन्य कूटनीतिक आलेखों को सम्राट प्रमाणित करता है।
   - vi. वह विदेशी राजदूतों और मंत्रियों का स्वागत करता है।
   - vii. सम्राट आलंकारिक (ceremonial) क त्यों को संपन्न करता है।
2. **विधायिका शक्तियां (Legislative Powers)** - जापान के सम्राट की निम्नलिखित विधायी शक्तियां प्राप्त हैं -

i. समस्त राष्ट्रीय विधियां, संवैधानिक संशोधन, मंत्रिमंडलीय आदेश और संधियां सम्राट के द्वारा उद्घोषित किए जाते हैं।

ii. वह डायट का अधिवेशन बुलाता है।

iii. वह अवधि की समाप्ति या प्रधानमंत्री की सिफारिश पर प्रतिनिधि सभा को विघटित करता है। वह डायट के सदस्यों के आम चुनाव के निमित्त आदेश जारी करता है।

3. **न्यायिक शक्तियां (Judicial Powers)** - जापान के सम्राट को निम्नलिखित न्यायिक शक्तियां प्राप्त हैं-

1. वह सामान्य तथा विशिष्ट क्षमादान (general and special amnesty), दंड को घटाने, मुक्ति तथा अधिकारों की पुर्नप्रतिष्ठा (restoration) को प्रमाणित करता है।

2. वह मंत्रिमंडल द्वारा नामांकित व्यक्ति को सर्वोच्च न्यायालय का मुख्य न्यायाधीश नियुक्त करता है।

सम्राट की स्थिति

जापानी सम्राट की शक्तियों की उपर्युक्त विवेचना से यह स्पष्ट है कि विश्व के शक्तिहीन राज्य के अध्यक्षों में एक है। वह राज्य का केवल आलंकारिक प्रधान है। वह राज्य तथा जनता की एकता का प्रतीक मात्र है। उसका संबंध केवल राज्य के औपचारिक कार्यों से है। शासन के मामलों में वह दखल नहीं दे सकता है। वस्तुतः, शासनकार्यों से उसका कोई संबंध है ही नहीं। वह स्वेच्छा से कोई कार्य नहीं करता। उसे समस्त कार्यों के लिए मंत्रियां के परामर्श तथा अनुमोदन की आवश्यकता है। वह ब्रिटिश सम्राट की भांति उत्तरदायित्व से परे है। वह किसी भी कार्य के लिए उत्तरदायी नहीं होता क्योंकि राज्य या शासन के सभी कार्यों के लिए उसके मंत्री उत्तरदायी होते हैं। उसकी स्थिति ब्रिटिश सम्राट से भी कमजोर है। ब्रिटिश सम्राट प्रधानमंत्री की नियुक्ति में कभी-कभी अपने प्रभाव का भी प्रयोग कर सकता है। लेकिन, जापानी सम्राट द्वारा प्रधानमंत्री की नियुक्ति केवल रस्म अदायगी है। ब्रिटिश सम्राट लोकसभा को विघटित करने के लिए प्रधानमंत्री द्वारा दिए गए परामर्श को अस्वीकार करने का परमाधिकार (preorgative) रखता है। परंतु, जापान का सम्राट डायट के विघटन को रोक नहीं सकता। यहां तक कि सम्राट राजनीतिक प्रश्नों पर सार्वजनकि रूप से अपना विचार प्रकट नहीं कर सकता है और न महत्वपूर्ण निर्णयों के संबंध में अपना प्रभाव का प्रयोग कर सकता है। वर्तमान संविधान के अंतर्गत सम्राट की स्थिति को यानगा ने इन शब्दों में स्पष्ट किया है- "यह पूर्णतया स्पष्ट है कि अब पहले से कभी भी अधिक सम्राट राज्य करता है, शासन नहीं। उसकी शक्तियां ब्रिटिश सम्राट की तुलना में वस्तुतः नगण्य हैं जो शासन की प्रक्रिया में एक महत्वपूर्ण पार्ट अदा करता है। जबकि ब्रिटिश सम्राट को यह अधिकार प्राप्त है कि प्रधानमंत्री उससे मंत्रणा लें, वह कुछ कार्य करने के लिए मंत्रियों को उत्साहित करे तथा कुछ कार्य न करने की चेतावनी दे, जापान के सम्राट को ऐसा कोई अधिकार प्राप्त नहीं है।" आइक भी इस निष्कर्ष पर पहुंचा है कि "नए संविधान के अंतर्गत सम्राट स्पष्ट रूप से राज्य करता है, शासन नहीं करता।"

निःसंदेह जापानी सम्राट की संवैधानिक तथा राजनैतिक स्थिति में क्रांतिकारी परिवर्तन हुए हैं। उसे शक्तिहीन तथा महत्वहीन बना दिया गया। लेकिन, इस परिवर्तन से सम्राट के गौरव तथा नैतिक प्रभाव पर कोई आंच नहीं आई है। जैसा की प्रो० यानगा ने कहा है, "संवैधानिक द ष्टिकोण से सम्राट की स्थिति को केवल प्रतीक की स्थिति तक पहुंचा देना बड़ी कठोर बात मालूम होती है। पर इतिहास को देखते हुए यह अस्वाभाविक तथा असंगत नहीं है तथा निश्चित रूप से उस संस्था को उससे कुछ होनी नहीं पहुंचती।" प्रो० जॉन एम० मकी का भी कहना है कि सम्राट की शासन-संबंधी शक्ति की समाप्ति के कारण उसकी शान में तिल भर की कमी नहीं हुई है, बल्कि द्वितीय महायुद्ध के बाद सम्राट की प्रतिष्ठा में व द्धि ही हुई है। महायुद्ध के समय सम्राट ने महत्वपूर्ण पार्ट अदा किया और सारे संकट को अपने सिर पर ले लिया। इससे जनता में उसके प्रति श्रद्धा-भावना तथा भक्ति में व द्धि हुई। केवल 'मानवीकरण' के कारण उसके पद से रहस्यमयता और ईश्वरीयता का पर्दा हट गया। वह 'पवित्र एवं अनुल्लंघनीय' (sacred and inviolable) न रह गया, बल्कि एक पूर्ण मानवीय राजनीतिक संस्था बन गया। फिर भी, नैतिक एवं आध्यात्मिक शक्ति के रूप में उसकी स्थिति अब पहले से भी ऊंची है। प्राचीन संविधान में सम्राट ही संप्रभु था। नए संविधान में जनता संप्रभु है। लेकिन, आज भी जहां तक जन-भावना का प्रश्न है कम-से-कम प्रतीकात्मक रूप में सम्राट को राज्य माना जाता है। यही कारण है कि युद्ध के बाद एक सर्वेक्षण में जापान के तीन-चौथाई युवकों ने यह विश्वास प्रकट किया कि "केवल कागज पर ही नहीं लोगों के ह्रदय एवं मस्तिष्क में सम्राट राष्ट्र का प्रतीक बना हुआ है।"

जापान का प्रधानमंत्री
(Prime Minister of Japan)

जापानी संविधान के अनुच्छेद 66 के द्वारा प्रधानमंत्री के पद का स जन करता है। इस प्रकार भारत की भांति प्रधानमंत्री के पद को मान्यता प्रदान की गई है। इसके विपरित ब्रिटिश संविधान में यह पद परंपरा पर आधारित है।

प्रधानमंत्री की नियुक्ति

संसदीय प्रणाली के अंतर्गत प्रधानमंत्री की नियुक्ति राज्य के अध्यक्ष द्वारा होती है। लेकिन, संसदीय परंपरा के अनुसार वह निम्नसदन में बहुमत दल के नेता को इस पद पर नियुक्त करता है। तात्पर्य यह है कि प्रधानमंत्री की नियुक्ति लोकप्रिय सदन की इच्छा पर निर्भर करती है। जापान में भी यह शक्ति अंततः डायट के हाथ में है। यद्यपि सम्राट प्रधानमंत्री की नियुक्ति करता है, लेकिन वह केवल उसी व्यक्ति को इस पद पर नियुक्त कर सकता है जो डायट द्वारा नामांकित किया गया हो। सम्राट की शक्ति केवल औपचारिक मात्र है। भारत तथा इंग्लैंड राज्य के अध्यक्षों को विशेष परिस्थिति में कभी-कभी इस संबंध में स्वविवेक का प्रयोग का भी अवसर मिल सकता है। लेकिन, जापान के सम्राट को ऐसा अवसर कभी प्राप्त नहीं हो सकता है।

डायट द्वारा प्रधानमंत्री के चयन की प्रक्रिया का उल्लेख संविधान में किया गया है। उसका चुनाव डायट के दोनों सदनों के साधारण बहुमत द्वारा होता है। प्रत्येक सदन इसके लिए अलग-अलग मतदान करता है। अगर दोनों सदन इस संबंध में एकमत नहीं होते तो मामला दोनों सदनों की एक संयुक्त समिति पर छोड़ दिया जाता है। यदि संयुक्त समिति भी मतभेद करने में सफल नहीं होती तो प्रतिनिधि सदन का मत निर्णायक होता है। इस प्रकार निर्वाचित व्यक्ति को सम्राट प्रधानमंत्री नियुक्त करता है।

प्रधानमंत्री की योग्यता

प्रधानमंत्री की योग्यता के बारे में संविधान में कोई विशेष उल्लेख नहीं मिलता है। केवल दो कानूनी बंधनों का उल्लेख संविधान में मिलता है। पहला, प्रधानमंत्री को असैनिक (civilian) होना चाहिए। दूसरा, प्रधानमंत्री को डायट का सदस्य होना चाहिए। लेकिन, इसका उल्लेख नहीं किया गया है कि वह किस सदन का सदस्य हो। व्यवहार में यह दिख पड़ता है कि वह प्रतिनिधि सदन का ही सदस्य होगा क्योंकि उसके चुनाव के संबंध में इस सदन को ही निर्णायक अधिकार प्राप्त है। वह साधारणतः प्रतिनिधि सभा के बहुसंख्यक दल का नेता होता है।

व्यवहार में प्रधानमंत्री में कुछ व्यक्तिगत गुणों का होना अनिवार्य है। ब्रिटिश प्रधानमंत्री के विषय में कुछ विद्वानों ने उसके व्यक्तिगत गुणों की चर्चा की है जो जापान के प्रधानमंत्री के विषय में भी कही जा सकती है। यंगर पिट ने प्रधानमंत्री के निम्नलिखित गुणों का उल्लेख किया है- "प्रथम वक्त त्व शक्ति, द्वितीय ज्ञान, त तीय परिश्रम तथा अंत में धैर्य।" लास्की ने कहा है कि प्रधानमंत्री में विवेक, कौशल, शासन-शक्ति, विश्वसनीय व्यक्तियों की पहचान, प्रभावशाली वक्तव्य देने की क्षमता तथा दल और लोकमत को प्रभावित करने की योग्यता होनी चाहिए।

प्रधानमंत्री की शक्तियां एवं कार्य
(Powers and Function of Prime Minister)

संविधान की धारा 65 से 75 के अनुसार राज्य की कार्यपालिका शक्ति केबिनेट में निहित होती है और केबिनेट का अध्यक्ष प्रधानमंत्री होता है। इस प्रकार अप्रत्यक्ष रूप में राज्य की कार्यपालिका-शक्ति पर अंतिम अधिकार प्रधानमंत्री को ही प्राप्त है। डायट में बहुमत दल और जनता का निर्वाचित प्रतिनिधि होने के कारण उसे राष्ट्र का सर्वोच्च राजनीतिक नेत त्व प्राप्त होता है। अपने नेत त्व के लिए वह प्रत्यक्ष रूप से डायट के प्रति और अप्रत्यक्ष रूप से संपूर्ण राष्ट्र के प्रति उत्तरदायी होता है।

1. **सर्वोच्च राजनीतिक शासक (Supreme Political Administrator)** - मंत्रिमंडल में प्रधानमंत्री की स्थिति सर्वोच्च होती है। वही मंत्रियों के बीच विभागों के वितरण में प्रधानमंत्री का ही निर्णय अंतिम होता है। वहीं मंत्रियों को क्रमबद्ध कर उन्हें वरिष्ठता प्रदान करता है। वह अपनी इच्छानुसार मंत्रिमंडल में उलटफेर कर सकता है। वह मंत्रिमंडल की समस्त कार्यवाहियों का केंद्र होता है। वह देखते है कि सब विभाग ठीक से कार्य कर रहे हैं, या नहीं। मंत्रिमंडल बैठकों का सभापतित्व करने, निरीक्षण करने और कार्यवाहियों का संचालन करने का अधिकार उसी को है। मंत्रिमंडल के निर्णयों और नीति-निर्धारण में उसका सर्वोपरि हाथ रहता है। वह मंत्रियों के कार्य में सामंजस्य स्थापित करता है। किसी भी

राज्यमंत्री द्वारा जो निर्णय लिया जाता है उस पर मंत्री के हस्ताक्षर होने के साथ-साथ प्रधानमंत्री के हस्ताक्षर होना भी अनिवार्य है। दूसरे शब्दों में, मंत्रिमंडल का कोई भी निर्णय तभी मान्य समझा जाता है जब उस पर प्रधानमंत्री के हस्ताक्षर हो जाएं।

मंत्रिमंडल की सामान्य नीति का प्रतिनिधित्व भी प्रधानमंत्री ही करता है। मंत्रिमंडल की ओर से डायट के सामने प्रस्तुत किए जाने वाले सभी पत्र आदि उसी के द्वारा पेश किए जाते हैं।

2. **मंत्रियों की नियुक्ति व पदच्युति की शक्ति (Power of Appointment and Dismissal of Ministers)** - मंत्रियों को पदच्युत करने का अधिकार भी प्रधानमंत्री को है। संविधान की धारा 68 स्पष्टतः उपबन्धित करती है कि "प्रधानमंत्री अपनी इच्छानुसार राज्य के मंत्रियों का निष्कासन कर सकता है।"

3. **मंत्रिमंडल के निर्माण व संहार की शक्ति (Power of Composition and End of the Cabinet)** - सभी मंत्रियों का भविष्य उसके साथ बंधा रहता है। उसके त्याग-पत्र के साथ पूरा मंत्रिमंडल डूब जाता है। यदि कोई मंत्री उसके कहने पर त्याग-पत्र नहीं देता है तो वह सम्राट से कहकर मंत्री को पदच्युत करा सकता है अथवा स्वयं त्याग-पत्र देकर अपने बहुमत के बल पर मंत्रिमंडल का पुनर्निर्माण कर सकता है।

4. **दल का नेता (Leader of Party)** - प्रधानमंत्री शासन का प्रधान होने के अतिरिक्त बहुमत दल का नेता भी होता है। उसे दल का प्रतीक माना जाता है और आम चुनाव प्रायः उसी के व्यक्तित्व का केंद्र बनाकर लड़ा जाता है। डायट में बहुमत दल के समर्थन पर ही वह और उसका मंत्रिमंडल शासन की ग ह तथा विदेश नीति का सफलतापूर्वक संचालन करता है। दलीय संगठन के कारण दल के सभी सदस्य उसकी आज्ञा का पालन करते हैं।

5. **डायट का नेता (Leader of Diet)** - प्रधानमंत्री डायट का, मुख्यतः प्रतिनिधि सभा का नेता होता है। डायट में किसी भी महत्त्वपूर्ण विषय पर वह अंतिम वक्ता और नीति का निर्धारक होता है। प्रशासनिक नीतियों पर अंतिम और अधिक त भाषण प्रधानमंत्री का ही होता है। वही विधियों के निर्माण, वार्षिक बजट की तैयारी, सदन की कार्यवाही और व्यवस्था आदि के संबंध में अंतिम रूप से पथ-प्रदर्शन करता है। यदि प्रतिनिधि सभा केबिनेट के विरुद्ध अविश्वास का प्रस्ताव पास कर दे तो वह अपने साथियों सहित त्याग-पत्र भी दे सकता है अथवा 10 दिन के भीतर प्रतिनिधि सभा को भंग भी कर सकता है।

6. **सम्राट एवं मंत्रिमंडल के बीच की कड़ी (Link between the Emperor and the Cabinet)** - प्रधानमंत्री राजकीय मामलों में सम्राट और मंत्रिमंडल के बीच माध्यम का कार्य करता है। अन्य मंत्रियों का व्यक्तिगत रूप से सम्राट से प्रत्यक्ष औपचारिक संबंध नहीं है। स्मरणीय है कि जापानी सम्राट को संविधान द्वारा ऐसा कोई अधिकार प्राप्त नहीं है कि वह भारतीय राष्ट्रपति के अनुसार प्रधानमंत्री से किसी प्रकार की सूचना की मांग करे।

7. **अंतर्राष्ट्रीय प्रतिनिधि (Representative International Affairs)** - प्रधानमंत्री ही अंतर्राष्ट्रीय क्षेत्र में अपने देश का सर्वोच्च और प्रभावशाली प्रतिनिधि होता है। विदेश-नीति में उसके निर्णय अंतिम और अधिक त माने जाते हैं। मुख्यतः उसी के व्यक्तित्व और आचरण के आधार पर अन्य देशों से मैत्रीपूर्ण आर्थिक, राजनीतिक और सांस्क तिक संबंध स्थापित हो पाते हैं।

8. **संकटकालीन अधिकार (Emergency Powers)** - भारत में आपातकालीन अधिकार राष्ट्रपति को हैं जिनका प्रयोग मंत्रिमंडल करता है जबकि जापान में सैद्धांतिक और व्यावहारिक दोनों ही द ष्टियों से आपातकालीन अधिकार मंत्रिमंडल में निहित हैं जिनके प्रयोग का उत्तरदायित्व मंत्रिमंडल का प्रधान होने के नाते प्रधानमंत्री पर होता है।

प्रधानमंत्री की स्थिति

प्रधानमंत्री की शक्तियां अपार तथा असीमित हैं। समय, स्थिति तथा व्यक्तित्व के अनुसार उसकी शक्तियां घटती-बढ़ती रहती हैं। आज की साधारणकालीन स्थिति में उसकी शक्तियां उतनी व्यापक नहीं है जितनी की द्वितीय महायुद्ध के समय जापानी प्रधानमंत्री को प्राप्त थीं। सच पूछा जाए तो उसकी स्थिति तानाशाह के समान है जिसकी शक्तियों पर संविधान द्वारा मर्यादा लगा दी गई है। प्रधानमंत्री की स्थिति बहुत कुछ व्यक्तित्व पर निर्भर करती है। किसी ने ब्रिटिश प्रधानमंत्री के संबंध में कहा है कि, "प्रधानमंत्री का पद वैसा ही बन जाता है जैसा कि उस पद का अधिकारी बनाना चाहता है।" ग्लैडस्टोन ने प्रधानमंत्री के बारे में कहा है कि "वह मंत्रिमंडल रूपी भवन की आधारशिला है।" राम्जेम्योर का कहना है कि "मंत्रिमंडल राज्य रूपी जहाज

का यंत्र है और प्रधानमंत्री उस यंत्र का चालक।" ये सब उक्तियां जापानी प्रधानमंत्री के विषय में भी कही जा सकती हैं। जापान के प्रधानमंत्री भी ब्रिटिश प्रधानमंत्री की भांति राष्ट्र का सर्वशक्तिशाली व्यक्ति तथा वास्तविक शासक है।

जापान की मंत्रिमंडल
(Japanese Cabinet)

जापान में केबिनेट-प्रथा 1885 में सम्राट के अध्यादेश द्वारा आरंभ हुई थी, किंतु पुराने संविधान में 'केबिनेट' (मंत्रिमंडल) शब्द का कहीं भी प्रयोग नहीं किया गया था। यद्यपि संविधान की धारा 55 द्वारा एक प्रकार से यह कहकर मंत्रिमंडल को मान्यता प्रदान कर दी गई कि "राज्य के विभिन्न मंत्री (अपने-अपने विभागों के बारे में) सम्राट को परमार्श देंगे और उसके लिए उत्तरदायी होंगे।" प्राचीन केबिनेट देश के प्रशासन की इकाई नहीं थी, वरन् केवल परामर्शदात्री संस्था मात्र थी जिसका निर्माण सम्राट करता था और जो सम्राट के प्रति ही उत्तरदायी होती थी। डायट के अविश्वास आदि का मंत्रियों की स्थिति पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता था। कहा जा सकता है कि प्राचीन संविधान के अंतर्गत केबिनेट का स्वरूप अत्यंत विक त था। ऑग व जिंक (Ogg & Zink) के शब्दों में- "मेइजी संविधान के अंतर्गत केबिनेट थी किंतु केबिनेट पद्धति की सरकार न थी।"

वर्तमान केबिनेट का स्वरूप : उसकी विशेषताएं
(Characteristics of the Cabinet)

जापान के नवीन संविधान ने केबिनेट के प्राचीन स्वरूप में आमूल-चूल परिवर्तन कर दिया है। वर्तमान केबिनेट का संगठन संसदीय पद्धति वाले राज्यों के आधार पर किया गया है। जापानी केबिनेट का आज का स्वरूप बहुत कुछ पाश्चात्य केबिनेट के स्वरूप का ही अनुकरण है और पाश्चात्य केबिनेट की प्रायः सभी महत्त्वपूर्ण विशेषताएं जापानी केबिनेट में पाई जाती हैं जो संक्षेप में निम्नानुसार हैं-

1. **कार्यपालिका और व्यवस्थापिका का साम जस्य** (Integration of Executive & Legislature) - संसदीय केबिनेट प्रणाली के अनुरूप जापान के संविधान के अंतर्गत कार्यपालिका और व्यवस्थापिका के मध्य साम जस्य बनाए रखने का प्रयास किया गया है जो ब्रिटिश शासन-प्रणाली की मूल विशेषता है। अमेरिका की भांति इन दोनों को प थक रखने का प्रयत्न नहीं किया गया है। जापानी संविधान में व्यवस्था है कि केबिनेट के सदस्यों को अधिकांशतः डायट के सदस्यों में से लिया जाए। इस व्यवस्था से यह निष्कर्ष निकल सकता है कि जापानी केबिनेट में कुछ मंत्री डायट के बाहर से भी लिए जा सकते हैं और इस प्रकार मंत्रियों के दो वर्ग हो सकते हैं- एक वह जो डायट का सदस्य हो और दूसरा वह जो डायट का सदस्य न हो। लेकिन व्यवहार में जापान में लगभग सभी मंत्रियों को डायट में से ही लिया जाता है, डायट के बाहर के व्यक्ति बहुत कम लिए जाते हैं। चूंकि उनकी संख्या केबिनेट में नगण्य होती है, अतः केबिनेट-व्यवस्था की विशेषता का महत्त्वपूर्ण रूप से खंडन नहीं होता।

2. **व्यवस्थापिका के प्रति कार्यपालिका का उत्तरदायित्व** (Executive's Responsibilities Towards Legislature) - व्यवस्थापिका के प्रति कार्यपालिका के उत्तरदायित्व का सिद्धांत केबिनेट पद्धति का प्राणतत्त्व है। जापानी संविधान की धारा 66 में स्पष्ट कहा गया है कि अपने सभी कार्यों के लिए केबिनेट डायट के प्रति सामूहिक रूप से उत्तरदायी होगी। धारा 69 में प्रावधान है कि प्रतिनिधि-सदन का विश्वास खो देने पर संपूर्ण केबिनेट को त्याग-पत्र देना पड़ेगा यदि 10 दिन के भीतर प्रतिनिधि-सदन का विघटन न कर दिया जाए।

   वस्तुतः डायट को केबिनेट पर नियंत्रण का वैसा ही अधिकार प्राप्त है जैसा कि संसदीय प्रणाली के देशों में व्यवस्थापिका को कार्यपालिकाओं पर प्राप्त होता है। डायट अनेक उपायों से केबिनेट पर नियंत्रण रखती है। डायट के सदस्य मंत्रियों से नीति-विषयक प्रश्न पूछते हैं जिनका उत्तर मंत्रियों को देना पड़ता है। यद्यपि मंत्री उत्तर देने के लिए सदैव बाध्य नहीं होते, तथापि सदस्यों के प्रश्नों का भय उनकी स्वेच्छाचारिता पर अंकुश लगाए रहता है। डायट के सदस्य प्रश्नों के अतिरिक्त मंत्रियों की आलोचना भी करते हैं।

3. **राजनीतिक सजातीयता** (Political Homogenity) - जापानी संविधान भी सामूहिक उत्तरदायित्व की व्यवस्था करता है। इस सामूहिक उत्तरदायित्व को सफल बनाने के लिए और मंत्रियों के द ष्टिकोण में एकता बनाए रखने के लिए जापान में भी ब्रिटेन की ही भांति दल-प्रथा का विकास हुआ है। राजनीतिक दलों का सरकार के निर्माण के साथ घनिष्ठ संबंध रहता है और मंत्रियों की नियुक्ति बहुत कुछ दलीय प्रथा पर ही निर्भर करती है। डायट के जो सदस्य मंत्री बनाए

जाते हैं, वे प्रायः एक ही राजनीतिक विचारधारा के होते हैं और इसलिए वे एक इकाई के रूप में कार्य करते हैं। डायट के बार के व्यक्तियों में से नियुक्त किए जाने वाले मंत्री इस बात के अपवाद हो सकते हैं, लेकिन ऐसे मंत्रियों की संख्या सामान्यतः नगण्य रहती है।

4. **प्रधानमंत्री का नेत त्व (Leadership of the Prime Minister)** - प्रधानमंत्री के नेत त्व में समस्त मंत्रिमंडल एक दल (Team) के सही रूप में कार्य करने लगा। यनागा (Yonaga) के अनुसार- "सन् 1947 के संविधान के अनुसार जापानी सरकार कार्यात्मक रूप से किंतु भावनात्मक रूप से कम, ब्रिटिश सरकार से समानता रखती है। डायट द्वारा निर्दिष्ट नीतियों के आधार पर सरकार राष्ट्रीय कार्यपालिका पर सर्वोच्च नियंत्रण रखती है। संवैधानिक संरचना की द ष्टि से कम से कम जापान में एक उत्तरदायी सरकार की स्थापना हुई।"

5. **सम्राट राज्य का औपचारिक अध्यक्ष मात्र (Emperor only Formal Head of the State)** - सम्राट राज्य का औपचारिक अध्यक्ष मात्र रह गया।

संगठन, कार्य-प्रणाली, शक्तियां एवं कर्त्तव्य

(The Composition, Working, Powers and Functions of the Cabinet)

आकार एवं रचना

(Size and Composition)

केबिनेट के आकार अथवा मंत्रियों की संख्या एवं श्रेणियों के बारे में संविधान में विस्तार से वर्णन किया गया है। संविधान की धारा 66 में केवल यह व्यवस्था दी गई है कि प्रधानमंत्री केबिनेट का अध्यक्ष होगा। उसके अतिरिक्त केबिनेट में कानून द्वारा की गई व्यवस्था के अनुसार राज्य के अन्य मंत्री होंगे। इसी धारा के अनुसार यह व्यवस्था भी है कि प्रधानमंत्री एवं सभी मंत्रियों का असैनिक होना आवश्यक है। संविधान की धारा 67 के अनुसार प्रधानमंत्री का नाम, डायट के सदस्यों में से डायट के संकल्प (Resolution) द्वारा तैयार किया जाता है। प्रधानमंत्री के चयन के प्रश्न पर डायट के दोनों सदनों में मतभेद होने पर दोनों सदनों की संयुक्त समिति सहमति का प्रयत्न करती है। यदि संयुक्त समिति के प्रयत्नों से भी सहमति प्राप्त न हो सके अथवा प्रतिनिधि सदन द्वारा तय कर लेने पर भी विश्रामकाल को छोड़कर 10 दिन के मध्य कौंसिलर-सदन नाम तय न कर सकें तो संविधान की धारा 67 के अनुसार प्रतिनिधि सदन के निर्णय को ही डायट का निर्णय समझ लिया जाएगा। डायट द्वारा प्रधानमंत्री का नाम तय हो जाने पर उसकी औपचारिक नियुक्ति सम्राट द्वारा की जाती है। इस धारा से स्पष्ट है कि प्रधानमंत्री के नामांकन के विषय में सभासद (House of the Councillors) की शक्तियां प्रतिनिधि सदन (House of Representatives) की तुलना में कम है।

अन्य मंत्रियों की नियुक्ति प्रधानमंत्री द्वारा की जाती है। संविधान की धारा 68 के अनुसार अधिकांश मंत्री राष्ट्रीय डायट के सदस्य होने चाहिए। मंत्रियों को अपने पद से हटाने का प्रधानमंत्री को अधिकार है।

अवधि

जापान की केबिनेट की कोई निश्चित अवधि नहीं है। वह डायट के निम्न सदन अर्थात् प्रतिनिधि सदन के बहुमत के समर्थन तक ही अपने पद पर स्थिर रह सकती है। यदि निम्न सदन केबिनेट के विरूद्ध अविश्वास का प्रस्ताव पारित कर देता है अथवा अविश्वास प्रस्ताव को अस्वीकार कर देता है तो केबिनेट को दस दिन के भीतर या तो स्वयं को त्याग-पत्र दे देना चाहिए अथवा प्रतिनिधि सदन को भंग कर देना चाहिए एवं देश में पुनः निर्वाचन कराने चाहिए। जब केबिनेट को त्याग-पत्र देना होता है तो वह दोनों सदनों के अध्यक्षों को इस बात की लिखित सूचना देती है। यह सूचना प्राप्त होने पर डायट नए प्रधानमंत्री के चयन का कार्य आरंभ कर देती है।

संगठन एवं कार्य-प्रणाली

(Organisation & Working Procedure)

प्रधानमंत्री केबिनेट का अध्यक्ष होता है और उसका कार्यालय ही सरकार का केंद्रीय कार्यालय होता है। इस कार्यालय का मुख्य संचालक केबिनेट सचिवालय का निर्देशक (Director of Cabinet Secretariat) होता है। इसकी सहायता के लिए उप-निदेशक

(Deputy Directors) होते हैं। सचिवालय केबिनेट की सभाओं का कार्यक्रम (Agenda) तैयार करता है, आवश्यक पत्र तैयार करता है एवं अन्य मामलों का प्रबंध करता है। सचिवालय के अलावा एक विधि-निर्माण ब्यूरो (Bureau of Legislation) भी होता है। इसका निदेशक विधि-निर्माण के संबंध में प्रधानमंत्री एवं केबिनेट को कानूनी परामर्श देता है। अनेक बोर्ड और कमीशन इस ब्यूरों के सहायक अंग होते हैं।

केबिनेट की बैठकें साधारणतः सप्ताह में दो बार प्रधानमंत्री की अध्यक्षता में उसके सरकारी भवन में होती हैं। प्रधानमंत्री की अनुपस्थिति में उप-प्रधानमंत्री सभापतित्व करता है।

केबिनेट की बैठक के लिए कोई गणपूर्ति (Quorum) निश्चित नहीं है। यदि बहुमत से कोई निर्णय लिया जाता है तो अनुपस्थित सदस्यों के हस्ताक्षर बाद में कराए जा सकते हैं। केबिनेट के वाद-विवाद गोपनीय होते हैं और कार्यवाही प्रकाशित नहीं की जाती।

केबिनेट मंत्रियों के अधीन उपमंत्री भी होते हैं। ये स्थायी सरकारी अधिकारी (Career Officials) होते हैं। इनका महत्त्व निरंतर बढ़ता जा रहा है। इनकी बैठकों में हुए निर्णयों को केबिनेट की स्वीक ति पर ही लागू किया जा सकता है।

सी० मनागा के मतानुसार, केबिनेट के कार्य दो प्रकार के होते हैं। ये हैं- (i) केबिनेट निर्णय (Cabinet Decisions) एवं (ii) केबिनेट समझौते (Cabinet Understanding)। महत्त्वपूर्ण प्रश्नों एवं संवैधानिक तथा कानूनी रखने और अपने बहुमत के बल पर उन्हें डायट से स्वीक त करा लेने का संपूर्ण कार्य केबिनेट का ही है। उसे मंत्रि-परिषद आदेश (Cabinet Order) भी जारी करने का अधिकार है। इन आदेशों का प्रभाव संसदीय कानूनों जैसा ही होता है। डायट की बैठक बुलाने, निम्न सदन को विघटित करने, सम्राट को परामर्श देने, आम चुनावों की घोषणा करने तथा संविधान में संशोधन लाने के लिए आवश्यक कदम उठाने आदि के दायित्वों का निर्वाह केबिनेट ही करती है। एक उल्लेखनीय तथ्य यह है कि जापानी कार्यपालिका को विधेयक के संबंध में निषेधाधिकार (Veto) तथा अध्योदश (Ordinance) जारी करने का अधिकार नहीं है। आर्डथ बर्क्स (Ardath W. Burks) के अनुसार, "केबिनेट का कार्य राष्ट्रीय नीति निर्धारित करने व विधायी प्रक्रिया में प्रभावी रूप से भाग लेना होता है।"

3. **वित्तीय अधिकार (Financial Powers)** - संविधान की धारा 83 ने राष्ट्रीय वित्त के प्रशासन का उत्तरदायित्व डायट पर डाला है, लेकिन व्यवहार में केबिनेट ही इस उत्तरदायित्व का अधिकांशतः निर्वाह करती है। आकस्मिक परिस्थिति में डायट द्वारा सुरक्षित धनराशि के व्यय का उत्तरदायित्व केबिनेट पर ही है, यद्यपि धन खर्च करने के बाद उसे अविलम्ब डायट की स्वीक ति लेनी पड़ती है। राज्य के सभी प्रकार के व्ययों और राजस्वों की जो वार्षिक रिपोर्ट ऑडिट-बोर्ड प्रस्तुत करता है उसे केबिनेट द्वारा ही डायट के सामने पेश किया जाता है। संविधान द्वारा केबिनेट का ही यह दायित्व है कि वह नियत अवधि पर वर्ष में कम से कम एक बार राष्ट्रीय वित्त के बारे में डायट और जनता के समक्ष रिपोर्ट प्रस्तुत करते हैं।

4. **न्यायिक अधिकार (Judicial Powers)** - संविधान की धारा 6 ने केबिनेट को सामान्य क्षमादान (General Amnesty), ब्रिटिश क्षमादान (Special Amnesty), दंड कम करने, म त्यु-दंड को अल्पकाल के लिए स्थगित करने तथा अधिकारों को पुनः प्रदान करने आदि के प्रश्नों पर निर्णय देने का अधिकार दिया है। इस संबंध में केबिनेट द्वारा किए गए कार्यों को सम्राट प्रमाणित करता है।

5. **परामर्शदात्री शक्तियां (Advisory Powers)** - सम्राट को कोई विशेषाधिकार प्राप्त नहीं है। वह मंत्रिमंडल के परामर्शदात्री अधिकार के अनुसार कार्य करता है। क्विग्ले व टर्नर के शब्दों में, "मंत्रिमंडल का यह कार्य अत्यंत महत्त्वपूर्ण है क्योंकि परामर्श उसकी ओर से निर्णय के समान है।"

6. **आपातकालीन शक्तियां (Emergency Powers)** - देश के आपात या संकटकाल में मंत्रिमंडल को विशेष शक्तियां प्राप्त हैं।

इन महत्त्वपूर्ण अधिकारों के अलावा केबिनेट को प्रतिनिधि सदन का भंग करने का अधिकार भी प्राप्त है। प्रतिनिधि-सदन को भंग करके वह हाउस ऑफ कौंसिलर्स (House of Councillors) का संकटकालीन अधिवेशन बुला सकती है। सारांश में, केबिनेट वर्तमान जापानी-व्यवस्था का प्रमुख अंग है और उसी के हाथ में व्यवहारतः शासन की समस्त सत्ता है। यद्यपि वह डायट के प्रति पूर्णतया उत्तरदायी है। यदि निम्न सदन में उसे बहुमत का समर्थन प्राप्त हो तो उसकी शक्ति बहुत बढ़ जाती है। सर जॉन मैरियट (Sir John Marriot) के अनुसार, "केबिनेट वह धुरी है जिस पर समग्र सरकारी यंत्र परिभ्रमण करता है।"

अध्याय-18
स्विट्जरलैंड की कार्यपालिकाः संघीय परिषद्
(Swiss Executive: Federal Council)

स्विट्जरलैंड की कार्यपालिका को संघीय परिषद् (Federal Council) कहा जाता है। यह विश्व की शासकीय संस्थाओं में से सबसे अनोखी है। संघीय परिषद् के सदस्यों की संख्या 7 है और इन सातों सदस्यों की शक्तियां समान हैं। इसे 'बहुल कार्यपालिका' (Plural Executive) कहा जाता है। हालांकि यह बहुल कार्यपालिका है, तथापि इसमें अध्यक्षात्मक और मंत्रिमंडलीय व्यवस्था के गुण विद्यमान है। न तो यह व्यवस्थापिका का पथ-प्रदर्शन करती है और न ही उसके द्वारा पदच्युत की जा सकती है। साथ ही यह व्यवस्थापिका से स्वतंत्र भी नहीं है।

संघीय परिषद् की विशिष्ट विशेषताएं
(Specific Features of the Federal Council)

वस्तुतः संघीय परिषद् की स्थिति विश्व में अनूठी और विशिष्ट है। यह न तो विशुद्ध रूप से ब्रिटिश मंत्रिमंडल के ही अनुरूप है और न अमेरिका के अध्यक्षात्मक कार्यपालिका के ही समान है, फिर भी इसमें दोनों के गुण और लक्षण विद्यमान हैं। ये विशेषताएं निम्नांकित हैं-

बहुल कार्यपालिका
(Plural Executive)

स्विस कार्यपालिका का एक बहुल कार्यपालिका (Plural Executive) है। इसकी तुलना में ब्रिटेन, अमेरिका आदि कार्यपालिका एकल (Singular) है। वहां कार्यपालिका संबंधी अंतिम उत्तरदायित्व एक ही व्यक्ति पर अर्थात् प्रधानमंत्री या राष्ट्रपति पर होता है। इसके अतिरिक्त एकल कार्यपालिका वाले देशों में मंत्रिमंडल के सदस्यों में से किसी एक की स्थिति अन्य की तुलना में अधिक महत्त्व की होती है; लेकिन संघीय परिषद् इन सबसे अनूठी है क्योंकि कार्यपालिका की शक्ति एक व्यक्ति में निहित न होकर व्यक्तियों के एक समूह में निहित होती है जो सब समानपदी है यहां तक कि परिषद् का अध्यक्ष भी विशेषाधिकार नहीं रखता।

संसदीय और अध्यक्षात्मक शासन-प्रणालियों का मध्य मार्ग या समन्वय
(Integration or Midway of Parliamentary and Presidential Systems of Government)

स्विस कार्यपालिका का दूसरा अनूठापन यह है कि वह न तो संसदात्मक है और न अध्यक्षात्मक; वरन् उसमें दोनों पद्धतियों की विशेषताओं का सम्मिश्रण है। इसमें दोनों पद्धतियों के गुणों को अपनाने और अवगुणों से बचने का प्रयत्न किया गया है। वह संसदीय इसलिए है कि- (i) उसके सदस्यों का निर्वाचन व्यवस्थापिका द्वारा और प्रायः व्यवस्थापिका में से ही होता है, (ii) उसके सदस्यों का व्यवस्थापिका की बैठकों में उपस्थित रहने और विधेयकों को प्रस्तुत करने का अधिकार है, (iii) उसके सदस्य ही व्यवस्थापिका से विधेयक पारित करवाते हैं। स्विस कार्यकारिणी असंसदीय इसलिए है क्योंकि- (i) उसके सदस्य व्यवस्थापिका के सदस्य नहीं होते। कार्यकारिणी के सदस्य चुने जाने के बाद वे व्यवस्थापिका के पदों से प थक हो जाते हैं, (ii) उसका कार्यकाल निश्चित है क्योंकि व्यवस्थापिका सभा में अपनी हार हो जाने पर यह पदच्युत नहीं होती और न ही संघ के प्रधान कार्यपालक को उन्हें अपने पद से अलग करने का अधिकार है।

उत्तरदायित्व और स्थायित्व का स्वस्थ मिश्रण

(Integration of Responsibility and Stability)

स्विस संघीय परिषद् के उत्तरदायित्व और स्थायित्व का बड़ा उपयोग एवं स्वस्थ योग है। संघीय परिषद् व्यवस्थापिका के प्रति इस द ष्टि से उत्तरदायी है कि उसके सदस्य प्रश्नों-प्रति-प्रश्नों पर उत्तर देते हैं और सरकार की नीति का औचित्य सिद्ध करते हैं। कार्यकारिणी पर व्यवस्थापिका का नियंत्रण भी होता है। व्यवस्थापिका कार्यकारिणी को विशेष नीति अपनाने और कार्य करने के लिए आदेश दे सकती है और उसको मानना उसके लिए अनिवार्य है लेकिन उत्तरदायित्व केवल यहीं तक सीमित है, क्योंकि ब्रिटिश प्रणाली के समान व्यवस्थापिका कार्यकारिणी को पदच्युत नहीं कर सकती। यदि किसी विषय पर कार्यकारिणी के सदस्य हार जाते हैं तो वे इंग्लैंड और फ्रांस के मंत्रियों की तरह पद-त्याग नहीं करते। वे अपनी मांग पर अड़े न रहकर, व्यवस्थापिका के निर्णय को मान लेते हैं और यह कार्य अत्यंत सरलता से कर लिया जाता है। मुनरों ने इस बात को प्रकट करते हुए कहा है कि "संघीय परिषद् विधि-निर्माण कार्य में पूर्ण सक्रिय रूप से भाग ले परंतु यदि उसका सुझाव न माना जाए तो वह इसे अपमान न समझे- ऐसी आशा संघीय परिषद् से की जाती है।"

निर्दलीय चरित्र

(Non-party Character)

मंत्रिमंडलीय शासन में संयुक्त सरकारें (Coalition Governments) असाधारण काल में ही संगठित की जाती हैं, किंतु संघीय परिषद् में व्यवस्थापिका के लगभग सभी प्रमुख दलों का प्रतिनिधित्व होता है। परिषद् जो कुछ भी करना चाहे वह किसी दल के यंत्र के रूप में नहीं करती। उसके सदस्य परिषद् की बैठक में भी और संसद की बैठकों में भी अपने-अपने मत व्यक्त करने के लिए पूर्ण स्वतंत्र होते हैं। इतना ही नहीं, आवश्यकता पड़ने पर वे संसद में अपने साथी सदस्यों के निर्णयों के विरुद्ध भी बोल सकते हैं। इस प्रकार स्विट्जरलैंड में यह एक विचित्र किंतु आदर्श व्यवस्था है कि संघीय परिषद् में और संघीय सभा में जो कुछ भी होता है वह प्रायः दलबंदी की सीमा से उठकर होता है और उसका उद्देश्य राष्ट्रीय हितों की साधना करना होता है।

व्यवस्थापिका द्वारा निर्वाचन

(Elected by Legislature)

जहां अमेरिका की कार्यपालिका के मंत्री राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त किए जाते हैं और ब्रिटेन में वे राजा द्वारा प्रधानमंत्री के परामर्श से नियुक्त किए जाते हैं, वहां स्विट्जरलैंड में कार्यपालिका के सदस्य व्यवस्थापिका सभा द्वारा चुने जाते हैं।

विशेषज्ञों का मंत्रिमंडल

(Cabinet of Specialists)

स्विस संघीय परिषद् की अंतिम विशेषता यह है कि उनमें मंत्रिगण प्रायः नौसिखिए नहीं रहते। सदस्यों के बार-बार निर्वाचन हो जाने के कारण उन्हें लंबे समय तक राजनीतिक अनुभव और प्रशासनिक योग्यता प्राप्त करने का अवसर मिलता है। इसी कारण उनमें उचित निर्णय और कर्त्तव्य-परायणता आदि विशिष्ट गुण पाए जाते हैं। संघीय सभा संघीय परिषद् से शासन संबंधी सभी विषयों में विचार-विमर्श करती है और प्रायः उसके परामर्श की अवहेलना करने का साहस नहीं करती। जनता को भी यह पूरा विश्वास रहता है कि संघीय परिषद् निरंतर जनकल्याण में रत है और स्वार्थपरता तथा दलबंदी के प्रभाव से ऊपर है। स्विट्जरलैंड में ऐसे उदाहरण है कि संघीय परिषद् के सदस्य 25 से 30 वर्ष तक पदासीन रहे हैं।

यद्यपि स्विस कार्यकारिणी अपनी विशेषताओं के कारण बहुत ही अनूठी और प्रशंसनीय है, तथापि उसमें कुछ दोष भी हैं। कार्यकारिणी के सदस्य न किसी एक नेता के प्रति वफादार होते हैं और न उनमें पारस्परिक एकता की ही भावना होती है। प्रायः ऐसा भी होता है कि कार्यकारिणी के सदस्य शासन की बागडोर अपनी-अपनी ओर खींचते है जिससे शासन-नीति में मतभेद उत्पन्न हो जाता है। ब्रिटेन जैसी मंत्रिमंडलीय पद्धति स्विट्जरलैंड में विकसित नहीं हो पाती है।

संघीय परिषद् का संगठन
(Composition of the Federal Council)

सदस्य संख्या
(Membership)

जहां संसार के सभी देशों की कार्यपालिका सम्राट में या राष्ट्रपति में निहित होती है, वहां स्विट्जरलैंड की कार्यपालिका-शक्ति सात सदस्यों वाली परिषद् में निहित है।

चुनाव एवं कार्यकाल
(Term & Period)

परिषद् के सातों सदस्यों का चुनाव संघीय-सभा द्वारा होता है। चुन लिए जाने के बाद सदस्यों को संघीय-सभा की सदस्यता त्याग देनी पड़ती है। चुनाव के संबंध में कुछ संवैधानिक प्रतिबंध तथा अभिसमय निम्नांकित हैं-

1. परिषद् में एक कैण्टन से सिर्फ एक व्यक्ति ही निर्वाचित हो सकता है।
2. ऐसे कोई भी लोग जो रक्त या वैवाहिक संबंध में प्रत्यक्ष-परंपरा में कहीं तक भी तथा अप्रत्यक्ष परंपरा में चौथी पीढ़ी तक परस्पर संबंधित हों, जिन्होंने बहिनों से विवाह कर लिया हो तथा जो गोद रखे जाने के कारण परस्पर संबंधित हों, एक समय पर परिषद् के सदस्य नहीं हो सकते।
3. एक अभिसमय (Convention) के अनुसार दो सबसे बड़े और प्रमुख कैण्टल-बैरन तथा ज्युरिच का सदैव ही परिषद् में प्रतिनिधित्व रहता है। यह विशेषाधिकार सबसे बड़े फ्रेंच भाषा-भाषी कैण्टल बांड (Vaud) को भी प्राप्त है।
4. एक अन्य अभिसमय द्वारा परिषद् के संगठन को व्यापक प्रतिनिधित्व प्राप्त हुआ है, जैसे प्रमुख धर्मावलम्बियों, भाषा-भाषियों तथा राजनीतिक दलों को समुचित प्रतिनिधित्व दिया जाता है। मैसन (Mason) का कथन है कि "इस प्रकार क्षेत्रीय एवं भाषायी संतोषजनक वितरण का आश्वासन दिया गया है।"

वस्तुतः यह विचित्र बात है कि प्रत्यक्ष लोकतंत्र के घर स्विट्जरलैंड में भी कार्यपालिका को लोग प्रत्यक्ष रूप से नहीं चुनते किंतु इसके दो विशेष कारण हैं-

1. स्विस संसद के सदस्य जनता के इतने निकटतम संपर्क में रहते हैं कि उनके द्वारा किए गए निर्वाचन वास्तव में जनता द्वारा दिए हुए निर्वाचन ही होते हैं।
2. प्रत्यक्ष निर्वाचन के फलस्वरूप दलीय-प्रपंच की संभावना से स्विस जनता बचना चाहती है।

संघीय-परिषद् का कार्यकाल इतना ही है जितना संघीय सभा का, अर्थात् चार वर्ष। परिषद् के सदस्य प्रत्येक साधारण चुनाव के बाद नए सिरे से चुने जाते हैं। यदि अवधि से पूर्व राष्ट्रीय सभा विघटित कर दी जाती है तो संघीय-परिषद् भी विघटित हो जाती है और नई संघीय-परिषद् संघीय सभा के लिए नए चुनाव के बाद चुन ली जाती है। यदि परिषद् का कोई स्थान पदावधि से पहले रिक्त हो जाता है तो संघीय-सभा अपनी अगली बैठक में पदावधि के शेष समय के लिए उसकी पूर्ति कर लेती है।

परिषद् के सदस्य के बार-बार चुने जाने पर कोई संवैधानिक प्रतिबंध नहीं। यही कारण है कि कुछ सदस्य तो देश की सेवा 25 से 30 वर्ष तक निरंतर करते रहे हैं। योग्य सदस्यों के कारण ही यह परिषद् एक शक्तिशाली और आदरणीय कार्यपालिका सिद्ध हुई है।

सदस्यों की योग्यताएं, वेतन एवं उन्मुक्तियां
(Qualifications of Members, Salary and Immunities)

संविधान की धारा 96 के अनुसार "संघीय परिषद् के सदस्य उन सभी स्विस नागरिकों में से चुने जाते हैं जो राष्ट्रीय-सभा की सदस्यता की योग्यता रखते हैं।" धारा 97 यह प्रतिबंध लगाती है कि परिषद् के सदस्य संघ या कैण्टन के अंतर्गत न तो कोई अन्य पद-ग्रहण कर सकते हैं और न कोई अन्य व्यवसाय ही कर सकते हैं। सदस्यों को संघीय निधि से 80 हजार फ्रेंक

अधिक मिलते हैं। 55 वर्ष की आयु के सदस्यों को पेंशन दे दी जाती है बशर्ते कि वे 10 वर्षों तक सदस्य रह चुके हों। पेंशन वेतन का लगभग 40 से 60 प्रतिशत तक होती है। स्विस संघीय परिषद् के सदस्यों का वेतन अन्य देशों के मंत्रियों से तुलनात्मक रूप में बहुत कम है और वे प्रायः बहुत सादगी से रहते हैं। परिषद् के सदस्यों को लगभग वे ही विशेषाधिकार और उन्मुक्तियां प्राप्त हैं जो संघीय सभा के सदस्यों को प्राप्त हैं।

कार्य प्रणाली

(Working-Procedure)

साधारणतया परिषद् की बैठकें सप्ताह में दो बार होती हैं। कार्यवाही गुप्त रहती है। गणपूर्ति के लिए चार सदस्यों की उपस्थिति आवश्यक है। निर्णय बहुमत से होता है। अध्यक्ष को निर्णायक मत का अधिकार है। संघीय चांसलर (Federal Chancellor), जो व्यवस्थापिका तथा संघीय परिषद् के कार्यालय का अध्यक्ष होता है, परिषद् के सचिव के रूप में परिषद् की बैठकों में उपस्थित रहता है। चांसलर के स्थान पर कोई उप-चांसलर भी उसके कार्यों को कर सकता है।

अध्यक्ष एवं उपाध्यक्ष

(President and Vice-President)

संघीय परिषद् अपने सदस्यों में से ही प्रतिवर्ष अपने सभापति और उप-सभापति का निर्वाचन करती है जिन्हें संघ का राष्ट्रपति और उप-राष्ट्रपति कहा जाता है। दोनों ही पदों के लिए व्यक्ति दुबारा चुने जा सकते हैं, किंतु उनका चुनाव लगातार दो बार नहीं हो सकता। यही कारण है कि लगातार दो वर्ष नहीं, लेकिन अनेक बार लोगों ने इन पदों पर कार्य किया है। उदाहरणार्थ, श्री फिलिप इटर 1939, 1942, 1947 और 1953 में परिषद् के अध्यक्ष रहे। उपाध्यक्ष पद पर रहने के बाद व्यक्ति अध्यक्ष चुना जा सकता है। आजकल की परंपरा के अनुसार उपाध्यक्ष अर्थात् उप-राष्ट्रपति का निर्वाचन वरिष्ठता के सिद्धांत (Seniority System) के आधार पर परिषद् के सदस्यों में से होता है। अध्यक्ष या राष्ट्रपति को परिषद् के अन्य सदस्यों के समान ही वेतन मिलता है, केवल 10 हजार फ्रेंक अतिरिक्त भत्ते के रूप में और दिए जाते हैं।

अध्यक्ष की स्थिति न तो अमेरिकी राष्ट्रपति जैसी होती है और न ब्रिटिश प्रधानमंत्री के समान। उसे कोई विशेषाधिकार प्राप्त नहीं होते। अपने साथियों के समान वह भी एक विभाग का अध्यक्ष होता है। बराबर वालों में एक होने के कारण ही उसे विशेष महत्त्वहीन अध्यक्ष कहा जाता है। अध्यक्ष की शक्तियां बहुत ही कम हैं। देश के प्रशासन के लिए अन्य सदस्यों की अपेक्षा किसी भी प्रकार वह अधिक उत्तरदायी नहीं है। समस्त निर्णय संघीय परिषद् ही एकल सत्ता (Single Authority) के रूप में करती है। अध्यक्ष न किसी अधिकारी की नियुक्ति करता है और न कोई संधि-वार्ता आदि ही कर सकता है। किसी विधेयक पर उसे निषेधात्मक अधिकार भी नहीं है। उसकी शक्ति की सीमा इतनी ही है कि वह संघ की सभाओं का सभापतित्व करता है, विभिन्न विभागों द्वारा भेजी गई रिपोर्टों को देखता है, विभिन्न प्रशासकीय विभागों के कार्य का सामान्य निरीक्षण करता है और किसी मामले पर समान मत होने पर अपना निर्णायक मत (Casting Vote) देता है। उसकी स्थिति वास्तव में एक प्रतीकात्मक प्रधान की-सी है। वह सार्वजनिक उत्सवों पर स्विस-प्रजातंत्र का प्रतिनिधित्व करता है।

संघीय परिषद् के अध्यक्ष या संघ के राष्ट्रपति की स्थिति का सार लोवेल के इन शब्दों से प्रकट होता है कि "वह साररूप में राष्ट्र की कार्यपालिका समिति के अध्यक्ष की हैसियत से यह जानने का प्रयत्न करता है कि उसके साथी क्या कर रहे हैं ? वह राज्य के नाममात्र के अध्यक्ष के औपचारिक कर्त्तव्यों को पूरा करता है।" इतना होने पर भी अध्यक्ष-पद प्रत्येक राजनीतिज्ञ के लिए सर्वोच्च पद है और उसे जन-सेवा का सर्वोच्च पुरस्कार समझा जाता है।

प्रशासकीय विभागों का वितरण- स्विस प्रशासन के सभी कार्यों को सात विभागों में विभाजित किया गया है। प्रत्येक विभाग एक संघीय परिषद् के सदस्य के अधीन होता है जो उसके कार्य-संचालन के लिए संपूर्ण परिषद के प्रति उत्तरदायी होता है। विभागों का वितरण औपचारिक रूप से परिषद् द्वारा किया जाता है, किंतु व्यवहार में निर्वाचन के समय ही प्रायः स्पष्ट हो जाता है कि कौन सा सदस्य किस विभाग को संभालेगा। एक विभाग के प्रमुख की अनुपस्थिति में कार्य करने के लिए प्रत्येक विभाग का प्रमुख दूसरे विभाग का उप-प्रमुख होता है।

परपंरा के अनुसार परिषद् के सदस्य पुनः निर्वाचित हो सकते हैं और उन्हें पहले वाले विभाग ही सौंप दिए जाते हैं। इसके फलस्वरूप विभागों के मंत्री नौसिखिए नहीं रहते वरन् उनमें से अधिकांश अपने-अपने विभाग के विशेषज्ञ बन जाते हैं। वर्तमान

समय में स्विट्रजैंड के प्रशासनिक विभाग (Administrative Departments) ये हैं- राजनीतिक विभाग, ग ह विभाग, सैनिक विभाग, न्याय एवं पुलिस विभाग, वित्त एवं प्रशुल्क विभाग, सार्वजनिक अर्थ विभाग, तथा डाक और रेल विभाग।

संघीय परिषद् के अधिकार एवं कर्त्तव्य या भूमिका
(Powers and Functions or Role of the Federal Council)

अथवा

बहुल कार्यपालिका की कार्य-पद्धति
(Working of Plural Executive)

प्रशासकीय अधिकार एवं कर्त्तव्य

(Administrative Powers and Duties)

संघीय परिषद् स्विस संवर्ग की सर्वोच्च कार्यपालिका सत्ता है और इसे संघीय आज्ञाओं तथा कानूनों के अनुसार संपूर्ण संघ के प्रशासन का नियंत्रण करने का अधिकार प्राप्त है। यह देखती है कि संघीय संविधान तथा संघीय कानूनों का पालन हो रहा है अथवा नहीं। इसके लिए आवश्यक कार्यवाही करती है। प्रशासनिक क्षेत्र में संघीय परिषद् का मुख्य कर्त्तव्य है कि वह संघ में शांति-व्यवस्था का उचित प्रबंध करे, बाह्य आक्रमणों एवं आंतरिक उपद्रवों से देश की रक्षा करे तथा स्विट्जरलैंड की स्वतंत्रता और तटस्थता की सुरक्षा करे। यथार्थ में आतंरिक शांति और सुरक्षा की व्यवस्था कैण्टनों का उत्तरदायित्व है, लेकिन यदि आंतरिक अव्यवस्था हो जाए तो संघीय-सभा (Federal Assembly) निर्णय करती है।

आपातकाल की स्थिति में यदि संघीय संसद का सत्रावसान हो गया हो तो संघीय परिषद् का अधिकार है कि वह शांति एवं व्यवस्था की स्थापना के लिए सेनाओं का प्रयोग जिस प्रकार उचित समझे करे। किंतु परिषद् के लिए यह आवश्यक है कि यदि उपर्युक्त कार्य में दो हजार से अधिक सैनिकों की आवश्यकता हो अथवा उन सैनिकों को तीन सप्ताहों से अधिक युद्धरत रहना हो, तो तुरंत संसद सत्र (Session) आहूत करे।

संघीय संसद (Federal Assembly) के कानूनों और अधिनियमों, संघीय न्यायालय के निर्णयों तथा विभिन्न कैण्टनों के पारस्परिक विवादों के समाधान के लिए किए गए समझौतों और मध्यस्थता को लागू कराने का प्रबंध भी संघीय परिषद् करती है। वही संघीय प्रशासन के सब अधिकारियों एवं कर्मचारियों के व्यवहार एवं कार्य का निर्धारण करती है। जिन पदों पर संघीय-सभा, क्षेत्रीय न्यायालय अथवा अन्य किसी संघीय प्राधिकारी की नियुक्ति का अधिकार न दिया गया हो, उन पर संघीय-परिषद् की नियुक्ति करती है। व्यवहार में संघीय-परिषद् अपने नियुक्ति संबंधी अधिकारों को प्रशासन के विभिन्न विभागों को प्रत्यायोजित कर देती है और विभिन्न निगमों एवं अन्य स्वतंत्र-सत्ताओं अथवा निकायों को सौंप देती है।

स्विट्जरलैंड के विदेशिक संबंधों के नियमों और उनके क्रियान्वयन का अधिकार भी संघीय-परिषद् को ही दिया गया है। संघीय-परिषद ही उन विभिन्न संधियों का परीक्षा करती है जो कैण्टन आपस में अथवा विदेशों के साथ करते हैं। यदि वे संधियां उचित होती हैं तो उन पर स्वीक ति प्रदान कर दी जाती है, अन्यथा संघीय-परिषद् अवांछनीय संधि या संधियों के विरुद्ध संघीय-सभा में अपील करता है और उन्हें निरस्त करने की अभिशंसा करती है।

संघीय-परिषद् अपने समस्त कार्यकलापों की रिपोर्ट संघीय सभा के समक्ष प्रत्येक साधारण सत्र में प्रस्तुत करती है, देश की आतंरिक स्थिति के बारे में प्रतिवेदन पेश करती है और संवर्ग के विदेशों के साथ संबंधों के बारे में आवश्यक प्रकाश डालती है। परिषद् संघीय-सभा के विचारार्थ ऐसे प्रस्ताव अथवा विधेयक भी प्रस्तुत करती है जो उसके मतानुसार सर्व-साधारण के कल्याण की द ष्टि से लाभदायक एवं आवश्यक हों। यदि कभी संघीय-सभा या उसका कोई सदन विशेष जानकारी प्राप्त करना चाहता है तो संघीय-परिषद् आवश्यक रिपोर्ट भेजती है।

संघीय परिषद् के नियंत्रण में समस्त संघीय सेना और उसके प्रशासन की शाखाएं भी रहती हैं जिन पर संघ का नियंत्रण है।

संघीय-परिषद् कैण्टनों द्वारा पारित सभी कानूनों और उसके सभी अध्यादेशों का भी परीक्षण करती है। कैण्टनों के लिए यह आवश्यक है कि वे अपने सभी कानूनों और अध्यादेशों को संघीय परिषद् में स्वीक त करवाएं। साथ ही संघीय परिषद् कैण्टनों

के उस प्रशासन व शाखाओं पर भी नियंत्रण रखती है जिनका नियंत्रण परिषद् के अधिकार-क्षेत्र में हो। संघीय सभा की स्वीक ति के लिए प्रस्तुत कैण्टन-संविधान में संशोधन के प्रस्तावों की संघीय परिषद जांच करती है और विधानमंडल में तत्संबंधी प्रस्ताव प्रस्तुत करती है। किसी भी कैण्टन में उपद्रव अथवा अशान्ति की स्थिति में संघीय परिषद् ही संघीय हस्तक्षेप का निश्चय करती है और संघीय सभा का अनुमोदन प्राप्त कर आवश्यक कार्यवाही करती है।

विधायी अधिकार एवं कर्त्तव्य

(Legislative Powers & Duties)

विधि-निर्माण में भी परिषद् का काफी हाथ रहता है। संविधान की धारा 102 के अनुसार उसे अधिकार है कि वह कानूनों के विधेयक संसद में प्रस्तुत करे। वस्तुतः लगभग 95 प्रतिशत विधेयक संघीय परिषद् द्वारा ही प्रस्तुत किए जाते हैं। सदस्यों के अपने विधेयक भी प्रायः पहले परिषद् के पास आवश्यक सुधार और सुझावों के लिए भेजे जाते हैं और तत्पश्चात् उन पर संसद विचार करती है।

संघीय परिषद् को अध्यादेश जारी करने एवं प्रदत्त व्यवस्थापन (Delegated Legislation) की प्रणाली के अंतर्गत नियम बनाने का भी अधिकार है। परिषद् के अध्यादेशों एवं प्रदत्त व्यवस्था-व्यवस्थापन के अंतर्गत बनाए गए नियमों का प्रभाव कानूनों के समान ही होता है और न्यायालयों द्वारा उन्हें मान्यता दी जाती है। अध्यादेशों के विषय में किसी भी प्रकार के जनमत-संगह (Referendum) की व्यवस्था नहीं है जबकि कानूनों के विषय में ऐसा है। अध्यादेश जारी करने की शक्ति संघीय परिषद् की स्थिति और उसके महत्त्व का बड़ा सम्बल प्रदान करती है।

संघीय परिषद् के सदस्य विधान-मंडल की बैठकों में उपस्थित हो सकते हैं। वे अपने विचार, मत और सुझाव प्रस्तुत कर सकते हैं तथा विचाराधीन विषय पर प्रस्ताव रख सकते है। परिषद् के सदस्य संघीय सभा के वाद-विवाद में सक्रिय रूप से भाग लेते हैं और संघीय सभा भी उनके विचारों, मतों तथा वाद-विवादों को बड़े आदर से सुनती है और उन्हें ग्रहण करती है। संघीय सभा की समितियों में भी संघीय परिषद् के सदस्यों का स्थान व प्रभाव महत्त्वपूर्ण होता है। समितियों के प्रतिवेदन तैयार करने में समितियां मंत्रियों अर्थात् परिषद् के सदस्यों के विशेष ज्ञान एवं अनुभव की सहायता लेती है।

वित्तीय अधिकार एवं कर्त्तव्य

(Financial Powers & Duties)

वित्तीय क्षेत्र में भी संघीय परिषद् को पर्याप्त शक्तियां प्राप्त हैं। प्रतिवर्ष संघीय बजट इसी के द्वारा तैयार करके संघीय सभा के समक्ष प्रस्तुत किया जाता है। इसी के द्वारा इसको सभा से स्वीक त भी कराया जाता है। यह संघीय आय-व्यय की देखभाल करती है और राजस्व संग्रह करती है। वित्तीय व्यवस्था की सुचारुता और सुप्रबंध के लिए संघीय परिषद् उत्तरदायी होती है। आय-व्यय का समुचित हिसाब रखने का उत्तरदायित्व परिषद् पर ही है।

न्यायिक अधिकार एवं कर्त्तव्य

(Judicial Powers & Duties)

संघीय परिषद् को कुछ न्यायिक अधिकार भी प्राप्त हैं। वह कुछ विशेष प्रकार की अंतर्राष्ट्रीय संधियां और संविधान की कतिपय धाराओं के अंतर्गत उत्पन्न विवादों के संबंध में की गई अपीलों पर निर्णय देती है। संघीय रेलवे प्रशासन एवं विभिन्न प्रशासकीय विभागों के निर्णयों के विरुद्ध की गई अपीलों की भी सुनवाई करती है। इस संबंध में यह स्मरणीय है कि संघीय-परिषद् अंतिम अपीलीय न्यायालय नहीं है, इसके निर्णय के विरुद्ध अपील संघीय न्यायालय तथा संसद में की जा सकती है। क्षमादान (Pardon) का अधिकार अन्य देशों में प्रायः कार्यपालिका को प्राप्त होता है, परंतु स्विस संघीय परिषद् को यह अधिकार प्राप्त नहीं है।

संकटकालीन अधिकार एवं कर्त्तव्य

(Emergency Powers & Duties)

संविधान के अंतर्गत संघीय परिषद् को कोई संकटकालीन विशेष अधिकार प्राप्त नहीं हैं, परंतु अंतर्राष्ट्रीय युद्ध, आर्थिक मंदी या ऐसे ही अन्य संकटों के समय संघीय सभा अपने सब अधिकार संघीय परिषद् को सौंप सकती है और ऐसा कई अवसरों

पर हो चुका है। उदाहरणार्थ, 1849, 1853, 1859 और 1870 में देश की तटस्थता की रक्षार्थ; 1914 तथा 1939 में विश्व युद्ध के समय राष्ट्र की तटस्थता, स्वतंत्रता एवं आर्थिक हितों की रक्षा के लिए 1930 में आर्थिक संकट का समाधान करने के लिए संघीय परिषद् का 'पूर्णाधिकार' सौंपे गए थे।

लोवेल (Lowell) के शब्दों में यह कहना अतिशयोक्तिपूर्ण न होगा कि "संघीय परिषद् को मुख्य शक्ति-स्त्रोत कहा जा सकता है और निश्चित रूप से यह राष्ट्रीय सरकार का संतुलन चक्र है।"

अध्याय-19

इंग्लैंड का स्थानीय शासन

(Local Government of Britain)

ब्रिटेन में स्थानीय स्वशासन की संस्थाओं का बहुत अधिक महत्त्व है और इन्हीं के द्वारा वहां के प्रजाजन अपनी स्वतंत्रता का उचित उपभोग करते आए हैं। स्थानीय मामलों में उनकी स्वतंत्रता उनके गौरव का विषय है। ब्रिटिश शासन के एकात्मक होने से स्थानीय संस्थाओं का महत्त्व और अधिक बढ़ जाता है, क्योंकि ग्राम के नागरिक जितनी दिलचस्पी स्थानीय मामलों में लेते हैं उतनी केंद्रीय मामलों में नहीं लेते।

आधुनिक ब्रिटिश स्थानीय शासन-प्रणाली का अध्ययन करते समय हमें तीन प्रमुख बातें स्पष्ट रूप से द ष्टिगोचर होती हैं-

1. यह प्रथा अधिकांशतः अतीत की आभारी है और बहुत प्राचीनकाल से ही इंग्लैंड में स्वशासन किसी न किसी रूप में चलता आ रहा है।
2. ब्रिटिश स्थानीय शासन-व्यवस्था समयानुकूल परिवर्तित होती रही है, यह स्थिर नहीं है। इंग्लैंड की स्थानीय संस्थाओं का निरंतर विकास होता रहा है और आधुनिक काल में तो इनमें इतने अधिक परिवर्तन हो गए हैं कि उनका प्राचीन स्वरूप बहुत कुछ बदल गया है।
3. स्थानीय संस्थाएं अपने अधिकारों की रक्षा करती हुई अधिकाधिक स्वतंत्र होने का प्रयास करती हैं, तथापि उन पर दिनोंदिन केंद्र का नियंत्रण बढ़ता जा रहा है और पिछली लगभग सात-आठ शताब्दियों में उन पर संसद का पर्याय नियत्रंण बढ़ गया है। फिर भी स्थानीय शासन सफलतापूर्वक कार्य करता चला आ रहा है।

ब्रिटिश स्थानीय शासन का संक्षिप्त ऐतिहासिक अवलोकन

इंग्लैंड अखिल विश्व में स्थानीय लोकतंत्र का जन्मदाता है। इंग्लैंड की वर्तमान स्थानीय शासन-व्यवस्था ऐंग्लो-सैक्सनकालीन व्यवस्था से संबद्ध है। उस समय से अब तक इसका क्रमबद्ध रूप से निर्वाध विकास होता रहा। सैक्सन राजाओं के समय में (Shires), हंड्रेड्स (Hundreds) तथा बरो (Borroughs) थे और वे नार्मन-विजय के बाद काउंटी (County), मैनर (Manor) तथा म्यूनिसिपैलटियों (Municipalities) में परिवर्तित हो गए। इसी बीच में पैरिशों (Parishes) की स्थापना हो गई उन्होंने टाउनशिप्स (Townships) का स्थान ले लिया। इस प्रकार इंग्लैंड में स्थानीय स्वशासन की ये संस्थाएं काउंटी, बरो तथा पैरिश अठारहवीं शताब्दी तक अस्तित्व में रहीं। इनके संगठन और कार्य-क्षेत्र में ट्यूडर व स्टुअर्ट सम्राटों ने कोई विशेष हस्तक्षेप नहीं किया। काउंटी का शासन जस्टिस ऑफ दी पीस (Justice of the Peace) करते थे, और बरो का शासन उसका फ्रीमैन (Freeman) करता था। बरो और पैरिश का शासन-संगठन लोकतंत्रात्मक था और लोग अपने अफसरों को स्वयं ही चुनते थे।

परंतु अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध तथा उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में व्यावसायिक क्रांति (Industrial Revolution) ने सारी परिस्थिति बदल दी। लोग गांव छोड़कर नगरों में जाने लगे और नगरों में सफाई, शिक्षा, स्वास्थ्य, निर्धन-सहायता तथा नगर-सुधार की समस्याएं सामने आयीं। इन विभिन्न नवीन समस्याओं का सामना करने को संसद भी तत्पर हुई। उसने पुरानी संस्थाओं को हटाना उचित नहीं समझा और समस्याओं के समाधान के लिए नवीन संस्थाएं स्थापित कीं। पुरानी संस्थाओं के साथ नई संस्थाओं की स्थापना का परिणाम यह हुआ कि नई और पुरानी संस्थाओं का कार्य-क्षेत्र अव्यवस्थित हो गया और ठीक-ठीक विभाजन नहीं हो पाया। स्थानीय संस्थाओं की संख्या में बहुत व द्धि हो गई और उनके कार्य-क्षेत्र का भी बहुत विस्तार हो गया। अब स्थानीय शासन को सुधारने व पुनर्गठित करने पर विशेष ध्यान दिया जाने लगा। 1835 में संसद ने

म्यूनिसिपल कॉर्पोरेशन एक्ट (Municipal Corporation Act) पारित किया जिसके द्वारा बरोज (Boroughs) के प्रशासन की व्यवस्था हुई। 1888 में स्थानीय सरकार अधिनियम (Local Government Act) पारित हुआ जिसके द्वारा काउंटियों के प्रशासन का संगठन किया गया। 1894 के एक अधिनियम के अनुसार ग्राम एवं नगरीय जिलों (Rural and Urban Districts) का पुनर्संगठन हुआ तथा स्थानीय शासन को जनता द्वारा निर्वाचित संस्थाओं के हाथों में छोड़ दिया गया। 1929 तथा 1933 के स्थानीय शासन अधिनियमों द्वारा स्थानीय निकायों को केंद्र से सहायता मिलने लगी और उनके अधिकारों की कानूनी व्यवस्था की गई। 1936 के सार्वजनिक स्वास्थ्य तथा आवास अधिनियम ने स्थानीय अधिकारियों के कार्यों को और भी स्पष्ट कर दिया। द्वितीय महायुद्ध काल में ब्रिटेन को नागरिक प्रतिरक्षा उद्देश्यों के लिए विभिन्न मंडलों (Regions) में बांटा गया और स्थानीय अधिकारियों ने नागरिक प्रतिरक्षा की प्रबंध-व्यवस्था में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।

युद्धोत्तर काल में ब्रिटेन में स्थानीय शासन के पुनर्गठन की आवश्यकता अधिकारिक अनुभव की जाती रही। समय-समय पर इस दिशा में अनेक कदम उठाए गए जिनमें निम्नलिखित विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

रैडक्लिफ-मॉड सुझाव

(The Redcliff-Maud Proposals)

1966 में स्थानीय शासन-सुधार के लिए एक शाही आयोग लॉर्ड रैडक्लिफ मॉड की अध्यक्षता में नियुक्त हुआ। इस 11 संसदीय आयोग ने जून, 1969 में अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत किया। श्रमदलीय सरकार ने प्रतिवेदन के मुख्य प्रस्तावों को स्वीकार करते हुए फरवरी, 1970 में एक श्वेत-पत्र (White-Paper) निकाला। शीघ्र श्रमिक सरकार का पतन हो गया और जून, 1970 में अनुदार दलीय सरकार बनी जिसने फरवरी, 1971 में दूसरा श्वेत पत्र निकाला और एक स्थानीय शासन विधेयक प्रस्तुत किया जो 'स्थानीय शासन अधिनियम, 1972' (Local Government Act, 1972) के रूप में पारित हुआ। इस अधिनियम के मुख्य प्रावधानों को देखने से पहले रैडक्लिफ-मॉड सुझावों के मुख्य बिंदुओं को देख लेना चाहिए। जो इस प्रकार थे-

1. आयोग ने सुझाव दिया कि स्थानीय शासन की वर्तमान संरचना को परिवर्तित किया जाए और 61 नए स्थानीय शासन-क्षेत्र (New Local Government Areas) स्थापित किए जाएं।
2. इन क्षेत्रों में से 58 क्षेत्रों का शासन एकलस्तरीय सत्ताओं या प्राधिकारियों (Single-tier Authorities) द्वारा ही जिन्हें 'एकात्मक प्राधिकारी' (Unitary Authorities) कहा जाए।
3. तीन क्षेत्रों में, जिनमें (i) बरमिंघम, (ii) लिवरपूल, एवं (iii) मेनचेस्टर सम्मिलित हों, एक द्वि-स्तरी व्यवस्था (Two-tier System) कायम की जाए, जो मुख्य प्राधिकारियों (Major or Metropolitan Authorities) एवं द्वितीय-स्तरीय मुख्य जिलों (Second-tier Metropolitan Districts) के बीच विभाजित हो।
4. उपर्युक्त 61 नए क्षेत्रों और व हत्तर लंदन (Greater London) को 8 प्रांतों (Provinces) में गठित किया जाए तथा प्रत्येक प्रांत की एक प्रांतीय-परिषद (Provincial Council) हो।
5. एकात्मक क्षेत्रों के अंतर्गत स्थानीय परिषदें (Local Councils) निर्वाचित हों जो वर्तमान काउंटी और नान-काउंटी बरो, शहरी जिलों और पैरिश परिषदों के क्षेत्रों का प्रतिनिधित्व कर सकें।

सर एडवर्ड हैथ की नई Conservative सरकार ने स्थानीय शासन अधिनियम 1972 पास किया जो एक अप्रैल 1974 से लागू किया गया, में एकलस्तरीय ढ़ांचे को नकारकर द्वि-स्तरीय ढ़ांचे को अपनाया गया। 1974 में अपनाया गया ढ़ांचा पहले से निम्न आधारों पर सुधारात्मक था-

1. स्थानीय शासन का ढ़ांचा अत्याधिक सरल था क्योंकि इसमें स्थानीय सत्ता संबंधी इकाईयों की संख्या कम कर दी गई और पूरे ढ़ांचा को और अधिक तार्किक बनाया गया।
2. टाउन-काउंटी द्वंद्व (Dictionary) समाप्त कर दिया गया।
3. आकार के आधार पर सभी असमानताएं खत्म कर दी गई। इस संदर्भ में 10 लाख से अधिक जनसंख्या वाले क्षेत्रों में मैट्रोपालिटिन जिला, 5 लाख से अधिक जनसंख्या वाले क्षेत्रों में एक नॉन-मैट्रोपालिटिन काउंटी तथा नॉन मैट्रोपालिटिन काउंटी के तहत एक जिले की स्थापना लगभग 1 लाख तक की जनसंख्या के आधार पर की गई।

4. मैट्रोपालिटिन जिलों को छोड़कर (जिनमें $^{1}/_{3}$ पार्षद प्रतिवर्ष चुने जाते हैं), नए ढ़ांचे में सभी स्थानीय इकाई का कार्यकाल 4 वर्ष निश्चित कर दिया गया और इन सबका चुनाव मई माह के पहले वीरवार को करवाया जाएगा। चुनाव की इस तारीख में परिवर्तन ग ह सचिव चाहे तो कर सकता है।

5. लंदन को छोड़कर एल्डरमैन का पद नए ढ़ांचे में समाप्त कर दिया गया। पहले ये एल्डरमैन अप्रत्यक्ष रूप से पार्षदों के द्वारा 6 वर्ष के लिए चुने जाते थे।

बाद में 1983 में, मार्गेट थैचर ने ग्रेटर लंदन कांसिल व छः मैट्रोपॉलिटिन काउंटी कांसिलों को भी समाप्त कर दिया।

वर्तमान स्थानीय शासन का ढ़ांचा - यूनाइटेड किंगडम, ग्रेट ब्रिटेन तथा उत्तरी आयरलैंड से मिलकर बना है तथा ग्रेट ब्रिटेन, इंग्लैंड, स्कॉटलैंड व वेल्स से मिलकर बना है। ब्रिटेन की राजधानी लंदन के स्थानीय शासन का ढ़ांचा इन सबसे अलग है। इन सब इकाईयों का स्थानीय ढ़ांचा निम्न प्रकार है-

स्थानीय शासन का ढ़ांचा

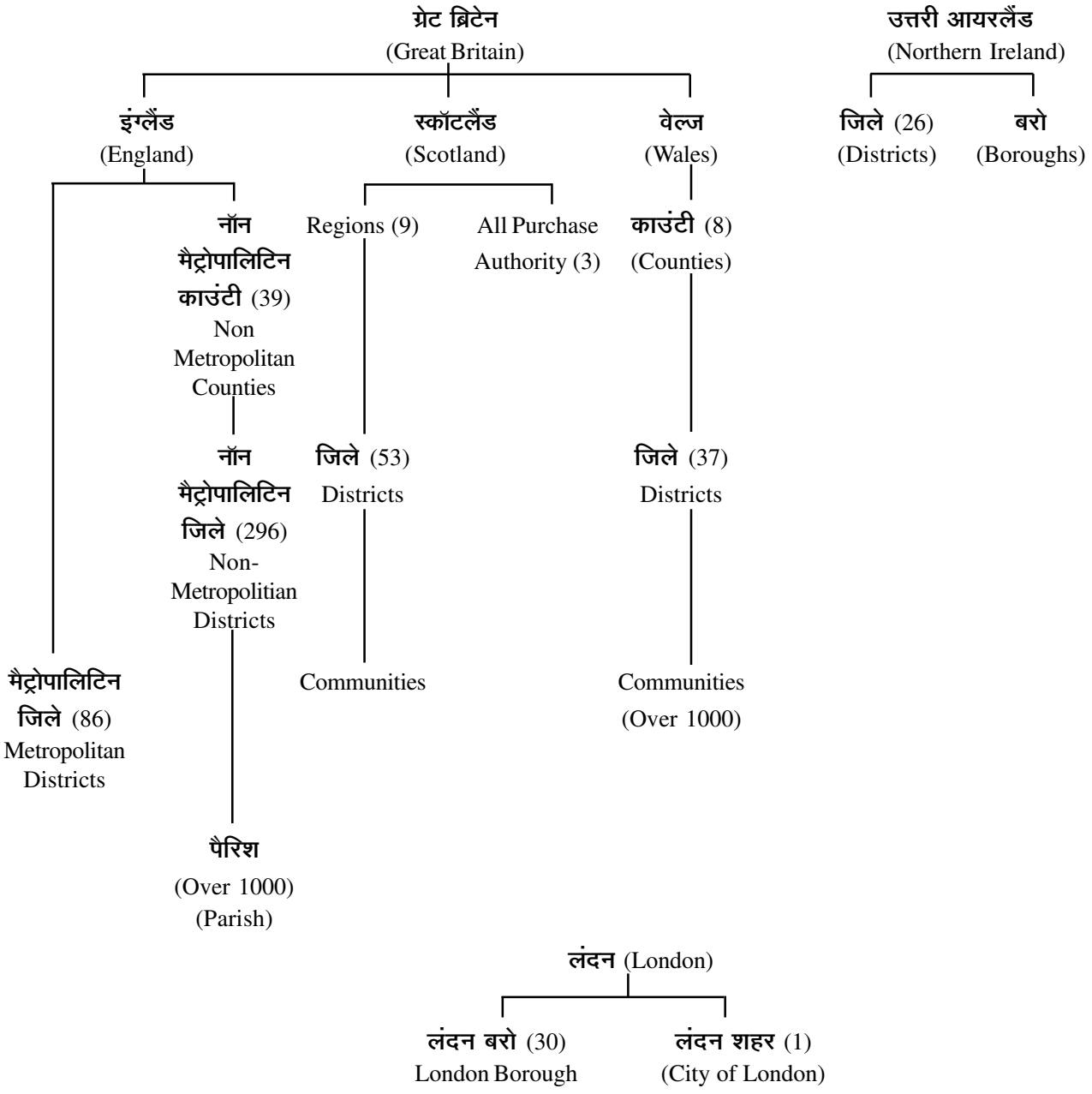

1. **ग्रेट ब्रिटेन (Great Britain)** - स्थानीय शासन के उद्देश्य के लिए ग्रेट ब्रिटेन के तीनों अंग- इंग्लैंड, स्कॉटलैंड एवं वेल्स पुनः छोटी-छोटी इकाईयों में बंटे हुए है जिनका वर्णन निम्नलिखित है-

   i. ***इंग्लैंड (England)*** - इंग्लैंड का व हत् क्षेत्र 6 मैट्रोपालिटिन काउंटी (जिन्हें 1983 में समाप्त किया गया है)- जो 36 मैट्रोपालिटिन जिलों में विभक्त की गई थी तथा 39 नॉन मैट्रोपालिटिन काउंटी जो 296 नॉन मैट्रोपालिटिन जिलों में विभक्त की गई हैं, में बंटा हुआ है। नॉन मैट्रोपालिटिन जिले 1000 से अधिक पेरिशो में बंटे हुए हैं।

   पेरिश स्थानीय शासन की सबसे निम्न स्तर की इकाई है। यह भारत की ग्राम पंचायत के समान होती है। पेरिश के लोग एक पेरिश काउंसिल का चुनाव करते हैं जिसके 5 से 25 तक सदस्य हो सकते हैं। 1974 के अधिनियम द्वारा इन पेरिशों की शक्तियां बढ़ा दी गई हैं और लगभग 300 कस्बों को पेरिशों के रूप में परिवर्तित कर दिया गया है। कुछ बड़ी पेरिशों की जनसंख्या लगभग 50,000 तक हो सकती है जबकि छोटी पेरिशों की जनसंख्या 200 तक भी हो सकती है। 200 से कम जनसंख्या वाली पेरिशों की काउंसिल नहीं होती है।

   नॉन मैट्रोपालिटिन जिलों का गठन लगभग एक लाख की जनसंख्या के आधार पर किया जाता है जबकि मैट्रापोलिटन जिले 2-4 लाख की जनसंख्या के आधार पर गठित किए जाते हैं। इंग्लैंड 36 मैट्रोपालिटिन एवं 296 नॉन मैट्रोपालिटिन जिलों में विभक्त है। दोनों प्रकार के जिलों में रहने वाले लोग अपनी-अपनी काउंसिल (Councils) का चुनाव करते हैं। मैट्रोपालिटिन जिलों में पार्षदों (Councillors) की संख्या 50-80 तक होती है जबकि नॉन मैट्रोपालिटिन जिलों की काउंसिलों की सदस्य संख्या 30-60 के बीच होती है। नॉन मैट्रोपालिटिन जिलों की काउंसिल की सदस्यों का कार्यकाल 4 वर्ष होता है जबकि मैट्रोपालिटिन जिलों की काउंसिल के $^1/_3$ सदस्य प्रतिवर्ष चयनित किए जाते हैं।

   इंग्लैंड में 6 मैट्रोपालिटिन काउंटियों को समाप्त कर संयुक्त बोर्डों (Joint Boards) का गठन किया गया है। नॉन मैट्रोपालिटिन काउंटियों का गठन 5 लाख की जनसंख्या तक के क्षेत्रों में किया गया है। प्रत्येक नॉन मैट्रोपालिटिन काउंटी की एक काउंसिल होती है। इनका कार्यकाल 4 वर्ष होता है और इसके सभी सदस्य एक साथ चयनित किए जाते है। ब्रिटेन का प्रत्येक वह नागरिक जो 21 वर्ष का है इनका चुनाव लड़ सकता है। इन मैट्रोपालिटिन काउंटियों की सदस्य संख्या 60-100 के बीच में होती है।

   सभी परिषदों (Councils) के सदस्य अपने में से एक सदस्य को चेयरमैन (Chairman) व एक सदस्य को उप चेयरमैन (Vice Chairman) चुनते हैं। कुछ स्थानीय इकाईयों में इन्हें लार्ड मेयर या मेयर के नाम से जाना जाता है।

   ii. ***स्कॉटलैंड (Scotland)*** - स्कॉटलैंड का स्थानीय शासन जो ग्रेट ब्रिटेन का एक महत्त्वपूर्ण अंग है, 1975 में पुनर्गठित किया गया। आज स्कॉटलैंड 9 क्षेत्रों (Regions) में बंटा हुआ है जो इंग्लैंड की काउंटियों के समान हैं। स्कॉटलैंड के ये सभी Regions, 53 जिलों में विभक्त हैं। ये जिले इंग्लैंड के नॉन मैट्रोपालिटिन जिलों के समान है और उन्हीं के समान कार्य करते हैं।

   स्कॉटलैंड का प्रत्येक जिला कुछ Communities में बंटा होता है। हालांकि ये Communities स्कॉटलैंड के स्थानीय शासन की तीसरी इकाई नहीं मानी जाती। जिला अधिकारी कुछ Projects को लागू करते समय इन Communities की सहायता लेते हैं।

   इसके साथ-साथ स्कॉटलैंड की 3 Island Communities - आरकने (Orkney), शैटलैंड (Shetland), एवं पश्चिमी आइसिल्स (Western Isles) जहां पर स्कॉटलैंड का Systems लागू नहीं होता वहां All purpose Authority System पाया जाता है। चुनाव उद्देश्य से प्रत्येक Regions कुछ चुनावी Divisions व प्रत्येक जिला, कुछ Wards में बंटा होता है।

   iii. ***वेल्स (Wales)*** - ग्रेट ब्रिटेन का अन्य महत्त्वपूर्ण अंग वेल्स है। वेल्स का स्थानीय शासन 8 काउंटियों में बंटा होता है जो 37 जिलों मे विभक्त हैं। ये सभी जिले लगभग 1000 Communities में पुनः विभक्त पाए जाते हैं। Community वेल्स स्थानीय शासन की निम्न स्तर की इकाई है। इसके साथ-साथ वेल्स स्थानीय शासन के जिले एवं काउंटी इंग्लैंड में स्थानीय शासन की मैट्रोपालिटिन जिलों एवं नॉन मैटोपोलिटिन काउंटियों से काफी हद तक क्रमशः समानता रखते हैं। इंग्लैंड की पेरिशों के स्थान पर स्कॉटलैंड में Communities पाई जाती है।

स्थानीय शासन के तीनों स्तरों पर- (काउंटी, जिले एवं Communities) के स्तर पर एक परिषद (Council) पाई जाती है जिन्हें Country Council, District Council एवं Community Council के नाम से जाना जाता है। इनके सदस्यों का चुनाव जनता के द्वारा किया जाता है और प्रत्येक का कार्यकाल 4 वर्ष का होता है।

2. **उत्तरी आयरलैंड (Northern Ireland)** - उत्तरी आयरलैंड के स्थानीय शासन का पुनर्गठन अक्टूबर 1973 में किया गया। इसका वर्तमान स्थानीय ढ़ांचा 26 जिलों एवं 2 वरों में विभक्त है। उत्तरी आयरलैंड में जिले मुख्य कस्बे सहित ग्रामीण इलाके से मिलकर बने हैं। इसके साथ-साथ कुछ प्राचीन एवं महत्वपूर्ण बातों को ध्यान में रखते हुए- वैलफास्ट (Belfast) एवं लन्डनडैरी (Londonderry) का बरो का दर्जा बनाए रखा गया है।

   उत्तरी आयरलैंड में जिले एवं वरों का प्रबंध जिला काउंसिल एवं वरो काउंसिल के द्वारा किया जाता है। इनके सदस्यों का कार्यकाल 4 वर्ष होता है। उत्तरी आयरलैंड में Proportional representation एवं Single transferable vote system को अपनाया गया है।

3. **लंदन का शासन (Government of London)** - किसी भी स्पष्ट की राजधानी स्थानीय शासन का ढ़ांचा उसके अन्य शहरों की तुलना में अलग होता है। उदाहरण के तौर पर भारत में दिल्ली का स्थानीय शासन मुंबई एवं कलकत्ता के स्थानीय शासन से भिन्न है। ठीक उसी प्रकार लंदन का स्थानीय ब्रिटेन के अन्य शहरों की तुलना में भिन्न है। 1974 के अधिनियम के अनुसार लंदन के स्थानीय शासन (अंदर व बाहर) को ग्रेट लंदन कहते थे जिसमें लंदन वरों एवं लंदन शहर आते थे। 1983 में मार्गेट थैचर सरकार ने ग्रेटर लंदन काउंसिल को समाप्त कर दिया। इसी कारण वर्तमान में लंदन का स्थानीय शासन दो अंगों से मिलकर बना है- (i) लंदन शहर (City of London), (ii) लंदन वरो (London Borough)।

   i. ***लंदन शहर*** *(City of London)* - लंदन शहर लगभग 2.6 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र है जो लंदन का दिल कहलाता है। यह मुख्य रूप से व्यापारिक एवं वित्तिय केंद्र है। यह एक कॉर्पोरेशन (Corporation) के द्वारा संचालित किया जाता है। कॉर्पोरेशन (Corporation) शहर का शासन- एक लार्ड मेयर व 3 काउंसिलों- the Court of Common Council, the Court of Alderman & Court of Common Hall के द्वारा चलाता है।

   कॉमन काउंसिल कोर्ट (The Court of Common Council) शहर की प्रशासनिक एवं कार्यकारी Body है जो शहर के शासन वास्तविक संचालन करती है। इसमे 132 पार्षद, 24 एल्डरमैन एवं 1 लार्ड मेयर (जो एक एल्डरमैन होता है) होते हैं। इसके पार्षद सीधे जनता द्वारा चुने जाते हैं। चुनाव उद्देश्य से शहर 25 वार्डों में विभक्त है। प्रत्येक वार्ड से पार्षदों की संख्या अलग-अलग है और ये सभी पार्षद एक एल्डरमैन को चयनित करते हैं।

   लंदन का लार्ड मेयर नगर का प्रथम नागरिक होता है जो शहर के विभिन्न Ceremonial, Traditional एवं Social कार्यों में भाग लेता है। Common Council की बैठकें पाक्षिक होती है लेकिन इनका अधिकतर कार्य समितियों के द्वारा निपटाया जाता है।

   The Court of Alderman लार्ड मेयर एवं 24 अन्य एल्डरमैनों से मिलकर बनती है। प्रत्येक वार्ड से एक एल्डरमैन, उस वार्ड के पार्षदों द्वारा चयनित किया जाता है। लार्ड मेयर, सभी एल्डरमैनों में Senior Most सदस्य होता है। इस कोर्ट का प्रमुख कार्य प्रति वर्ष नई लार्ड मेयर का चुनाव करना होता है। लेकिन यह कोर्ट उन्हीं दो Candidates जो Court of Common Hall के द्वारा Nominate किए गए हैं में से एक का चुनाव करती है।

   कॉमनहॉल कोर्ट (The Court of Common Hall), वास्तव में लार्ड मेयर, 24 एल्डरमैन, फ्रीमेन (Freeman), लायवरीमैन (Liverymen) व शहर के Shiffs की सभा है। यह कोर्ट हकीकत में एक Town Meeting है जो प्रतिवर्ष लार्ड मेयर के पद हेतू दो व्यक्तियों (Candidates) के नाम Nominate करती है।

   ii. ***लंदन वरो*** *(London Borough)* - लंदन के स्थानीय शासन का अन्य महत्त्वपूर्ण पहलू लंदन वरो है जो संख्या में 30 है। इनकी जनसंख्या 1,30,600 से लेकर 3,17,400 के बीच पाई जाती है। प्रत्येक लंदन वरो का प्रबंधन एक वरो काउंसिल के द्वारा किया जाता है जिसके सदस्य जनता द्वारा चुने जाते हैं। वरों काउंसिलों की सदस्य संख्या 30 से 60 के बीच होती है। वरो काउंसिल के चयनित सदस्य अपने में एक सदस्य का चुनाव मेयर के रूप में करते हैं जो काउंसिल का सभापतित्व करता है। लंदन वरो के सदस्यों का कार्यकाल 4 वर्ष होता है।

1983 में ग्रेटर लंदन काउंसिल के समाप्त कर देने के बाद इसके सभी कार्य London Borrough व Corporation of City of London को सौंप दिए गए हैं।

स्थानीय शासन संस्थाओं के कार्य और सेवाएं

(Functions & Services of Admn. Institutions)

स्थानीय संस्थाएं साधारण कानूनों द्वारा प्रदत्त शक्तियों के अधीन विभिन्न सार्वजनिक कार्यों अथवा विशेष शक्तियां पाने पर अतिरिक्त सेवाओं की व्यवस्था करती हैं। इन संस्थाओं के उत्तरदायित्व सामान्यतयाः इनके स्वरूप पर निर्भर करते हैं। इन सभी द्वारा अब तक सामान्यतयः जिन सेवाओं की व्यवस्था की जाती रही है, उन्हें निम्नांकित तीन समूहों में रखा जा सकता है -

1. **पर्यावरण संबंधी सेवाएं (Environmental Services)** - इनका उद्देश्य नागरिकों के पर्यावरण को सुधारना व अच्छा बनाना है। इन सेवाओं में उल्लेखनीय ये हैं- पानी के बहाव व नदी-नालियों की व्यवस्था, मार्गों की रोशनी, खाद्य पदार्थों का निरीक्षण, वातावरण की स्वच्छता, पार्कों और मनोरंजन-स्थानों की व्यवस्था, सार्वजनिक समाज-कंटकों (Public Nuisances) को दूर करना, आदि।
2. **रक्षा सेवाएं (Protective Services)** - इन सेवाओं में नागरिकों की अग्नि से रक्षा, पुलिस व्यवस्था व नागरिक प्रतिरक्षा आदि सम्मिलित हैं।
3. **व्यक्तिगत सेवाएं (Personal Services)** - इन सेवाओं का उद्देश्य व्यक्तियों की श्रेष्ठ शारीरिक, मानसिक व नैतिक शक्तियों को विकसित करना है। जच्चाखाने, शिशु-कल्याण, शिक्षा ग ह-निर्माण, मनोविनोद की व्यवस्था आदि के कार्य इन सेवाओं के अंतर्गत शामिल है। सेवाओं के इसी समूह में कुछ स्वास्थ्य-सेवाएं; बूढ़ों और अपाहिजों की सेवा; पुस्तकालयों, अजायबघर व कला-दीर्घायों (Art Gallaries) आदि की व्यवस्था भी सम्मिलित है। कुछ स्थानीय संस्थाएं व्यापार-कार्य भी करती हैं तथा यातायात, संचार, बंदरगाहों की व्यवस्था आदि कार्यों का लाभ-व त्ति के आधार पर संपादन किया जाता है परंतु ऐसा अब कम होता है।

   ब्रिटिश स्थानीय शासन की यह विशेषता है कि पुलिस स्थानीय संस्थाओं के अधीन है। ब्रिटेन में प्रारंभिक व माध्यमिक शिक्षा स्थानीय शासन-संस्थाओं के अधिकार-क्षेत्र में है। सार्वजनिक कल्याण-सेवाओं के लिए मुख्यतः ये ही संस्थाएं उत्तरदायी हैं।

ब्रिटिश स्थानीय शासन की विशेषताएं

(Characteristics of British Local Self-Government)

ब्रिटिश स्थानीय शासन की प्रमुख विशेषताएं निम्नांकित हैं-

1. **विकासशील** - ब्रिटिश स्थानीय शासन का वर्तमान रूप सदियों के क्रमिक विकास का परिणाम है। लोगों की राजनीतिक चेतना के विकास के साथ-साथ इसने प्रगति की है। यद्यपि विकास की यह प्रक्रिया अधिकांशतः अनियंत्रित और अनियोजित रही है तथापि स्थानीय शासन-संस्थाओं ने अपने महत्त्व और उपयोगिता को पूरी तरह कायम रखा है। इसके अतिरिक्त उनकी वर्तमान व्यवस्था में प्राचीनता के भी पर्याप्त दर्शन होते हैं। वर्तमान में उनके प्राचीन स्वरूप की विद्यमानता यह अनुभूति करा देती है कि वे ऐतिहासिक विकास के परिणाम हैं।
2. **लिखित कानून द्वारा रचना** - ब्रिटिश स्थानीय शासन की रचना लिखित कानूनों द्वारा हुई है। संसद ने समय-समय पर अधिनियम पारित कर स्थानीय संस्थाओं के संविधान और उत्तरदायित्वों का स्वरूप निर्धारित किया है। वे ऐसा कोई कार्य नहीं कर सकतीं जिसे करने के लिए कानून द्वारा उन्हें शक्ति नहीं सौंपी गई हो।
3. **विकेंद्रीकरण** - ब्रिटिश स्थानीय सब-शासन की तीसरी विशेषता विकेंद्रीकरण की है। वर्तमान व्यवस्था में काउंटी बरोज को पूर्णतः स्वतंत्र निकाय बना दिया गया है। कुछ अपवादों को छोड़कर काउंटी द्वारा शेष भाग की सेवा की जाती है। नगरपालिका बरोज को भी अधिकांश स्वतंत्र शक्तियां प्राप्त हैं। उनके क्षेत्र में कुछ कार्य काउंटी परिषद द्वारा संपन्न किए जाते हैं, पर विकेंद्रीकरण का यह रूप सैद्धांतिक अधिक है, व्यावहारिक कम। फाइनर के शब्दों में, "हमारे यहां विकेंद्रीकरण नहीं है, वरन् पूर्ण स्वतंत्रता का एक छोटा अंश है जो मुख्यतः राष्ट्रीय इच्छा पर आधारित संगठित एकीकरण

के संयोग से, स्वतंत्र इच्छा द्वारा इसे स्थानीय परिस्थितियों के अनुकूल, क्रियान्वित करने का प्रयास करता है। इस व्यवस्था को क्या नाम दिया जाना चाहिए, हम नहीं जानते।"

4. **समन्वयात्मक एकीकरण का विकास** - ब्रिटेन में राष्ट्रीय एवं स्थानीय सत्ताओं के बीच समन्वय की द ष्टि से एकीकरण का जन्म हो रहा है। यही एकीकरण वर्तमान परिस्थितियों की एक अनिवार्य उपज है। केंद्रीय सरकार की अतिशय नियंत्रण की मांग और स्थानीय सरकारों की अतिशय स्वतंत्रता की मांग के बीच अब पहले जैसे विरोध की स्थिति नहीं रही है। आज दोनों सरकारें एक-दूसरे की सहायक और भागीदार (Partners) बन गई हैं। दोनों ने राष्ट्रीय जीवन को उन्नत बनाना अपना उद्देश्य बना लिया है।

5. **समिति व्यवस्था का प्रयोग** - ब्रिटिश स्थानीय प्रशासन में समिति व्यवस्था का इतना प्रयोग किया जाता है कि समितियों को स्थानीय सरकार के वास्तविक कारखाने (Factories) कहा जाने लगा है। ये समितियां मुख्यतया पांच प्रकार की होती हैं- स्थानीय समितियां (Standing Committees), सुझाववादी समितियां (Persuasion Committees), विशेष एवं सामयिक समितियां (Special and Adhoc Committees), कानून समितियां (Statutory Committees) और उप-समितियां (Sub-Committees)। इन विभिन्न समितियों द्वारा स्थानीय सत्ताएं अपने विविध उत्तरदायित्वों को संपन्न करती हैं। वित्तिय समितियों द्वारा विभिन्न स्थानीय निकायों के बीच समन्वय स्थापित किया जाता है।

6. **दलीय राजनीति** - सैद्धांतिक रूप से अनुचित होते हुए भी दलीय राजनीति स्थानीय शासन में पूरी तरह समाविष्ट हो गई है। स्थानीय सत्ताओं में दलीय राजनीति का सक्रिय रूप एक स्पष्ट तथ्य है। उनमें राजनीतिक दल भी भली प्रकार संगठित रूप में पाए जाते हैं। फिर भी कुछ स्थानीय संगठन राजनीतिक दलों के हस्तक्षेप से विशेष प्रभावित नहीं रहते, उदाहरणार्थ देहाती क्षेत्र के कुछ संविधान।

7. **एकरूपता की कमी** - ब्रिटिश स्थानीय शासन-व्यवस्था में एकरूपता की कमी है। एक इकाई दूसरी से संविधान और बनावट की द ष्टि से पर्याप्त भिन्न है। इकाइयों के नियम और उप-नियम भी अलग-अलग हैं। कोई स्थानीय निकाय जनसंख्या के आधार पर, तो कोई प्रदेश के आधार पर और कभी कोई वित्त या किसी अन्य आधार पर संगठित किया जाता है। आधुनिक प्रवत्ति एकरूपता स्थापित करने की है। इस प्रयास के मूल में यह भावना निहित है कि विभिन्न स्थानीय संस्थाओं के अधिकार-क्षेत्र के निवासियों को जीवन-स्तर केंद्रीय सरकार द्वारा निर्धारित स्तर से नीचा न हो। 1972 का अधिनियम इस दिशा में एक बड़ा कदम है।

अध्याय-20

अमेरिका का स्थानीय शासन

(Local Government of USA)

स्थानीय स्वशासन से लोकतंत्र का प्रशिक्षण मिलता है, अतः इसे लोकतंत्र की प्रथम पाठशाला कहा गया है। इसके माध्यम से लोगों में प्रशासन के प्रति रुचि उत्पन्न होती है और सहयोग बढ़ता है। इससे प्रशासन में दक्षता उत्पन्न होती है क्योंकि स्थानीय क्षेत्रों के प्रतिनिधि अपने क्षेत्र की समस्याओं को अच्छी तरह समझते हैं और केंद्रीय अथवा प्रांतीय अधिकारियों की अपेक्षा उनको अच्छी तरह हल कर सकते हैं। अमेरिका में स्थानीय शासन का जो रूप है, वह अमेरिकी लोकतंत्रीय परंपरा के अनुकूल है।

अमेरिकी स्थानीय स्वशासन की विशेषताएं

(Characteristics of American Local Self-Govt.)

1. अमेरिका में स्थानीय शासन को व्यावसायिक द ष्टि से देखा जाता है। कौंसिल-मैनेजर योजना का विकास अच्छा प्रमाण है।
2. राज्य-स्तर से नीचे प्रशासन की इकाइयां एक प्रकार से राज्य-शासन की प्रतिनिधि होती हैं। उनकी शक्तियों और संगठन की परिभाषा राज्य के कानूनों द्वारा की गई है।
3. स्थानीय शासन का गठन न केवल प्रत्येक राज्य में भिन्न प्रकार का है बल्कि एक ही राज्य में कई स्थानों पर कई प्रकार के स्थानीय निकाय (Local Bodies) उपलब्ध हैं।
4. विभिन्न राज्यों में विभिन्न इकाईयां कहां तक स्वायत्तता का उपभोग करें, इस संबंध में अलग-अलग व्यवस्था है।
5. भिन्न राज्यों में न केवल अनेक प्रकार की स्थानीय संस्थाएं हैं बल्कि स्थानीय समुदाय को भी यह निर्धारित करने की स्वतंत्रता है कि वे अपने यहां किस प्रकार की संस्था स्थापित करेंगे।

स्थानीय स्वशासन की इकाईयां

(Units of Local Self-Govt.)

अमेरिकी स्थानीय शासनिक संस्थाएं ब्रिटिश परंपरा की देन है। ये संस्थाएं औपनिवेशिक काल में ही विद्यमान थीं, लेकिन समय के साथ इनमें अनेक परिवर्तन हुए और अभिनव प्रणालियों का जन्म हुआ। आज अमेरिका में, स्थानीय शासन इकाईयां इतनी अधिक हैं तथा उनमें परस्पर इतनी विभिन्नता है कि एक विदेशी उन्हें देख कर भ्रमित हो जाता है।

संयुक्त राज्य अमेरिका में स्थानीय शासन-संस्थाओं को सामान्यतः दो वर्गों में बांटा जाता है- (i) नगर-शासन (City Government) एवं (ii) ग्राम्य शासन (Rural Government)। स्थानीय शासन की सबसे बड़ी इकाई काउंटी (County) है; समस्त देश में लगभग तीन हजार काउंटियां हैं। इन तीन हजार काउंटियों को अधिकतर पुनः दस हजार कस्बों (Towns) या उपनगरों (Township) में विभाजित किया गया है और इन दस हजार कस्बों या उपनगरों में से लगभग सोलह हजार नगर प्रशासनिक इकाईयां (Urban Municipalities) स्थापित की गई हैं, जिन्हें नगर (Cities) कहते हैं। स्थानीय शासन की नियमित इकाईयों के अतिरिक्त अमेरिका में लगभग आठ हजार अन्य प्रकार की (Miscellaneous) इकाईयां हैं, जिन्हें विशेष जिले (Special Districts) कहा जाता है। ये इकाईयां विशेष प्रकार के कार्य करती हैं, जैसे- सिंचाई अथवा मल-प्रवाह (Irrigation and Sewage) के कार्य आदि। इसके अतिरिक्त अमेरिका में लगभग एक लाख शिक्षक-क्षेत्र या शिक्षा संबंधी जिले हैं। इस प्रकार

संपूर्ण अमेरिका में डेढ़ लाख के आस-पास स्थानीय प्रशासनिक निकाय (Local Bodies) हैं जिनके नाम सभी राज्यों में एक से नहीं हैं।

काउंटी

(County)

यह स्थानीय शासन की सबसे बड़ी इकाई है। इनकी संख्या लगभग तीन हजार है। प्रत्येक राज्य काउंटियों में बांटा गया है। सभी काउंटियों का क्षेत्रफल समान नहीं है। साधारणः एक काउंटी का क्षेत्रफल लगभग एक हजार वर्ग मील है। प्रायः प्रत्येक काउंटी के प्रशासन का संचालन एक समिति अथवा परिषद् (Council or Board) करती है जिनमें 4 से लेकर 50 तक सदस्य होते हैं। दो-तिहाई काउंटी परिषदों या समितियों (County Boards or Councils) में 6 से कम की सदस्य होते हैं। काउंटी-परिषद् या समिति का कार्य नियम बनाना है। यह काउंटी-शासन के कतिपय प्रशासनिक अधिकारों का भी प्रयोग करती है। काउंटी-शासन में समिति या परिषद् के अतिरिक्त कुछ प्रशासनिक अधिकारी भी होते हैं, जैसे शैरिफ (Sheriff), लिपिक (Clerk), अभियोग-संचालक, वकील (Prosecutor Attorney) तथा म त्युनैदानिक (Coroner) आदि। ये सब अधिकारी निर्वाचित होते हैं और उन प्रशासनिक कार्यों को संपन्न करते हैं जिन्हें परिषद् अथवा समिति स्वयं नहीं करती। काउंटी के न्यायाधीश भी अलग निर्वाचित होते हैं या नियुक्त किए जाते हैं।

टाउन

(Town)

अमेरिका के कई राज्यों में काउंटी को पुनः टाउनों (Towns) और नगरों (Cities) में विभाजित किया गया है। टाउन देहाती स्थानीय शासन के मुख्य निकाय हैं और नगर (Cities) शहरी स्थानीय शासन के। टाउन या कस्बे को वास्तव में एक ग्राम या देहात ही समझा जाना चाहिए जिसके साथ-साथ आस-पास की भूमि या प्रदेश संबद्ध रहता है। टाउनों में ही देहाती स्थानीय शासन का क्रियात्मक स्वरूप देखने को मिलता है और वहीं हमको वास्तविक प्रत्यक्ष लोकतंत्र देखने को मिलता है। टाउन का शासन एक कस्बा या टाउन समिति (Town Council) द्वारा संचालित किया जाता है जिसमें सभी अधिकारी मतदाता भाग लेते हैं। इस समिति की बैठक प्रायः वार्षिक होती है, लेकिन आवश्यकता पड़ने पर लेते हैं। इस समिति की बैठक प्रायः वार्षिक होती है, लेकिन आवश्यकता पड़ने पर अधिक बैठकें भी आयोजित हो सकती हैं। ये समितियां नियम बनाने और बजट स्वीकार करने का कार्य करती हैं तथा अपने-अपने क्षेत्र के लिए विशिष्ट चयनित व्यक्तियों की एक परिषद् (Board of Selectmen) जिसे टाउन समिति (Town Council) भी कहते हैं तथा एक शिक्षा-मंडल (School Board) का निर्वाचन भी करती हैं। इसके अतिरिक्त ये कुछ अन्य अधिकारियों का भी चयन करती हैं। इन सभी का कार्य टाउन-सभा (Town Meeting) के कार्यकाल के लंबे विराम-काल में स्थानीय शासन संचालन करना होता है।

टाउनशिप

(Township)

संयुक्त राज्य अमेरिका में कुछ भागों में आम स्वशासन की इकाईयां टाउनशिप (Township) कहलाती हैं। टाउनशिप का प्रबंध छोटी-सी निर्वाचित परिषद् (Board) द्वारा होता है जिसके प्रमुख अध्यक्ष को नगर-प्रमुख (Mayor) या सभापति (Chairman) कहा जाता है। मेयर निर्वाचित भी हो सकता है और परिषद् के सदस्यों में से भी हो सकता है तथा उसको विशेष अधिकारों से युक्त भी किया जा सकता है। टाउनशिप की एक परिषद् एक नियम निर्मात्री संस्था है जो कर्मचारियों को नियुक्त करती है और बजट स्वीकार करती है।

नगर

(City)

अमेरिका में स्थानीय शासन की सबसे अधिक क्रियाशील और दिलचस्प इकाईयां नगर (Cities) हैं जिन्हें म्युनिसिपैलिटियों (Muncipalities) में संगठित कर लिया गया है। टाउन एवं टाउनशिप की तरह नगर भी काउंटी के नगरीय उपविभाग होते हैं। इनकी संख्या लगभग 16 हजार है। अमेरिका में नगर (City) की प्रायः वही स्थिति है जो इंग्लैंड में बरो (Burrough) या काउंटी

बरो (County Burrough) की है। नगर इकाइयों में वास्तव में देहाती स्थानीय शासनिक इकाईयों की अपेक्षा कहीं अधिक स्वशासन रहता है।

प्रत्येक नगर का शासन-प्रबंध एक अधिकार-पत्र (Charter) के अनुसार होता है, जिसे या तो राजकीय व्यवस्थापिका द्वारा प्रदान किया जाता है या जिसे नगर-सभा अपने नगर-स्वशासन के अधिकार के अंतर्गत स्वयं निर्धारित करती है। नगर के लिए इस अधिकार-पत्र का वही महत्त्व है जो किसी राज्य या संपूर्ण देश के लिए संविधान का है। अधिकार-पत्रों (Charters) के द्वारा साधारणतः तीन प्रकार के स्थानीय शासनों की स्थापना होती है, जिनके नाम निम्नांकित हैं-

1. मेयर कौंसिल फॉर्म (Mayor Council Form),
2. कमीशन फॉर्म (Commission Form), एवं
3. कौंसिल मैनेजर फॉर्म (Council Manager Form)।

1. **मेयर कौंसिल फॉर्म (Mayor Council Form)** - इनमें विभिन्न क्षेत्रों में जनता द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधियों की एक परिषद (Council) होती है। उसका अध्यक्ष मेयर होता है। इसके भी दो मुख्य रूप होते हैं- अशक्त मेयर (Weak Mayor) और शक्तिसंपन्न मेयर (Strong Mayor)। प्रथम प्रकार के मेयर की शक्तियां बहुत ही कम होती हैं। वह परिषद का सभापति होता है। प्रशासन के सब विभाग किसी न किसी आयोग (Commission) या परिषद (Board) के अधीन होते हैं। जिनके सदस्य या तो प्रत्यक्ष रूप से जनता द्वारा चुने जाते हैं या कौंसिल द्वारा। मेयर कुछ मुख्य-मुख्य पदों की नियुक्ति करता है, पर यह आवश्यक है कि उनकी कौंसिल द्वारा पुष्टि कराना आवश्यक होता है। कुछ विषयों में मेयर को विशेषाधिकार (Veto) प्राप्त होता है, लेकिन कौंसिल उसके निषेध की दो-तिहाई बहुमत से समाप्त कर सकती है। सिद्धांत रूप से मेयर का कार्य विभिन्न विभागों का नियंत्रण और निरीक्षण करना है, लेकिन व्यवहार में वह ऐसा नहीं कर पाता क्योंकि उसे पर्याप्त अधिकार प्राप्त नहीं हैं। दूसरे प्रकार के अर्थात् शक्तिशाली मेयर टाइप (Strong Mayor Type) के स्थानीय शासन का आधार शक्तिप थक्करण का सिद्धान्त है। कौंसिल नीति का निर्धारण करती है और मेयर जो जनता द्वारा निर्वाचित होते हैं, कार्यपालिका शक्तियुक्त होते हैं। मेयर ही महत्वपूर्ण अधिकारियों को नियुक्त करता है और उन्हें अपने अधिकार से हटा भी सकता है। नगर-इकाई के सभी कर्मचारियों की नियुक्ति उसी के द्वारा होती है और नगर के बजट पर उसका नियंत्रण रहता है। उसे कौंसिल के निर्णयों पर कुछ प्रतिबंध के अधिकार भी होते हैं। इस प्रकार शक्तिवान मेयर (Strong Mayor) ही वस्तुतः नगर के प्रशासन का अध्यक्ष होता है।

2. **कमीशन फॉर्म (Commission Form)** - नगर की इकाई का यह वह रूप है जहां एक आयोग नगर-स्वशासन का संचालन करता है। इसके द्वारा अशक्त मेयर वाले नगर के शासन की कमियां दूर हो जाती हैं और शासन का रूप सरल हो जाता है। नगर-इकाई के इस रूप में नगर की व्यवस्थापन और प्रशासन संबंधी शक्तियां एक छोटे आयोग में निहित होती हैं जिसके सदस्य लगभग पांच होते हैं और जिन्हें जनता चुनती है। इसमें से एक आयोग का सभापति अथवा मेयर होता है। संपूर्ण आयोग नीति-निर्वारण करता है और आयोग का प्रत्येक सदस्य एक प्रशासनिक विभाग का अध्यक्ष होता है, अर्थात् नगर का संपूर्ण प्रशासन उतने ही अंगों में विभक्त होता है, जितने सदस्य नगर के आयोग में होते हैं और आयोग का प्रत्येक सदस्य एक विभाग का कार्य-भार संभालता है। इस पद्धति के दो मुख्य लाभ हैं- (i) इसमें शक्तियों और उत्तरदायित्वों का विभाजन नहीं होता; एवं (ii) पांच या सात व्यक्ति सामंजस्य के साथ कार्य कर सकते हैं। यह बात 50-60 या अधिक व्यक्तियों के लिए संभव नहीं हो सकती लेकिन साथ ही इस पद्धति के दोष भी हैं। पहला दोष यह हे कि आयोग के सदस्यों की संख्या इतनी कम है कि उसमें जनता का पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं हो पाता। दूसरा दोष यह है कि इसमें सभी सदस्यों की शक्तियां समान होती हैं और कोई भी सदस्य अर्थात् कमिश्नर दूसरों से उच्च नहीं होता जो सब के कार्यों में समन्वय रख सके। वस्तुतः इस पद्धति का सबसे बड़ा दोष यह है कि यदि आयोग के सदस्यों के बीच किसी प्रश्न पर गतिरोध पैदा हो जाए तो उसे कोई नहीं सुलझा सकता।

   नगर प्रशासन का यह रूप अधिक बड़े नगरों में लोकप्रिय नहीं है और ऐसे किसी भी नगर में प्रायः इस पद्धति को नहीं अपनाया गया है जिसकी जनसंख्या 50 हजार से अधिक हो। यह पद्धति 25 हजार के आसपास की आबादी वाले छोटे नगरों में ही लोकप्रिय है।

3. **कौंसिल मैनेजर फॉर्म (Council Manager Form)** - 1908 में इस प्रकार की संस्था थी परंतु अब यह व्यापक रूप से नगरों में प्रचलित है। इस पद्धति में नेता-निर्धारण का कार्य तो कौंसिल करती है तथा प्रशासन का उत्तरदायित्व एक विशेष योग्यता प्राप्त कुशल अधिकारी-मैनेजर पर होता है। मैनेजर साधारणतः कौंसिल द्वारा नियुक्त किया जाता है। नियुक्ति के बाद दैनिक प्रशासन के लिए वह लगभग पूर्णतः उत्तरदायी होता है। कौंसिल मैनेजर फार्म वस्तुत कमीशन फॉर्म का ही संशोधित रूप है और उसका मुख्य ध्येय कुशल प्रशासन है। अमेरिका में प्रचलित उपर्युक्त सभी नगर-प्रशासन प्रणालियों मे कौंसिल मैनेजर फॉर्म सबसे अधिक सफल प्रणाली मानी जाती है। इसकी सफलता का मुख्य कारण यही है कि इस प्रणाली में नीति-निर्माण एवं प्रशासन को प थक कर देने से प्रशासन में विशेष कुशलता आ जाती है।

स्थानीय स्वशासन का कार्य-क्षेत्र
(Justice of Local Self-Govt)

अमेरिका में स्थानीय शासन के अंतर्गत सामान्यतः पुलिस, अग्निरक्षा, स्वास्थ्य एवं सफाई, सार्वजनिक मार्ग, शिक्षणालयों का संचालन, सार्वजनिक उपयोगिता के क्षेत्रों की अपेक्षा नगरीय क्षेत्रों में अधिक विकसित है। लेकिन दोनों का कार्य लगभग एक-सा है। स्थानीय प्रशासन के अनेक कार्यों में राज्य सरकारें भी प्रायः प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से भाग लेती है। वस्तुतः स्थानीय शासन अमेरिकी शासन व्यवस्था का एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण अंग है जो राज्य की विभिन्न जातियों व वर्गों की सुख-शांति के लिए आवश्यक है।

अध्याय-21

फ्रांस का स्थानीय शासन

(Local Government of France)

फ्रांस की स्थानीय शासन-प्रणाली में एक विचित्र विरोधाभास है। यद्यपि राष्ट्रीय स्तर पर सरकार का आधार जनतांत्रिक है, स्थानीय स्तर पर बहुत दूर तक केंद्रीकरण का प्रभाव है। इस द ष्टि से अमेरिकी तथा ब्रिटिश स्थानीय शासन-प्रणालियां अधिक जनतांत्रिक कही जा सकती है। फ्रांसीसी स्थानीय इकाईयों को स्थानीय स्वशासन के क्षेत्र में बहुत कम अधिकार प्राप्त है। अतः फ्रांस में स्थानीय शासन (Local Government) का इतिहास वस्तुतः "स्थानीय प्रशासन" (Local Administration) का इतिहास है।

फ्रांस की राज्यक्रांति के पूर्व वहां राजतंत्र था। स्थानीय इकाई का प्रशासन सरकारी कर्मचारियों के हाथ में था। ऐसी स्थिति में स्वभावतः संपूर्ण देश की बागडोर राजा के हाथ में थी। 1789 ई० की क्रांति के बाद स्थानीय शासन की इकाईयों को विकेंद्रित किया गया और उन्हें प्रजातांत्रिक ढर्रे पर संवारा गया। राज्यक्रांति के पहले स्थानीय शासन की इकाईयों को 'जेनरलाइट' (Generalite) कहा जाता था। क्रांति के बाद 'जेनरलाइट' के स्थान पर तीन तरह की इकाईयां कायम की गयीं। ये इकाईयां डिपार्टमेंट (Department), एरोण्डाइजमेंट (Arrondisement) और कम्यून (Commune) कहलायीं। डिपार्टमेंटों तथा कम्यूनों में स्थानीय लोगों द्वारा निर्वाचित परिषदों (Councills) की व्यवस्था थी। स्थानीय शासन के प्रशासकीय कार्य स्थानीय लोगों द्वारा निर्वाचित प्रशासकीय अधिकारियों द्वारा चलाये जाते थे, लेकिन स्थानीय शासन की यह प्रजातांत्रिक एवं विकेंद्रित व्यवस्था अधिक दिनों तक नहीं रह सकी। 1800 ई० में नेपोलियन बोनापोर्ट ने प्रजातांत्रिक व्यवस्था को बिल्कुल उखाड़ फेंका और उसके स्थान पर पूर्ण केंद्रित व्यवस्था कायम की। यही व्यवस्था लगभग अभी भी है। इस व्यवस्था में प्रत्येक डिपार्टमेंट में एक प्रिफेक्ट (prefect) होता है जो राष्ट्रीय सरकार का एजेंट होता है। प्रिफेक्ट के हाथ में काफी शक्ति संचित कर दी गई है। फिर भी, फ्रांस के लोग सतत् प्रयत्नशील रहे हैं कि केंद्रीय शासन की बागडोर ढीली की जाय तथा स्थानीय इकाइयों को अधिक-से-अधिक स्वशासन का अधिकार दिया जाय। इस ओर प्रगति भी हुई। अब कम्यूनों तथा डिपार्टमेंटों में स्थानीय लोगों द्वारा निर्वाचित परिषदों (Councils) की व्यवस्था कर दी गई है। प्रत्येक कम्यून की परिषद को अपने प्रशासकीय अधिकारी मेयर को चुनने का अधिकार दिया गया है जिसके हाथ में बहुत-से प्रशासकीय अधिकार हैं। फिर भी, स्थानीय इकाईयों पर प्रिफेक्ट का काफी कड़ा नियंत्रण है। वह राष्ट्रीय सरकार का एजेंट है।

विशेषताएं
(Features)

फ्रांसीसी स्थानीय शासन की निम्नलिखित विशेषताएं हैं-

1. **केंद्रीकरण (Centralisation)** - राष्ट्रीय सरकार लंबी प्रजातंत्रिक परंपरा के बावजूद फ्रांस में स्थानीय शासन में प्रजातांत्रिक तथा केंद्रीकरण का अभाव है। स्थानीय सरकार पर केंद्र का कड़ा नियंत्रण है। स्थानीय लोगों को प्रशासकीय मामलों में निर्णय करने का अधिकार प्राप्त नहीं है। इस द ष्टि से ब्रिटेन तथा अमेरिका की स्थानीय सरकार की इकाईयां अधिक स्वतंत्रता का उपभोग करती हैं। अतः फ्रांस की स्थानीय शासन-प्रणाली ब्रिटेन तथा अमेरिका की अपेक्षा कम प्रजातांत्रिक है। प्रो० मुनरो का कहना है कि "फ्रांसीसी स्थानीय शासन-प्रणाली की केंद्रीकरण ही मौलिक विशेषता है और उसकी द ढ़ता के कारण स्थानीय शासन-संगठन एक पिरामिड-सा बन गया है।" कम्यून से लेकर ग ह-मंत्रालय

तक शासन की इकाईयां श्रंखलाबद्ध हैं। स्थानीय इकाईयों का अपना कोई अलग अस्तित्व नहीं है। स्थानीय इकाइयां उसी तरह अपना कार्य करती हैं जिस तरह ग ह-मंत्रालय आदेश देता है। मुनरो के शब्दों में, ""पेरिस में ग ह-मंत्री बटन दबाता है और शेष कार्य प्रिफेक्ट, उप-प्रिफेक्ट तथा मेयर कर लेते हें। सभी तार पेरिस की ओर दोड़ते हैं।"

2. **स्वायत्तता का अभाव (Absence of Autonomy)** - फ्रांस के स्थानीय शासन में स्वायत्तता का अभाव है। स्थानीय लोगों को स्थानीय मामलों के प्रशासन में बहुत स्वतंत्रता नहीं है। हर मामले में केंद्रीय अधिकारियों का निर्णय लादा जाता है। अतः ब्रिटेन, अमेरिका तथा भारत की स्थानीय इकाईयां जितनी भी स्वतंत्रता का उपभोग करती हैं, फ्रांस की स्थानीय इकाईयां उसके पसंगे में भी नहीं कर पाती हैं। इस संबंध में लार्ड ब्राइस का कथन है कि "पता नहीं क्यों, जहां चार करोड़ लोगों के विचार पर राष्ट्रीय मामले मे विश्वास किया जाता है, वहां डिपार्टमेंट के लोगों को अपने आंतरिक मामले में विचार व्यक्त करने की स्वाधीनता नहीं दी जाती है।" इसी आशय का विचार एक भूतपूर्व फ्रांसीसी राष्ट्रपति पॉल डेस्टचेनल ने व्यक्त किया है- "फ्रांस में शिखर पर प्रजातंत्र है, लेकिन आधार साम्राज्य है।"

3. **स्थानीय अधिकारियों का द्वैध रूप** - फ्रांस के स्थानीय शासन की विशेषता यह है कि वहां के अधिकारियों को दोहरा कार्य करना पड़ता है। स्थानीय शासन के अधिकारी एक ओर इलाके के प्रतिनिधि की हैसियत से कार्य करते हैं। इस पक्ष में वे स्थानीय हितों के संरक्षक होते हैं। उनका दूसरा कार्य राज्य के एजेंट के रूप में है। अपने क्षेत्र में वे राज्य के अधिकारी होते हैं। इस प्रकार उन्हें स्थानीय तथा राष्ट्रीय हितों का समन्वय करना पड़ता है। अन्य किसी भी क्षेत्र में स्थानीय शासन के अधिकारियों को ऐसा दोहरा कार्य नहीं करना पड़ता है।

4. **एकरूपता (Uniformity)** - फ्रांस की स्थानीय शासन-प्रणाली की एक अन्य विशेषता इकाइयों की एकरूपता है। स्थानीय सरकार की इकाईयां चाहे वह शहरी हों या देहाती, संगठन, कार्यों एवं शक्तियों में एक समान है। ब्रिटेन, अमेरिका तथा भारत में स्थानीय शासन की इकाइयों में यह विशेषता नहीं पायी जाती है। उन देशों में शहरी या देहाती क्षेत्रों में अलग-अलग प्रकार की स्थानीय सरकारों का संगठन है। यहां तक कि शहरों में भी कई तरह की इकाईयां प्रचलित हैं, लेकिन फ्रांस में ये इकाईयां समरूप हैं। केंद्रीयकरण के कारण उनकी समरूपता और भी अक्षुण्ण बन गयी हैं।

5. **श्रंखलाबद्धता (Hierarchical)** - फ्रांस की स्थानीय सरकारें श्रंखलाबद्ध हैं। ग ह मंत्रालय से लेकर कम्यून तक की इकाईयां एक ही पंक्ति में सुसज्जित हैं। कोई इकाई पंक्ति से अलग स्वतंत्र अस्तित्व नहीं रखती है। इसके अतिरिक्त विपरीत ब्रिटेन तथा अमेरिका की स्थानीय सरकारों की इकाईयां हैं।

स्थानीय शासन का संगठन
(Organisation of the Local Administration)

फ्रांस के स्थानीय शासन की इकाईयां एक पिरामिड (Pyramid) का रूप प्रस्तुत करती हैं जिसका गुम्बज ग ह-मंत्रालय (Ministry of the Interior) है। संपूर्ण फ्रांस डिपार्टमेंटों (Departments) में बंटा हुआ है। स्थानीय शासन की यह सबसे बड़ी इकाई है। फ्रांस में कुल 100 डिपार्टमेंट हैं। इन डिपार्टमेंट को एरोण्डाइजमेंटों (Arrondisements) में बांटा गया है। फिर 280 एरोण्डाइजमेंटो को 40000 कम्यूनों (Communes) में बांटा गया है। इस प्रकार स्थानीय शासन की सभी इकाईयां श्रंखलाबद्ध हैं।

प्रिफेक्ट

1. **डिपार्टमेंट (Departments)** - फ्रांस की स्थानीय शासन-प्रणाली में यह सबसे महत्त्वपूर्ण इकाई है। प्रत्येक डिमार्टमेंट में एक प्रिफेक्ट होता है। वह डिपार्टमेंट का प्रशासकीय अधिकारी है। उसकी नियुक्ति राष्ट्रपति ग ह-मंत्री की सिफारिश पर करता है। प्रिफेक्ट के कार्य के दो पहलू हैं। राष्ट्रीय सरकार के प्रतिनिधि के रूप में उसका प्रमुख कार्य डिपार्टमेंट में शांति एवं सुरक्षा की व्यवस्था करना है। इसके अतिरिक्त कर वसूली, शिक्षा, स्वास्थ्य, यातायात, जन-निर्माण तथा जन-कल्याण कार्य का निरीक्षण, निर्देशन तथा नियंत्रण करना है। केंद्रीय सरकार के प्रत्येक मंत्रालय का वह प्रत्यक्ष प्रतिनिधि है तथा डिपार्टमेंट में सभी मंत्रालयों के कार्यों का समन्वय वही करता है। स्थानीय सरकार का वह प्रधान कार्यपालक है। इस हैसियत से वह डिपार्टमेंट के अंतर्गत सभी इकाईयों पर नियंत्रण करता है। डिपार्टमेंटों की स्थानीय

फ्रांस में स्थानीय शासन की एजेंसियां
(Agencies of Local Government in France)

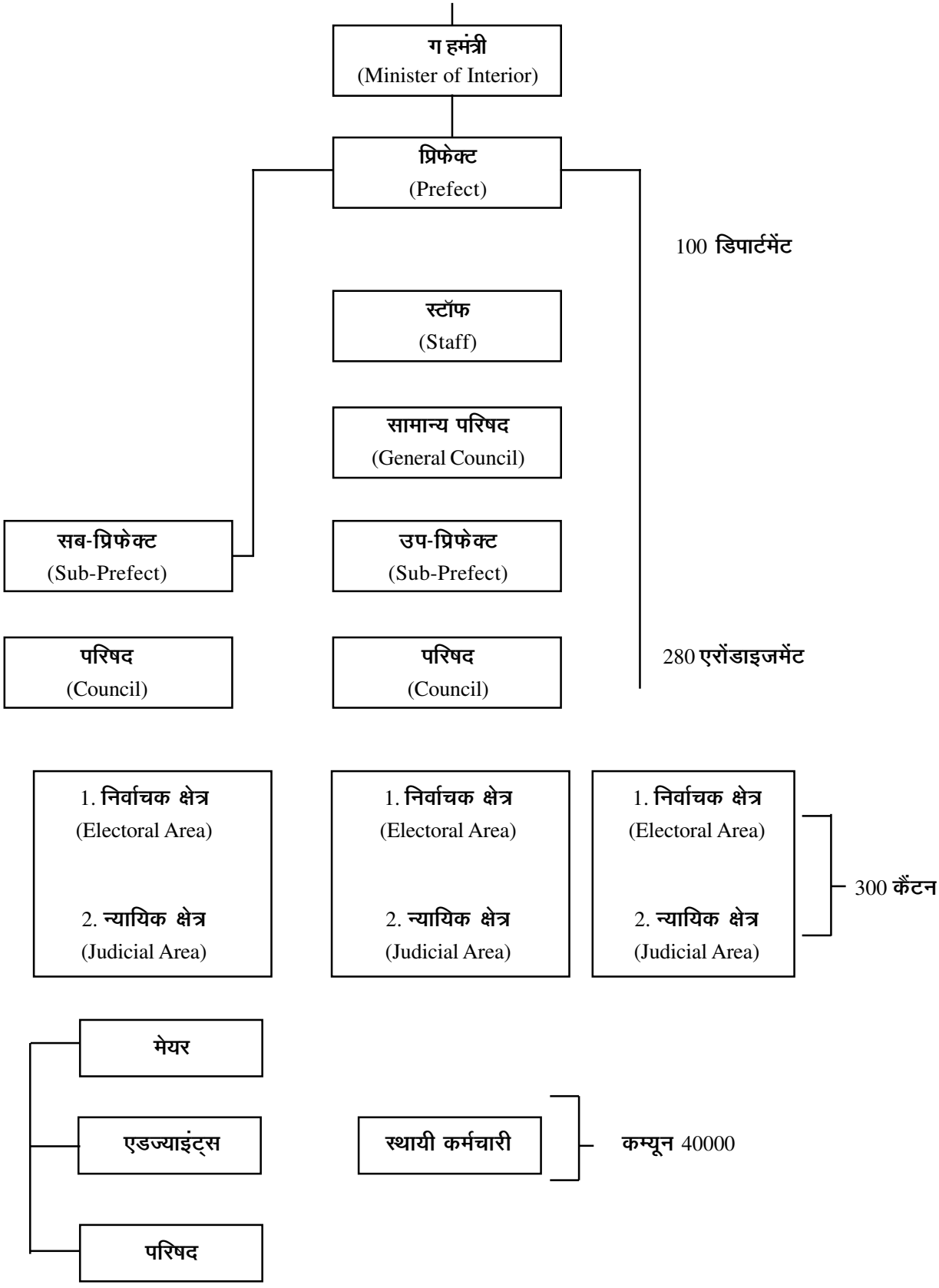

सेवाओं के लिए बहुत-से अधिकारियों की नियुक्ति तथा उनके कार्यों की देखरेख करता है। अपने अधीनस्थ एरोण्डाइजमेंटों तथा कम्यूनों के प्रशासन की देख-रेख प्रिफेक्ट करता है। प्रिफेक्ट कम्यूनों के बजट स्वीक त करता है तथा कम्यूनों के मेयर पर नियंत्रण रखता है। मुनरो ने डिपार्टमेंट में प्रिफेक्ट के अस्तित्व का मूल्यांकन करते हुए कहा है कि "वह डिपार्टमेंट की जनता का पिता-तुल्य तथा प्रशासकीय केंद्रीक त जाल का केंद्र-बिंदु है।"

सामान्य परिषद - प्रत्येक डिपार्टमेंट में एक सामान्य परिषद (General Council) की व्यवस्था है। सामान्य परिषद डिपार्टमेंट क प्रतिनिधि-संस्था है जिसका चुनाव स्थानीय जनता करती है। परिषद के प्रत्येक सदस्य 6 वर्षों के लिए चुने जाते हैं और आधे सदस्य प्रत्येक 3 वर्षों पर बदले जाते हैं। यद्यपि परिषद एक प्रतिनिधि निकाय है, फिर भी डिपार्टमेंट के कार्यों के अनेक पहलू इसके अधिकार से बाहर हैं। परिषद स्थानीय मामलों पर तर्क-वितर्क करती है तथा नियम बनाती है। परिषद प्रिफेक्ट तथा स्थानीय निर्वाचित अधिकारियों के स्थानीय कार्यों पर नियंत्रण रखती है।

2. **एरोण्डाइजमेंट (Arrondisement)** - एरोण्डाइजमेंट डिपार्टमेंट का प्रशासकीय उपविभाग है। प्रत्येक एरोण्डाइजमेंट में एक सब-प्रिफेक्ट (Sub-Prefect) होता है जो एरोण्डाइजमेंट का प्रधान कार्यपालक होता है। सब-प्रिफेक्ट की बहाली ग ह-मंत्री की सिफारिश पर राष्ट्रपति करता है। वह प्रिफेक्ट के कार्य में सहायता प्रदान करता है। प्रत्येक एरोण्डाइजमेंट में एक निर्वाचित परिषद होती है जिसका निर्वाचन क्षेत्र की जनता करती है। परिषद के सदस्यों का चुनाव 6 वर्षों के लिए होता है। प्रत्येक एरोण्डाइजमेंट में कम-से-कम 9 सदस्यों की परिषद होती है।

3. **कम्यून (Commune)** - फ्रांस के स्थानीय शासन-प्रणाली में सबसे नीचे की इकाई-कम्यून है। फ्रांस में शहरी तथा देहाती क्षेत्रों में एक ही तरह की इकाईयों की व्यवस्था है। प्रत्येक कम्यून में एक कम्यून परिषद (Communal Council) की व्यवस्था है। यह कम्यून की प्रतिनिधि-संस्था है। कम्यून-परिषद में 10 से 35 तक सदस्य होते हैं। सदस्यों का निर्वाचन कम्यून की जनता 6 वर्षों के लिए करती है। कम्यून-परिषद स्थानीय बातों पर विचार-विमर्श करती है। कार्यपालिका-संबंधी कार्य इसका नहीं है, फिर भी यह मेयर (Mayor) तथा स्थानीय निर्वाचित अधिकारियों के कार्यों की देख-रेख करती है। मेयर (Mayor) कम्यू का प्रधान कार्यपालक होता है। मेयर का निर्वाचन कम्यून परिषद 4 वर्षों के लिए करती है। स्थानीय प्रतिनिधि-सभा द्वारा निर्वाचित होने के कारण स्थानीय दलगत राजनीति से वह अलग नहीं रह सकता। कम्यून का वह पहला नागरिक होता है तथा प्रमुख उत्सवों में वह कम्यून का प्रतिनिधित्व करता है। स्थानीय शासन के अन्य कार्यपालक अधिकारियों की तरह उसका भी दोहरा कार्य है। कम्यून में वह प्रिफेक्ट का एजेंट होता है। इस द ष्टि से वह राज्य का अधिकारी भी है। इस प्रकार राष्ट्रीय तथा स्थानीय हितों का सुंदर संबंध उपस्थित करता है।

पेरिस का प्रशासन

(Administration of Paris)

लगभग सभी प्रमुख देशों की राजधानियों मे स्थानीय शासन की प थक व्यवस्था की गई है। फ्रांस की राजधानी पेरिस भी इसका अपवाद नहीं है। पेरिस को विशेष स्तर प्रदान किया गया है। नगर के लिए एक विशेष नगर-परिषद (Municipal Council) की व्यवस्था की गई है। इस परिषद के सदस्य वैतनिक होते हैं। उनका निर्वाचन 6 वर्ष के लिए व्यस्क मताधिकार के आधार पर प्रत्यक्ष रूप से होता है इन निर्वाचित सदस्यों के अतिरिक्त पेरिस के बाहर स्थित ऐरोंडिजमां से 40 सदस्य चुनकर आते हैं। ये भी पेरिस की परिषद के सदस्य होते हैं। प्रशासकीय और निर्वाचन कार्यों के लिए पेरिस को 20 क्षेत्रों में विभाजित किया गया है। प्रत्येक क्षेत्र में एक महापौर और तीन से पांच तक उप-महापौर होते हैं। पेरिस के स्थानीय शासन का प्रधान एक विशेष प्रीफेक्ट (Prefect de la Saine) होता है। उसकी नियुक्ति राष्ट्रपति करता है। क्षेत्रीय महापौर भी निर्वाचित नहीं होते हैं। उन्हें केंद्र सरकार नियुक्त करती है, और वे प्रीफेक्ट के कार्यों में उसकी सहायता करते हैं।

स्थानीय शासन के प्रमुख कार्य

(Major Functions of Local Government)

स्थानीय शासन केवल वही कार्य कर सकता है जो कि समय-समय पर केंद्र सरकार द्वारा उसे सौंपे जाते हैं। फिर भी, स्थानीय शासन के कुछ प्रमुख कार्यों का वर्णन यहां किया जा सकता है। जन-स्वास्थ्य, शिक्षा, पुलिस कार्य तथा सहायता कार्य स्थानीय शासन के सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य हैं। जन-स्वास्थ्य महापौर का उत्तरदायित्व है। प्रीफेक्ट के निर्देशन और निरीक्षण में तथा

कम्यून की परिषद के परामर्श पर महापौर नियम-उपनियम बनाकर फैलने वाली बीमारियों को रोकने के लिए तथा पानी और सफाई की उचित व्यवस्था के लिए कार्य करता है। शिक्षा का मुख्य उत्तरदायित्व वाणिज्य मंत्रालय पर होता है। फिर भी, स्थानीय शासन की इस संबंध में प्रमुख भूमिका होती है। प्राथमिकता शिक्षा 'विभाग' के क्षेत्राधिकार में आता है। इसका उतरदायित्व प्रीफेक्ट पर होता है। प्रीफेक्ट सभी प्राथमिक स्कूलों के अध्यापकों को नियुक्त करता है। इन स्कूलों की स्थापना कम्यून करते हैं। वे ही उनको वित्तीय सहायता प्रदान करते हैं। माध्यमिक शिक्षा संस्थाओं की स्थापना भी कम्यून करते हैं। उनका प्रबंध केंद्र तथा विभाग द्वारा प्राप्त वित्तीय सहायता से किया जाता है। सार्वजनिक सहायता कार्य प्रीफेक्ट का विशेषाधिकार है। बच्चों की सहायता, मानसिक रूप से अस्वस्थ, व द्धों, अपाहिजों तथा प्रसूति की अवस्था में सहायता कार्य और बड़े परिवारों को सहायता प्रीफेक्ट का उत्तरदायित्व है। इस संबंध में धन की व्यवस्था विभाग, कम्यून और केंद्रीय सहायता से किया जाता है। पुलिस विभाग यद्यपि केंद्र सरकार के निरीक्षण में कार्य करता है, फिर भी प्रीफेक्ट अपने 'विभाग' में शांति और व्यवस्था के लिए उत्तरदायी है। वह इस कार्य में पुलिस-आयुक्त की सहायता लेता है।

देश की राजधानी होने के कारण और राजनीतिक के उतार-चढ़ाव के फलस्वरूप विभिन्न सरकारों का यही प्रयत्न रहा है कि पेरिस में किसी एक व्यक्ति या व्यक्ति समूह के हाथों में सत्ता केंद्रित न होने पाये। परंतु देश के शेष भागों में स्थानीय शासन पर केंद्र का पूर्ण नियंत्रण है और यह कहा जाता है कि ग ह-मंत्री यदि एक बटन दबाता है तो देश की समस्त स्थानीय संस्थाओं में तार बज उठते हैं। अर्थात्, प्रशासकीय और वित्तीय दोनों क्षेत्रों में स्थानीय शासन पर प्रीफेक्टों के द्वारा, ग ह-मंत्री का पूर्ण अंकुश रहता है। यद्यपि स्थानीय शासन केवल आंशिक रूप से ही लोकतांत्रिक है, तथापि परंपरा पर आधारित यह व्यवस्था फ्रांसीसी जनता को पूरी तरह मान्य है। पुरानी प्रक्रियाओं और लाल फीता प्रणाली के कारण इसकी क्षमता को बहुत हानि हुई है। स्थानीय संस्थाओं के अधिकारियों को बहुत कम वेतन मिलता था। उनकी योग्यता भी बहुत सीमित होती थी, परंतु 1950 के पश्चात् स्थानीय अधिकारियों की वेतन-व द्धि से स्थिति में कुछ सुधार हुआ है, फिर भी उनकी कार्य-कुशलता केंद्रीय अधिकारियों की अपेक्षा बहुत कम है।

अध्याय-22

जापान का स्थानीय शासन

(Local Government of Japan)

जापान के नवीन संविधान के अंतर्गत स्थानीय शासन स्वशासन को विशेष महत्त्व दिया गया है और अध्याय 8 में उसके मूल सिद्धांतों का वर्णन किया गया है। संविधान की धारा 92 में कहा गया है कि स्थानीय लोक संस्थाओं के संगठन और कार्य-संचालन संबंधी विनियम स्थानीय स्वायत्तता के सिद्धांत के अनुसार कानून द्वारा निश्चित किया जाएगा। धारा 93 के अनुसार, "स्थानीय लोक-संस्थाएं अपने ऐच्छिक अवयवों के रूप में कानून के अनुकूल सभाओं की स्थापना करेंगीं। सभी स्थानीय लोक-संस्थाओं के प्रमुख अधिशासी कर्मचारी उनकी सभाओं के सदस्य और कानून द्वारा निर्धारित अन्य स्थानीय अधिकारी अपने विभिन्न क्षेत्रों में प्रत्यक्ष लोकमत द्वारा चुने जाएंगे।" धारा 94 यह उपबंधित करती है कि "स्थानीय लोक-संस्थाओं को अपनी संपत्ति का प्रबंध करने और अपने कार्यों एवं प्रशासन का उपबंध करने तथा कानून के अंतर्गत अपने विनियम बनाने का अधिकार होगा।" धारा 95 में उल्लिखित है कि किसी एक ही स्थानीय लोक-संस्था पर लागू होने वाला कोई एक कानून डायट द्वारा तद्विषयक स्थानीय लोक-संस्था के निर्वाचकों की बहुसंख्या के अनुकूल प्राप्त की हुई सहमति के बिना नहीं बनाया जा सकता।

स्थानीय सरकार का संगठन एवं कार्य

(Organisation and Functions of the Local Government in Japan)

संविधान के अंतर्गत निर्देश के अनुरूप वर्तमान स्थानीय शासन-संस्थाओं का संगठन मूलतः स्थानीय स्वायत्तता कानून (Local Autonomy Law), 1947 एवं बाद में समय-समय पर होने वाले संशोधनों के आधार पर किया गया है।

जापान में स्थानीय शासन की संस्थाएं दो श्रेणी की हैं- एक प्रीफेक्चरल (Prefectural), जिसमें चार प्रकार की संस्थाएं हैं तथा दूसरी नगरपालिका जिनके अंतर्गत नगर, कस्बे और गांव का प्रशासन सम्मिलित है।

प्रीफेक्चरल की स्थानीय सरकार

(Prefectural Local Government)

1. **गवर्नर (Governor)** - इस समय होकेडो को छोड़कर संपूर्ण देश 46 प्रीफेक्चरलों (प्रशासनिक इकाइयों) में बंटा हुआ है। प्रीफेक्चरल का प्रमुख गवर्नर कहलाता है। गवर्नर के लिए आवश्यक है कि वह जापान का निवासी हो और उसकी आयु कम से कम 30 वर्ष हो। लिंग के आधार पर कोई प्रतिबंध नहीं है। गवर्नर एक साथ डायट और स्थानीय सभा का सदस्य नहीं हो सकता। वह प्रीफेक्चरल के लोगों द्वारा चुना जाता है और चार वर्ष तक अपने पद पर बना रहता है, बशर्ते कि वह इससे पहले त्याग-पत्र न दे दे या प्रीफेक्चरल की सभा द्वारा उसके विरुद्ध अविश्वास का प्रस्ताव पारित न कर दिया जाए। अविश्वास का प्रस्ताव कुल सदस्यों के दो-तिहाई बहुमत से पारित किया जा सकता है। यह गवर्नर की इच्छा पर है कि वह या तो सभा को भंग कर दे और नए निर्वाचन के लिए कहे या फिर त्याग-पत्र दे दे। नव-निर्वाचित सभा पुनः अविश्वास प्रस्ताव पास कर गवर्नर को पद से हटा सकती है और इसमें उसे कुल सदस्य संख्या का साधारण बहुमत चाहिए। गवर्नर को 'लोकप्रिय प्रत्याहरण' (Popular Recall) द्वारा भी पदच्युत किया जा सकता है। व्यवस्था यह है कि यदि प्रीफेक्टचर के एक-तिहाई निर्वाचक गवर्नर को उसके पद से हटाने की याचिका करते हैं और इस याचिका को प्रत्याहरण निर्वाचन (Recall Election) में बहुमत प्राप्त हो जाता है तो गवर्नर को अपना स्थान छोड़ना पड़ता है।

2. **सहायक गर्वनर** - गवर्नर एक से तीन तक सहायक गवर्नर नियुक्त कर सकता है और उन्हें हटा सकता है। गवर्नर की अपने सहायकों के कर्त्तव्यों का निर्धारण करता है। इन सहायक गवर्नरों के कर्त्तव्य राजनीतिक एवं प्रशासनिक दोनों होते हैं। गवर्नर की अनुपस्थिति में ये ही उसके पद पर कार्य करते हैं। यदि किसी कारणवश गवर्नर और सहायक गवर्नर दोनों ही प्रीफेक्चरल में नहीं हों तो प्रधानमंत्री को अधिकार है कि वह किसी को भी उस अवधि के लिए कार्यवाहक गवर्नर नियुक्त कर दे। स्टॉफ के अन्य सदस्यों के अतिरिक्त प्रीफेक्चरल में एक लेखापाल, एक कोषाध्यक्ष, एक लेखा परीक्षक और उपनियमों के अनुसार कुछ अन्य कर्मचारी होते हैं।

3. **गवर्नर की कार्यकारी शक्तियां और स्थिति** - जापानी प्रीफेक्चरल के गवर्नर को पर्याप्त अधिकार प्राप्त हैं और उसकी शक्तियां बहुत कुछ वहीं हैं जैसी परतंत्र भारत में भारतीय प्रांत के गवर्नर को प्राप्त थीं। गवर्नर अपने प्रशासन का समन्वय करता है और अपने क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करता है। उसे दो समितियों मे काम करना पड़ता है- राष्ट्रीय मामलों में प्रीफेक्चरल के अधिकारी की हैसियत से कार्य करता है। गवर्नर द्वारा किए जाने वाले कार्य अग्रलिखित है -

   1. क्षेत्र के महत्त्वपूर्ण अधिकारियों को नियुक्त करना, उन्हें उनके पद से हटाना और उनका पर्यवेक्षण करना।
   2. सरकारी दस्तावेजों और अन्य आवश्यक कागजातों का अभिरक्षण करना।
   3. प्रीफेक्चर के बजट पर नियंत्रण रखना और अपने मार्गदर्शन में उसे तैयार करना।
   4. सभी करों के समाहरण और व्यय के भुगतान तथा लेखा-परीक्षा व संपत्ति की व्यवस्था का दायित्व वहन करना।
   5. प्रीफेक्चर की सभा के निर्धारण किए बिना ही आवश्यकतानुसार विनियम और अध्यादेश जारी करना।
   6. उपयुक्त मुआवजा देकर संपत्ति का वर्णन करना।
   7. विनियमों या अध्यादेशों के अतिक्रमण के लिए दो हजार येन तक जुर्माने का आदेश देना।
   8. संकटकाल की अवधि में प्रीफेक्चर द्वारा सभा के सभी या कुछ अधिकार आवश्यकतानुसार ग्रहण करना और विनियम जारी करना, आवश्यकतानुसार विधिवत् अधिक त कार्यों के लिए धन खर्च करना चाहे यह खर्च व्यवस्थापिका के निर्णयों के विरुद्ध ही क्यों न हो।

   गवर्नर को स्थानीय सरकार पर निदेशात्मक शक्ति प्राप्त है। वह मेयर का नियंत्रण करता है। यद्यपि उसे मेयर को बर्खास्त करने का अधिकार नहीं है, फिर भी वह उसे कानूनी कर्त्तव्य पालन के लिए बाध्य कर सकता है। गवर्नर अपनी व्यापक शक्तियों के आधार पर नगरपालिकाओं को निर्देश दे सकता है, उनका पर्यवेक्षण कर सकता है तथा उनके रेकार्ड तथा अभिलेखों (Records) की जांच कर सकता है। प्रशासनिक शक्तियों के अतिरिक्त गवर्नर को कुछ महत्त्वपूर्ण राजनीतिक एवं सामाजिक उत्तरदायित्व भी वहन करने पड़ते हैं। गवर्नर सरकार का प्रवक्ता होता है, अतः उसकी प्रत्येक बात को ध्यानपूर्वक ओर बड़े सम्मान के साथ सुना जाता है।

4. **प्रीफेक्चर का विधान-मंडल (Legislative Board)** - प्रीफेक्चर की सभाओं की सदस्य संख्या इलाकों की आबादी के अनुसार अलग-अलग 40 से 120 सदस्यों तक है। प्रीफेक्चर के निवासी सदस्यों का निर्वाचन करते हैं। इसके मतदाता की आयु 20 वर्ष या उससे अधिक होना आवश्यक है। विधान-मंडल के लिए प्रत्याशी की आयु 25 वर्ष होनी आवश्यक है। विधान-मंडल की अवधि 4 वर्ष है। प्रीफेक्चर के विधान-मंडल का सदस्य न तो डायट का सदस्य हो सकता है और न स्थानीय प्रशासन का। विधान-मंडल के नियमित अधिवेशन वर्ष में 6 बार होते हैं तथा सभा के एक-चौथाई सदस्यों की मांग पर उसके असाधारण अधिवेशन भी बुलाए जा सकते हैं।

   प्रीफेक्चर की विधान-सभा को इसकी सीमाओं और अधिकारों के अंतर्गत उपनियमों के अधिनियमों की शक्ति प्रदान की गई है। यह उपनियमों के अतिक्रमण के लिए दो वर्ष तक के कारावास या एक लाख येन तक के जुर्माने का दंड दे सकती है। प्रीफेक्चर की सभा वार्षिक बजट निर्धारित करती है और लेखों परीक्षकों की रिपोर्ट पर विचार करती है। यह करों का आरोपण करती है और लोक-सभाओं के लिए फीस नियत करती है। सार्वजनिक संपत्ति का प्रबंध करने के लिए यही संविदा भी करती है। पुस्तकालय कायम करने और नगरों तथा सभा के सदस्यों के प्रयोग के लिए सरकारी राजपत्रों व अन्य सामग्री की व्यवस्था करना भी प्रीफेक्चर सभा अथवा विधान-मंडल का कर्त्तव्य है।

5. **गवर्नर और विधानमंडल का संबंध (Relationship of Governor & Legislative Board)** - दोनों का संबंध संसदीय प्रकार का है। गवर्नर विधेयक को प्रारंभ करता है, विधान-मंडल द्वारा पारित विधेयकों पर हस्ताक्षर करता है। उसे सीमित वीटो का अधिकार भी प्रदान किया गया है। अपने विरुद्ध अविश्वास प्रस्ताव स्वीक त होने की दशा में वह विधान-मंडल को भंग करता है। इसी प्रकार विधान-मंडल भी गवर्नर को त्यागपत्र देने के लिए बाध्य कर सकता है यदि वह अपने पुनर्निर्वाचन के पश्चात् साधारण बहुमत से गवर्नर के विरुद्ध अविश्वास प्रस्ताव पारित कर दे। गवर्नर विशेष शक्तियों के प्रयोग द्वारा विधान-मंडल पर नियंत्रण कर सकता है। ये विशेष शक्तियां प्रमुखतः ये हैं- गवर्नर विध ाानमंडल के किसी संकल्प को पुनर्विचार के लिए लौटा सकता है और इस प्रकार इसके पारित होने से देरी कर सकता है अथवा इसे समाप्त कर सकता है और इस प्रकार इसके पारित होने में देरी कर सकता है अथवा इसे समाप्त कर सकता है किंतु यदि विधान-मंडल इसे दुबारा पास कर देता है और इसे दो-तिहाई बहुमत का समर्थन प्राप्त हो जाता है तो उसे, अर्थात् संकल्प को अंतिम रूप से पारित समझा जाता है। यदि सभा का अधिवेशन नहीं होता है तो गवर्नर उपनियम जारी कर सकता है। इसके अतिरिक्त गवर्नर प्रशासनिक सेवाओं के लिए धन खर्च करने के विशेष अधिकार का इस्तेमाल करने की धमकी देकर विधान-मंडल को प्रभावित कर सकता है। पुनश्चः गवर्नर किसी भी उप-नियम या संकल्प को लौटा सकता है, यदि वह इसे असंवैधानिक अथवा गैर-कानूनी समझे। वह इसके विरुद्ध अदालत में कार्यवाही भी कर सकता है।

यद्यपि गवर्नर अपने विशेषाधिकारों और अपनी विवेक शक्ति के बल पर विधान-मंडल की इच्छा के विरुद्ध कार्यवाही कर सकता है; तथापि दोनों के वर्तमान संबंधों से ऐसा नहीं लगता है कि इनमें से एक दूसरे से वरिष्ठ है। वास्तविक व्यवहार में यदि समाधान की कोई संभावना न हो तो उनमें से एक अपने पद से त्याग-पत्र दे देगा।

न्यायपालिका

(Municipality)

नगरों, कस्बों और ग्रामों की स्थानीय सरकारें नगरपालिकाओं द्वारा चलायी जाती हैं। नगरपालिका की कार्यपालिका शक्ति मेयर (Mayor) में निहित होती है और विधायी शक्तियां नगरपालिका में।

मेयर (Mayor) - जापान का कोई भी नागरिक, जो 25 वर्ष या इससे अधिक आयु का हो, मेयर चुना जा सकता है। मेयर भी एक ही समय में डायट मताधिकार के आधार पर अपने क्षेत्र की जनता द्वारा चुना जाता है। अपने कर्त्तव्य-पालन के लिए उसे नियमित वेतन दिया जाता है। कानून के अनुसार कर्त्तव्य-पालन न करने पर गवर्नर उसे पदच्युत कर सकता है। इसके अतिरिक्त नगरपालिका अपनी कुछ सदस्य-संख्या के दो-तिहाई बहुमत से अविश्वास प्रस्ताव पारित कर मेयर को त्याग-पत्र देने के लिए विवश कर सकती है। मेयर को पदच्युत करने का एक और भी तरीका है और वह है प्रत्याह्वान (Recall) का। इसके लिए निर्वाचकों का एक-तिहाई भाग याचिका प्रस्तुत करता है और उस विषय को नगरपालिका के मतदाताओं के निर्णय के लिए उनके समक्ष रखा जाता है। यदि निर्णय मेयर के विरुद्ध होता है तो उसे त्याग-पत्र देना ही पड़ता है।

सहायक मेयर - मेयर के कर्त्तव्य-पालन में सहायता के लिए एक सहायक मेयर की भी व्यवस्था की गई है जिसे मेयर की नियुक्त करता है और वही उसे हटा भी सकता है। सहायक मेयर को उन सभी कार्यों को करना पड़ता है जो मेयर द्वारा उसे सौंपे जाते हैं। मेयर के कर्त्तव्य अंशतः राजनीतिक और प्रशासनिक हैं और उनकी अनुपस्थिति में सहायक मेयर उसके सभी कार्य करता है।

मेयर के भी दोहरे उत्तरदायित्व और कर्त्तव्य हैं। वह राष्ट्रीय मामलों पर विचार करता है और इसके लिए अपने प्रीफेक्चर के गवर्नर के प्रति उत्तरदायी होता है। स्थानीय मामलों के लिए वह अपनी कार्यपालिका का कार्यकारी अधिकारी है और इस नाते वह स्थानीय अधिकारियों की नियुक्ति व पदच्युति करता है तथा इसे समिति के विचारार्थ प्रस्तुत करता है। सभी कर और शुल्क वसूल करना एवं विनियोगों की लेखा-परीक्षा भी मेयर के ही कर्त्तव्यों में शामिल है। संकटकाल के दौरान मेयर उपनियमों के महत्त्वपूर्ण विनियम जारी कर सकता है, विधि द्वारा प्राधिक त कार्यों के लिए धन खर्च कर सकता है और बजट को कम कर सकता है।

नगर सभा (Municipal Assembly) - इसके सदस्यों का चुनाव जापान के उन नागरिकों द्वारा किया जाता है जो 20 वर्ष या अधिक की आयु के हों और उस इलाके के लगातार 3 मास तक निवासी रहे हों। नगर-सभा के प्रत्याशी की न्यूनतम आयु

25 वर्ष है। नगर-सभा की सदस्य-संख्या कम से कम 12 और अधिक से अधिक 48 होती है। यह संख्या जनसंख्या के अनुपात से बदलती रहती है। नगर-सभा के सदस्य के एक साथ डायट और प्रीफेक्चर की सभा के सदस्य नहीं सकते। सदस्यों की अवधि 2 वर्ष है और उनका पुनर्निर्वाचन भी हो सकता है। कम आबादी वाले छोटे-छोटे कस्बों और ग्रामों में निर्वाचकों की सामान्य बैठकें ही नगर-सभाओं का स्थान लेती है।

नगर-सभा का अधिवेशन नियमित अधिवेशनो के रूप में वर्ष मे 6 बार होता है। मेयर अथवा कुछ सदस्यों के एक-चौथाई भाग के अनुरोध पर विशेष अधिवेशन भी बुलाया जा सकता है। नगर-सभा को अपने अधिकार-क्षेत्र के अंतर्गत उपनियम बनाने की शक्ति प्राप्त है। यह वार्षिक बजट पेश करती है और अपने उपनियमों का उल्लंघन करने के लिए दंड नियत करती है। यह करारोपण (Taxes) भी करती है और सार्वजनिक सेवाओं के लिए शुल्क भी नियत करती है। सभा स्थानीय मामलों की जांच कर सकती है तथा स्थानीय अधिकारियों को गवाही देने के लिए अपने समक्ष बुला सकती है।

सारांश में, जापान में नवीन संविधान के अंतर्गत जिस प्रकार के स्थानीय प्रशासन के संगठन की परिकल्पना की गई है, वह लोकतंत्रात्मक पद्धति के अनुकूल है।

स्थानीय स्वायत्त-शासन से संबंधित संविधान के मूल अनुच्छेद्

जापान के संविधान का अध्याय आठ स्थानीय स्वायत्त-शासन (Local Government) से संबंधित है। इस अध्याय में 92 से 95 तक चार अनुच्छेद हैं जो मूल रूप से इस प्रकार हैं-

अनुच्छेद 92 - स्थानीय लोक-सत्ताओं के संगठन एवं कार्य करने के नियमों का निश्चय विधान द्वारा स्थानीय स्वायत्त-शासन के सिद्धांतों के अनुसार किया जाएगा।

अनुच्छेद 93 - स्थानीय लोक-सत्ता विधानानुसार सभाओं की स्थापना अपने विचार-विमर्श करने वाले अंग रूप में करेगी।

सभी स्थानीय लोक-सत्ताओं के मुख्य कार्यकारी अधिकारियों, उनकी सभाओं के सदस्यों तथा उन स्थानीय कर्मचारियों के, जो विधान द्वारा निर्धारित किए जाएं, निर्वाचन उनके विभिन्न समुदायों में प्रत्यक्ष मतदान द्वारा होंगे।

अनुच्छेद 94 - स्थानीय लोक-सत्ताओं को अपनी संपत्ति, अपने विविध विषयों एवं प्रशासन के प्रबंध करने तथा विधान के अंतर्गत अपने निजी नियमों को अधिनियमित करने का अधिकार होगा।

अनुच्छेद 95 - एक स्थानीय लोक-सत्ता में लागू होने वाले किसी भी विशेष विधान को, जो विधि-संगत पाया गया हो, उस स्थानीय लोक-सत्ता के मतदाताओं के बहुमत द्वारा प्राप्त अनुमोदन के बिना संसद द्वारा अधिनियमित नहीं किया जा सकता।

अध्याय-23

स्विट्जरलैंड का स्थानीय शासन

(Local Government of Switzerland)

स्विट्जरलैंड प्रशासनिक द ष्टि से कुछ कैंटनों में बंटा हुआ है। कैंटीनों की कुल संख्या 22 है। लेकिन इसमें से 3 कैंटोन विभाजित होकर 6 अर्द्ध कैंटन बन गए हैं। अतः राज्य संघ के अवयवी एककों की संख्या 25 हो गई है। संवैधानिक द ष्टि से कैंटनों तथा अर्द्ध कैंटोनों में दो भेद हैं-

1. राज्य परिषद में प्रत्येक पूर्ण कैंटोन 2 प्रतिनिधि भेजता है जबकि प्रत्येक अर्द्ध कैंटोन केवल एक प्रतिनिधि।
2. संवैधानिक संशोधन के संबंध में प्रत्येक कैंटोन का एक मत माना जाता है जबकि प्रत्येक अर्द्ध-कैंटोन का केवल आधा मत।

इन कैंटनों में आकार, जनसंख्या, आर्थिक साधन, ऐतिहासिक प ष्ठभूमि, धर्म, भाषा आदि की द ष्टि से बहुत सारी भिन्नताएं पाई जाती है।

शासन की सुविधा के लिए बड़े-बड़े कैंटोनों को कुछ प्रदेशों (Districts) में बांट दिया जाता है और प्रत्येक प्रदेश को कम्यूनों में। परंतु छोटे-छोटे कैंटोनों में प्रदेश नहीं होते, वहां कैंटोन सीधे कम्यूनों में बंटे रहते हैं।

स्विस राज्य प्रबंधन में कम्यून या नगर संस्था सबसे छोटी और पहली इकाई है। यह स्थानीय सरकार की इकाई भी कहलाती है। स्विट्जरलैंड में लगभग 3000 से भी अधिक कम्यून पाए जाते हैं। स्विस नागरिक स्थानीय कामों में अधिक रूचि लेता है, जिसके कारण स्विस नागरिक सबसे पहले अपने आपको कम्यून का नागरिक समझता है, फिर कैंटोन का और उसके पश्चात् स्विट्जरलैंड का। स्विट्जरलैंड को अत्यंत विकसित और स्वतंत्र नगर संस्थाओं का संघ भी कह सकते हैं। इन सबको मिलाकर ही संघराज्य की स्थापना की गई है। एक स्विस नागरिक के दिल में संघराज्य की बजाए कम्यून के लिए अत्यधिक प्रेम पाया जाता है। उसका पहला प्यार कम्यून के लिए, फिर कैंटोन तथा उसके पश्चात् राज्य संघ के लिए उत्पन्न होता है।

कम्यून

कम्यून स्विट्जरलैंड में स्थानीय स्वशासन की प्रारंभिक इकाईयां हैं। स्वशासन के द ष्टिकोण से इनका बहुत महत्त्व है। इनका महत्त्व इस तथ्य से प्रकट होता है कि राष्ट्रीय नागरिकता की प्राप्ति के लिए पहले कम्यून की नागरिकता आवश्यक है। अधिकांश कम्यून छोटे-छोटे तथा ग्रामीण हैं। कंपनी की शासन-व्यवस्था में परस्पर अनेक भिन्नताएं हैं पर कुछ समानताएं भी हैं। अधिकांश छोटे कम्यूनों में शासन का मुख्य अंग 'नगर सभा' (town-meeting) है जिसमें कम्यून के सभी नागरिक भाग ले सकते हैं। परंतु बड़े कम्यून में 'नगर सभा' के स्थान पर नागरिकों द्वारा एक प्रतिनिधि-सभा का निर्वाचन होता है जिसे नगर-महापरिषद् (Greater City Council) कहते हैं। 'नगरसभा' या 'नगर महापरिषद' विधायी संस्थाएं हैं। कम्यून के शासन-संचालन के लिए एक कार्यपालिका भी होती है जिसे कम्यून-परिषद् (Communual Council) कहते हैं। इसके सदस्यों का निर्वाचन 'नगर सभा' या जनता करती हैं। परिषद का एक अध्यक्ष या प्रमुख प्रशासक होता है जिसे नगर पति (City President) कहते हैं। परिषद् कम्यून का शासन संचालन करती है। प्रत्येक सदस्य के अधीन एक विभाग रहता है। कम्यूनों के क्षेत्राधिकार में प्रायः सार्वजनिक हित के वे विषय आते हैं जो भारत, इंग्लैंड, अमेरिका आदि देशों में नगर एवं गांव की स्थानीय संस्थाएं करती हैं; जैसे- शिक्षा, स्वास्थ्य, सफाई, निर्माण-कार्य आदि। अतः म्युनिसिपल समाजवाद (Municipal Socialism) स्विस राजनीतिक जीवन का आधार बन गया है। कम्यून अपने क्षेत्राधिकार में स्वतंत्र है। ब्राइस के विचार में ये स्थानीय संस्थाएं

स्विस जनतंत्र की सफलता का मुख्य कारण हैं। ये सार्वजनिक जीवन के प्रारंभिक शिक्षालय (Primary School) हैं। ब्रुक्स ने इनकी तुलना विश्व की 'सर्वश्रेष्ठ शासित' (best governed) कार्यपालिकाओं से की है।

स्विट्जरलैंड में दो प्रकार के कम्यून पाए जाते हैं- एक शहरी और दूसरे ग्रामीण। स्विट्जरलैंड की कुल जनसंख्या का 30% भाग शहरी कम्यूनों में रहता है और शेष देहाती कम्यूनों में।

Unit-V

अध्याय-24

ब्रिटेन में प्रशासन पर नियंत्रण व्यवस्था

(Control Over Administration in Britain)

आधुनिक राज्यों में प्रशासन का निरंतर विकास हो रहा है। शासन के कार्यों में व द्धि न केवल विश्वव्यापी है बल्कि यह एक अनवरत प्रक्रिया का रूप धारण कर चुकी है। प्रति वर्ष किसी न किसी नवीन कार्य की व द्धि शासकीय सूची में हो जाती है। राज्यों के बढ़ते हुए कार्यों के बोझ ने प्रशासकीय शक्ति में असाधारण रूप से विस्तार किया है। फलस्वरूप, प्रशासन असीमित शक्तियों का केंद्र बन गया है। अतः प्रशासन पर निर्भरता बढ़ गई है। प्रशासन और सेवीवर्ग अपनी शक्तियों का दुरुपयोग न करें, निरंकुश और अनुत्तरदायी न बनें, इसके लिए यह आवश्यक है कि उनकी शक्तियों को नियंत्रित करने के साथ-साथ उत्तरदायी भी बनाया जाए। ह्वाइट के शब्दों में, "एक प्रजातांत्रिक समाज में शक्ति पर नियंत्रण रहना आवश्यक है। शक्ति जितनी ही बड़ी होगी उस पर नियंत्रण की आवश्यकता उतनी ही अधिक होगी। स्पष्ट उद्देश्यों के लिए पर्याप्त अधिकार कैसे समाहित किये जायें और सत्ता को पंगु किये बिना कैसे समुचित नियंत्रण बनाये रखा जाये, यह लोकप्रिय सरकार के सामने एक ऐतिहासिक उलझन है।" शक्ति प्रदान करते समय यह भय हमेशा बना रहता है कि कहीं शक्ति का दुरुपयोग तो नहीं किया जाएगा। अतः प्रशासन पर प्रभावशाली नियंत्रण तथा उत्तरदायित्व की आवश्यकता स्पष्ट है। सामान्यताः प्रशासन पर नियंत्रण निम्न प्रकार का होता है।

1. विधायी नियंत्रण
2. कार्यपालिका नियंत्रण
3. न्यायपालिका नियंत्रण
4. जन-नियंत्रण

विभिन्न देशों में प्रशासन पर नियंत्रण स्थापित करने के अलग-अलग तरीके होते हैं। यहां हम ब्रिटेन, अमेरिका, फ्रांस, जापान एवं स्विट्जरलैंड की प्रशासनिक व्यवस्थाओं पर नियंत्रण के तरीकों का वर्णन करेंगे।

ब्रिटेन में प्रशासन पर नियंत्रण
(Administrative Control in England)

ब्रिटेन की प्रशासनिक व्यवस्था पर Effective नियंत्रण निम्नलिखित ढ़ंग से स्थापित किया जाता है-

1. संसदीय नियंत्रण
2. कार्यपालिका द्वारा नियंत्रण
3. न्यायिक नियंत्रण
4. जनमत एवं अन्य साधन

संसदीय नियंत्रण

संसदीय शासन व्यवस्थाओं के संचालन में अग्रणी ब्रिटेन, संसद के द्वारा प्रशासन पर नियंत्रण स्थापित करने में भी अग्रणी है। ब्रिटेन में संसदीय या विधायी नियंत्रण निम्नलिखित विधियों द्वारा स्थापित किया जाता है-

1. **नीति-निर्धारण द्वारा नियंत्रण** - संसद केवल कानून बनाने तक ही सीमित नहीं है बल्कि यह प्रशासन के क्षेत्र में भी

पूर्व हस्तक्षेप करती है। प्रशासन संबंधी समस्त नीतियां विधायिका द्वारा ही स्वीकार की जाती है। ह्वाइट के अनुसार- सरकारी नीति के उद्देश्य कानून में निर्धारित किए जाते हैं और इन्हें संसद द्वारा इच्छानुसार परिवर्तित एवं अस्वीक त किया जा सकता है। प्रशासकीय अभिकरण आत्मनिर्भर या आत्म-निर्देशित नहीं होते। उन्हें कार्य करने की शक्ति कानूनों एवं सहायक व्यवस्थापन से मिलती है। इस प्रकार ब्रिटेन की संसद प्रशासन संबंधी सभी मुख्य नीतियों का निर्धारण करती है और शेष सभी outlines तैयार करती है।

2. **बजट पर वाद-विवाद** - बजट पर वाद-विवाद के द्वारा संसद शासन पर प्रभावशाली नियंत्रण स्थापित रखती है। विधायिका की अनुमति के बिना न तो एक पैसा खर्च किया जा सकता है और न ही कोई नया कर लगाया जा सकता है। यह स्पष्ट है कि प्रशासन पर संसदीय नियंत्रण की द ष्टि से बजट पर वाद-विवाद अत्यधिक महत्वपूर्ण होता है। संसद में जैसे ही बजट प्रस्तुत किया जाता है, उस पर सामान्य चर्चा आरंभ हो जाती है। बजट पर बहस करने का सदस्यों को अवसर तब मिलता है जब विभिन्न विभागों से संबंधित अनुदानों की मांगों पर बहस एवं मतदान होता है। इस अवसर पर पूर्ण लाभ उठाते हुए संसद-सदस्य विभागों की प्रशासकीय क्रियाओं की सूक्ष्म जांच और परीक्षण करते हैं जो हमेशा अति तीक्ष्ण होती है। वित्त-विधेयक और बजट पर होने वाली आलोचनाओं की वजह से सरकार सजग रहती है।

3. **प्रश्न-काल** - संसदीय शासन-प्रणाली वाले देशों में मंत्रिमंडल सामूहिक रूप से संसद के प्रति उत्तरदायी होता है। संसद-सदस्य को यह अधिकार है कि वह किसी भी समस्या और अव्यवस्था के संदर्भ में संबंधित मंत्री से प्रश्न पूछे। मंत्री को प्रश्नों का उत्तर अवश्य देना पड़ता है। रॉब्सन ने कहा है कि "सदन में खुले रूप से मंत्रियों से जो प्रश्न पूछे जाते हैं उसके परिणामस्वरूप संपूर्ण नागरिक सेवा को चौकन्ना रहना पड़ता है।" सदन में सदस्य तीन प्रकार से प्रश्न पूछते हैं- मौखिक, पूरक और लिखित। संसद में प्रश्न पूछना, वास्तव में, सच्चे प्रजातंत्र का सर्वोत्तम उदाहरण है। सदन की कार्रवाई में प्रत्येक दिन के प्रारंभ का एक घंटा प्रश्न पूछने के लिए ही निर्धारित किया जाता है।

4. **शून्यकाल** - प्रश्न-काल की समाप्ति के बाद और संसदीय कार्रवाई प्रारंभ होने से पूर्व जो प्रश्न पूछे जाते हैं, वह शून्यकाल कहलाता है। शून्यकाल के समय, संसद-सदस्य सामयिक विषयों पर मंत्रियों से बिना पूर्व-सूचना दिये प्रश्न पूछ सकते हैं। यह काल कार्यपालिका में भय उत्पन्न करने वाला संसदीय नियंत्रण का एक साधन है।

5. **उद्घाटन भाषण**- संसदीय अधिवेशन का शुभारंभ करते हुए ब्रिटेन की साम्राज्ञी संसद में अपना अभिभाषण प्रस्तुत करती है जिसमें शासन संबंधी प्रमुख नीतियों, वर्तमान एवं भावी योजनाओं, राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय गतिविधियों के प्रति सरकार का द ष्टिकोण और प्रशासनिक कदमों की चर्चा होती है। सांसद इस पर बहस करते हैं तथा अभिभाषण में व्यस्त सरकार की प्रशासनिक नीतियों की आलोचना एंव प्रत्यालोचना की जाती है इसके फलस्वरूप जनमत जागरूक होता है और प्रशासन सतर्क होता है।

6 . **बहस एवं विचार-विमर्श** - प्रश्न-काल के अलावा भी संसद में कई ऐसे अवसर होते हैं जब सरकार की नीतियों एवं प्रशासन के संदर्भ में बहस, विचार-विमर्श एवं वाद-विवाद होता है। नया विधेयक प्रस्तुत होने पर जब उससे संबंधित बहस एवं वाद-विवाद होता है तब भी लोक-सेवकों से चर्चाएं की जा सकती हे जिनमें प्रशासकीय संगठन की उपयुक्तता, अनुपयुक्तता तथा कार्य-संचालन के ढंग पर आपत्ति उठायी जा सकती है। आधे घंटे की बहस में इस प्रकार के अवसर उपस्थित होते हैं। अत्यधिक महत्व के विषय पर अल्पकालीन विचार-विमर्श की मांग भी की जा सकती है।

7. **ध्यानाकर्षण प्रस्ताव** - संसद के सदस्य कुछ महत्वपूर्ण विषयों और प्रशासन से संबंधित किसी भी गंभीर समस्या की ओर सरकार का ध्यान आक ष्ट करने के लिए ध्यानाकर्षण प्रस्ताव पेश कर सकते हैं। इसके लिए सदस्य को लिखित में सूचना देनी पड़ती है। अध्यक्ष द्वारा ऐसे ध्यानाकर्षण प्रस्ताव स्वीकार कर लेने के बाद सरकार को उस विषय पर तुरंत उत्तर देना पड़ता है। इस प्रकार के अवसर विभागीय कार्यों एवं विभागीय क्षमता-परीक्षण के लिए उपयुक्त होते हैं।

8. **कार्य-स्थगन प्रस्ताव** - कार्य-स्थगन अथवा 'कामरोको' प्रस्ताव प्रशासन पर संसदीय नियंत्रण का एक महत्वपूर्ण साधन है। इसका प्रयोग अति आवश्यक तथा लोक-महत्व की किसी विशेष समस्या के संदर्भ में संसद में वाद-विवाद प्रारंभ करने के लिए किया जाता है। इसके अंतर्गत संसद के सदस्य किसी भी मामले को अत्यंत महत्वपूर्ण, गंभीर एवं आवश्यक बताते हुए 'कामरोको' प्रस्ताव पेश करते हैं और उसे स्वीकार करने की मांग करते हैं। अध्यक्ष की अनुमति पर किसी विशेष मामले पर उसी समय बहस शुरू हो जाती है। चूंकि विषय विशिष्ट होता है अतः सभी सदस्यों का ध्यान

संबंधित प्रश्न पर केंद्रित हो जाता है तथा सदन की निर्धारित कार्रवाई कुछ समय के लिए रुक जाती है। फाइनर के शब्दों में, "सरकार के प्रत्येक कार्य पर प्रश्न पूछा जा सकता है, प्रत्येक प्रश्न पर कामरोको प्रस्ताव प्रस्तुत किया जा सकता है और प्रत्येक कामरोको प्रस्ताव एक व्यापक एवं विस्त त बहस को प्रोत्साहन दे सकता है।"

9. **अविश्वास प्रस्ताव** - अविश्वास प्रस्ताव की, जिसे 'निंदा प्रस्ताव' भी कहते हैं, संविधान में व्यवस्था की गई है। यदि विरोधी दलों का अंतिम शस्त्र है जिसका वे सरकार की पूरी और आंशिक नीति के दोषपूर्ण तथा आपत्तिजनक होने पर प्रयोग करते हैं। यदि अविश्वास प्रस्ताव पारित हो जाता है तो सरकार को त्यागपत्र देना पड़ता है और सरकार का पतन हो जाता है। विरोधी दल इस प्रकार के प्रस्ताव पर बहस करके सरकार की आलोचना कर सकते हैं और जनता को जाग त कर सकते हैं।

10. **संसदीय समितियां** - प्रशासन पर नियंत्रण की दिशा में समितियों का कार्य कम महत्वपूर्ण नहीं होता है। समितियां प्रशासन के कार्य की जांच-पड़ताल करती हैं तथा प्रशासन की गतिविधियों का विस्त त अध्ययन करने के बाद यह बताती है कि कहां अनियमितता हुई है, कौन अधिकारी अथवा अभिकरण अपने अधिकारों का दुरुपयोग कर रहा है, किसके द्वारा जन-विरोधी कार्य किये जा रहे हैं। एम० एन० कौल के शब्दों में, "इन समितियों की रचना से न केवल प्रशासनिक कार्यकुशलता बढ़ी है बल्कि इसने पहले की व्यवस्था में निहित दोषों को भी समाप्त किया है।" संसद में प्रशासन पर मुख्य रूप से नियंत्रण रखने वाली समितियां निम्नलिखित हैं-

i. सार्वजनिक लेखा समिति,

ii. अनुमान समिति,

iii. आश्वासन समिति,

iv. अधीनस्थ समिति।

सार्वजनिक तथा अनुमान समितियां संसद की वित्तीय समितियां हैं और वे प्रशासन पर विस्त त एवं ठोस नियंत्रण रखने में सहयोग देती हैं। सार्वजनिक लेखा समिति विनियोजन लेखा की सूक्ष्म जांच करती है और उसमें पायी जाने वाली अनियमितताओं को प्रकाश में लाती है। अनुमान समिति विभिन्न विभागों के खर्चों का पुनरावलोकन करने के बाद उनमें मितव्ययता लाने की सलाह देती है। यह समिति उन आश्वासनों की छानबीन करती है जो मंत्रियों द्वारा समय-समय पर सदन में दिये जाते हैं। जांच-पड़ताल के पश्चात यह समिति अपना प्रतिवेदन देती है। इस समिति के कारण ही मंत्री वायदे करते समय न सिर्फ सावधान रहते हैं बल्कि इस बात की कोशिश भी करते हैं कि उन वायदों को पूरा करें। इन समितियों के अतिरिक्त संसद विशेष मामलों की छानबीन करने के लिए विशेष समितियां भी गठित करती है। इस प्रकार प्रशासन पर नियंत्रण रखने में समितियां महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं।

11. **अंकेक्षण द्वारा नियंत्रण** - अंकेक्षण या लेखा परीक्षण वह पद्धति है जिसके द्वारा आय-व्यय के लेखों सहित सामग्री के हिसाब-किताब की भी जांच की जाती है तथा अनियमितताओं को उजागर किया जाता है। ब्रिटेन में नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक एक स्वतंत्रता प्राप्त प्रभावी संस्था है जो "राजकोष एवं लेखा परीक्षण अधिनियम 1921 के द्वारा पूर्ण अधिकार संपन्न है। पूर्व में राजकोष एवं लेखा परीक्षण अधिनियम 1866 के अंतर्गत यह व्यवस्था थी। वर्तमान में "राष्ट्रीय अंकेक्षण अधिनियम 1983" के द्वारा ब्रिटिश नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक को लोक सदन का एक अधिकारी (अंग) माना गया है। इस प्रकार वह संसद का महत्वपूर्ण भाग होते हुए कार्यपालिका द्वारा संधारित लेखों का परीक्षण करता है। इस संबंध में लोक लेखा समिति भी सहायक सिद्ध होती है। ब्रिटेन में सरकारी आय-व्यय के संबंध में बहुत कम अनियमितताएं सामने आती हैं क्योंकि प्रत्येक लोक सेवक यही चाहता है कि उसके विभाग की आलोचना संसद में न हो।

प्रशासन पर कार्यपालिका का नियंत्रण

(Executive Control Over Administration)

ब्रिटेन में कार्यपालिका का प्रशासन पर नियंत्रण एक प्रभावशाली एवं महत्त्वपूर्ण साधन है। उत्तरदायी शासन-प्रणाली में शासन के समस्त कार्यों का उत्तरदायित्व (सरकार अर्थात् मंत्रिमंडल) पर होता है जो अपने कार्यों के लिए संसद के प्रति उत्तरदायी होती है। प्रशासक नीतियों को लागू करते हैं किंतु कार्यपालिका के नियंत्रण की आवश्यकता सुस्पष्ट है, जिससे उनका आचरण

कार्यपालिका की आशाओं के अनुरूप रहे। कार्यपालिका जिन साधनों से प्रशासन पर नियंत्रण स्थापित करती है, वे निम्नलिखित हैं -

1. **नीति-निर्माण द्वारा नियंत्रण**- मुख्य कार्यपालिका ही मुख्य प्रशासक होती है। इस हैसियत से वह नीति-निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। संसदीय प्रणाली में मंत्रिमंडल नीतियों का निर्माण करके सदन में स्वीक त कराने के लिए उत्तरदायी है। वास्तव में, शासन द्वारा निर्मित नीतियों को लागू करने का कार्य लोक-सेवकों द्वारा किया जाता है। कार्यपालिका के पास लोक-सेवकों के निर्देशन, निरीक्षण, पर्यवेक्षण एवं नियंत्रण की शक्ति होती है। प्रत्येक उच्चाधिकारी और कर्मचारी अपने कार्यों के लिए कार्यपालिका के प्रति उत्तरदायी होता है। कार्यपालिका स्वयं अनेक विभागों के कार्यकलापों का मौके पर आकर औपचारिक निरीक्षण करती है और दोषी कर्मचारियों एवं अधिकारियों पर तत्काल अनुशासनिक कार्रवाई की जाती है। इस प्रकार नीति-निर्माण द्वारा कार्यपालिका प्रशासन पर प्रभावी नियंत्रण रखती है।

2. **नियुक्ति तथा निष्कासन के द्वारा नियंत्रण** - नियुक्ति एवं विमुक्ति भी प्रशासन पर कार्यपालिका के नियंत्रण का एक प्रमुख साधन है। मंत्री जी अपने विभाग का प्रमुख होता है, अपने सचिव और विभागाध्यक्ष का चयन स्वयं करता है ताकि उसके साथ मंत्री सामंजस्यपूर्ण वातावरण में कार्य कर सकें। लोक-सेवा के कर्मियों की भर्ती प्रायः संघ लोक-सेवा आयोग और राज्यों के लोक-सेवा आयोग द्वारा की जाती है, परंतु भर्ती के नियम, योग्यता आदि कार्यपालिका के द्वारा निर्धारित किए जाते हैं। कार्यपालिका को अधिकारियों और कर्मचारियों को निष्कासित करने या बर्खास्त करने का अधिकार भी होता है। इस प्रकार कार्यपालिका नियुक्ति और निष्कासन के अस्त्र द्वारा प्रशासन पर नियंत्रण रखती है।

3. **बजट-प्रणाली के द्वारा नियंत्रण**- प्रत्येक विभाग को अपनी वित्तीय आवश्यकताओं के लिए कार्यपालिका पर निर्भर करना पड़ता है। कार्यपालिका ही बजट तैयार करती है। सच तो यह है कि कार्यपालिका के द्वारा ही विभिन्न विभागों के खर्च निर्धारित किये जाते हैं और धनराशि आबंटित की जाती है। इस आबंटित धनराशि के अंदर ही अधिकारी अपने कार्यों का संचालन करते हैं। यह धन वित्तीय नियमों के अनुसार ही खर्च किया जाता है, जिसकी आय-व्यय का हिसाब रखा जाता है और लेखा-परीक्षण भी होता है। अतः बजट-प्रणाली भी प्रशासन पर कार्यपालिका के नियंत्रण का एक महत्वपूर्ण और प्रभावशाली साधन है।

4. **प्रदत्त विधायन द्वारा नियंत्रण** - आजकल विधायिका के कार्यकलापों में व द्धि होने के कारण अनेक मामलों में कार्यपालिका को विधि-निर्माण की शक्ति सौंप देती है तो इसे प्रदत्त विधायन कहा जाता है। विधायिका एक मोटा प्रारूप तैयार कर उससे संबंधित बारीकियों पर विधि-निर्माण का अधिकार कार्यपालिका को दे देती है। कार्यपालिका विधायिका द्वारा प्राप्त ढांचे के आधार पर अपनी आवश्यकताओं और उपयोगिताओं के अनुसार विधि-निर्माण करती है। इस विधि-निर्माण में विभागों के संगठन, अधिकारियों की नियुक्ति और सेवा-शर्तें, अधिकार-क्षेत्र और कर्त्तव्य को भी निर्धारित किया जाता है। प्रदत्त विधायन तथा कार्यपालिका द्वारा जारी किया गया अध्यादेश भी प्रशासन पर कार्यपालिका के नियंत्रण का एक महत्वपूर्ण साधन बन गया है।

प्रशासन पर न्यायपालिका नियंत्रण
(Judicial Control over Administration)

प्रशासन पर बाहरी नियंत्रण के दो साधन हैं- प्रथम विधायी और दूसरा न्यायिक। वैधानिक नियंत्रण कार्यपालिका शाखा की नीति तथा व्यय को नियंत्रित करता है, और न्यायपालिका का नियंत्रण प्रशासकीय कार्यों की वैधानिकता निश्चित करता है। इस प्रकार जब कोई सरकारी अधिकारी नागरिकों के संवैधानिक या मौलिक अधिकारों का अतिक्रमण करते हैं तो न्यायपालिका उनकी रक्षा करती है। न्यायपालिका का कार्य देश के कानूनों की व्यवस्था करना और उन्हें भंग करने वालों के लिए दंड की व्यवस्था करना है। लोक-प्रशासन के संदर्भ में न्यायपालिका का प्रमुख उत्तरदायित्व नागरिक अधिकारों को उनकी सीमा में बनाये रखना है। साथ ही न्यायपालिका अत्याचार, अनियमितता, भ्रष्टाचार आदि दोषों पर प्रतिबंध लगाती है। ब्रिटेन न्याय-व्यवस्था में न्यायिक पुनरीक्षा को अपनाया गया है और न्यायपालिका को स्वतंत्र रखा गया है। ग्रेट ब्रिटेन में भी कानून के शासन की व्यवस्था की गयी है। किंतु न्यायपालिका लोक प्रशासन पर अपना नियंत्रण कुछ परिस्थितियों, सीमाओं और

निर्धारित अवसरों पर ही करती है। प्रो० ह्वाइट के अनुसार निम्न स्थितियों में प्रशासन की शक्तियों पर न्यायपालिका द्वारा नियंत्रण रखा जाता है-

1. **अधिकारों एवं सत्ता का दुरुपयोग** - जब लोक-सेवा के अधिकारी अपने पद का प्रयोग किसी व्यक्तिगत कारण से दूसरे व्यक्ति को नुकसान पहुंचाने या किसी के प्रति बदले की भावना से करते हैं तो प्रभावित व्यक्ति न्यायालय की शरण ले सकता है।
2. **अधिकार-क्षेत्र का अभाव** - जब लोक-सेवा के अधिकारी कोई ऐसा कार्य करते हैं जो उनके अधिकारी-क्षेत्र से बाहर है और उससे किसी नागरिक को कोई हानि पहुंचती है, तो नागरिक अपने अधिकार की रक्षा के लिए न्यायालय की शरण ले सकता है। प्रभावित नागरिक जब न्यायालय में आवेदन करके यह इंगित करता है कि अमुक अधिकारी द्वारा किया गया कार्य उसके अधिकार-क्षेत्र या भौगोलिक क्षेत्र में नहीं आता और तथ्यों की जांच के आधार पर क्षेत्र का दुरुपयोग प्रमाणित हो जाता है तो न्यायालय उन कार्यों को अवैधानिक घोषित कर देता है। इसे न्यायिक पुनरावलोकन का अधिकार कहा जाता है।
3. **वैधानिक त्रुटि** - इस बात की पूरी संभावना रहती है कि सरकारी अधिकारी कानून की गलत व्याख्या करें और नागरिकों को कानून का गलत ढंग से प्रयोग कर हानि पहुंचाये। ऐसी स्थिति में प्रभावित व्यक्ति न्यायालय में अपने अधिकारों की रक्षा के लिए अपील कर सकता है। जांच के पश्चात् यदि न्यायालय ऐसा समझता है कि अधिकारी ने कानून की गलत व्याख्या की है तो उन कार्यों को न्यायापालिका असंवैधानिक घोषित कर सकता है।
4. **तथ्यों की प्राप्ति में त्रुटि** - जब कोई सरकारी अधिकारी अपने किसी प्रशासकीय कार्य में तथ्य का अच्छी तरह से पता लगाये बिना किसी नागरिक को उसे हानि पहुंचाने वाला कोई आदेश देता है तो नागरिक अपने अधिकार की रक्षा के लिए न्यायालय की सहायता ले सकता है।
5. **समुचित प्रक्रिया की गलती** - लोक-सेवा के प्रायः सभी विभागों को निर्धारित प्रक्रिया के अंदर रहकर की कार्य करना पड़ता है। लेकिन जब अधिकारी या विभाग कानून द्वारा निर्धारित प्रक्रिया के अनुसार कार्य नहीं करते हैं और किसी व्यक्ति को सरकारी अधिकारी के ऐसे कार्य से हानि पहुंचती है तो वे न्यायालय की शरण ले सकते हैं।

महत्त्वपूर्ण असाधारण न्यायिक उपचार
(Important Extra-ordinary Judicial Remedies)

प्रशासन पर न्यायिक नियंत्रण रखने के लिए ब्रिटेन में न्यायापालिका को उपर्युक्त मामलों में हस्तक्षेप करने के अतिरिक्त कुछ विशेष साधन प्राप्त हैं। इन विशेष साधनों को ही असाधारण उपचार कहा जाता है। इन उपचारों के तहत न्यायपालिका को कुछ विशेष प्रकार के लेख या आदेश जारी करने के अधिकार प्राप्त हैं। ये आदेश या लेख भी प्रशासन पर एक प्रकार से अंकुश रखने का काम करते हैं। इनकी व्याख्या निम्न प्रकार है-

1. **बंदी प्रत्यक्षीकरण** - लैटिन भाषा के शब्द "हैबियस कोर्पस" का शाब्दिक अर्थ "शरीर को प्राप्त करना" है। बंदी प्रत्यक्षीकरण से तात्पर्य है कि न्यायालय उस व्यक्ति को जिसने व्यक्ति को बंदी बना रखा है, आदेश देता है कि वह बंदी बनाए गए व्यक्ति को सशरीर न्यायालय में उपस्थित करें, जिससे उसे बंदी बनाए जाने के औचित्य पर विचार किया जा सके। अगर उस व्यक्ति को बंदी बनाये जाने के पर्याप्त कारण उपलब्ध न हों तो बंदी बनाए गए व्यक्ति को न्यायालय मुक्त भी कर सकता है। इसका उद्देश्य यह है कि बिना पर्याप्त कारण के मनमाने ढंग से किसी भी व्यक्ति को बंदी नहीं बनाया जाना चाहिए। परंतु मीसा (MISA), डी० आई० आर० (D.I.R.) तथा राष्ट्रीय सुरक्षा कानून ने न्यायालय के बंदी प्रत्यक्षीकरण अधिकार पर प्रहार किया है।
2. **परमादेश** - लैटिन शब्द "मैनडेमस" का अर्थ है समादेश या अधिदेश अथवा किसी को आज्ञा देना। परमादेश लेख द्वारा न्यायालय सार्वजनिक निकाय, सार्वजनिक कर्मचारी, निगम या संस्था को आदेश दे सकते हैं कि वह अपने कर्त्तव्य का पालन कानून के अनुसार करे।
3. **निषेधाज्ञा** - निषेधाज्ञा लेख उच्च न्यायालय द्वारा निम्न श्रेणी के न्यायालयों को उस समय जारी किया जाता है जब वे अपने अधिकार-क्षेत्र से बाहर जा रहे हों। यह लेख अधीनस्थ न्यायालयों को विवादपूर्ण विषयों पर विचार करने से

रोकने के लिए प्रसारित किया जाता है। इसे केवल न्यायिक या अर्द्धन्यायिक न्यायाधिकरणों के विरुद्ध ही जारी किया जाता है।

4. **उत्प्रेक्षण** - लैटिन शब्द 'सरटीओरेरी' का अर्थ प्रमाणित होना है। उत्प्रेक्षण उस लेख का नाम है जो किसी उच्च न्यायालय द्वारा अधीनस्थ न्यायालयों को उस समय जारी किया जाता है जब वह किसी मुकदमे की कार्रवाई से असंतुष्ट हो। इसके अंतर्गत उच्च न्यायालय अधीनस्थ न्यायालय से सभी प्रकार के रिकार्ड इस बात की जांच-पड़ताल के लिए अपने पास मंगवा सकता है कि अधीनस्थ न्यायालय अपने अधिकार-क्षेत्र से बाहर तो नहीं गया है। इस लेख को प्रायः न्यायिक कार्य के विरुद्ध ही प्रसारित किया जाता है। इस आधार पर अधीनस्थ अदालत का निर्णय रुक जाता है। यह लेख परमादेश और निषेधाज्ञा के गुणों का मिश्रण होता है क्योंकि इसके अनुसार कुछ करने की आज्ञाएं दी जाती हैं।

5. **अधिकार-प च्छा** - लैटिन शब्द 'को वारंटो' का शाब्दिक अर्थ है किसी अधिपत्र या प्राधिकार द्वारा। अधिकार-प च्छा लेख द्वारा कोई व्यक्ति यदि गैर-कानूनी ढंग से किसी पद या अधिकार का प्रयोग करता है तो न्यायालय उसे ऐसा करने से रोक सकते हैं। इस लेख का उद्देश्य सरकारी पद संबंधी किसी दावे की जांच करना है।

6. **जनमत एवं अन्य साधन** - लोकतंत्र में जनता की समस्याओं, मांगों तथा मानसिकता को समझना और उसके अनुरूप शासन की नीतियां एवं कार्यप्रणाली सुनिश्चित करना आवश्यक है अन्यथा 'जनमत' शीघ्र ही विपरीत दिशा में मुड़ जाता है। राजनीतिक दलों को मतदाताओं की नाराजगी एवं आक्रोश की कीमत चुकानी पड़ती है। ब्रिटेन में आम व्यक्ति, सरकार के कार्यों से पर्याप्त सहयोग प्रदान करता है किंतु जन शिकायतों की सुनवाई तत्परता से न होने की स्थिति में जनता असहयोगी व्यवहार प्रदर्शित करती है। प्रशासनिक अकर्मण्यताओं के विरूद्ध संसदीय आयुक्त से शिकायत की जा सकती है लेकिन इस प्रक्रिया में स्थानीय जनप्रतिनिधि की निर्णायक भूमिका रहती है। स्वतंत्र प्रेस, दबाव समूह, व्यावसायिक संघ तथा विपक्षी राजनैतिक दल भी प्रशासन को नियंत्रित करने में सहायक हैं।

अध्याय-25

अमेरिका में प्रशासन पर नियंत्रण व्यवस्था

(Control over Administration in USA)

आधुनिक समय में राज्यों के बढ़ते हुए कार्यों के बोझ ने प्रशासनिक शक्ति में असाधारण रूप से विस्तार किया है। फलस्वरूप प्रशासन असीमित शक्तियों का केंद्र बन गया है। फलस्वरूप प्रशासन के द्वारा अपनी शक्तियों का दुरुपयोग न किया जाए और प्रशासन अपने कार्यों का सही ढ़ंग निर्वहन करे, इसके लिए उस पर नियंत्रण स्थापित करना आवश्यक बन जाता है।

प्रशासन से संबद्ध संस्थाओं तथा संगठनों को जनता के प्रति जवाबदेह बनाने, कानून के प्रति आस्था प्रकट करने और समूची व्यवस्था को अनुशासित ढंग से संचालित करने हेतु यह आवश्यक है कि नियंत्रण व्यवस्था कठोर, व्यावहारिक एवं प्रभावी हो। अमेरिकी प्रशासन पर नियंत्रण स्थापित करने हेतु निम्नांकित प्रणालियां हैं-

1. कांग्रेस द्वारा नियंत्रण
2. राष्ट्रपति द्वारा नियंत्रण
3. न्यायालयों द्वारा नियंत्रण
4. महालेखा नियंत्रक द्वारा नियंत्रण
5. जनमत एवं अन्य माध्यमों द्वारा नियंत्रण

कांग्रेस द्वारा नियंत्रण

शक्ति प थक्करण के सिद्धांत के अंतर्गत जहां शासन के तीनों अंग एक दूसरे से स्वतंत्र हैं वहीं 'अवरोध का संतुलन' का सिद्धांत भी प्रभावी है। प्रतिनिधि सभा तथा सीनेट द्वारा निर्मित कानूनों को ही कार्यपालिका क्रियान्वित करती है अतः कांग्रेस ऐसे कानून बनाती है या आवश्यकता पड़ने पर बना सकती है जिसमें प्रशासनिक उत्तरदायित्व सुनिश्चित हो सके तथा लोक सेवक निरंकुश व्यवहार न करें। सरकार के प्रत्येक कार्य, गतिविधि एवं नीतियों की चर्चा कांग्रेस द्वारा की जा सकती है। प्रतिवर्ष कांग्रेस मे राष्ट्रपति द्वारा दिये जाने वाला संदेश अथवा अभिभाषण तथा उसमें वर्णित नीतिगत सुझाव और भावी कार्यक्रम चर्चा के लिए मुख्याधार बनते हैं। लोक प्रशासन के महत्त्वपूर्ण पदों की नियुक्ति का कार्य राष्ट्रपति करता है किंतु नियुक्तियों का अनुमोदन सीनेट की करती है। अमेरिका में ऐसा कई बार हुआ है जब विवादास्पद या अक्षम व्यक्ति की नियुक्ति को सीनेट ने मंजूरी नहीं दी है। विधायी नियंत्रण के इस स्वरूप के अंतर्गत कांग्रेस के अधिकार व्यापक हैं। राष्ट्रपति, उपराष्ट्रपति सहित न्यायाधीशों द्वारा अनियमिताएं प्रदर्शित करने पर कांग्रेस महाभियोग के माध्यम से उन्हें पद से हटा सकती है। प्रशासनिक विभागों द्वारा निर्मित बजट को कांग्रेस ही स्वीक ति देती है ताकि वित्तीय नियंत्रण बना रहे। सरकारी आय-व्यय के लेखों का परीक्षण करने वाला महालेखा नियंत्रक भी कांग्रेस का ही एक अंग माना जाता है। सरकार द्वारा की गई संधियों का अनुमोदन, महत्त्वपूर्ण प्रकरणों की जांच या अन्वेक्षण तथा कांग्रेस की विभिन्न समितियों के द्वारा विशिष्ट विषयों पर प्रतिवेदन इत्यादि द्वारा विधायी नियंत्रण किया जाता है।

संक्षेप में कांग्रेस निम्नलिखित तरीके प्रशासन पर अपने नियंत्रण हेतू अपनाती है-

1. कांग्रेस कानून पारित कर प्रशासनिक अधिकारियों के संगठन, क्षमता एवं कर्त्तव्यों का निर्देशन करती है।
2. कांग्रेस की समितियां शासन के कार्यों की समीक्षा करती हैं।
3. कांग्रेस के कानून प्रशासनिक नीति, विधि एवं कार्य-प्रणाली निश्चित करते हैं।

4 . अमेरिकी कांग्रेस प्रशासन पर वित्तीय नियंत्रण रखती है। यह कर-कानून पारित करती है, आय का नियंत्रण करती है, व्यय को नियंत्रित करती है, व्यय के लक्ष्य तथा राशि निश्चित करती है, प्रशासनिक अधिकारियों की संख्या का निश्चय करती है तथा आय-व्यय के आलेखों की जांच करती है।

5. कांग्रेस को यह अधिकार है कि दोषी अधिकारियों के विरुद्ध महाभियोग लगाए और यदि वे वास्तव में दोषी हैं तो उनको पद से हटा दे।

6. नगर प्रशासन के योजना-आयोग के निर्वाचित प्रतिनिधियों द्वारा प्रशासन का निर्देशन किया जाता है।

राष्ट्रपति द्वारा नियंत्रण

राष्ट्रपति स्वयं कार्यपालिका के प्रमुख हैं अतः इसे प्रशासन पर कार्यपालिका द्वारा नियंत्रण भी कहा जाता है। अमेरिका में संघीय लोक प्रशासन पर नियंत्रण, निर्देशन, समन्वय, पर्यवेक्षण तथा जवाबदेयता का दायित्व राष्ट्रपति को सौंपा गया है। राष्ट्रपति को यह अधिकार है कि वे लोक प्रशासन के कार्यकरण एवं व्यवहार को संविधान की सीमा में रखते हुए इच्छानुसार परिवर्तित कर लें। इसी क्रम में मंत्रिमंडल के सदस्यों, प्रशासनिक विभागों, आयोगों, अभिकरणों इत्यादि में राष्ट्रपति अपनी पसंद के व्यक्ति नियुक्त करता है। स्पष्ट है राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त किए जाने वाले व्यक्ति, संबंधित राजनीतिक दल की नीतियों, घोषणाओं तथा राष्ट्रपति की भावनाओं से सहमत होते हैं। ये अधिकारी राष्ट्रपति के निर्देशानुसार संपूर्ण प्रशासनिक संगठन पर नियंत्रण स्थापित करते हैं। जिन अधिकारियों को राष्ट्रपति नियुक्त करता है उन्हें पद से हटा भी सकता है, यदि किसी प्रकार के विवादास्पद मुद्दे सामने आएं। राष्ट्रपति कार्यालय में पदस्थापित सलाहकार एवं नियंत्रक शाखाएं राष्ट्रपति को दैनिक सूचनाएं प्रदान करती हैं। गंभीर प्रक ति के अपराधों की Federal Bureau of Investigation (F.B.I.) द्वारा जांच करवाई जा सकती है। संघीय पुलिस, सेंट्रल इंटेलीजेंस एजेंसी (C.I.A.) तथा अन्य जासूसी अभिकरण राष्ट्रपति के निरंतर संपर्क मे रहते हैं। विदेशी सूचना निगरानी अधिनियम 1978 के प्रवर्तन के पश्चात् जब अमेरिकी लोक प्रशासन तथा अन्य संगठनों में कार्य कर रहे विदेशी नागरिकों की गतिविधियों पर बड़ी निगरानी भी रखी जाती है। यद्यपि सूचना के अधिकार से संबंधित अधिनियम 1966 में पारित (1978 में संशोधित) हो चुका है फिर भी प्रशासनिक सूचनाएं व्यक्तियों के बजाय व्यापार तथा व्यावसायिक संगठनों की ही दी जा रही है क्योंकि इससे प्रशासनिक नियंत्रण में कमी का भय अभी भी बना हुआ है। प्रशासनिक नियंत्रण के लिए राष्ट्रपति कार्यालय से निरंतर आदेश भी जारी होते रहते हैं तथा प्रशासनिक संगठन, कार्य-प्रगति से राष्ट्रपति को अवगत भी कराते रहते हैं।

न्यायालयों द्वारा नियंत्रण

कांग्रेस द्वारा निर्मित तथा कार्यपालिका द्वारा कार्यान्वित कानूनों की व्याख्या का अधिकार न्यायपालिका के पास सुरक्षित है। संवैधानिक उपबंधों के विरुद्ध किसी भी कानून को न्यायपालिका अवैधानिक करार दे सकती है। इसी प्रकार 'विधि के शासन' के विरुद्ध यदि कोई प्रशासनिक निर्णय, अवैधानिक प्रक्रिया तथा अधिकार क्षेत्र का उल्लघंन से संबंधित क त्य होता है तो न्यायपालिका नियंत्रण स्थापित कर सकती है। कांग्रेस के कानूनों तथा प्रशासनिक निर्णयों का "न्यायिक पुनरावलोकन" एक सार्थक प्रयास माना जाता है। कुछ नियामकीय आयोग जैसे अंतर्राज्यीय व्यापार आयोग तथा कुछ प्रशासनिक विभाग जैसे पेटेंट अपील बोर्ड भी न्यायिक कार्य करते हैं।

महालेखा नियंत्रक द्वारा नियंत्रण

संयुक्त राज्य अमेरिका में संघीय आय-व्यय के लेखों की जांच के लिए एक स्वतंत्र महालेखा नियंत्रक होता है जिसे कांग्रेस का एक अंग माना जाता है। महालेखा नियंत्रक को नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा पंद्रह वर्ष के लिए की जाती है तथा अधिकतम 70 वर्ष की आयु तक वह इस पद पर रह सकता है। सीनेट की स्वीक ति से पदस्थापित महालेखा नियंत्रक को सरकार के समस्त वित्तीय लेखों, लेन-देन तथा बजट मामलों की छानबीन एवं जांच का अधिकार प्राप्त है। अंकेक्षण द्वारा निस्संदेह वित्तीय अनियमितताओं पर अंकुश रखा जा सकता है तथा प्रशासनिक जवाबदेयता सुनिश्चित की जा सकती है।

जनमत एवं अन्य माध्यमों द्वारा नियंत्रण

लोकतंत्र में जनता ही संप्रभु है क्योंकि आधुनिक शासन व्यवस्थाएं जनता द्वारा चयनित प्रतिनिधियों द्वारा संचालित होती हैं। यदि शासन की कार्य प्रणाली जनता की भावनाओं के विपरीत हो अथवा लोक प्रशासन की असफलता सामने आएं तो जनमत, शासन के विपरीत हो जाता है। स्पष्ट है जनमत का प्रत्यक्ष प्रभाव चुनावों मे दिखाई देता है। जनमत को ध्यान में रखते हुए

अनेक प्रशासनिक निर्णय प्रभावित होते रहे हैं क्योंकि प्रशासनिक नियंत्रण में जनता से बढ़कर कोई भी विधि नहीं है। इस प्रकार लोक सेवकों के लिए बनाई गई आचार संहिता, पदसोपान व्यवस्था, अनुशासनात्मक कार्यवाही, कार्मिक संघ तथा आंतरिक कार्यप्रणाली भी नियंत्रण के प्रभावी साधन हैं। भारत की भांति अमेरिका में भी प्रेस को स्वतंत्रता प्राप्त है अतः जनसंचार के माध्यमों से भी प्रशासनिक नियंत्रण संभव होता है। विश्व प्रसिद्ध "वाटरगेट कांड", जिसके कारण तत्कालीन राष्ट्रपति रिचर्ड निक्सन को त्यागपत्र देना पड़ा था, एक एक खोजी पत्रकार द्वारा ही सामने लाया गया था। विपक्षी दल, औद्योगिक समूह, कार्मिक संघ श्रमिक यूनियनें तथा अन्य कई दबाव समूह भी प्रशासन पर नियंत्रण में सहायक सिद्ध होते हैं।

सारांशतः कहा जा सकता है कि विश्व की महान शक्ति, अमेरिका में प्रशासनिक नियंत्रण की कई प्रणालियां प्रभावी हैं क्योंकि लोकतांत्रिक एवं लोककल्याणकारी राज्यों में प्रशासनिक शक्ति पर नियंत्रण रखना आवश्यक है अन्यथा नौकरशाही की निरंकुशता बढ़ने में समय नहीं लगता है।

अध्याय-26

फ्रांस में प्रशासन पर नियंत्रण व्यवस्था

(Control over Administration in France)

फ्रांसिसी लोक प्रशासन अति उत्तम श्रेणी का माना जाता है जहां प्रशासनिक कार्यकुशलता, प्रतिबद्धता तथा स्थायित्व प्रमुख गुण हैं। स्पष्ट है ऐसी प्रशासनिक व्यवस्था में नियंत्रण-प्रणालियां भी सुस्थापित होती हैं। नियंत्रण की प्रभावी व्यवस्था के बिना प्रशासनिक कार्यकुशलता की अपेक्षा करना व्यर्थ है। फ्रांस में निम्नांकित पद्धतियों से प्रशासन पर नियंत्रण स्थापित किया जाता है -

1. विधायी नियंत्रण
2. कार्यपालिका-नियंत्रण
3. न्यायिक नियंत्रण
4. जनमत एवं अन्य साधन

विधायी नियंत्रण

पंचम गणराज्य के वर्तमान संविधान के अनुसार फ्रांस में संसदीय तथा अध्यक्षीय दोनों प्रकार की शासन प्रणालियों का समावेश है। संसद के दोनों सदन-सीनेट एवं राष्ट्रीय सभा, समस्त राष्ट्रीय कानूनों को स्वीक त करते हैं। सरकार द्वारा प्रस्तुत बजट तथा नीतियों का अनुमोदन भी संसद ही करती है। यद्यपि फ्रांस की मंत्रिपरिषद संसद का भाग नहीं होती है तथापि संसद की कार्यवाहियों में भाग लेना एवं सरकार का पक्ष प्रस्तुत करना उसका दायित्व है। मंत्रिपरिषद को राष्ट्रीय सभा में विश्वास मिलना आवश्यक है क्योंकि मंत्रिपरिषद, राष्ट्रीय सभा के प्रति उत्तरदायी है। सरकार के किसी कार्यक्रम, नीति, योजना अथवा प्रशासनिक अकर्मण्यता के विरुद्ध संसद में प्रश्न पूछे जा सकते हैं तथा वाद-विवाद हो सकती है। संसदीय प्रश्न किसी भी प्रशासनिक व्यवस्था को कटघरे में लाने के लिए अचूक सिद्ध हो सकते हैं। संवैधानिक परिषद नामक सशक्त निकाय भी कानूनों, निर्वाचन तथा अन्य जटिल मुद्दों पर परामर्श देने का कार्य करती है।

कार्यपालिका नियंत्रण

कार्यपालिका के शीर्ष पर विराजमान राष्ट्रपति, संविधान तथा राष्ट्रीय मूल्यों का संरक्षक होता है लेकिन प्रधानमंत्री एवं उनकी मंत्रिपरिषद को संविधान द्वारा सरकार-संचालन का दायित्व सौंपा गया है। प्रत्येक मंत्री अपने विभाग एवं अधीनस्थ कार्यालयों पर नियंत्रण रखते हैं। मंत्रिपरिषद की अध्यक्षता करते समय राष्ट्रपति, महत्त्वपूर्ण प्रशासनिक विषयों पर सूचनाएं मांग सकता है। लोक प्रशासन के कुशल संचालन हेतु निर्मित अधिनियम तथा नियम एवं कार्मिक आधार संहिता के माध्यम से भी कार्यपालिका नियंत्रण करती है। नियुक्ति एवं पदमुक्ति की शक्तियां सदैव सर्वोच्च सत्ता के हाथों में रहती है।

लोक प्रशासन पर आंतरिक नियंत्रण बनाए रखने के लिए प्रत्येक मंत्रालय में महानिरीक्षक का पद होता है। यह अधिकारी अन्य निरीक्षकों के साथ (जैसे वित्तीय निरीक्षक) प्रशासनिक कार्यकलापों एवं वित्तीय अनियमितताओं पर कड़ी नजर रखता है। निरंतर दौरों, आकस्मिक निरीक्षण तथा सूक्ष्म जांच के द्वारा पकड़ में आने वाली अनियमितताओं, प्रशासनिक लापरवाहियों तथा भ्रष्टाचार के प्रकरण उच्चाधिकारियों तक प्रस्तुत किए जाते हैं जिन पर तत्काल कार्यवाही होती है। ये निरीक्षक प्रशासनिक तंत्र में

सुधार के उपाय भी सुझा सकते हैं तथा इनके परामर्श को प्रायः स्वीकार किया जाता है क्योंकि वैधानिक द ष्टि से ये पद स्वतंत्रता प्राप्त तथा अधिकार संपन्न हैं।

इसके साथ-साथ प्रशासनिक ढ़ांचा सीढ़ीनुमा होने के कारण उच्च स्तर के अधिकारी निम्न स्तर के अधिकारियों पर अपना नियंत्रण स्थापित करते हैं। यह ढ़ांचा इतना कठोर (Rigid) है कि प्रत्येक स्तर पर प्रक्रियाओं एवं कानूनों को अपनाया जाता है और किसी भी स्तर का उल्लंघन किए बगैर प्रशासनिक आदेशों का पालन किया जाता है।

इसके अतिरिक्त विभिन्न विभागों के प्रिफैक्टों की रिपोर्ट (Prefectorial Reports) भी कार्यपालिका के नियंत्रण का महत्त्वपूर्ण अंग है। प्रशासनिक सुविधा के लिए फ्रांस लगभग 26 क्षेत्र एवं 100 विभागों में विभक्त है। प्रत्येक विभाग का एक प्रिफैक्ट होता है जो निम्न दो रूपों में कार्य करता है- पहला विभाग के अध्यक्ष के रूप में तथा दूसरा केंद्र सरकार के प्रतिनिधि के रूप में। प्रत्येक प्रिफैक्ट अपने विभाग में केंद्र सरकार के Projects का पर्यवेक्षण करता है और मुख्य संयोजक की भूमिका निभाता है। विभाग का मुख्य प्रशासनिक अधिकारी होने के कारण अपने तहत स्थानीय प्रशासन पर पर्यवेक्षण एवं नियंत्रण बनाए रखता है। केंद्र सरकार का प्रतिनिधि होने के कारण वह अपने विभाग के संबंध में विस्त त रिपोर्ट तैयार करता है जो केंद्र सरकार के पास भेजी जाती है। इस प्रकार ये Prefectorial Reports कार्यपालिका के प्रशासन पर नियंत्रण का महत्त्वपूर्ण तरीका है।

न्यायिक नियंत्रण

अमेरिका ब्रिटेन के समान फ्रांस में भी प्रशासन पर न्यायपालिका का नियंत्रण होता है। फ्रांस में न्यायालयों का संगठन एकीक त न होकर संघात्मक है। न्यायिक अधिकार किसी एक संस्था में केंद्रित नहीं हैं, बल्कि पांच प्रकार के प थक-प थक न्यायालयों में हैं, जो निम्न हैं-

1. साधारण न्यायालय;
2. प्रशासकीय न्यायालय;
3. संवैधानिक परिषद;
4. उच्च न्यायिक परिषद;
5. न्याय का उच्च न्यायालय।

फ्रांस के न्यायालय की मुख्य विशेषता है साधारण न्यायालय और प्रशासकीय न्यायालय। साधारण न्यायालयों में केवल गैर-सरकारी व्यक्तियों से संबंधित मुकदमों की सुनवाई होती है। साधारण न्यायालय हैं- शांति न्यायाधीश के न्यायालय, प्रारंभिक न्यायालय, पुनरावेदन न्यायालय, निषेध-न्यायालय (Court of Assize), विराम न्यायालय।

प्रशासकीय न्यायालय केवल लोक-सेवक अर्थात् सरकारी कर्मचारियों से संबंधित मुकदमों की सुनवाई करते हैं। यहां यह स्मरणीय है कि फ्रांस में अन्य देशों के विपरीत दो प्रकार के प्रशासनिक कानून हैं। सामान्य जनता के लिए दीवानी कानूनों और दीवानी न्यायालयों की व्यवस्था है, जबकि शासकीय कर्मचारियों से संबंधित मुकदमों का फैसला प्रशासकीय कानूनों द्वारा होता है।

फ्रांस में प्रशासनिक न्यायालय के दो स्तर हैं- प्रादेशिक परिषद और राज्य परिषद। निम्नतम स्तर पर प्रादेशिक परिषद होती है जो अंतर्विभागीय परिषद के नाम से भी जानी जाती है। प्रत्येक परिषद का कार्यक्षेत्र 2 से 7 डिपार्टमेंट तक रहता है। इनकी कुल संख्या 23 है। प्रत्येक परिषद में एक सभापति तथा चार पार्षद होते हैं। प्रशासन संबंधी मुकदमे सर्वप्रथम इन्हीं न्यायालयों में आते हैं। ये निर्धारण (assessment) संबंधी विवादों, स्थानीय निर्वाचन, सार्वजनिक निर्माण, समझौता भंग आदि प्रश्नों का निर्णय करते हैं। इनके निर्णयों के विरुद्ध राज्य-परिषद में अपील की जाती है।

राज्य-परिषद राष्ट्र का सर्वोच्च प्रशासकीय न्यायालय है। इसका अध्यक्ष फ्रांस का न्यायमंत्री होता है। उसके अधीन एक उपाध्यक्ष तथा पांच विभागाध्यक्ष रहते हैं। इस परिषद में 149 सदस्य होते हैं जिनकी नियुक्ति न्यायमंत्री के परामर्श से राष्ट्रपति करता है। यह एक स्वतंत्र, शक्तिशाली और प्रभावपूर्ण संस्था है। यह प्रादेशिक परिषदों के विरुद्ध अपील सुनती है। प्रशासकीय न्याय का वास्तविक उत्तरदायित्व इसी के कंधों पर है। यह मंत्रिमंडल को उसके द्वारा जारी किय जाने वाले आदेशों अथवा आज्ञाप्तियों के संबंध में परामर्श देती है। सरकार के विभिन्न विभागों के बीच उत्पन्न विवादों का यही समाधान करती है। इसकी काय-प्रणाली बहुत साधारण है। यह संस्था जनता के अधिकारों को सुरक्षित करने में महत्वपूर्ण कार्य करती है। इसके निर्णय

अंतिम होते हैं। इसकी दो प्रकार की शक्तियां हैंः सरकार के विधायी परामर्शदाता के रूप में और देश के सर्वोच्च न्यायालय के रूप में।

इस प्रकार फ्रांस में न्यायिक नियंत्रण की एक विशेष प्रकार की व्यवस्था है तथा ब्रिटेन के समान ट्रिब्यूनल जैसी कोई व्यवस्था नहीं है।

जनमत एवं अन्य साधन

अन्य यूरोपीय देशों की भांति फ्रांस की जनता भी अपने अधिकारों एवं कर्त्तव्यों के प्रति पूर्ण सजग है। अतः किसी भी प्रकार के कार्यक्रम का प्रमाण जनमत के रूझान से मिल जाता है। विगत कई दशकों से फ्रांस में किसी भी दल को लंबे समय तक पूर्ण बहुमत नहीं मिला है। बहुधा राष्ट्रपति तथा प्रधानमंत्री प थक-प थक दलों से संबद्ध होते हैं। मतदाताओं के इस चतुराई भरे जनमत के कारण शासनतंत्र अधिक कुशल तथा लोककल्याणकारी बना रहता है। संवैधानिक संशोधनों तथा अन्य महत्त्वपूर्ण अवसरों पर लोक निर्णय (रिफ्रेन्डम) की व्यवस्था भी फ्रांस में प्रचलित है। जनता द्वारा राज्य परिषद में दायर होने वाले मुकदमे भी प्रशासन पर नियंत्रण में सहायक सिद्ध होते हैं। स्वतंत्र प्रेस, दबाव समूह, विपक्षी राजनीतिक पार्टियां तथा पादरियों की सीख भी प्रशासन के लिए नियंत्रणकर्त्ता की भूमिका निभाती हैं। यद्यपि फ्रांस एक पथ निरपेक्ष राष्ट्र है तथापि लगभग सभी नागरिक रोमन कैथोलिक हैं। किसी समय जर्मनी के अधीन रहे क्षेत्र में, आज भी फ्रांस-सरकार पादरियों (Clergy) की नियुक्ति करती है जो लोक सेवक ही माने जाते हैं।

अध्याय-27
जापान में प्रशासन पर नियंत्रण व्यवस्था
(Control Over Administration in Japan)

आधुनिक समय में राज्य की प्रक ति कल्याणकारी राज्य की हो जाने के कारण प्रशासन की गतिविधियों में अत्याधिक प्रसार हुआ है। परिणामस्वरूप प्रशासन को अधिक से अधिक शक्तियां प्रदान की गई हैं। प्रशासन अपनी शक्तियों का दुरुपयोग न कर सके, इसलिए उस पर नियंत्रण की आवश्यकता भी अत्यधिक बढ़ गई है क्योंकि जनतांत्रिक शासन व्यवस्थाओं की सफलता के लिए यह अपरिहार्य है कि प्रशासन को अनुत्तरदायी, निरंकुश एवं स्वेच्छाचारी बनने से रोका जाए और लोकसेवकों को जनता के सम्मुख उत्तरदायी बनाया जाए। जापान में प्रशासन पर नियंत्रण स्थापित करने के संबंध में पूर्ण व्यवस्था की गई है। जापान में प्रशासन पर नियंत्रण हेतू निम्नलिखित प्रणालियां हैं-

1. **व्यवस्थापिका द्वारा नियंत्रण** (Legislative Control)
2. **कार्यपालिका द्वारा नियंत्रण** (Executive Control)
3. **न्यायपालिका द्वारा नियंत्रण** (Judicial Control)

विधायनी नियंत्रण

(Legislative Control/Control by Diet)

जापान में संसदीय शासन प्रणाली पाई जाती है और यहां की संसद डाइट (Diet) के नाम से जानी जाती है। जापान में डाइट द्वारा प्रशासन की गतिविधियों पर अंकुश लगाया जाता है। यह न केवल कानून बनाती है बल्कि प्रशासन के मामलों में भी काफी हद तक हस्तक्षेप करती है। प्रशासन समस्त नीतियों का निर्धारण डाइट के द्वारा ही किया जाता है। इसके साथ-साथ विभिन्न कानूनों के निर्माण के संबंध में डाइट के सदस्य वाद-विवाद करते हैं।

प्रशासनिक कार्यकलापों के विरूद्ध अनेक प्रश्न विरोधी पक्ष द्वारा पूछे जाते हैं। ये प्रश्न मौखिक या लिखित हो सकते हैं। जापान में लिखित प्रश्न पूछने हेतू कम से कम 7 दिन का नोटिस देना होता है। प्रश्नकाल को संसदीय प्रजातंत्र में सबसे सशक्त विधि माना जाता है क्योंकि इसके द्वारा संपूर्ण प्रशासन को चौकन्ना रखा जा सकता है।

इसके साथ-साथ बजट पर वाद-विवाद के द्वारा डाइट प्रशासन पर अपना प्रभावशाली नियंत्रण स्थापित रखती है। इसकी अनुमति के बिना न तो एक पैसा खर्च किया जा सकता है और न ही कोई नया कर लगाया जा सकता है। खर्च पर नियंत्रण स्थापित करने के लिए डाइट के द्वारा Board of Audit की स्थापना की गई है जो आय-व्यय के लेखों सहित सामग्री के हिसाब-किताब की जांच करता है और अनियमितताओं को उजागर करने की कोशिश करता है।

इसके अतिरिक्त विरोधी दलों द्वारा सरकार के खिलाफ अविश्वास प्रस्ताव भी सरकार अथवा प्रशासन की गतिविधियों पर नियंत्रण का महत्त्वपूर्ण शस्त्र है। इसका प्रयोग सरकार की पूरी या आंशिक नीति के दोषपूर्ण तथा आपत्तिजनक होने पर प्रयोग किया जाता है और यदि यह प्रस्ताव पारित हो जाता है तो सरकार को अपना त्यागपत्र देना पड़ता है। डाइट के द्वारा गठित समितियां भी प्रशासन पर नियंत्रण की दिशा में महत्त्वपूर्ण पहलू है। ये समितियां प्रशासन के द्वारा की गई अनियमितताओं की जांच पड़ताल करती हैं। डाइट को प्रशासनिक अधिकारियों द्वारा की गई सत्ता के दुरुपयोग के संबंध में अपनी रिपोर्ट पेश करती हैं।

इसके साथ-साथ डाइट प्रदत्त-व्यवस्थापन के तहत कार्यपालिका द्वारा निर्मित कानूनों की जांच कर सकती है और उनकी समीक्षा कर सकती है।

कार्यपालिका द्वारा नियंत्रण

(Executive Control over Administration)

जापान में कार्यपालिका भी प्रशासन पर नियंत्रण का एक प्रभावशाली साधन है। यहां पर संसदीय शासन प्रणाली अपनाए जाने के कारण शासन के समस्त कार्यों का उत्तरदायित्व (सरकार अर्थात् मंत्रिमंडल) पर होता है जो अपने इन सभी कार्यों के लिए डाइट के प्रति उत्तरदायी होती है। मंत्रिमंडल का प्रत्येक सदस्य किसी न किसी विभाग का मुखिया होता है और उसका विभाग पर पूर्ण नियंत्रण होता है। वह अपने विभाग की सफलता तथा असफलता के लिए उत्तरदायी होता है। उसके पास अपने विभाग के निर्देशन, निरीक्षण तथा नियंत्रण की शक्ति होती है। उसकी ये शक्तियां समस्त विभाग पर लागू होती हैं और विभाग का प्रत्येक कर्मचारी व अधिकारी उसके नेत त्व के तहत कार्य करता है। कार्यपालिका प्रशासन के महत्त्वपूर्ण पदों पर नियुक्ति एवं पदमुक्ति भी करती है। प्रशासन से संबंधित नीतियां, कानून, नियम एवं प्रक्रियाएं भी कार्यपालिका के द्वारा निर्धारित की जाती है। इसके साथ-साथ प्रशासनिक व्यवस्था में सुधार, संशोधन तथा पुर्नसंरचना का कार्य भी कार्यपालिका के द्वारा किया जाता है।

प्रदत्त व्यवस्थापन प्रक्रिया ने कार्यपालिका को प्रशासन पर नियंत्रण स्थापित करने का प्रमुख साधन प्रदान किया है। इस व्यवस्थापन प्रक्रिया के तहत निर्मित कानूनों की मदद से प्रशासनिक अधिकारियों की सत्ता की सीमा को निर्धारित किया जाता है।

कार्यपालिका अगर जरूरी समझे तो किसी भी विभाग अथवा अधिकारी के विषय में जांच पड़ताल के आदेश दे सकती है और संबंधित अधिकारी के खिलाफ अनुशासनात्मक कार्यवाही कर सकती है।

इसके साथ-साथ कार्यपालिका प्रिफैक्चर के गर्वनर (Governors of Prefectures) एवं म्यूनिसिपलिटी के मेयर (Mayors of Muncipalities) जो केंद्रीय सरकार के एजेंट के रूप में कार्य करते हैं, के द्वारा भेजी गई प्रशासनिक रिपोर्टो की मदद से भी प्रशासन की गतिविधियों को नियंत्रित करती है। इसके अतिरिक्त प्रशासनिक कार्यों के संचालन हेतू बजटीय प्रणाली को जापान में अपनाया गया है जिसके अनुसार प्रत्येक विभाग की व्यय सीमा बजट द्वारा निर्धारित की जाती है और विभागीय अधिकारियों को इस व्यय सीमा में रहकर ही कार्य करना पड़ता है। अतः बजट के माध्यम से भी कार्यपालिका प्रशासन के समस्त कार्यकलापों पर नियंत्रण रखती है।

इस प्रकार कार्यपालिका का प्रशासन पर नियंत्रण अनवरत बना रहता है।

न्यायपालिका द्वारा नियंत्रण

(Judicial Control over Administration)

हालांकि फ्रांस की भांति जापान में प्रशासनिक न्यायालय नहीं पाए जाते लेकिन फ्रांस न्यायपालिका पुनर्रावलोकन की शक्ति (Power of Judicial Review) रखती है। इसी कारण जापान की न्यायपालिका प्रशासनिक अधिकारियों के कार्यों की वैधता के परीक्षण का अधिकार रखती है। प्रशासनिक मामलों में न्यायपालिका द्वारा हस्तक्षेप कर नागरिकों के अधिकारों की सुरक्षा निम्न ढंग से की जाती है।

1. यदि किसी अधिकारी ने अपनी शक्ति परिधि से बाहर कोई कार्य संपादित किया है तो न्यायालय उसके कार्य को अवैध घोषित कर सकती है।
2. यदि किसी सरकारी अधिकारी या कर्मचारी ने दुर्भावनावश या प्रतिशोध लेने की नीयत से कोई कार्य किया है और न्यायपालिका में यह तथ्य सिद्ध हो जाता है तो संबंधित अधिकारी और कर्मचारी को दंडित किया जा सकता है।
3. यदि किसी अधिकारी या कर्मचारी द्वारा कानून की गलत व्याख्या करने से किसी नागरिक को कोई क्षति पहुंची है तो न्यायालय में अपील की जा सकती है। यदि न्यायालय द्वारा यह प्रमाणित कर दिया जाये तो संबंधित अधिकारी और कर्मचारी के विरुद्ध कार्यवाही की जा सकती है।
4. यदि किसी सरकारी अधिकारी या कर्मचारी द्वारा कानून द्वारा निर्धारित प्रक्रिया का अनुसरण नहीं किया गया हो और उसे चुनौती दी जाती है तो न्यायपालिका द्वारा उसे अवैध घोषित किया जा सकता है।

अध्याय-28
स्विट्जरलैंड में प्रशासन पर नियंत्रण व्यवस्था
(Control Over Administration in Switzerland)

स्विट्जरलैंड लोकतांत्रिक मूल्यों का रक्षक तथा "प्रजातंत्र का घर" कहा जाता है। यहां पर राजशाही शासन व्यवस्थाओं तथा एक व्यक्ति के स्थान पर वास्तविक प्रजातंत्रात्मक एवं बहुल कार्यपालिकाओं का प्रचलन है। स्विट्जरलैंड के नागरिक प्रत्यक्ष लोकतंत्र के प्रबल समर्थक हैं। प्रशासन की गतिविधियों के अत्यंत प्रसार होने के कारण यहां के प्रशासन के शक्तियों में भी अत्याधिक विकास हुआ है। प्रशासन अपनी शक्तियों का उचित ढंग से प्रयोग करे और जनता के प्रति उत्तरदायी बने रहे, इस संबंध में स्विट्जरलैंड प्रशासन पर नियंत्रण के लिए निम्नलिखित विधियां अपनाई जाती हैं-

1. संघीय सभा (विधानपालिका) द्वारा नियंत्रण (Legislative Control/Control by Federal Assembly)
2. संघीय परिषद (कार्यपालिका) द्वारा नियंत्रण (Control by Federal Council)
3. संघीय ट्रिब्यूनल द्वारा नियंत्रण (Control by Federal Tribunals)
4. जनता का सीधा नियंत्रण (Direct Control by the People)

संघीय सभा द्वारा नियंत्रण
(Control by Federal Assembly)

स्विट्जरलैंड की विधानपालिका संघीय सभा के नाम से जानी जाती है। संघीय सभा कानूनों के निर्माण के साथ-साथ प्रशासन संबंधी मामलों में भी हस्तक्षेप करती है। प्रशासन संबंधी सभी नीतियों का निर्धारण इसी के द्वारा किया जाता है। यह किसी विशेष संबंध में प्रशासन को Postulates & Motions के रूप में हिदायतें (instructions) दे सकती है। संघीय सभा के द्वारा ही संघीय परिषद एवं संघीय न्यायालय के सदस्यों, संघ के चांसलर तथा संकट काल के दौरान मुख्य सेनाध यक्ष को चुना जाता है। इस प्रकार सरकार के महत्त्वपूर्ण पदों पर नियुक्ति का अधिकार संघीय सभा के पास है। यह संघीय लोक सेवाओं के संबंध में भी अपना पर्यवेक्षण बनाए रखती है।

वित्त संबंधी मामलों में भी संघीय सभा का प्रशासन पर नियंत्रण प्रभावशाली बना रहता है। बजट वित्त-नियंत्रण का मुख्य साधन है। इसके अतिरिक्त संघीय परिषद प्रतिवर्ष वार्षिक वित्तीय रिपोर्ट संघीय सभा के पास भेजती है जिसे संघीय सभा की वित्तीय समिति जिसमें प्रत्येक सदन से 3-3 सदस्य होते हैं, के द्वारा जांचा जाता है और संघीय परिषद के द्वारा किए गए खर्च संबंधी खामियों को उजागर किया जाता है।

संघीय सभा में संघीय परिषद के सदस्यों से प्रशासन की कार्यवाही के संबंध में प्रश्न भी पूछे जा सकते हैं। इसके साथ-साथ संघीय परिषद अपनी प्रशासन संबंधी गतिविधियों के विषय में एक विस्त त प्रशासनिक रिपोर्ट भी संघीय सभा को पेश करती है जिस पर संघीय सभा के सदस्य गहन रूप से विचार करते हैं और प्रशासन की कमियों की तरफ जनता का ध्यान खींचते हैं। अन्य देशों की भांति अनेक प्रकार की समितियां स्विस संघीय सभा की मदद करती हैं।

संघीय परिषद द्वारा नियंत्रण
(Control by Federal Council)

स्विट्रलैंड में संघीय परिषद भी प्रशासन पर नियंत्रण का एक प्रभाशाली साधन है। स्विटजरलैंड के केंद्रीय प्रशासन में मंत्रालयों अथवा विभागों की संख्या अधिक नहीं है बल्कि केवल 7 है। संघीय परिषद में कार्यरत (बहुल कार्यपालिका) सातों सदस्यों

को एक-एक विभाग सौंपा जाता है। प्रत्येक सदस्य का अपने विभाग पर पूर्ण नियंत्रण होता है और वह उस विभाग की सफलता या असफलता के लिए उत्तरदायी होता है। वह अपने विभाग के निर्देशन, निरीक्षण तथा नियंत्रण की शक्ति रखता है। विभाग का प्रत्येक कर्मचारी व अधिकारी अपनी प्रशासनिक जिम्मेदारियों के निर्वाहन के संबंध में अपने विभाग के मुखिया के प्रति जिम्मेदार होती है।

इसके साथ-साथ संघीय परिषद, संघीय सभा के द्वारा की गई नियुक्तियों के अतिरिक्त, प्रशासन के अन्य महत्त्वपूर्ण पदों पर नियुक्ति एवं पदमुक्ति का अधिकार भी रखती है। इस सात सदस्यीय संघीय परिषद को नीति निर्माण, विदेशी संबध नियमन, सेना पर नियंत्रण, कैंटनों का परामर्श देने संबंधि अधिकार भी प्राप्त हैं।

संघीय परिषद कैंटनों के प्रशासन पर भी अपना पर्यवेक्षण एवं नियंत्रण बनाए रखती है। यह विभिन्न कैंटनों के मध्य-धार्मिक आधार पर भेदभाव संबंधित मामलों तथा कैंटनों की व्यापारिक व्यवहार संबंधित मामलों पर सुनवाई करने की न्यायिक शक्तियां रखती है।

संघीय ट्रिब्यूनलों द्वारा नियंत्रण

(Control by Federal Tribunals)

स्विस संघीय न्यायालय को न्यायिक पुर्नावलोकन का आंशिक अधिकार प्राप्त है क्योंकि वहां संविधान की रक्षा का कार्य संघीय न्यायालय का न होकर सीधा जनता के हाथों में है। इन्हें केवल कैंटनों द्वारा निर्मित कानूनों के पुर्नावलोकन का अधिकार प्राप्त है।

स्विट्जरलैंड में प्रशासनिक कानूनों का प्रभाव पाया जाता है। यहां पर ब्रिटेन की भांति एक ही समान कानून नहीं है बल्कि फ्रांस की तरह 'प्रशासनिक कानूनो' का प्रवर्तन है। इस व्यवस्था के अंतर्गत सामान्य तथा प्रशासनिक मुकदमों की सुनवाई अलग-अलग होती है। संघीय प्रशासनिक न्यायालय (Federal Administrative Tribunals) को 1925 के कानून द्वारा, संघीय न्यायालय की ही एक शाखा बनाया गया है। प्रशासनिक न्यायालय प थक से अस्तित्व प्राप्त अदालत नहीं है फिर भी प्रशासनिक कानूनों का क्रियान्वन सामान्य कानूनों से प थक है। ट्रिब्यूनल मं संघीय विभागों तथा उनसे संबंधित इकाईयों के द्वारा लिए गए निर्णयों या उनके द्वारा किए गए कानूनों के उल्लंघन जैसे कि किसी अधिकारी द्वारा सत्ता का दुरुपयोग, प्रशासनिक प्रक्रियाओं को सही ढंग से न अपनाया जाना, क्षेत्राधिकार का अभाव आदि को चुनौती दी जा सकती है। इसके साथ ये प्रशासनिक ट्रिब्यूनल संघीय एवं कैंटनों के अधिकारियों के झगड़ों का भी निपटारा करते हैं।

जनता का सीधा नियंत्रण

(Direct Control of the People)

स्विट्जरलैंड को "प्रत्यक्ष लोकतंत्र की पाठशाला" कहा जाता है क्योंकि ये देश में प्रजातांत्रिक मूल्यों का प्रसार अत्यंत व्यापकता एवं गहनता लिए हुए है जिन्हें संविधान, सरकार एवं आम जनता द्वारा आस्थापूर्वक स्वीकार किया गया है। इसी कारण स्विस प्रशासनिक व्यवस्था पर जनता का सीधा नियंत्रण बना रहता है। प्रत्येक्ष लोकतंत्रात्मक व्यवस्था के तहत प्रतिवर्ष अप्रैल या मई माह में किसी रविवार को प्रातःकाल में सार्वजनिक स्थल पर खुले में सभी मतदाता अपने हाथ उठाकर विधायिका, मंत्रिमंडल, उच्चाधिकारियों, बजट एवं कानून के क्रम में स्वीक ति देते हैं। सभी मतदाताओं की उपस्थित अनिवार्य है और आज तक गंभीर विवाद या संघर्ष की स्थिति उत्पन्न नहीं हुई।

अध्याय-29

इंग्लैंड में नागरिकों की शिकायतों को दूर करने के लिए जन-अभियोग

[Machinery for the Removal of Citizen's Grievances in UK (England)]

इंग्लैंड में सरकार का कार्यक्षेत्र बढ़ जाने के कारण नागरिक और शासन के मध्य मन-मुटाव के अवसर बढ़े हैं। प्रशासन के प्रति नागरिकों की विभिन्न समस्याएं, शिकायतें एवं अभियोग रहते हैं। जिनके निवारणार्थ यहां पर समुचित तंत्र की व्यवस्था की गई है। प्रशासन के प्रति जन-अभियोगों के निवारण के लिए यहां पर न्यायपालिकाओं को उपयुक्त नहीं समझा गया है और ट्रिब्यूनल व्यवस्था (Tribunal System) का विकास हुआ है। इस व्यवस्था के अंतर्गत प्रभावित व्यक्ति एक उच्चतर प्राधिकार के समक्ष अपील करता है और प्रशासनिक कार्य की पुनरीक्षा करा सकता है।

इस ट्रिब्यूनल व्यवस्था के साथ-साथ जन शिकायतों को दूर करने के लिए संबंध में इंग्लैंड में ओम्बुड्समैन की स्थापना भी की गई है जो संसदीय आयुक्त या Parliamentary Commissioner के नाम से जाना जाता है। इस प्रकार ब्रिटेन में जन शिकायतों को दूर करने संबंधी Machinery का वर्णन निम्न प्रकार है-

1. संसदीय आयुक्त (Parliamentary Commissioner)
2. प्रशासनिक ट्रिब्यूनल (Administrative Tribunals)

संसदीय आयुक्त

(Parliamentary Commissioner)

जनसाधारण की शिकायतों का निवारण करने तथा लोक प्रशासन की कुशलता एवं निष्पक्षता को सुनिश्चित करने के लिए ब्रिटेन में सन् 1967 से संसदीय आयुक्त अर्थात् Parliamentary Commissioner की नियुक्ति की हुई है। ब्रिटेन की संसद द्वारा 1967 में पारित अधिनियम के माध्यम से यह संस्था, प्रशासन में व्याप्त अनियमितताओं की जांच कर अपनी अनुशंसा सरकार को प्रस्तुत करती है। इस प्रकार ब्रिटेन की संसदीय आयुक्त प्रणाली भारत के लोकायुक्त/लोकपाल या स्वीडन के ओम्बुड्समैन संस्था की प्रक ति से मिलती-जुलती है।

संसदीय आयुक्त की नियुक्ति मंत्रिमंडल की सिफारिश पर ताज द्वारा की जाती है। इस पद हेतु सेवानिव त उच्च स्तरीय लोक सेवा अथवा सार्वजनिक जीवन का कोई व्यक्ति पात्र होता है। आयुक्त के अधीन 4-5 निदेशक तथा निदेशकों के अधीन अनुसंधान शाखाएं होती है। संसदीय आयुक्त के कार्यालय के अधिकांश कार्मिक विभिन्न सरकारी विभागों से तीन वर्ष के लिए प्रति नियुक्ति पर लिए जाते हैं। संसदीय आयुक्त के कार्यालय में लगभग 50-60 कर्मचारी कार्यरत हैं। जो प्रतिवर्ष लगभग 500 शिकायतों की जांच करते है। संसदीय आयुक्त प्रणाली की निम्न विशेषताएं हैं-

1. यह लोक सेवकों द्वारा की गई अनियमितताओं, भ्रष्टाचार तथा लापरवाही की जांच करती हैं।
2. इसके लिए अधिकारी तथा कर्मचारी स्वयं लोक सेवक होते हैं।
3. किसी भी शिकायत को स्वीकार करने से पूर्व किसी सांसद (M.P.) की अनुशंसा आवश्यक है।

4 . इसकी सिफारिशें सरकार के लिए परामर्श-स्वरूप हैं।

5. इसका कार्यक्षेत्र बहुत विस्त त नहीं हैं क्योंकि ब्रिटेन में नागरिक संस्थाओं, स्वास्थ्य सेवाओं तथा उत्तरी आयरलैंडवासियों के प्रशासन से संबंधित समस्याओं के लिए प थक आयुक्त (ओम्बुड्समैन) नियुक्त हैं।

संसदीय आयुक्त की कार्य परिधि से निम्न बिंदु बाहर रखे गए हैं।

1. ग्रेट ब्रिटेन तथा अन्य बाहरी संस्थाओं या सरकारों के मध्य समझौते एवं कार्यक्रम;
2. ग्रेट ब्रिटेन से संबंधित मामलों पर देश से बाहर लिए गए निर्णय;
3. ताज के निर्णयाधीन प्रकरणों से संबंधित मामले;
4. राज्य की सुरक्षा तथा पासपोर्ट से संबंधित प्रशासनिक क त्य;
5. नौसेना, वायुसेना तथा थलसेना से संबंधित प्रकरण;
6. स्वास्थ्य सेवाओं से संबंधित प्रशासनिक निर्णय;
7. व्यवसायिक, वाणिज्यिक तथा संविदात्मक कार्यों से संबंधित क त्य; जिनमें भूमि अधिग्रहण इत्यादि सम्मिलित हैं;
8. ताज द्वारा दिए गए पुरस्कार तथा सम्मान;
9. कुछ सेवाओं (Cadet Forces) में भर्ती, वेतन तथा निलंबन इत्यादि से संबंधित मामलों की संसदीय आयुक्त सुनवाई नहीं कर सकता है।

ब्रिटेन में संसदीय आयुक्त के समक्ष मुख्यतः राजस्व, कर तथा सामाजिक सुरक्षा से संबंधित शिकायतें अधिक आती हैं। भारतीयों के लिए यह आश्चर्य तथा अविश्वास का विषय हो सकता है कि ब्रिटेन में 30 वर्षों से प्रशासन में भ्रष्टाचार का कोई भी उल्लेखनीय मामला उजागर नहीं हुआ है। अधिकांश शिकायतों में प्रशासनिक अकर्मण्यता या लापरवाही ही दिखाई दी है किंतु भारत की तरह घोटालों की संस्क ति ब्रिटेन में नहीं है। संसदीय आयुक्त के समक्ष प्रारंभिक दिनों में प्रतिवर्ष 1,000-1,500 शिकायतें आती थीं जो अब 500 से भी कम हो गई हैं। ज्ञातव्य है कि अधिकांश शिकायतें तो संसदीय आयुक्त के जांच क्षेत्र से बाहर की होती हैं। जिस किसी भी नागरिक को प्रशासनिक निर्णयों या क त्यों के विरुद्ध शिकायत होती है वह सर्वप्रथम अपने क्षेत्र के सांसद को लिखित में शिकायत प्रस्तुत करता है। यदि कोई व्यक्ति चाहे तो किसी अन्य सांसद के माध्यम से भी शिकायत प्रस्तुत कर सकता है। ऐसी स्थिति में संबंधित क्षेत्र के सांसद को नैतिकतावश सूचित किया जाता है। बहुत सी शिकायतें सांसद-स्तर पर ही सुलझा दी जाती हैं। जो शिकायतें सांसद द्वारा संसदीय आयुक्त तक अग्रेषित की जाती हैं उनमें कुछ शिकायतें आयुक्त द्वारा निर्धारित कार्य क्षेत्र एवं प्रक्रिया के निर्धारण के अनुसार अस्वीकार हो जाती हैं। जांच हेतू स्वीक त शिकायत के अनुसंधान के दौरान संबंधित विभाग से गहन पूछताछ तथा सूचनाएं एकत्र की जाती हैं। दोषी कर्मचारी या विभाग के विरुद्ध कार्यवाही करने की सिफारिश संसदीय आयुक्त द्वारा सरकार को की जाती है। यद्यपि संसदीय आयुक्त एक परामर्शदात्री निकाय है तथापि सरकार इसकी सिफारिशें प्रायः स्वीकार कर लेती है। ब्रिटेनवासी मानते हैं कि अनेक मामलों का खुलासा संसदीय आयुक्त ने किया है किंतु भ्रष्टाचार का मामला कभी प्रकाश में नहीं आया है।

प्रशासनिक ट्रिब्यूनल

ब्रिटेन में प्रशासन से संबंधित जन शिकायतों को दूर करने हेतू प्रशासनिक ट्रिब्यूनल की स्थापना की गई है। इनकी कार्यवाही सामान्य न्यायालयों की भांति औपचारिक एवं Complex न होकर काफी हद तक अनौपचारिक एवं सरल होती है। ये प्रशासन के निर्णयों एवं कार्यों से प्रभावित होने वाले नागरिकों की शिकायतों को समाधान निकालने का कार्य करते हैं। ये ट्रिब्यूनल प्रशासनिक न्यायालय होते हैं, जो जनता को प्रशासनिक न्याय प्रदान करते हैं। ये सामान्य न्यायिक सीमा से बाहर होते हैं।

ट्रिब्यूनलों द्वारा कानून की व्यवस्था उस समय की जाती है जब प्रशासकों के कार्य को गैर-कानूनी सिद्ध कर दिया जाता है लेकिन यहां पर एक विशेषता है कि प्रशासनिक न्यायालय एक व्यवस्था के रूप में संगठित नहीं है। सामान्यतया प्रशासनिक न्याय संबंधी कार्य सरकारी विभागों द्वारा संपादित किया जाता है। इसके लिए विशेष ट्रिब्यूनल भी स्थापित किए जाते हैं। सामान्यतः किसी एक तरीके या प्रक्रिया को नहीं अपनाया जाता है।

प्रशासनिक न्यायालयों की कार्य-पद्धति सामान्य न्यायालयों से अलग प्रकार की होती है। यह प्रक्रिया अधिक सरल, कम

खर्चीली एवं शीघ्र होती है क्योंकि इनमें न तो कोई जूरी बैठायी जाती है न ही सार्वजनिक सुनवाई की जाती है, गवाही संबंधी नियमों को ताक में रख दिया जाता है और स्वयं न्यायाधीश ही गवाही के समय सक्रिय योगदान देता है।

कई मामलों में तो प्रशासनिक न्यायालयों के निर्णय को अंतिम माना जाता है और उनकी अपील न्यायिक न्यायालय में नहीं की जा सकती। यदि अपील भी की जाती है तो वह सामान्यतः कानून से संबंधित प्रश्नों के ऊपर ही होती है। सामान्यतः कोई एक सरकारी विभाग अथवा अन्य सरकारी अभिकरण ही ऐसी अपील की सुनवाई के लिए अपीलीय सत्ता होती है।

प्रशासनिक ट्रिब्यूनल का महत्त्व

(Importance of Administrative Tribunals)

डॉ० रॉब्सन एवं डॉ० लॉर्ड डिनिंग ने प्रशासनिक ट्रिब्यूनल व्यवस्था का महत्त्व प्रतिपादित करते हुए इनकी निम्नलिखित उपयोगिताएं बतलायी हैं-

1. **साधारण न्यायालयों द्वारा असमर्थ मामलों पर विचार करना** - प्रशासनिक न्यायालयों की मान्यता इस आधार पर स्थापित की जाती है कि इनके अधिकार में आने वाले विवादों में साधारण न्यायालय असमर्थ रहते हैं। यदि उनके सामने ऐसे मामलों को प्रस्तुत किया जाए तो वे इन पर समुचित रूप से विचार नहीं कर सकते। न्यायालय अत्यधिक व्यस्त रहते हैं।
2. **न्यायालय तकनीकी बारीकियों से अनभिज्ञ** - प्रायः वकील एवं साधारण न्यायालयों के न्यायाधीश प्रशासनिक समस्याओं की तकनीकी बारीकियों से अनभिज्ञ रहते हैं। इस प्रकार के मामलों को विशेषज्ञतायुक्त न्यायालयों के सम्मुख ही प्रस्तुत किया जाना चाहिए, क्योंकि ये ही प्रशासनिक विवादपूर्ण मामलों पर उपयुक्त तरीके से विचार कर सकते हैं।
3. **औपचारिकता के भार से मुक्त** - प्रशासनिक न्यायालय औपचारिकताओं से मुक्त होते हैं। ये गवाही संबंधी साधारण नियमों के भार से मुक्त होते हैं।
4. **प्रक्रिया की द ष्टि से सुविधा** - प्रशासनिक ट्रिब्यूनल्स में प्रार्थी को प्रत्येक द ष्टि से सुविधा होती है।
5. **नियमों के अनुसार** - प्रशासनिक ट्रिब्यूनल्स सरकारी मशीनरी के आवश्यक भाग हैं, जिनसे साधारण न्यायालयों को अपने कार्यभार से काफी अधिक मुक्ति मिल जाती है। यद्यपि इसके निर्णय कानून पर आधारित होते हैं और अपना कार्य भी कानून के अनुसार करते हैं, लेकिन अपनी कार्य प्रक्रिया में ये अपने कुछ मूल्यों को अपनाते हैं।
6. **नागरिक अधिकारों के रक्षक** - प्रशासनिक ट्रिब्यूनल्स जनता के अधिकारों की रक्षा करते हैं और प्रशासन को कानून की परिधि में आचरण करने के लिए विवश करते हैं ताकि किसी भी व्यक्ति के अधिकारों का हनन न हो सके।
7. **निष्पक्ष निर्णय** - प्रशासनिक न्यायालय किसी भी वाद-विवादपूर्ण मामले से संबंधित संपूर्ण जानकारी विभिन्न साधनों से स्वयं प्राप्त करते हैं और केवल पक्षपातयुक्त गवाहियों के आधार पर ही निर्णय नहीं देते।

प्रशासन न्यायालयों की उपयोगिता

(Utility of Administrative Tribunals)

इंग्लैंड के इस प्रशासनिक ट्रिब्यूनल्स की उपयोगिता के बारे में मि० एलकाक ने लिखा है कि "न्यायाधिकरण तथा जांच की व्यवस्था न्याय प्रदान करने की कम खर्चीली तथा द्रुतगामी व्यवस्था है। इसमें प्रत्येक नागरिक को अपना विवाद प्रस्तुत करने का उपयुक्त अवसर मिलता है तथा यह व्यक्ति एवं सत्ता दोनों से निष्पक्ष रहकर विचार करती है।"

अध्याय-30

संयुक्त राज्य अमेरिका में जन-अभियोग निवारण व्यवस्था

(Machinery for the Removal of Citizen's Grievances in USA]

संयुक्त राज्य अमेरिका में प्रशासनिक भ्रष्टाचार, अनियमितता एवं ज्यादतियों के विरुद्ध नागरिक स्वंतत्रता एवं अधिकारों की रक्षा कांग्रेसी जांच (Congressional Investigations), प्रेस, न्यायिक पुनरीक्षा, स्वतंत्र नियामकीय अभिकरण एवं प्रशासनिक प्रक्रिया अधिनियम 1946 द्वारा की जाती है। इनमें से 'कांग्रेस' द्वारा की जाने वाली जांच सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। संयुक्त राज्य अमेरिका में शक्ति प थक्करण का सिद्धांत अपनाया जाता है। संविधान निर्माताओं ने संघ सरकार के तीनों अंग- कार्यपालिका, व्यवस्थापिका तथा न्यायपालिका- कार्य एवं संगठन की द ष्टि से प थक-प थक रखे हैं ताकि कोई अंग अपनी शक्तियों का दुरुपयोग न कर सके और व्यक्तिगत स्वतंत्रता की रक्षा की जा सके। अध्यक्षात्मक शासन-व्यवस्था होने के कारण यह संभव भी हो सकता है। यहां कांग्रेस तथा प्रशासन इस रूप में कभी आमने-सामने नहीं आते जिस प्रकार ये ग्रेट-ब्रिटेन में आते हैं। अतः कालांतर में यहां ऐसे साधनों का विकास हुआ है जिनकी सहायता से 'कांग्रेस' प्रशासन पर नियंत्रण रखने का प्रयास करती है। इन साधनों में मुख्य ये हैं- प्रेस की शक्तियां, महाभियोग लगाने का अधिकार, मानहानि के लिए दंडित करने की शक्ति, लोक-सेवकों की नियुक्ति स्वीकार या अस्वीकार करने की शक्ति तथा संधियों को स्वीकार या अस्वीकार करने की उसकी शक्ति।

कांग्रेस की जांच समिति

कांग्रेस अपनी जांच समितियों के माध्यम से कार्यपालिका पर नियंत्रण रखती है। एक जांच समिति मुख्यतः तीन कार्य संपन्न करती है। पहला कार्य व्यवस्थापन में सहायता करना है। कांग्रेस नवीन व्यवस्थापन के लिए या पुराने कानूनों में दोष देखने के लिए इन समितियों से आवश्यक सूचना प्राप्त करती है। जांच समिति का दूसरा कार्य प्रशासन का निरीक्षण करना है। इसके लिए यह कार्यपालिका की गतिविधियों पर प्रकाश डालती है। यह प्रत्येक आपत्तिजनक प्रशासनिक कार्य के लिए उत्तरदायी अधिकारी की तलाश करती है और कांग्रेस को तदनुसार सूचना देती है। जांच समिति द्वारा दी गई सूचना के आधार पर कांग्रेस प्रशासनिक विभागों की देख-रेख करती है और उन्हें सही करती है। कांग्रेस के नियंत्रण का यह प्रभावशाली माध्यम है। जांच समितियों की सहायता से जनता के प्रतिनिधियों को प्रशासनिक अधिकारियों के आचरण का समुचित ज्ञान होता हो जाता है। संक्षेप में कार्यकुशलता और बेईमानी जैसे गंभीर प्रशासनिक दोष इसके माध्यम से दूर किये जाते हैं। जांच समितियों का तीसरा कार्य जनमत को सूचित करना है। जनतंत्र में संप्रभुता अंतिम रूप से जनता के पास रहती है और इसलिए अमेरिकी कांग्रेस का यह कर्त्तव्य है कि वह अपने मतदाताओं को कानूनों की कार्यान्विति की सूचना देती रहे।

1. **कांग्रेसी जांच की प्रक्रिया** - कांग्रेसी जांच का श्रीगणेश प्रतिनिधि सभा अथवा सीनेट में प्रस्ताव आने पर होता है। इस प्रस्ताव में जांच किए जाने वाले विषय का उल्लेख किया जाता है और जांच समिति की सीमाएं निर्धारित की जाती हैं। प्रायः यह जांच का कार्य कांग्रेस द्वारा निर्मित एक समिति करती है। इसे कुछ सीमाओं में अनिवार्य साक्षी की शक्तियां दी जाती हैं। जांच करने वाली ये संस्था किसी अपराधी को स्वयं दंडित नहीं करती, परंतु इसके लिए उपयुक्त न्यायिक

संस्था को सुझाव देती है। ये जांच समितियां पर्याप्त लोकप्रिय हैं। 1789 से 1925 तक कांग्रेस के दोनों सदनों की समितियों ने लगभग 285 जांच की। इनकी सहायता से प्रशासन को बुरी स्थिति में सुधार के लिए महत्त्वपूर्ण कार्य किए गए। अमेरिकी कांग्रेस द्वारा की जाने वाली जांच उपयोगी तथा सार्थक रही है किंतु अनेक प्रकार से इनकी आलोचनाएं भी होती रही हैं।

2. **कांग्रेसी जांच के परिणाम** - विचारकों ने कांग्रेस द्वारा की जाने वाली जांच को उपयोगी एवं फलदायक माना है। कई महत्त्वपूर्ण जांचें अनेक उल्लेखनीय व्यवस्थाओं का आधार बनी हैं। कुछ जांचें ऐसी रहीं जिन्होंने जनता के लाखों डॉलरों की बचत की तथा करों की चोरी पकड़ कर राजकोष की व द्धि की। अनेक निगमों एवं हितों की जांच के कारण सरकार को पर्याप्त लाभ हुआ।

3. **कांग्रेसी जांच की आलोचना** - कांग्रेस द्वारा की गई जांच की आर्थिक, प्रशासनिक और राजनीतिक उपलब्धियां होते हुए भी इसकी गंभीर आलोचनाएं की जाती हैं। आलोचकों ने इस संबंध में ये बातें कही हैं-

   i. ***प्रक्रिया दोषपूर्ण*** - इस जांच की प्रक्रिया दोषपूर्ण है। यह सत्य-प्राप्ति का एक कटु, अप्रिय और विरोधपूर्ण तरीका है।

   ii. ***विरोधी द ष्टिकोण रखना*** - कांग्रेस कार्यपालिका के प्रति विरोधी द ष्किोण रखती है फलतः उसका जांच कार्य निष्पक्ष नहीं हो पाता। अनेक जांचें चुनाव अभियान, राजनीतिक विरोधाभास एवं व्यक्तिगत मनमुटाव का परिणाम होती हैं।

   iii. ***अत्यधिक हस्तक्षेप*** - कांग्रेसी जांच प्रशासनिक कार्यों में अत्यधिक हस्तक्षेप को प्रोत्साहन देती हैं।

   iv. ***गलती करने पर भी दंड से मुक्त*** - इसका एक अन्य दोष यह है कि कार्यपालिका को गलती करते हुए भी उस दंड से मुक्ति प्राप्त हो जाती है। इस संबंध में वुडरों विल्सन ने लिखा है कि "अपराध करने के बाद भी अपराधी अपने पद पर बना रहता है, वह दुनिया के सामने शर्माता हुआ प्रत्येक ईमानदार व्यक्ति की नजर से गिरता हुआ, वेतन प्राप्त करता रहता है और इस बात की प्रतीक्षा करता रहता है कि जनता अपनी अल्प स्म ति के कारण सब कुछ भूल जाये।"

   v. ***कांग्रेस की समितियों पर नियंत्रण का अभाव*** - आलोचकों की जिज्ञासा है कि प्रहरियों की देखभाल कौन करेगा? कांग्रेस की समितियां कार्यपालिका की देखभाल करेंगी किंतु इन समितियों को निजी अथक दलीय स्वार्थ के लिए काम करने से रोकने की क्या व्यवस्था है?

2. **प्रेस द्वारा नियंत्रण** - कुप्रशासन और भ्रष्टाचार के विरुद्ध जनता के अधिकारों तथा स्वतंत्रताओं की रक्षा का दूसरा स्त्रोत स्वतंत्र प्रेस है। अमेरिका में स्वतंत्र प्रेस का विकास यहां की प्रजातांत्रिक परंपराओं के साथ जुड़ा हुआ है। प्रेस द्वारा प्रशासनिक नीतियों एवं निर्णयों संबंधी अधिकांश तथ्य जनता के सामने रखे जाते हैं। आज अमेरिका की प्रेस इतनी सजग है कि अपनी तीखी आलोचनाओं से राष्ट्रपति तक को नहीं छोड़ती। सैनिक क्षेत्र में की जाने वाली प्रशासनिक गड़बड़ी को प्रकाश में लाना इतना महत्त्वपूर्ण समझा जाता है कि राष्ट्रीय संस्था का विचार पीछे रह जाता है। वियतनाम संघर्ष और उसमें अमेरिकी सरकार की भूमिका संबंधी सही तथ्यों का प्रकाशन करके अमेरिकी प्रेस ने यहां की जनता में सरकार विरोधी द ष्टिकोण विकसित किया है। पेंटागोन पेपर्स के रूप में अपने गोपनीय तथ्यों से अमेरिकी जनता को परिचित कराया है। इस विषय पर कांग्रेस तथा प्रशासन ने प्रेस की आलोचना भी की। अमेरिकी प्रेस ने वाटरगेट कांड को उजागर किया है, आई०टी०टी० संपर्कों के बारे में सभी को बताया जिसमें चार लाख डॉलर के बदले न्याय विरोधी कानून को बदल दिया गया था। प्रेस ने निर्वाचन काल के अनेक भ्रष्टाचारों को आवरणहीन कर दिया है। इस प्रकार प्रेस सदैव एक सजग प्रहरी की तरह प्रशासन की प्रत्येक गतिविधि पर नजर रखती है तथा हर बात को वास्तविक संप्रभु 'जनता' के सामने लाती है। जनता को प्रेस के इस कार्य के प्रति गर्व है तथा वह अपनी प्रेस को प्रशंसा और सम्मान देती है। अनेक विवादों में न्यायपालिका ने भी प्रेस की आलोचना करने तथा सरकार को आवरणहीन करने की शक्ति को मान्यता प्रदान की हे। न्यूयार्क टाइम्स कंपनी की एक अपील पर विचार करते हुए अमेरिकी सर्वोच्च न्यायालय में एक न्यायाधीश गोल्डबर्ग (Goldberg) ने कहा था- हमारा संवैधानिक सिद्धांत यह है कि सार्वजनिक महत्व के विषय पर प्रत्येक व्यक्ति अपना द ष्टिकोण प्रकट कर सकता है तथ प्रत्येक समाचार-पत्र अपना मत प्रकाशित कर सकता है। उन्हें

बोलने या प्रकाशित करने से इस आधार पर नहीं रोका जा सकता कि सरकार के मतानुसार वह विचार अथवा प्रकाशन अबुद्धिपूर्ण, अन्यायपूर्ण, गलत तथा दुर्भावनापूर्ण है। प्रजातंत्र में जो भी अधिकारी व्यवस्थापिका, कार्यपालिका अथवा न्यायपालिका में कार्य करना चाहे उसे स्पष्टतः ज्ञान होना चाहिए कि उसके सरकारी कार्यों की आलोचना की जा सकती है।

3. **स्वतंत्र नियामकीय आयोग** - प्रशासनिक न्याय क्षेत्र में स्वतंत्र नियामकीय आयोगों की विशेष स्थिति है। ये आयोग प्रशासनिक अंग होकर भी न्यायिक कार्य संपन्न करते हैं। घटना घटित होने के बाद ये उसका उपचार करने की अपेक्षा निरोधक प्रयास करते हैं। ये आयोग कांग्रेस द्वारा पारित अधिनियम के आधार पर गठित होते हैं। इनको प्रशासकीय, अर्द्ध-न्यायिक तथा अर्द्ध-वैधानिक प्रक ति से कार्य सौंपे जाते हैं। एक स्वतंत्र नियामकीय आयोग अपने संबंधित उद्योग के संचालन हेतु नियम बनाता है तथा उनके कार्य रूप का निरीक्षण करता है। यदि कोई व्यक्ति या संस्था आयोग के बनाये नियमों का पालन न करे या उनके विपरीत व्यवहार करे तो आयोग को उसे दंडित करने का अधिकार है। इस प्रकार आयोग न्यायिक कार्य भी संपन्न करता है। न्यायिक कार्य पर विचार करते समय आयोग प्रत्येक विषय पर अलग से विचार करता है। यह किसी विषय पर विचार करते समय संपूर्ण उद्यम की आवश्यकताओं तथा नागरिकों की सुविधा पर विचार नहीं करता वरन् उसे एक मामले को ही नियमों की प ष्ठभूमि में देखता है। यह "Case-by-Case Decision" का तरीका संबंधित मामले में न्याय की द ष्टि से उपयोगी सिद्ध होता है।

   1. ***आयोगों की कार्य प्रक ति*** - आयोगों के कार्य की प्रक ति राजनीतिक है अतः यह आशंका स्वाभाविक है कि इसके न्यायिक कार्यों पर अनुचित हस्तक्षेप हो तथा वे जनता के अधिकारों की रक्षा न कर सकें। इसके लिए आयुक्तों की स्वतंत्रता की रक्षा करना अत्यंत आवश्यक है। उनका कार्यकाल सुरक्षित होना चाहिए। ये आयोग कानून उल्लंघन के मामलों की जांच करते हैं। ये एक ओर तो अभियोग चलाने वाले हैं तथा दूसरी ओर न्यायाधीश हैं। कुछ मामलों में अपील की जा सकती है।

      स्वतंत्र नियामकीय आयोग कांग्रेस के कानून द्वारा बनाये जाते हैं। इसलिए ये व्यवहार में कानून की सीमाओं का उल्लंघन नहीं कर सकते। सामान्यतः आयोग के निर्णयों पर विचार करते समय न्यायालय विरोधी रुख नहीं अपनाता।

4. **प्रशासनिक प्रक्रिया अधिनियम, 1946** - द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद नियामकीय आयोगों की प्रक्रिया को सुधारने के लिए कुछ सजग प्रयास किये गये ताकि न्यायपालिका का हस्तक्षेप न्यूनतम हो सके। प्रशासनिक प्रक्रिया अधिनियम, 1946 इन्हीं प्रयासों में से एक है। इस अधिनियम ने न्यायिक प्रक्रिया के संबंध में कई सुधार सुझाये। कुछ मुख्य सुझाव ये हैं-

   i. जिस व्यक्ति की प्रशासनिक सुनवाई होनी है उसे समय पर सुनवाई के स्थान एवं समय की सूचना दी जाये, उसके विरुद्ध लगाये गये आरोपों की सूचना दी जाये ताकि वह अपने बचाव में कुछ कह सके।

   ii. सुनवाई के समय प्रत्येक पक्ष अपने समर्थन में मौखिक या लिखित प्रमाण प्रस्तुत कर सकता है। वह तथ्यों के सही प्रकाशन के लिए प्रश्न तथा प्रति प्रश्न कर सकता है।

   iii. यदि सुनवाई के समय संबंधित पक्ष वह सूचना दे कि अमुक प्रमाणपत्र के लिए अमुक गवाह को बुलाया जाना चाहिए तो प्रशासनिक ट्रिब्यूनल को ऐसा करने की शक्ति दी गयी है।

   इस अधिनियम का मूल्यांकन करते हुए इसकी प्रशंसा तथा निंदा में दोनों ही प्रकार के विचार प्रस्तुत किये गये हैं। न्यायाधीश जेक्शन (Justice Jackson) का कहना है कि "यह अधिनियम और संघर्ष के एक लंबे युग का प्रतिनिधित्व करता है। यह एक ऐसा सूत्र प्रस्तुत करता है जिसके आधार पर विरोधी सामाजिक तथा राजनीतिक शक्तियों के बीच सामंजस्य पैदा किया जा सके।" प्रोफेसर एल० एल० जोफे (Prof. L.L. Joffe) का कहना हे कि "यह अधिनियम अमेरिकी प्रशासनिक कानून के इतिहास में एक सीमा-चिह्न है। यह एक महान् रचनात्मक काल की समाप्ति तथा स्थिरता एवं विकास के नये प्रारंभ का प्रतीक है।" जॉन बी० मांटीरो (John B. Manterio) का कहना है कि "इस अधिनियम का प्रशासनिक कानून के लिए, महत्वपूर्ण योगदान इसलिए है क्योंकि इसकी आत्मा तथा दर्शन का सामान्य औचत्य है।"

   इस प्रकार संयुक्त राज्य अमेरिका में जनता की शिकायतों के निवारण के लिए ओम्बड्समैन जैसी कोई संस्था नहीं है। वहां यह कार्य कांग्रेस तथा अन्य प्रशासनिक एवं राजनीतिक संस्थाएं संपन्न करती हैं।

अध्याय-31

फ्रांस में जन अभियोग निराकरण व्यवस्था

(Machinery for Removal of Citizen's Grievances in France)

फ्रांस में सरकार के कार्यक्षेत्र के विस्तार के कारण नागरिक एवं प्रशासन के मध्य दूरी बढ़ने के अवसर भी अधिक बढ़े हैं। प्रशासन के प्रति नागरिकों की विभिन्न समस्याओं एवं शिकायतों के निराकरण हेतू प्रभावशाली व्यवस्था का प्रबंध किया गया है ताकि जनता की शिकायतों की समुचित छानबीन कर उन्हें दूर करने की दिशा में महत्त्वपूर्ण कदम उठाए जा सके। फ्रांस मे ंजन शिकायतों को दूर करने संबंधी Machinery का वर्णन निम्न प्रकार है-

1. **संवैधानिका परिषद की भूमिका** - फ्रांस में नए संविधान में एक संवैधानिक परिषद का प्रावधान किया गया है। इसके कुल 9 सदस्य होते हैं। इनमें से 3 सदस्य फ्रांस के राष्ट्रपति द्वारा 3 सदस्य राष्ट्रीय सभा के अध्यक्ष द्वारा, और बाकी 3 सदस्य सीनेट के अध्यक्ष द्वारा मनोनित किए जाते हैं। इन सदस्यों का कार्यकाल 9 वर्ष होता है और इनमें से $^{1}/_{3}$ सदस्य प्रत्येक तीसरे वर्ष सेवानिव त्त होते हैं और नए चुने जाते हैं। इस परिषद के सदस्यों में से एक सदस्य को फ्रांस के राष्ट्रपति द्वारा, इस परिषद का क्षेत्र चुना जाता है।

   यह परिषद 3 तरह के कार्य करती है- विधायनी, न्यायिक एवं चुनाव संबंधी। इस कौंसिल का सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य किसी भी कानून के लागू होने से पहले उसका पुर्नावलोकन करने संबंधी हैं। हालांकि फ्रांस में अमेरिका की भांति न्यायिक पुर्नावलोकन की कमी पाई जाती है लेकिन किसी भी कानून को लागू करने से पहले संवैधानिक परिषद द्वारा उस कानून की संवैधानिक स्थिति की जांच की जाती है। आमतौर पर इस कार्य के लिए एक माह का समय दिया जाता है लेकिन आपातकाल (Emergency) में यह समय 8 दिन का होता है।

   इस प्रकार फ्रांस की संवैधानिक परिषद सरकार एवं प्रशासन की मनमानी कार्यवाही पर एक अंकुश का कार्य करती है। इस प्रकार यह परिषद प्रशासनिक कानूनों के संवैधानिक उल्लघंन के संबंध में जनता की शिकायतें सुनती है और जांच करने पर अगर कानूनों का उल्लंघन पाया जाता है तो यथासंभव कदम उठाती है। प्रशासनिक कानूनों की असंवैधानिक स्थिति के संबंध में सभी शिकायतों का निर्णय इसी परिषद द्वारा लिया जाता है।

2. **राज्य परिषद (Countil D'Etat)** - प्रशासकीय न्यायालयों में राज्य परिषद सर्वोच्च अपीलीय न्यायालय है। इसके समक्ष मौलिक तथा अपीलीय दोनों प्रक ति के विवाद प्रस्तुत किये जा सकते हैं। इसके निर्णय अंतिम होते हैं और इनके विरुद्ध कहीं भी अपील नहीं की जा सकती है। राज्य परिषद का मुख्यालय पेरिस में स्थित है और इसके कई विभाग होते हैं।

   1. ***राज्य परिषद का विकास*** - फ्रांस में व्यवस्थापिका द्वारा प्रस्तावित 'सुधार कार्यक्रमों' पर न्यायालय द्वारा रोक लगा दी जाती थी। इसमें फ्रांसिसी प्रशासन के समक्ष परेशानी आने लगी। वहां न्यायालय में सुधार की काफी समय पूर्व से मांग की जाती रही थीं। फ्रांसिसी क्रांति का एक प्रमुख कार्य कार्यपालिका के संबंध में न्यायापालिका की शक्तियों में कटौती करना था। फ्रांस की क्रांति के तुरंत पश्चात् 1790 में संसद ने एक अधिनियम पारित करके न्यायपालिका को कार्यपालिका के निर्णयों की जांच करने से वंचित कर दिया। न्यायपालिका को इस जांच से वंचित करने के पश्चात इस कार्य के लिए विशिष्ट संगठन की आवश्यकता महसूस की गई। फलतः 1799 में नेपोलियन ने राज्य परिषद की स्थापना करके इस कमी को पूरा किया। शुरू में इसे केवल परामर्शदाता शक्तियां प्राप्त थीं लेकिन नेपोलियन के समय में इसे विधेयकों एवं अध्यादेशों को रूप देने तथा कुछ अन्य प्रशासनिक प्रश्नों पर निर्णय

लेने का मौका मिला। इस समय तक प्रशासनिक कार्य में किस प्रकार का हस्तक्षेप नहीं होता था। परिषद अपनी अतिरिक्त शक्तियों का उपयोग करते हुए प्रशासनिक दुर्बलता के मामलों पर विचार कर हल निकालती थी।

सन् 1886 में कार्यपालिका परिषद में ही न्यायिक कार्य हेतू एक आयोग गठित किया गया। कालान्तर में राज्य परिषद् के संगठन और कार्य बदलते रहे। इस परिषद का वर्तमान स्वरूप काफी अधिक मात्रा में 24 मई, 1872 के संसदीय कानून के अनुरूप है। हालांकि इसके बाद भी इसमें काफी परिवर्तन हो चुका है।

2. ***राज्य परिषद का संगठन अथवा रचना*** - फ्रांस की वर्तताान राज्य परिषद में दो प्रकार के सदस्य होते हैं- साधारण सदस्य और असाधारण सदस्य। इस समय इस परिषद के साधारण सदस्यों की संख्या लगभग 220 है। विभिन्न विवादों से संबंधित प्रतिवेदन तैयार करने, याचिकाओं से संबंधित कार्य, परिषद की साधारण सेवाएं संपन्न करने, लेखा परीक्षा आदि प्रक ति के कार्य इन साधारण सदस्यों के क्षेत्राधिकार में आते हैं।

राज्य परिषद असाधारण सदस्यों की वर्तमान में संख्या लगभग 30 है। परिषद का अध्यक्ष, संभागीय अध्यक्ष आदि इस परिषद के असाधारण सदस्य माने जाते हैं। इन असाधारण सदस्यों की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा की जाती है।

राज्य परिषद के सर्वोच्च पद पर एक अध्यक्ष होता है। फ्रांस का न्यायमंत्री राज्य परिषद का पदेन अध्यक्ष होता है। एक परंपरा के अनुसार अध्यक्ष राज्य परिषद की न तो बैठकों में उपस्थित होता है और न ही उसके द्वारा इस परिषद के कार्य की संपन्न किये जाते हैं।

संभाग का एक बार अध्यक्ष नियुक्त होने के पश्चात वह व्यक्ति 65 वर्ष की उम्र तक कार्य करता है। लेकिन यदि वह कौंसिलर के रूप में कार्य करना पसंद करता है तो उसे तीन वर्ष तक और कार्य करने का अवसर प्रदान किया जाता है। राज्य परिषद के अध्यक्ष के अधीन एक उपाध्यक्ष भी होता है। एक परंपरा के अनुसार फ्रांस की लोक सेवा के वरिष्ठत लोक-सेवक को राष्ट्रपति द्वारा उपाध्यक्ष के पद पर नियुक्त किया जाता है।

प्रशासनिक कार्य-कुशलता की द ष्टि से राज्य परिषद को कुल छः संभागों में विभक्त किया गया है। प्रत्येक संभाग एक-एक अध्यक्ष के प्रशासनिक नेत त्व में कार्य करता है। संभागीय अध्यक्ष राज्य परिषद के उपाध्यक्ष के नेत त्व में कार्य करते हैं। संभागीय अध्यक्षों की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा की जाती है।

परिषद के प्रत्येक संभाग में संभागीय अध्यक्ष के नीचे तीन प्रकार के अधिकारीगण होते हैं। सबसे ऊपर के अधिकारीगण 'कौंसिलर' कहलाते हैं। इनके नीचे के अधिकारी 'मैट्रे-डेस-रीक्वेट्स' के पद पर होते हैं। संभाग के सबसे नीचे के अधिकार 'ऑडिट्यूर' कहलाते हैं। ऑडिट्यूर और मैट्रे-डेस-रीक्वेट्स का दायित्व विभिन्न मामलों से संबंधित प्रतिवेदन करना होता है। राज्य परिषद के अधीन कार्यरत छः संभागों में से एक संभाग पूर्णत परिषद के न्यायिक क त्यों से संबंधित है। इस न्यायिक संभाग में कुछ अधिक संख्या में अति विशिष्ट योग्यता एवं अनुभव वाले सदस्यों को रखा जाता है। शेष पांच संभाग प्रशासन के विभिन्न पक्षों की देखभाल करते हैं जिनमें प्रत्येक में 35 से 40 सदस्य होते हैं।

संपूर्ण राज्य परिषद का कार्य इनके द्वारा तैयार प्रतिवेदन पर निर्भर करता है। इस परिषद का प्रभावीपन और कुशलता इन प्रतिवेदनों के स्तर पर निर्भर करती है। प्रत्येक प्रतिवेदन समुचित जांच-पड़ताल और खोज-बीन के पश्चात तैयार किया जाता है। प्रत्येक प्रतिवेदन एक प्रकार की शोध क ति ही है। प्रत्येक संभाग का संपूर्ण दायित्व कौंसिलरों के कंधों पर होता है। राज्य परिषद के कौंसिलर ही न्यायाधीश का कार्य करते हैं।

कार्य एवं कार्यक्षेत्र

राज्य परिषद के प्रमुख कार्य इस प्रकार हैं-

1. प्रशासनिक कानूनों के क्रियान्वयन के संदर्भ में हुई अनियमितताओं, देरी, अन्याय तथा भ्रष्टाचार के वे मुकदमे निपटाना जो इसकी परिधि में रखे गए हैं।
2. प्रशासनिक न्यायाधिकरणों द्वारा दिए गए निर्णयों के विरुद्ध दायर की गई अपीलों की सुनवाई करना।
3. प्रशासनिक संगठनों, अधिकारियों, आदेशों, निर्णयों तथा कानूनों के संदर्भ में नागरिक अधिकारों के उल्लंघन के मामलों का निर्णय करना।

4. आम जनता तथा प्रशासन के मध्य समस्त प्रकार के विवादों का निस्तारण करना।
5. विभिन्न प्रकार के प्रशासनिक संगठनों, कार्यालयों, पदाधिकारियों तथा प्रक्रियाओं के कारण होने वाले विवादों का निबटारा करना।
6. संविधान के अनुच्छेद-39 के अंतर्गत सरकारी विधेयकों को संसद में प्रस्तुत करने से पूर्व मंत्रिपरिषद को यथावश्यक परामर्श देना।
7. राष्ट्र के सर्वोच्च प्रशासनिक न्यायालय के रूप में कार्य करना तथा सरकार को प्रशासनिक कानूनों के संदर्भ में समुचित परामर्श प्रदान करना।

कार्यक्षेत्र

राज्य परिषद तथा प्रशासनिक न्यायाधिकरण (जो स्थानीय स्तर पर होते हैं) के क्षेत्राधिकार में बंटवारा किया गया है ताकि आम जनता सीधे ही प्रत्येक मुकदमे को राज्य परिषद में दायर न करे। स्थानीय प्रक ति जैसे करारोपण, सफाई, सार्वजनिक शिक्षा, निर्माण कार्य तथा पेयजल इत्यादि, क्षेत्रीय प्रशासनिक न्यायाधिकरणों में वाद योग्य है जबकि अन्य बड़े मुकदमें सीधे ही राज्य परिषद में दायर किए जा सकते हैं। राज्य परिषद के क्षेत्राधिकार में अपील मामले भी आते हैं।

वैधानिक शक्तियों के अतिक्रमण, परस्पर विरोधी कार्य, गैर फ्रांसिसी क्षेत्रों से संबंधित कानूनी कार्य तथा अत्यधिक राशि के मामलों में राज्य परिषद ही सुनवाई करती है। राज्य परिषद तथा प्रशासनिक न्यायाधिकरण निम्नांकित मामलों में कार्यवाही नहीं कर सकते हैं।

1. साधारण न्यायालयों के कार्य-संचालन, न्यायिक पुलिस के कार्य, न्यायाधीशों द्वारा की जाने वाली जांच पड़ताल।
2. नागरिकों की स्वतंत्रता से संबंधित मामले (ऐतिहासिक कारणों में इनकी सुनवाई हमेशा सामान्य न्यायालय करते हैं, चाहे मामला लोक सेवा से संबंधित क्यों न हो)।
3. राष्ट्रीयक त उद्योगों का लोक उपक्रमों से संबंधित मामले।

यदि किसी मामले पर यह निर्धारण न हो पाये कि वह प्रशासकीय न्यायालयों के क्षेत्राधिकार में आता है अथवा सामान्य न्यायालयों के, तो ऐसी परिस्थिति में एक विशेष न्यायालय (Tribunaux des Conflictus) निर्णय करता है। इस विशेष न्यायालय में सामान्य कानूनों के सर्वोच्च न्यायालय तथा प्रशासनिक कानूनों की राज्य परिषद से आधे-आधे सदस्य लिए जाते हैं। वस्तुतः फ्रांसिसी राज्य परिषद इतनी सशक्त तथा व्यापक क्षेत्राधिकार वाली कोर्ट है जिसमें राष्ट्रपति से लेकर निम्नतम कर्मचारी तक के विरुद्ध वाद लाया जा सकता है। युद्ध, आंतरिक या बाहरी संकट, आपातकालीन स्थितियों तथा कतिपय विशिष्ट कार्यों के संदर्भ में राष्ट्रपति के विरुद्ध परिषद में वाद दायर नहीं किया जा सकता है।

आधार

राज्य परिषद एवं प्रशासनिक न्यायाधिकरणों में आने वाले मुकदमों या वादों की सुनवाई मुख्यतः दो आधारों पर होती है। प्रथम प्रकार के अभियोग वे हैं जिसमें किसी प्रशासनिक कार्य या निर्णय को गैर कानूनी मानकर चुनौती दी जाती है। दूसरे प्रकार के अभियोग वे हैं जो किसी प्रशासनिक निर्णय को इस आधार पर चुनौती देते हैं कि उस निर्णय से कोई विशिष्ट नागरिक अधिकार का हनन हुआ है। कार्यवाही के दौरान राज्य परिषद यह देखती है कि-

1. क्या किसी प्रशासनिक कानून, आदेश, नियम, अध्यादेश या परंपरा का उल्लंघन हुआ है?
2. क्या व्यक्ति के मौलिक अधिकारों को चोट पहुंचती है?
3. क्या समुचित एवं निर्धारित प्रक्रियानुसार प्रशासनिक निर्णय हुआ था?
4. क्या निर्णयकर्त्ता या आदेशकर्त्ता अधिकारी उस क त्य के लिए सक्षम प्राधिकारी है?
5. क्या प्रशासनिक निर्णय या आदेश से घोर अनियमितता या भेदभाव प्रकट होता है?
6. क्या लोक सेवक के क त्य से किसी नागरिक को आर्थिक या मानसिक हानि हुई है?

कार्यप्रणाली

राज्य परिषद तथा अन्य प्रशासनिक न्यायाधिकरणों द्वारा तथा स्वयं पहल करके काई कार्यवाही नहीं की जाती है बल्कि पीड़ित पक्ष को स्वयं इन न्यायालयों में आना पड़ता है। यद्यपि शिकायत डाक से भेजी जा सकती है। एक निर्धारित प्रपत्र में मुकदमा या शिकायत प्रस्तुत करनी पड़ती है। वादी को प्रशासनिक निर्णय के क्रम में विस्तारपूर्वक अपना पक्ष प्रस्तुत करना पड़ता है जिसमें यह बताना आवश्यक है कि उसने किस आधार पर न्यायालय की शरण ली है। इस संबंध में सभी आवश्यक दस्तावेज एवं प्रमाण संलग्न करने पड़ते हैं। मुकदमें के पंजीकरण एवं सुनवाई हेतु थोड़ा सा प्रशासनिक शुल्क भी अदा करना पड़ता है। यदि मुकदमे का निर्णय वादी के पक्ष में आता है तो लिया गया प्रशासनिक शुल्क वापिस कर दिया जाता है। प्राप्त हुए वाद या अपील का संबंधित संभाग के ऑडीटर सूक्ष्मता से परीक्षण करते हैं तथा विधि विशेषज्ञ एवं वकील इत्यादि मार्गदर्शन प्रदान करते हैं। इसके पश्चात संबंधित विभाग या कार्यालय में विस्त त विवरण मांगा जाता है। दोनों पक्षों की सुनवाई के पश्चात जूरी द्वारा निर्णय दिया जाता है। इस क्रम में वादी को क्षतिपूर्ति यदि आवश्यक प्रतीत हो, तो दिलवाने के आदेश भी प्रसारित किए जाते हैं। यहां यह उल्लेखनीय है कि राजकार्यों के दौरान होने वाली गलतियों की भरपाई सरकार करती है किंतु कोई क त्य पूर्णतया लोक सेवक की व्यक्तिगत त्रुटि या व्यवहार का परिणाम होता है तो उसकी क्षतिपूर्ति एवं दंड का भार संबंधित लोक सेवक को ही वहन करना पड़ता है।

सारांशतः राज्य परिषद की कार्यप्रणाली अत्यंत लोकप्रिय तथा विश्वसनीय मानी जाती है। फ्रांस की लोक सेवाओं में प्रवेश पाने वाले प्रत्येक युवा की प्रथम पसंद राज्य परिषद में स्थान पाना होता है। प्रशासनिक न्यायालयों के कार्मिक चूंकि लोक सेवक माने जाते हैं अतः उन पर लोक सेवा अधिनियम के समस्त प्रावधान लागू होते हैं। प्रशासनिक न्यायाधिकरणों, राज्य परिषद तथा अन्य मंत्रालयें के लोक सेवक परस्पर स्थानातंरित भी हो सकते हैं लेकिन व्यवहार में इसकी कई बाध्यताएं हैं। फ्रांस में नागरिक अधिकारों के संरक्षण, प्रशासनिक जवाबदेयता तथा कार्यकुशलता में व द्धि के क्रम में राज्य परिषद नियंत्रणकर्त्ता परामर्शदाता, समन्वयकर्त्ता तथा संरक्षक की भूमिका सफलतापूर्वक निर्वाहित की है।

3. **फ्रांसिसी ओम्बुड्समैन (Mediateur)** - फ्रांस में प्रशासन के खिलाफ जनशिकायतों को सुनने के संबंध में एक कानून के द्वारा जनवरी 1973 में ओम्बुड्समैन (Mediateur) की स्थापना की गई। यह गौरतलब है कि फ्रांस में राज्य परिषद (Conseil d'Etat) जैसी प्रशंसनीय प्रशासनिक व्यवस्था होने के बावजूद Mediateur जैसी संस्था की स्थापना की गई।

फ्रांस में Mediateur की नियुक्ति सरकार के द्वारा 6 वर्ष के लिए की जाती है। इस पद पर उसे पुनः नियुक्त नहीं किया जा सकता है। सरकार के द्वारा एक बार नियुक्त करने के बाद उसे सरकार भी हटा नहीं सकती। उसे केवल राज्य परिषद (Council d'Etat) के द्वारा की असमर्थता के आधार पर हटाया जा सकता है। उसे सरकार के द्वारा Instructions भी नहीं दी जा सकती जो उसकी स्वायत्तता को दर्शाता है।

ब्रिटेन के ओम्बुड्समैन (Parliamentary Commissioner) की तुलना में फ्रांस के Mediateur का क्षेत्राधिकार अधिक विस्त त है। वह न केवल प्रशासन की गलत कार्यवाही के खिलाफ जनशिकायतें सुनता है बल्कि Public authority के मानवीय व समानता के आधार पर काम न करने पर भी वह रिपोर्ट कर सकता है।

प्रक्रिया

कोई भी फ्रांस का नागरिक सीधे Mediateur को अपनी शिकायत दर्ज नहीं करा सकता। 1973 के कानून में यह स्पष्ट है कि प्रत्येक शिकायत संसद के किसी भी सदन के सदस्य के माध्यम से ही दर्ज कराई जा सकती है। सांसद शिकायत की छानबीन करने के बाद ही निर्णय करता है कि उसे Mediateur के पास भेजा जाए या नहीं। सांसद के माध्यम से प्राप्त शिकायत पर Mediateur यानी जांच पड़ताल आरंभ करता है और इस संबंध में उसकी शक्तियां ब्रिटेन के संसदीय आयुक्त के समकक्ष है। Mediateur अगर चाहे तो शिकायत के संबंध में गुप्त दस्तावेजों को छोड़कर विभाग की कोई भी फाइल या दस्तावेज मंगवा सकता है।

इन दस्तावेजों की छानबीन एवं जांच पड़ताल के बाद अगर किसी शिकायत को वह उचित ठहराता है तो वह न केवल शिकायतकर्त्ता की शिकायत के समाधान के संबंध में अपने सुझाव देता है बल्कि वह उस सेवा के संबंध में भी प्रशासनिक सुधार के तरीके सुझाता है। वह चाहे तो संबंधित अधिकारी को जवाब-तलब भी कर सकता है। इस संबंध में वह रिपोर्ट भी तैयार करता है। अनुच्छेद 10 के तहत वह संबंधित अधिकारी के खिलाफ अनुशासनात्मक कार्यवाही भी कर सकता है।

अध्याय-32

जापान में जन-शिकायतों के निराकरण संबंधी व्यवस्था

(Citizen's Grievances Redressal Machinery in Japan)

जापान में प्रशासन के प्रति बढ़ती हुई नागरिकों की शिकायतों के निराकरण हेतू कुछ प्रबंध किए गए हैं ताकि जनता एवं प्रशासन के मध्य बढ़ती हुई दूरी को कुछ हद तक दूर किया जा सके। आधुनिक युग में जनता और प्रशासन को दूसरे के निकट लाने के लिए जनशिकायतों के निराकरण हेतू प्रभावशाली व्यवस्था की आवश्यकता है। जापान में जन शिकायतों को दूर करने संबंधी (Machinery) का वर्णन निम्न प्रकार है।

स्विट्जरलैंड प्रत्यक्ष लोकराज्य का घर है। प्रत्यक्ष लोकराज्य वह राज्य है जहां लोग स्वयं राजनीति को बनाते हैं और उसके अनुसार हुकूमत चलाने का प्रबंध करते हैं। प्रत्यक्ष लोकतंत्र एवं उसकी विधियों को इतने सत्कार एवं योग्यता के साथ संसार के और किसी देश में नहीं किया जाता। केवल स्विट्जरलैंड जो 'लोकतंत्र का निवास स्थान' कहलाता है, में ही प्रत्यक्ष लोकतंत्र के उपायों एवं विधियों का व्यापक स्तर पर किया जाता है। इस प्रकार स्विट्जरलैंड में जनता का सरकार एवं प्रशासन की कार्यवाही काफी हद तक सहभागिता पाई जाती है और जन-शिकायतों के निराकरण की महत्त्वपूर्ण व्यवस्था की गई है। स्विट्जरलैंड में जन-शिकायतों के निकारण के संबंध में लोकतंत्र के निम्नलिखित विधियां प्रयोग में लाई जाती हैं।

डाइट राष्ट्रीय फोरम के रूप में

(Diet as a National Forum)

जापान की संसद (Diet) जनमत का प्रतिनिधित्व करती है और यही कारण है कि यहां पर जनता के प्रतिनिधि जन-शिकायतों के निराकरण के संबंध में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इस संबंध में लोगों की शिकायतें डाइट के सामने रखी जाती हैं। कोई भी व्यक्ति या व्यक्तियों का समूह अपनी शिकायतों संबंधी प्रस्ताव को डाइट के किसी भी सदन में दर्ज करा सकता है जिसकी छानबीन उसी सदन की एक समिति के द्वारा की जाती हैं अपनी छानबीन के बाद यह समिति अपनी रिपोर्ट उस सदन में पेश करती है। अगर यह समिति अपनी रिपोर्ट में यह सुझाव देती है कि मंत्रिमंडल को उस शिकायत के संबंध में कुछ निर्णय (Action) लेना चाहिए या उसी सदन के कम-से-कम 20 सदस्य उस विषय के संबंध में कुछ निर्णय (Action) लेने की मांग करते हैं तो वह शिकायत संबंधी प्रस्ताव मंत्रिमंडल के पास भेज दिया जाता है। प्रत्येक वर्ष मंत्रिमंडल के पास भेजे गए सदन के द्वारा शिकायत-प्रस्तावों पर की गई कार्यवाही की रिपोर्ट मंत्रिमंडल के द्वारा संबंधित सदन को भेजी जाती है। इस प्रकार जन-शिकायतों के निराकरण के संबंध में जापान की संसद (Diet) एक राष्ट्रीय फोरम के रूप में कार्य करती है।

स्वतंत्र नियामकीय आयोग

(Independent Regulatory Commissions)

द्वितीय विश्व युद्ध के बाद जापान में अमेरिका की भांति बहुत सारे स्वतंत्र नियामकीय आयोगों की स्थापना की गई। इनकी स्थापना के तीन मुख्य कारण थे-

1. प्रशासन की जनतांत्रिक प्रक्रिया में जनता के प्रतिनिधियों की सहभागिता आवश्यक है।
2. विशेषीक त ज्ञान का अधिक से अधिक प्रयोग ज्यादा महत्त्वपूर्ण एवं आवश्यक है।
3. प्रशासन के विभिन्न विभागों के मध्य समन्वय अति आवश्यक है।

उपरोक्त कार्यों की पूर्ति हेतू जापान में इन आयोगों का गठन किया गया। ये आयोग डाइट के एक विशेष अधिनियम के तहत गठित किए जाते हैं। डाइट के द्वारा इन आयोगों की स्वायत्तता को बरकरार रखा गया है। प्रशासनिक कार्य क्षेत्र में स्वतंत्र

नियामकीय आयोगों की विशेष स्थिति है। ये आयोग प्रशासनिक कार्य क्षेत्र में स्वतंत्र नियामकीय आयोगों की विशेष स्थिति है। ये आयोग प्रशासनिक अंग होकर भी न्यायिक कार्य संपन्न करते हैं। घटना घटित होने के बाद ये उसका उपचार करने की अपेक्षा निरोधक प्रयास करते हैं। ये आयोग अपने क्षेत्राधिकार में कानून उल्लंघन के मामलों की जांच करते हैं। क्योंकि ये आयोग डाइट के कानून द्वारा बनाए जाते हैं इसलिए ये व्यवहार मे कानून की सीमाओं का उल्लंघन नहीं कर सकते हैं।

घरेलू संबंधों से जुड़ी अदालत

(Courts of Domestic Relations)

जापान की न्यायपालिका की एक महत्त्वपूर्ण विशेषता घरेलू या पारिवारिक अदालतों संबंधी व्यवस्था है। ये अदालत जिला न्यायालयों की ही एक इकाई होती हैं जो पारिवारिक झगड़ों का निपटारा करती हैं। जापान में इस प्रकार की अदालतों का प्रयोग हाल ही के दिनों में अधिक बढ़ा है। यह एक अर्थ तो पंचायती अदालतें होती हैं जिनमें न्यायधीशों के साथ-साथ आम नागरिक भी साथ बैठते हैं और नागरिकों के झगड़ों व शिकायतों का निपटारा करते हैं।

प्रेस की भूमिका

(Role of Press)

प्रशासन की तानाशाही के खिलाफ जनता के अधिकारों तथा स्वतंत्रताओं की रक्षा हेतू एक ओर साधन स्वतंत्र प्रेस है। प्रेस के माध्यम से प्रशासनिक नीतियों एवं निर्णयों संबंधी तथ्य जनता के सामने उजागर किए जाते हैं। कुप्रशासन एवं भ्रष्टाचार जैसी कुप्रव त्तियों का भंडाफोड़ करने में प्रेस एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। जनता की प्रशासन संबंधी शिकायतें तथा प्रशासन की जनता के प्रति मनमानी कार्यवाही आदि सभी प्रेस के द्वारा लोगों के सम्मुख लाई जाती हैं। अतः जन-शिकायतों के निवारण के संबंध में प्रेस जापान मे अपनी मुख्य भूमिका निभाती है।

अध्याय-33
स्विट्जरलैंड में जन-शिकायतों के निराकरण संबंधी व्यवस्था
(Grievances Redressal Machinery in Switzerland)

स्विट्जरलैंड प्रत्यक्ष लोकराज्य का घर है। प्रत्यक्ष लोकराज्य वह राज्य है जहां लोग स्वयं राजनीति को बनाते हैं और उसके अनुसार हुकूमत चलाने का प्रबंध करते हैं। प्रत्यक्ष लोकतंत्र एवं उसकी विधियों को इतने सत्कार एवं योग्यता के साथ संसार के और किसी देश में नहीं किया जाता। केवल स्विट्जरलैंड जो 'लोकतंत्र का निवास स्थान' कहलाता है, में ही प्रत्यक्ष लोकतंत्र के उपायों एवं विधियों का व्यापक स्तर पर किया जाता है। इस प्रकार स्विट्जरलैंड में जनता की सरकार एवं प्रशासन की कार्यवाही में काफी हद तक सहभागिता पाई जाती है और जन-शिकायतों के निराकरण की महत्त्वपूर्ण व्यवस्था की गई है। स्विट्जरलैंड में जन-शिकायतों के निराकरण के संबंध में लोकतंत्र की निम्नलिखित विधियां प्रयोग में लाई जाती हैं।

जनमत संग्रह
(Referendum)

प्रत्यक्ष लोकतंत्र की यह सबसे लोकप्रिय विधि है। जनमत संग्रह का अर्थ किसी विषय पर जनता की संपत्ति लेना है। इस उपाय के द्वारा उन कानूनों पर जिन्हें विधानमंडल स्वीकार कर चुका होता है, जनता की अंतिम स्वीक ति या अस्वीक ति प्राप्त की जाती है। इसके द्वारा कानूनों पर अंतिम निषेधाधिकार या विटो (Veto) मतदाताओं के हाथों में दे दी जाती है।

स्विट्जरलैंड में जनमत संग्रह दो प्रकार का पाया जाता है- (i) आवश्यक (Complusory), (ii) ऐच्छिक (Optional)। आवश्यक या अनिवार्य जनमत संग्रह में कोई भी संवैधानिक संशोधन तब तक अंतिम रूप से मान्य नहीं होता है जब तक आधे से अधिक मतदाता उसका अनुमोदन न कर दें। ऐच्छिक जनमत संग्रह में (जैसा कि स्विट्जरलैंड में साधारण विधेयकों के लिए निश्चित है) यदि मतदाताओं की एक निश्चित संख्या मांग करे तब किसी कानून को, जिसे संसद पास कर चुकी है, मतदाताओं की स्वीक ति के लिए उनके पास भेजा जाता है।

इस प्रकार स्विट्जरलैंड में जनता की शिकायतों को दूर करने का एक महत्वपूर्ण तरीका हे जो सरकार के किसी भी कानून को (Veto) कर सकती है।

उपक्रम
(Initiative)

जनमत संग्रह मतदाताओं को यह अवसर अवश्य प्रदान करता है कि वे उन कानूनों को, जो उनके पास भेजे गए हैं, स्वीकार या अस्वीकार कर सकते हैं, परंतु वे संसद के विचारार्थ कोई विधेयक पेश नहीं कर सकते हैं। लेकिन उपक्रम (Initiative) एक ऐसा उपाय है जो जनता को विधायन आरंभ करने का अधिकार देता है। उपक्रम के द्वारा मतदाताओं की एक निश्चित संख्या कोई विधेयक संसद के सम्मुख विचारार्थ पेश कर सकते हैं। उपक्रम दो प्रकार का हो सकता है। वह या तो विधेयक के रूप में निश्चित (formulated) हो सकता है, या सामान्य सिफारिश (unformulated) के रूप में। पहले प्रकार के उपक्रम या प्रस्तावाधिकार में जनता बाकायदा एक विधेयक बना कर संसद के पास भेजती है, जबकि दूसरे प्रकार के उपक्रम में केवल कुछ सुझाव संसद के पास भेजे जाते हैं जिन्हें संसद बाद में विधेयक का रूप देती है। स्विट्जरलैंड में संघीय स्तर पर केवल 50,000 नागरिक संविधान में पूर्ण या आंशिक संशोधन के लिए विधेयक उपक्रम के द्वारा पेश कर सकते हैं, साधारण विधायन

के लिए नहीं। परंतु, अनेक स्विस कैंटनों में साधारण विधायन और संवैधानिक संशोधन दोनों के लिए उपक्रम की व्यवस्था है।

उपक्रम का यह गुण है कि इसके द्वारा जनता को विधि निर्माण में प्रत्यक्ष भूमिका निभाने का अवसर मिलता है। वे अपनी इच्छा से विधेयक पेश कर सकते हैं, जिन पर विचार करना संसद के लिए अनिवार्य होता है। इस प्रकार जो कानून बनाए जाते हैं, उन्हें सही और वास्तविक अर्थों में जनता की अभिव्यक्ति कहा जा सकता है।

प्रारंभिक सभा

(Lands Gemeinde)

स्विट्जरलैंड के कुछ कैंटनों में आज भी प्रारंभिक सभा (Lands gemeinde) की संस्था पाई जाती है। इसमें एक कैंटोन के लोग हर साल किसी खुले मैदान में एक सभापति की प्रधानता में राजनीतिक मुद्दों के संबंध में इकट्ठा होते हैं। कैंटोन के सभी मतदाता इस सभा की कार्यवाही में भाग लेते हैं और अपने विचार अलग-अलग सार्वजनिक विषयों पर प्रकट कर सकते हैं। साधारण जनता की सारी राजनीतिक शक्तियां इस प्रारंभिक सभा में केंद्रित होती हैं। यह सभा कानून बनाती है और अपनी कार्यपालिका द्वारा बनाए गए कानूनों की पुष्टि करती है। नए साल के लिए कार्यपालिका के मैंबर, कैंटोन के जज और दूसरे अधिकारियों की नियुक्ति करती है। इस तरह से यह वित्त संबंधी विषयों का भी निर्णय करती है। वर्तमान में ऐसी प्रारंभिक विधान सभा संसार के किसी और देश में देखने में नहीं आती। यह लोकतंत्र का सबसे पवित्र एवं पूर्ण रूप स्विट्जरलैंड की 5 कैंटनों में प्रचलित है जहां कानून बनाने की शक्ति सीधी जनता के हाथ में है।

प्रारंभिक सत्ता के अधिवेशन में हर बात पर गंभीरता से विचार किया जाता है। व्यर्थ बहसों पर समय नष्ट नहीं किया जाता। सभा का आरंभिक काम एक सलाहकार कमेटी द्वारा किया जाता है, तो तजवीज़े बनाकर प्रारंभिक सभा के आगे रखती है।

इन पांच कैंटोनों में जिनमें प्रारंभिक वैधानिक सभाओं द्वारा फैसले करने की प्रथा है, लोकतंत्र की दूसरी विधियों, जनमत संग्रह एवं पहलकदमी का प्रयोग नहीं होता।